बी.ए. प्रथम वर्ष

हिन्दी साहित्य, द्वितीय प्रश्नपत्र

हिन्दी कथा साहित्य

मध्यप्रदेश भोज (मुक्त) विश्वविद्यालय – भोपाल

MADHYA PRADESH BHOJ (OPEN) UNIVERSITY - BHOPAL

Reviewer Committee

1. Dr (Prof) Dharmendra Pare
   Professor
   Govt Hamidia College Bhopal
2. Dr (Prof) Rachna Tailang
   Professor
   Govt Hamidia College Bhopal
3. Dr (Prof) Sharda Singh
   Professor
   Govt Hamidia College Bhopal

Advisory Committee

1. Dr Jayant Sonwalkar
   Hon'ble Vice Chancellor
   Madhya Pradesh Bhoj
   (Open) University, Bhopal
2. Dr H.S.Tripathi
   Registrar
   Madhya Pradesh Bhoj
   (Open) University, Bhopal
3. Dr (Prof) Anjali Singh
   Director Student Support
   Madhya Pradesh Bhoj
   (Open) University, Bhopal
4. Dr (Prof) Dharmendra Pare
   Professor
   Govt Hamidia College Bhopal
5. Dr (Prof) Rachna Tailang
   Professor
   Govt Hamidia College Bhopal
6. Dr (Prof) Sharda Singh
   Professor
   Govt Hamidia College Bhopal

COURSE WRITERS

Dr Snehlata Gupta, Associate Professor, Ginni Devi Modi Girls PG College, Modinagar [U.P.]
Unit (1.0-1.2, 1.12-1.16)

Dr Vijay Kumar, Associate Professor, Department of Hindi, GVM Girls College, Sonepat, Haryana
Units (1.3, 1.6-1.7, 1.10-1.11, 3.3, 4.2, 4.4-4.6, 4.8-4.9, 5.6-5.7)

Shubh Lakshami Upadhyay, Academic Author
Unit (1.4)

Dr Urvija Sharma, Associate Professor at Hindi Department in SDPG College, Ghaziabad
Units (1.5, 2.0-2.1, 2.2-2.3,2.4-2.8, 4.3)

Yatindra Nath Gaur, Academic Author
Units (1.8, 5.0-5.2, 5.4-5.5, 5.8-5.12)

Ghanshyam Kumar Devansh, Academic Author
Units (1.9, 4.0-4.1, 4.7, 4.10-4.14)

Dr Saroj Kumari, Assistant Professor, Vivekananda College, University of Delhi
Units (3.0-3.2, 3.4-3.8, 5.3)

Copyright © Reserved, Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal

All rights reserved. No part of this publication which is material protected by this copyright notice may be reproduced or transmitted or utilized or stored in any form or by any means now known or hereinafter invented, electronic, digital or mechanical, including photocopying, scanning, recording or by any information storage or retrieval system, without prior written permission from the Registrar, Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal.

Information contained in this book has been published by VIKAS® Publishing House Pvt. Ltd. and has been obtained by its Authors from sources believed to be reliable and are correct to the best of their knowledge. However, the Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal, Publisher and its Authors shall in no event be liable for any errors, omissions or damages arising out of use of this information and specifically disclaim any implied warranties or merchantability or fitness for any particular use.

Published by Registrar, MP Bhoj (Open) University, Bhopal in 2020

Vikas® is the registered trademark of Vikas® Publishing House Pvt. Ltd.

VIKAS® PUBLISHING HOUSE PVT. LTD.
E-28, Sector-8, Noida - 201301 (UP)
Phone: 0120-4078900 • Fax: 0120-4078999
Regd. Office: A-27, 2nd Floor, Mohan Co-operative Industrial Estate, New Delhi 1100 44
• Website: www.vikaspublishing.com • Email: helpline@vikaspublishing.com

SYLLABI-BOOK MAPPING TABLE

हिन्दी कथा साहित्य

Syllabi	Mapping in Book
इकाई–1 गबन–प्रेमचन्द अथवा आपका बंटी– मन्नू भंडारी निर्धारित उपन्यासों एवं कहानियों से व्याख्या हिन्दी कथा साहित्य– (1) गुण्डा– जयशंकर प्रसाद (2) कफन– प्रेमचंद (3) अपना–अपना भाग्य– जैनेन्द्र कुमार (4) तीसरी कसम उर्फ मारे गये गुल्फाम– फणीश्वरनाथ रेणु (5) चीफ की दावत– भीष्म साहनी (6) दोपहर का भोजन– अमरकांत (7) रीक्ष– दूधनाथ सिंह (8) ढाई बीघा जमीन– मृदुला सिन्हा	**इकाई 1** : निर्धारित उपन्यासों एवं कहानियों से व्याख्या **(पृष्ठ 3–144)**
इकाई–2 हिन्दी उपन्यास एवं कहानी का उद्‌भव, विकास एवं प्रवृत्तियां	**इकाई 2** : हिन्दी उपन्यास एवं कहानी का उद्‌भव, विकास एवं प्रवृत्तियां **(पृष्ठ 145–174)**
इकाई–3 'गबन' अथवा 'आपका बंटी' पर समीक्षात्मक प्रश्न	**इकाई 3** : गबन/आपका बंटी का समीक्षात्मक अध्ययन **(पृष्ठ 175–214)**
इकाई–4 निर्धारित कहानियों पर समीक्षात्मक प्रश्न	**इकाई 4** : निर्धारित कहानियों का समीक्षात्मक अध्ययन **(पृष्ठ 215–260)**
इकाई–5 द्रुत पाठ– अमृतलाल नागर, यशपाल, धर्मवीर भारती, कृष्णा सोबती, मालती जोशी, मीनाक्षी स्वामी	**इकाई 5** : द्रुत पाठ **(पृष्ठ 261–272)**

विषय–सूची

परिचय **1**

इकाई 1 निर्धारित उपन्यासों एवं कहानियों से व्याख्या **3–144**

1.0 परिचय
1.1 उद्देश्य
1.2 गबन (प्रेमचन्द) से व्याख्या
1.3 आपका बंटी (मन्नू भंडारी) से व्याख्या
1.4 गुण्डा (जयशंकार प्रसाद) से व्याख्या
1.5 कफन (प्रेमचन्द) से व्याख्या
1.6 अपना–अपना भाग्य (जैनेन्द्र कुमार) से व्याख्या
1.7 तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम (फणीश्वरनाथ रेणु) से व्याख्या
1.8 चीफ की दावत (भीष्म साहनी) से व्याख्या
1.9 दोपहर का भोजन (अमरकांत) से व्याख्या
1.10 रीछ (दूधनाथ सिंह) से व्याख्या
1.11 ढाई बीघा जमीन (मृदुला सिन्हा) से व्याख्या
1.12 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
1.13 सारांश
1.14 मुख्य शब्दावली
1.15 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
1.16 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 2 हिन्दी उपन्यास एवं कहानी का उद्भव, विकास एवं प्रवृत्तियां **145–174**

2.0 परिचय
2.1 उद्देश्य
2.2 हिन्दी उपन्यास का उद्भव, विकास एवं प्रवृत्तियां
  2.2.1 पूर्व प्रेमचंद युग
  2.2.2 प्रेमचंद युग
  2.2.3 उत्तर प्रेमचंद युग
  2.2.4 स्वातंत्र्योत्तर युग
2.3 हिन्दी कहानी का उद्भव, विकास एवं प्रवृत्तियां
  2.3.1 हिंदी कहानी का उद्भव
  2.3.2 हिंदी कहानी का विकास
  2.3.3 नयी कहानी
  2.3.4 ग्रामांचल की कहानियां
  2.3.5 परवर्ती कहानी का बदलता स्वरूप
  2.3.6 प्रमुख कथाकार
2.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
2.5 सारांश
2.6 मुख्य शब्दावली

2.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
2.8 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 3 गबन/आपका बंटी का समीक्षात्मक अध्ययन **175–214**

3.0 परिचय
3.1 उद्देश्य
3.2 'गबन' का समीक्षात्मक अध्ययन
3.2.1 'गबन' की विषयवस्तु
3.2.2 'गबन' की कथावुस्त का विश्लेषण
3.2.3 'गबन' की केन्द्रीय समस्या
3.2.4 औपन्यासिक तत्वों के आधार पर 'गबन' की समीक्षा
3.3 'आपका बंटी' का समीक्षात्मक अध्ययन
3.3.1 'आपका बंटी' की विषयवस्तु
3.3.2 'आपका बंटी' की केन्द्रीय समस्या
3.3.3 औपन्यासिक तत्वों के आधार पर 'आपका बंटी' की समीक्षा
3.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
3.5 सारांश
3.6 मुख्य शब्दावली
3.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
3.8 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 4 निर्धारित कहानियों का समीक्षात्मक अध्ययन **215–260**

4.0 परिचय
4.1 उद्देश्य
4.2 'गुण्डा' कहानी की समीक्षा
4.3 'कफन' कहानी की समीक्षा
4.4 'अपना–अपना भाग्य' कहानी की समीक्षा
4.5 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम' कहानी की समीक्षा
4.6 'चीफ की दावत' कहानी की समीक्षा
4.7 'दोपहर का भोजन' कहानी की समीक्षा
4.8 'रीछ' कहानी की समीक्षा
4.9 'ढाई बीघा जमीन' कहानी की समीक्षा
4.10 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
4.11 सारांश
4.12 मुख्य शब्दावली
4.13 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
4.14 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 5 द्रुत पाठ **261–272**

5.0 परिचय
5.1 उद्देश्य
5.2 अमृत लाल नागर

5.3 यशपाल
5.4 धर्मवीर भारती
5.5 कृष्णा सोबती
5.6 मालती जोशी
5.7 मीनाक्षी स्वामी
5.8 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
5.9 सारांश
5.10 मुख्य शब्दावली
5.11 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
5.12 सहायक पाठ्य सामग्री

परिचय

टिप्पणी

प्रस्तुत पुस्तक 'हिन्दी कथा साहित्य' विश्वविद्यालय द्वारा निर्धारित बी.ए. हिन्दी 'प्रथम वर्ष' के पाठ्यक्रम के अनुरूप लिखी गई है।

विश्व साहित्य का प्रारंभ ही संभवतः कहानियों से हुआ। ये कहानियां महाकाव्यों के युग से आज तक के साहित्य का मेरुदंड रही हैं, फिर भी उपन्यास को आधुनिक युग की देन कहना अधिक समीचीन होगा। साहित्य में गद्य का प्रयोग जीवन के यथार्थ चित्रण का द्योतक है। साधारण बोलचाल की भाषा द्वारा लेखक के लिए अपने पात्रों, उनकी समस्याओं तथा उनके जीवन की व्यापक पृष्ठभूमि से प्रत्यक्ष संबंध स्थापित करना आसान हो गया है। जहां महाकाव्यों में कृत्रिमता तथा विशृंखलताओं का चित्रण प्रस्तुत करने में ही अपनी कला की सार्थकता देखता है।

आधुनिक काल में गद्य का बहुमुखी विकास हुआ और अनेक गद्य विधाएं प्रकाश में आई, जिनमें हिन्दी उपन्यास एवं हिन्दी कहानी भी शामिल हैं। उपन्यास एवं कहानी कला का चरमोत्कर्ष प्रेमचंद के साहित्य में दिखाई पड़ता है। इस तरह उपन्यास का जन्म और विकास सबसे पहले 18वीं शताब्दी में यूरोप में हुआ और 19वीं शताब्दी तक इसका भारतीय साहित्य में विशिष्ट स्थान हो गया।

प्रस्तुत पुस्तक में हिन्दी कथा साहित्य के दो विशिष्ट उपन्यासों व अपने–अपने काल के प्रतिनिधि कहानियों के अध्ययन के साथ–साथ कहानी कला के उद्‌भव, विकास एवं प्रवृत्तियों का अध्ययन किया गया है। प्रत्येक इकाई के आरंभ में विषय का विश्लेषण करने से पूर्व उसके निहित उद्देश्यों को स्पष्ट कर दिया गया है। इकाई के बीच–बीच में 'अपनी प्रगति जांचिए' स्तंभ के माध्यम से विद्यार्थियों की योग्यता को परखने के लिए प्रश्न दिए गए हैं।

पाठ्यक्रम को पांच इकाइयों में समायोजित किया गया है। इन इकाइयों का विवरण इस प्रकार है–

पहली इकाई में मुंशी प्रेमचंद के उपन्यास 'गबन' तथा मन्नू भंडारी के बालमनोविज्ञान पर आधारित उपन्यास 'अपना बंटी' से प्रमुख अंशों को व्याख्यायित किया गया है। साथ ही कहानी की यात्रा को समझाने की दृष्टि से प्रेमचंद–प्रसाद युग से लेकर नयी कहानी तक की प्रतिनिधि कहानियों को भी व्याख्यायित किया गया है।

दूसरी इकाई में हिन्दी उपन्यास एवं कहानी के उद्‌भव, विकास एवं प्रवृत्तियों पर प्रकाश डाला गया है।

तीसरी इकाई में निर्धारित उपन्यासों 'गबन' व 'आपका बंटी' का समीक्षात्मक अध्ययन किया गया है।

चौथी इकाई निर्धारित कहानियों की समीक्षा पर केंद्रित है।

पांचवीं इकाई को 'द्रुत–पाठ' के नाम से सम्मिलित कर विभिन्न कालों के प्रमुख उपन्यासकारों व कहानीकारों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला गया है।

टिप्पणी

प्रस्तुत पुस्तक हिन्दी कथा साहित्य में हिन्दी कथा की यात्रा को सरलतम एवं रुचिकर ढंग से प्रस्तुत किया गया है। हमें पूर्ण विश्वास है कि हिन्दी उपन्यास एवं कहानी के उद्‌भव एवं विकास की यात्रा को पुस्तक में सम्मिलित उपन्यासों एवं कहानियों के माध्यम से छात्रों को समझाने में यह पुस्तक सहायक सिद्ध होगी।

इकाई 1 निर्धारित उपन्यासों एवं कहानियों से व्याख्या

टिप्पणी

संरचना

1.0 परिचय
1.1 उद्देश्य
1.2 गबन (प्रेमचन्द) से व्याख्या
1.3 आपका बंटी (मन्नू भंडारी) से व्याख्या
1.4 गुण्डा (जयशंकार प्रसाद) से व्याख्या
1.5 कफन (प्रेमचन्द) से व्याख्या
1.6 अपना–अपना भाग्य (जैनेन्द्र कुमार) से व्याख्या
1.7 तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम (फणीश्वरनाथ रेणु) से व्याख्या
1.8 चीफ की दावत (भीष्म साहनी) से व्याख्या
1.9 दोपहर का भोजन (अमरकांत) से व्याख्या
1.10 रीछ (दूधनाथ सिंह) से व्याख्या
1.11 ढाई बीघा जमीन (मृदुला सिन्हा) से व्याख्या
1.12 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
1.13 सारांश
1.14 मुख्य शब्दावली
1.15 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
1.16 सहायक पाठ्य सामग्री

1.0 परिचय

हिन्दी साहित्य के फलक पर उपन्यास–सम्राट मुंशी प्रेमचंद सबसे दैदीप्यमान नक्षत्र हैं। हिन्दी उपन्यास एवं कथा साहित्य को समाजोन्मुखी नवीन दिशा देकर मुंशी प्रेमचंद ने हिन्दी कथा साहित्य में एक नए युग का आरंभ किया। मुंशी प्रेमचंद का साहित्य समाज के लिए दर्पण का कार्य करता है। आरंभ में प्रेमचंद आदर्श स्थापना को अधिक जोर देते थे लेकिन समय के साथ–साथ उन्होंने अपनी कथाओं एवं उपन्यासों में यथार्थ उद्घाटित करने पर बल दिया। 'गबन', 'गोदान' उपन्यास और 'कफन' कहानी प्रेमचंद के इसी यथार्थोन्मुखी कथा दृष्टि के उदाहरण हैं।

हिन्दी साहित्य में स्त्री हस्ताक्षरों की बात हो तो मन्नू भंडारी का नाम प्रमुखता से लिया जाता है। अपनी कहानियों में स्त्री–विमर्श की प्रबल व्याख्याता मन्नू भंडारी ने अपने उपन्यास 'आपका बंटी' में एक दस साल के बच्चे का मनोविज्ञान केंद्र में रखकर उपन्यास की सृष्टि की है। ऐसा विषय हिन्दी साहित्य में अब तक लगभग अछूता था। मन्नू भंडारी की यह रचना हिन्दी उपन्यास सागर का एक दुर्लभ मोती सिद्ध हुई है।

कहानियों के कहने–सुनने का इतिहास मानव इतिहास जितना ही पुराना है। हिन्दी कथा साहित्य में यह इतिहास नवजागरण काल से दृष्टव्य होता है। भारतेंदु युग,

टिप्पणी

प्रेमचंद–प्रसाद युग, प्रेमचंदोत्तर युग, स्वातंत्र्योत्तर युग व नयी कहानी युग आदि वर्गों में वर्गीकृत कर हिन्दी कथा साहित्य के परिचय, इतिहास व यात्रा का विवेचन किया जाता है। हिन्दी कथाकारों में प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद, जैनेंद्र, फणीश्वरनाथ 'रेणु', भीष्म साहनी आदि नाम प्रमुख हैं।

इस इकाई में मुंखी प्रेमचंद के उपन्यास 'गबन' और मन्नू भंडारी के 'आपका बंटी' उपन्यास के प्रमुख अंशों की ससंदर्भ व्याख्या की गई है। कहानी की यात्रा को समझने के लिए जयशंकर प्रसाद, मुंशी प्रेमचंद, जैनेन्द्र कुमार, फणीश्वरनाथ रेणु, भीष्म साहनी, अमरकांत, दूधनाथ सिंह व मृदुला सिन्हा की कहानियों क्रमशः गुण्डा, कफन, अपना–अपना भाग्य, तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम, चीफ की दावत, दोपहर का भोजन, रीछ व ढाई बीघा जमीन के मूलपाठ सहित मुख्य अंशों की ससंदर्भ व्याख्या की गयी है।

1.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- 'गबन' उपन्यास के प्रमुख अंशों की व्यख्या कर पाएंगे;
- 'आपका बंटी' उपन्यास के प्रमुख खण्डों की व्याख्या के साथ उनकी विशिष्टताएं निर्दिष्ट कर पाएंगे;
- गुण्डा, कफन, अपना–अपना भाग्य, तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम, चीफ की दावत, दोपहर का भोजन, रीक्ष, ढाई बीघा जमीन कहानियों के विशेष अवतरणों की व्याख्या कर पाएंगे।

1.2 गबन (प्रेमचन्द) से व्याख्या

1. इस आभूषण मंडित संसार में पली हुई जालपा का यह आभूषण प्रेम स्वाभाविक ही था। महीने भर से ऊपर हो गया। उसकी दशा ज्यों की त्यों है। न कुछ खाती–पीती है, न किसी से हँसती–बोलती है। खाट पर पड़ी हुई शून्य नेत्रों से शून्याकाश की ओर ताकती रहती है। सारा घर समझाकर हार गया, पड़ोसिनें समझाकर हार गयी, दीनदयाल आकर समझा गये, पर जालपा ने राग–शय्या न छोड़ी। उसे अब घर में किसी पर विश्वास नहीं है, यहां तक कि रमा से भी उदासीन रहती है। वह समझती है कि सारा घर मेरी उपेक्षा कर रहा है। सब के सब मेरे प्राण के ग्राहक हो रहे हैं। जब इनके पास इतना धन है तो फिर मेरे गहने क्यों नहीं बनवाते? जिससे हम सबसे अधिक स्नेह रखते हैं, उसी पर सबसे अधिक रोष भी करते हैं। (पृ. 26)

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यावतरण उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचंद द्वारा लिखित प्रसिद्ध उपन्यास 'गबन' से उद्धृत है। यह उपन्यास स्त्रियों के आभूषण प्रेम पर आधारित है। कथानक का ताना–बाना जालपा की आभूषण–प्रियता को लेकर बुना गया है।

प्रसंग– ऊंचे घराने की जालपा का विवाह बेरोजगार रमानाथ से हो जाता है। उसकी ससुराल से जो गहने सर्राफ से उधार लेकर चढ़ाये गए थे, सर्राफ का तकाजा अधिक

टिप्पणी

होने पर रमानाथ ने जालपा के गहनों की संदूकची चुराकर सर्राफ को दे दी। जालपा को जता दिया गया कि गहने चोरी हो गए। जालपा को गहने चोरी हो जाने से अपार कष्ट पहुंचा। बचपन से ही वह अपने मायके में गहनों की चर्चा सुनती आई थी। तीन वर्ष की अबोध बालिका वाली उम्र में भी उसने सोने के गहने पहने थे। और आज नई दुल्हन बनकर वह आभूषणों से वंचित हो गई थी।

व्याख्या– प्रेमचंद जालपा की स्थिति का चित्रांकन करते हुए कहते हैं कि स्त्रियों का आभूषण प्रेम स्वाभाविक है। ससुराल से गहने चढ़ाना बहू के प्रति उनके लाड–प्यार का प्रतीक माना जाता है। साथ ही गहने उनकी संपन्नता के भी परिचायक होते हैं। फिर जालपा के मायके में तो स्त्रियों के मध्य आभूषणों की ही चर्चा रहती थी। उसे बार–बार यह बताया जाता था कि उसका दूल्हा उसके लिए सुंदर–सुंदर गहने लेकर आयेगा। गहनों की ही चर्चा सुनते–सुनते जालपा का गहनों के प्रति अपार आकर्षण हो जाना स्वाभाविक ही था।

गहने चोरी हुए एक महीना हो चुका था। जालपा अभी तक इस सदमे से बाहर नहीं निकली थी। उसने खाना–पीना, हंसना–बोलना सब त्यागकर चारपाई पकड़ ली थी। वह चारपाई पर चुपचाप पड़ी शून्य आकाश को निहारा करती थी। उसकी सारी गतिविधियां, सारी चेष्टाएं निष्चेष्ट हो गई थी। चुपचाप गुमसुम पड़ी रहती थी। पड़ोसिनों ने भी उसे सांत्वना प्रदान करने की कोशिश की, उसके पिता भी आकर उसको समझा गए, लेकिन उसकी निस्तब्धता नहीं टूटी। गहने चोरी हो जाने का दुख सारे सुखों, दांपत्य प्रेम आदि पर भारी पड़ गया।

पति रमानाथ ने उस पर अपनी संपन्नता की बड़ी डींगे हांक रखी थी। उसे इसी बात का मलाल था कि जब ससुराल में इतना धन है तो उसके गहने क्यों नहीं बनवा देते? यदि उसे घर की वास्तविक स्थिति का आभास होता तो उसे इतना दुख नहीं होता। वह सब्र कर लेती, किंतु ससुराल वालों द्वारा अपनी कलई खुलने के डर से सच नहीं बताया जा रहा था और वह उनकी चुप्पी को उनकी उपेक्षा समझकर खिन्न थी। उसे ससुराल में ज्यादा क्रोध अपने पति रमानाथ पर था। वही तो अपनी संपन्नता के बारे में बढ़–चढ़कर बताते थे, और आज सामर्थ्य रहते हुए भी उसके गहने नहीं बनवा रहे। वास्तविक प्रेम तो प्रिय को खुशी देने में ही है। जालपा को अपने पति पर सबसे ज्यादा प्रेम था, अतः सबसे ज्यादा रोष भी उसी पर था, क्योंकि कई बार रोष प्रेम का ही दूसरा रूप होता है।

विशेष

- जालपा के आभूषण प्रेम के साथ–साथ उसकी मनःस्थिति का सुंदर चित्रांकन है।
- जालपा का रूठना स्वाभाविक है क्योंकि बालहठ, राजहठ के साथ–साथ त्रियाहठ भी प्रसिद्ध है।
- वास्तविकता के दुराव–छिपाव से संबंधों में भ्रामक स्थिति उत्पन्न हो जाती है। क्षणिक प्रशंसा पाने की चाह में संपन्नता की डींगें हांकना बहुधा बहुत कष्टकारक होता है।
- भाषा–शैली बड़ी सरल, सुबोध है।

टिप्पणी

2. पहले सब ऐसे ही घबराते हैं, मगर सहते सहते आदत पड़ जाती है। तुम्हारा दिल धड़क रहा होगा कि न जाने कैसे बीतगी। जब मैं नौकर हुआ, तो तुम्हारी ही उम्र मेरी भी थी और शादी हुए तीन ही महीने हुए थे। जिस दिन पेशी होने वाली थी, ऐसा घबराया हुआ मानो फांसी पाने जा रहा हूँ; मगर तुम्हें डरने का कोई कारण नहीं है। मैं सब ठीक कर दूंगा। (पृ. 35)

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यावतरण कालजयी साहित्यकार मुंशी प्रेमचंद द्वारा लिखित सामाजिक उपन्यास 'गबन' से व्याख्यार्थ उद्धृत है।

प्रसंग– बड़े घर की बेटी जालपा का विवाह बेरोजगार रमानाथ से हो जाता है। जालपा को उधारी के जेवर चढ़ाने पड़ते हैं। तकाजा अधिक होने पर रमानाथ जेवर की संदूकची उठाकर सर्राफ को वापस करा देता है। जालपा से जेवर चोरी हो जाने की बात कह दी जाती है। जालपा पति रमा पर कोई न कोई नौकरी पकड़ लेने का दवाब बनाती है। म्यूनिसिपैलिटी के बड़े बाबू रमेश उसे अपने दफ्तर में रिक्त स्थान पर आवेदन करने का सुझाव देते हैं। शाही दिमाग का रमा यह सोचकर दफ्तर की नौकरी करने से सकुचाता है 'मुझे तो अर्जी लेकर जाते ही शर्म आती है। खुशामद कौन करेगा। पहले मुझे क्लर्कों पर बड़ी हंसी आती थी, पर वही बला मेरे सिर पर पड़ी।'

व्याख्या– रमेश रमानाथ को समझाते हुए कहता है कि शुरुआत में सब आवेदक और नये कर्मचारी बॉस की डांट फटकार से घबराते हैं, लेकिन धीरे–धीरे इन बातों की आदत पड़ जाती है तो बाद में सब कुछ सामान्य लगने लगता है। प्रारंभ में सभी नये लोग आशंकित रहते हैं कि नौकरी में निभाव कैसे होगा, कोई त्रुटि तो नहीं हो जाएगी? इतना काम कैसे किया जाएगा? लेकिन काम करते–करते काम करने का सलीका भी आ जाता है और काम करने का अभ्यास भी हो जाता है।

रमेश अपना अनुभव बताकर उसका मनोबल बढ़ाते हुए कहता है कि म्यूनिसिपैलिटी की नौकरी करते समय वह भी उसी की उम्र का था। नई–नई शादी हुई थी। उस स्वप्निल दुनिया से निकलकर जब नौकरी करने आया तो बड़ी घबराहट थी। ऐसा लग रहा था जैसे फांसी की सजा मिलने वाली है। लेकिन आज सब कुछ सामान्य है। कोई भी व्यक्ति नौकरी के नये वातावरण में धीरे–धीरे रम ही जाता है। काम करने का सलीका भी आ जाता है और मन भी लगने लगता है। रमेश उसे समझाते हुए कहता है कि उसे तो डरने या घबराने की कोई जरूरत ही नहीं है क्योंकि उसकी सहायता और मार्गदर्शन के लिए वह वहां है। वह वहां सारी स्थितियों को उसके अनुकूल बना देगा, जिससे उसे कोई असुविधा नहीं होगी। अतः वह दफ्तर के माहौल में अपने समायोजन के संबंध में निश्चिंत हो सकता है।

विशेष

- रमेश के खरे व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला गया है। वह रमानाथ का सच्चा मित्र, सहायक और शुभचिंतक है। वह हमेशा उसका पथ–प्रदर्शन करता है और कुमार्ग से बचाता है।
- अवतरण में मानवीय स्वभाव की दुर्बलताओं की ओर संकेत किया गया है। नये परिवेश के बारे में सोच–सोचकर प्रारंभ में मन में बहुत–सी आशंकाएं जन्म ले

टिप्पणी

लेती हैं, लेकिन व्यवाहारिक स्थिति में आने पर धीरे–धीरे समायोजन होने लगता है और पुरानी आशंकाएं निर्मूल साबित होती हैं।

- संवाद उपन्यास के महत्वपूर्ण अंग हैं। उन्हीं से ही पात्रों का चरित्र–चित्रण एवं कथानक का विकास होता है। इस अवतरण में रमेश का संवाद बहुत सहज–स्वाभाविक बन पड़ा है।
- भाषा–शैली बहुत ही व्यावहारिक व सजीव है। इसमें कहीं भी कृत्रिमता दृष्टिगोचर नहीं होती।

3. कर्ज से बड़ा पाप दूसरा नहीं। न इससे बड़ी विपत्ति दूसरी है। जहां एक बार धड़का खुला कि तुम आये दिन सर्राफ की दुकान पर खड़े नजर आओगे। बुरा न मानना। मैं जानता हूँ, तुम्हारी आमदनी अच्छी है पर भविष्य के भरोसे पर और चाहे जो काम करो लेकिन कर्ज कभी मत लो। गहनों का मरज न जाने इस दरिद्र देश में कैसे फैल गया। जिन लोगों के भोजन का ठिकाना नहीं, वे भी गहनों के पीछे प्राण देते हैं। हर साल अरबो रुपये केवल सोना–चाँदी खरीदने में व्यय हो जाते हैं। संसार में और किसी देश में इन धातुओं की इतनी खपत नहीं। (पृ. 46)

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यांश हिंदी के उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचंद विरचित पारिवारिक उपन्यास 'गबन' से व्याख्यार्थ अवतरित है। इस उपन्यास में मुख्य कथा स्त्रियों के आभूषण प्रेम की है।

प्रसंग– उपन्यास का आरंभ ही जालपा और उसकी माता मानकी के आभूषण–प्रेम से होता है। बचपन से ही उसके दिलदिमाग में यह बात सुनिश्चित कर दी जाती है कि उसका दूल्हा उसके लिए सुंदर–सुंदर गहने लायेगा। लेकिन मध्यवर्गीय ससुराल में आकर उसका आभूषण–प्रेम संतुष्ट न हो सका। जालपा उदास रहने लगती है। रमानाथ उसकी पीड़ा को समझकर सर्राफे से वादे पर आभूषण खरीदकर जालपा को खुश करना चाहता है। उसका शुभचिंतक मित्र रमेश उसे उधारी पर आभूषण खरीदने से रोकता है– 'इस खब्त में मत पड़ो। जब तक रुपये हाथ में न हो, बाजार की तरफ जाओ ही मत... भई कर्ज की लत बुरी है।'

व्याख्या– रमेश रमानाथ को साफ शब्दों में समझाता हुआ कहता है कि कर्ज लेना बहुत सी समस्याओं को आमंत्रण देना है। इसे 'पाप' कहने में भी कोई अत्युक्ति नहीं है। कर्ज सबसे बड़ी विपत्ति है। आदमी कर्ज लेकर सामान और आभूषण आदि खरीदने से जितना डरता रहे, उतना ही अच्छा है। कर्ज से आया सामान एक बार क्षणिक खुशी तो देता है, लेकिन ब्याज लगकर वह रकम इतनी ज्यादा हो जाती है कि चुकाना मुश्किल हो जाता है और तकाजों से फजीहत होती है, वह भी कुछ कम पीड़ादायक नहीं होती। यदि एक बार कोई इंसान कर्ज से जेवर खरीद लेता है तो घर से तुरंत दूसरे जेवर की मांग आ जाती है और इसी तरह मांग बढ़ती जाती है और पुरुष कर्ज के दलदल में फंसता चला जाता है। 'भविष्य में पैसे चुका ही दिये जाएंगे' इस भरोसे के साथ कर्ज लेना कदापि ठीक नहीं।

रमेश आगे आभूषणप्रियता की प्रवृत्ति की निंदा करता हुआ कहता है कि भारत जैसे गरीब देश में आभूषणप्रियता किसी रोग से कम नहीं। यह रोग इस देश में हर

टिप्पणी

जगह और हर वर्ग में फैला हुआ है। अमीर और गरीब– सभी इस रोग की चपेट में हैं। जो लोग अत्यंत गरीब हैं कि दो वक्त की रोटी का भी ठीक प्रकार से प्रबंध नहीं कर सकते, उनमें भी गहनों की तृष्णा कुछ कम नहीं। वे भी रोटी से पहले गहनों की व्यवस्था करने में जुट जाते हैं। जितनी आभूषणप्रियता भारत में है, उतनी किसी अन्य देश में नहीं है। भारत में तो प्रतिवर्ष अरबों रुपये सोने–चांदी खरीदने में व्यय हो जाते हैं। उन्नत देशों में धन व्यापार में लगाया जाता है लेकिन हमारे यहां अधिकांश धन गहने बनवाने और तुड़वाने और फिर नये डिजाइन के बनवाने में ही नष्ट कर दिया जाता है।

विशेष

- रमेश एक प्रौढ़ आयुवर्ग का समझदार पुरुष है इसलिए जोशीले युवा रमानाथ को आभूषण के चक्कर में कर्ज न लेने की उसकी सलाह बहुत व्यावहारिक है।
- रमेश के माध्यम से प्रेमचंद ने कर्ज और आभूषणप्रियता पर जो विचार व्यक्त किये हैं, वे बहुत प्रगतिशील विचारधारा के द्योतक हैं।
- भाषा बहुत सहज–स्वाभाविक है। प्रेमचंद स्वाभाविक और पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग करने में ही विश्वास रखते हैं।

4. आधी रात बीत चुकी थी। रमा आनंद की नींद सो रहा था। जालपा ने छत पर आकर एक बार आकाश की ओर देखा। निर्मल चांदनी छिटकी हुई थी– वह कार्तिक की चांदनी जिसमें संगीत की शांति है, शांति का माधुर्य और माधुर्य का उन्माद। जालपा ने कमरे में आकर अपनी सन्दूकची खोली और उसमें से वह काँच का चन्द्रहार निकाला जिसे एक दिन पहनकर उसने अपने को धन्य समझा था। पर अब इस नये चन्द्रहार के सामने उसकी चमक उसी भांति मंद पड़ गई थी, जैसे इस निर्मल चन्द्रज्योति के सामने तारों का आलोक। उसने उस नकली हार को तोड़ डाला और उसके दानों को नीचे गली में फेंक दिया, उसी भांति जैसे पूजन समाप्त हो जाने के बाद कोई उपासक मिट्टी की मूर्तियों को जल में विसर्जित करता है। (पृ. 54–55)

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण उपन्यास–सम्राट मुंशी प्रेमचंद द्वारा लिखित चर्चित उपन्यास 'गबन' से उद्धृत है। इस उपन्यास में लेखक ने स्त्रियों की आभूषण–प्रियता के परिणामस्वरूप गबन और उसके कारण निर्वासन तथा मिथ्या अभियोग की कथा बहुत सुंदर ढंग से वर्णित की है।

प्रसंग– जालपा में बालपन से ही आभूषण प्रेम के संस्कार आरोपित कर दिए गए थे। दादी उसे गोद में खिलाती तो कहती– 'तेरा दूल्हा तेरे लिए बड़े सुंदर गहने लाएगा।' विवाह के उपरांत जब रमानाथ ने उससे गहने चोरी हो जाने की बात कही तो वह बड़ी हताश और उदास रहने लगी। रमानाथ आज अपनी नौकरी से जब उसके लिए चंद्रहार और शीशफूल लेकर आया तो जालपा की चिरसंचित अभिलाषाएं पूरी हो गईं। गहने पहनकर उसके उल्लास की कोई सीमा ही न रही।

व्याख्या– रमानाथ पत्नी को गहने प्रदान कर संतुष्ट भाव से सो चुका था, किंतु जालपा को तो खुशी के मारे नींद ही नहीं आ रही थी। वह उमंग में भरकर आधी रात को छत पर चढ़ आयी। उसने देखा– चारों तरफ कार्तिक माह की स्वच्छ चांदनी छिटकी हुई

है। भाद्रमास में आकाश में मेघ छाये रहते हैं, किंतु कार्तिक में तो आकाश बिल्कुल साफ हो जाता है। आज जालपा के अपने मन में शांति थी, गहने पाकर उसका अपना मन उल्लसित था, तो उसे वही सारे भाव प्रकृति में भी दृष्टिगत हो रहे थे।

टिप्पणी

फिर जालपा ने अपने कमरे में आकर अपने गहनों का डिब्बा खोला और उसने कांच का चंद्रहार निकाला। एक समय था जब उसे यही चंद्रहार बड़ा आकर्षक लगा था, लेकिन आज असली चंद्रहार के सामने तो वह उतना ही फीका दृष्टिगत हो रहा था, जितना चन्द्रज्योति के सामने तारों का प्रकाश। जालपा ने कांच के चंद्रहार को व्यर्थ समझकर तोड़ दिया और इसके दानों को नीचे सड़क पर फेंक दिया। जालपा का यह क्रिया–कलाप ठीक वैसे ही था, जैसे कोई उपासक पहले तो बड़े मनोयोग से मिट्टी की मूर्तियों को साक्षात् देव समझकर उनका पूजन–अर्चन करता है, लेकिन पूजा समाप्त होने के बाद रीति–रिवाज के अनुसार उन्हें निःसंकोच भाव से जल में विसर्जित कर देता है।

विशेष

- जालपा के आभूषण प्रेम और उसकी मुग्धता का सुंदर चित्रण है।
- निर्मल चांदनी का कवित्वपूर्ण वर्णन है।
- भाषा–शैली अतिशय साहित्यिक एवं भाव–प्रवण है।

5. हम क्षणिक मोह और संकोच में पड़कर अपने जीवन के सुख और शान्ति का कैसे होम कर देते हैं। अगर जालपा मोह के इस झोंके में अपने को स्थिर रख सकती, अगर रमा संकोच के आगे सिर न झुका देता, दोनों के हृदय में प्रेम का सच्चा प्रकाश होता, तो वे पथ–भ्रष्ट होकर सर्वनाश की ओर न जाते। ग्यारह बज गए थे। दफ्तर के लिए देर हो रही थी; पर रमा इस तरह जा रहा था, जैसे कोई अपने प्रिय बंधु की दाह क्रिया करके लौट रहा हो। (पृ. 61)

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यांश हिंदी के अप्रितम उपन्यासकार मुंशी प्रेमचंद द्वारा लिखित सुप्रसिद्ध उपन्यास गबन से व्याख्यार्थ उद्धृत है। इस उपन्यास में जालपा की आभूषणप्रियता के कारण रमानाथ की विकट स्थिति, गबन, निर्वासन और मिथ्या अभियोग की कथा बहुत मार्मिक ढंग से वर्णित की गई है।

प्रसंग– जालपा में बालपन से ही आभूषणप्रियता के संस्कार आरोपित कर दिये गए थे। विवाह के उपरांत गहनों की संदूकची चोरी हो जाने पर वह बड़ी हताश और उदास रहने लगी। म्यूनिसिपैलिटी की नौकरी लगने पर जब रमानाथ उसके लिए चंद्रहार और शीशफूल लेकर आया तो उसके उल्लास की कोई सीमा न रही। जालपा की खुशी के लिए रमानाथ ये जेवर सामर्थ्य की कमी होते हुए भी उधारी पर ले आया था। कुछ दिनों बाद चरणदास नामक दलाल जालपा को कंगन और रिंग पसंद करा गया, जिनका मूल्य सात सौ रुपये रमानाथ की सामर्थ्य से बाहर था, लेकिन रमानाथ को तकाजे सहना, लज्जित होना, मुंह छिपाये फिरना, चिंता की आग में जलना, सब कुछ मंजूर था लेकिन ऐसा काम करना नामंजूर था, जिसमें जालपा का दिल टूट जाए या वह स्वयं को अभागिन समझने लगे।

व्याख्या– लेखक ने दोनों की मनःस्थिति पर टिप्पणी करते हुए कहा है कि जालपा और रमानाथ दोनों में पारस्परिक प्रेम था, लेकिन दोनों में अलग–अलग कारणों से संप्रेषण

टिप्पणी

की कमी थी। जालपा आकर्षक कंगन और रिंग देखकर उनके क्षणिक मोह में पड़ गई थी और रमानाथ उधारी के वे जेवर जालपा को लेने से संकोचवश नहीं रोक सका। प्रेम और परिस्थितियों के संघर्ष में अंततः प्रेम ने विजय पाई लेकिन यह प्रेम सुख–शांति प्रदायक न होकर विछोह का कारण बन गया। जालपा पति की आर्थिक हालत समझती थी पर मोहक जेवर देखकर वह यथार्थ को भुलाकर उनके माया जाल में फंस गई और रमाकांत भी अपेक्षित समझदारी नहीं दिखा सका। संकोच ने उसे मूक कर दिया। यदि रमा उसे साफ–साफ अपनी आर्थिक स्थिति बता देता तो जालपा भी उधारी के जेवर लेना पसंद न करती और दोनों पारस्परिक विश्वास और सुख–शांति के साथ अपना जीवन व्यतीत करते। दोनों के हृदय में एक दूसरे के प्रति सच्चे प्रेम का उदय होता लेकिन दोनों ही अपने–अपने कर्तव्य से इतर हो चुके थे और इन जेवरों ने आगे चलकर उनके जीवन में सर्वनाश का बीज बो दिया। रमानाथ बढ़ते कर्ज की बात सोचकर मन ही मन परेशान हो गया। ग्यारह बज रहे थे। दफ्तर जाने के लिए देरी हो रही थी। रमाकांत ऋण के बोझ से दबा ऐसे चल रहा था जैसे किसी प्रिय बंधु की दाह–क्रिया करके लौट रहा हो।

विशेष

- कर्ज का बोझ बहुत भयंकर होता है। ब्याज के कारण कर्ज की रकम दिन–रात इतनी बढ़ती चली जाती है कि उसे चुकाना मुश्किल हो जाता है। जेवरों के कारण रमानाथ दफ्तर के पैसे समय पर नहीं चुका सका और उसे अपना शहर छोड़कर कलकत्ता भागना पड़ा, जहां वह अनेक उलझनों में फंस गया।
- दाम्पत्य संबंधों की वास्तविक खुशी रुपये–पैसे अथवा आभूषणों की मोहताज नहीं होती। उसमें भरोसे और पारस्परिक बातचीत की अधिक आवश्यकता व महत्ता है।
- भाषा–शैली प्रभावूपर्ण व बोधगम्य है।

6. जिन्दादिल बूढ़ों के साथ तो सोहबत का आनन्द उठाया जा सकता है, लेकिन ऐसे रुखे, निर्जीव मनुष्य जवान भी है जो दूसरों को मुर्दा बना देते हैं। वकील साहब ने बहुत आग्रह करने पर दो घूंट चाय पी। दूर से बैठे तमाशा देखते रहे। इसलिए जब रतन ने जालपा से कहा– चलो, हम लोग जरा बागीचे की सैर करें, इन दोनों महाशयों को समाज और नीति की विवेचना करने दें, तो मानो जालपा के गले का फंदा छूट गया। रमा ने पिंजड़े में बंद पक्षी की भांति उन दोनों को कमरे से निकलते देखा और एक लम्बी सांस ली। (पृ. 67)

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचंद द्वारा विरचित सामाजिक–पारिवारिक उपन्यास 'गबन' से व्याख्यार्थ उद्धृत है।

प्रसंग– इस उपन्यास में लेखक ने रमानाथ और जालपा की आधिकारिक कथा के साथ वकील साहब और उनकी पत्नी रतन की प्रासंगिक कथा भी नियोजित की है। वकील साहब प्रयाग के नामी वकील रहे हैं। साठ साल की उम्र में अब उनकी सेहत जवाब दे चुकी है। उन्होंने अब रोग–शय्या पकड़ ली थी। तीस साल विधुर का एकाकी जीवन जीते हुए उन्होंने नवयुवती रतन से पुनर्विवाह किया था। उम्र की दृष्टि से अनमेल विवाह होने पर भी दोनो पति–पत्नी में पारस्परिक गहरा प्रेम था। दोनों एक

दूसरे के हितों का बहुत ध्यान रखते थे। रतन ने जालपा को अपनी सखी बनाकर उसे रमानाथ के साथ अपने घर चाय पर बुलाया हुआ है।

टिप्पणी

व्याख्या– चारों लोगों ने एक साथ बैठकर चाय–नाश्ता किया। फल खाये लेकिन वकील साहब की उपस्थिति में हंसने–बोलने में रमानाथ और जालपा दोनों को ही संकोच हो रहा था। रमा, जालपा और रतन युवा पीढ़ी के थे और वकील साहब साठ साल के बूढ़े और ऊपर से बीमार तथा गुमसुम रहने वाले और न के बराबर बोलने वाले। ऐसे जिंदगी से हताश और मृतप्राय से व्यक्ति के सामने हंसी मजाक करने का माहौल ही नहीं बन पा रहा था। यह संकोच और दूरी सिर्फ उनकी उम्र की अधिकता की वजह से नहीं थी। उनके रुखे ओर चुप से रहने वाले गंभीर स्वभाव की वजह से भी थी। जिंदादिल बूढ़ों की संगति का तो आनंद उठाया जा सकता है, किंतु रुखे और शुष्क से व्यक्ति यदि युवा भी हों, तो उनकी सोहबत सबको अरुचिकर लगती है क्योंकि वे स्वयं तो हताश–उदास से रहते हैं और अपने संपर्क में आने वाले व्यक्तियों में भी वे ऐसे ही नकारात्मक भावों का संचरण कर देते हैं।

वकील साहब हंसने–बोलने में तो शून्य थे ही, संग–साथ में खान–पान में भी रुचि नहीं ले रहे थे। बड़ी मुश्किल से उन्होंने दो घूंट चाय पी और दूर बैठे अपने मेहमानों को तमाशे की भांति देख ही रहे थे, बातचीत में शामिल नहीं हो रहे थे। इससे वातावरण बड़ा बोझिल हो रहा था। इस बोझिलता का अनुभव कर जब मेजबान रतन ने जालपा को बाहर बगीचे की सैर करने के लिए कहा तो बोर हो चुकी जालपा ने राहत की सांस ली। स्त्रियां सिर्फ खान–पान से संतुष्ट नहीं होती। वे अपनी सखी से आत्मीयता से बात भी करना चाहती हैं। रमानाथ को मजबूरी में वकील साहब के साथ ही रुकना पड़ा। उन जैसे खामोश व्यक्ति के साथ समय काटना बहुत मुश्किल था। वह स्वयं को पिंजरे में बंद पंछी की भांति असहाय और बंधा–बंधा अनुभव कर रहा था। वकील साहब का साहचर्य उसे विपत्ति की तरह से लग रहा था।

विशेष

- अवतरण में लेखक ने एक महत्वपूर्ण कथ्य उद्घाटित किया है कि जिंदादिली का वास्तविक संबंध स्वभाव से है, उम्र से नहीं। सभी लोग जिंदादिल और खुशमिजाज लोगों को ही पसंद करते हैं जैसा कि एक शायर ने भी कहा है–

  जिंदगी जिन्दादिली का नाम है
  मुर्दादिल क्या खाक जिया करते हैं।

- भाषा पात्रानुकूल, सजीव व मुहावरेदार है (गले का फंदा टूटना)।

7. हमसे तो भाई यह अंग्रेजियत नहीं देखी जाती। क्या करें संतान की ममता है, नहीं तो यही जी चाहता है कि रमा से साफ कह दूँ, भैया अपना घर अलग लेकर रहो। आँख फूटी पीर गयी। मुझे तो उन मर्दों पर क्रोध आता है, जो स्त्रियों को भी सिर चढ़ाते हैं। देख लेना, एक दिन यह औरत वकील साहब को दगा देगी। (पृ 73)

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यांश हिंदी के अद्वितीय कथाशिल्पी मुंशी प्रेमचंद द्वारा विरचित चर्चित उपन्यास 'गबन' से व्याख्यार्थ अवतरित है। उपन्यास में एक मध्यम वर्ग की पारिवारिक समस्याओं को उकेरा गया है।

टिप्पणी

प्रसंग– नायक रमानाथ के पिता दयानाथ अपनी नौकरी में बहुत ईमानदार हैं। अपनी चादर देखकर पांव पसारने में विश्वास रखते हैं। अंग्रेजी की नकल को वे बहुत बुरा समझते थे लेकिन स्त्रियों की स्वतंत्रता के संबंध में उनके विचार बड़े दकियानूसी हैं। उन्हें स्त्रियों का घर से बाहर पांव निकालना अच्छा मालूम नहीं देता। जब जालपा की सखी रतन अकेली मोटर में बैठकर आती है और कंगन बनवाने के लिए छह सौ रुपये रमानाथ को देकर वापस चली जाती है तो दयानाथ को रतन का यों उनके घर आना–जाना अच्छा नहीं लगता। वे अपने बेटे के मित्र रमेश से इस समय में अपने बेबाक विचार व्यक्त करते हैं।

व्याख्या– दयानाथ ने रमेश से कहा कि भारत में स्त्रियों को गृहलक्ष्मी कहा जाता है। उनका स्थान और कार्य क्षेत्र घर और पुरुष का कार्यक्षेत्र बाहर है। बाहर खुलेआम आना–जाना अंग्रेजी परंपरा है। अंग्रेजी स्त्रियां ही बाहर घूमती–फिरती रहती हैं। वे तो रमानाथ की स्वच्छंदता देखकर उसे अलग घर बसाने के लिए कहना चाहते हैं, जिससे उसकी स्वतंत्रता और पर महिला का उससे बातचीत करना उन्हें अपनी आंखों से न देखना पड़े। अपनी रुचि और रीति–नीति के विपरीत बातों को आंखों से प्रत्यक्ष देखना कष्टकर होता है। पीठ पीछे कोई कुछ भी करता रहे, कोई अंतर नहीं पड़ता। आंखों देखी बुराई अधिक खटकती है। दयानाथ उन पुरुषों के प्रति अपना रोष व्यक्त करते हैं जो अपने घर की स्त्रियों को इतनी आजादी दिये रखते हैं, जितनी वकील साहब ने युवा पत्नी रतन को दे रखी है। स्त्रियों को अनुशासन में रखना ही पुरुष के लिए उचित है। उसे अधिक आजादी ओर अधिकार देना उसे उच्छृंखल बना देना है। स्त्रियां आजादी का सही उपयोग नहीं करती। उनकी स्वतंत्रता उच्छृंखलता में बदल जाती है। अधिक स्वतंत्रता स्त्रियों को पथ–भ्रष्ट बना देती है। दयानाथ रमेश से रतन के बारे में अपने विचार रखते हैं कि बूढ़े वकील की यह नौजवान पत्नी रतन एक न एक दिन वकील साहब को धोखा देकर उन्हें छोड़कर चली जाएगी।

विशेष

- दयानाथ और रमेश की बातचीत के माध्यम से स्त्रियों की स्वतंत्रता पर पक्ष–विपक्ष में विचार व्यक्त किये गए हैं। रमेश दयानाथ के विचारों से बिल्कुल सहमत नहीं हैं। वह निस्संकोच अपनी असहमति व्यक्त करते हुए कहता है– "यह क्यों मान लेते हो कि जो औरत बाहर आती–जाती है, वह जरूर ही बिगड़ी हुई है। तुलसीदास ने भी स्त्रियों की स्वतंत्रता का समर्थन नहीं किया– 'जिमि स्वतन्त्र हुई बिगरई नारी'।" इस विचार–विमर्श से पात्रों के चरित्र पर तो प्रकाश डलता ही है, साथ–साथ उपन्यास को समझने में भी मदद मिलती है।
- भाषा–शैली बहुत सटीक तथा मुहावरेदार है। 'सिर चढ़ाना' और 'आंख फूटी पीर गई' जैसे मुहावरों के प्रयोग से अवतरण बहुत प्रभावशाली हो गया है।

8. जिस देश में स्त्रियों की जितनी अधिक स्वाधीनता है, वह देश उतना ही सभ्य है। स्त्रियों को कैद में, परदे में या पुरुषों से कोसों दूर रखने का तात्पर्य यही निकलता है कि आपके यहाँ जनता कितनी आचार–भ्रष्ट है कि स्त्रियों का अपमान करने में जरा भी संकोच नहीं करती है। युवकों के लिए राजनीति, धर्म, ललित कला, साहित्य, दर्शन, इतिहास, विज्ञान और हजारों ही ऐसे विषय हैं जिनके आधार पर वे युवतियों से गहरी दोस्ती कर सकते हैं। कामलिप्सा उन

देशों के लिए आकर्षण का प्रधान विषय है जहाँ लोगों की मनोवृत्तियां संकुचित रहती हैं। (पृ. 89)

टिप्पणी

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण साहित्य के अमर कीर्ति स्तंभ मुंशी प्रेमचंद लिखित 'गबन' उपन्यास से व्याख्यार्थ उद्धृत है। इस उपन्यास में स्त्रियों की आभूषणप्रियता जन्य समस्याओं के साथ–साथ स्त्री–पुरुष समानता, स्त्री–स्वतंत्रता आदि पर भी गंभीर चिंतन–मनन स्थान–स्थान पर देखने को मिलता है।

प्रसंग– उपन्यास में जालपा और रमानाथ की मुख्य कथा के साथ–साथ रतन और वकील साहब के माध्यम से अनमेल विवाह और विधवा समस्या पर भी प्रकाश डाला गया है। रमानाथ का वकील साहब के यहां आना–जाना है। वकील साहब एक तेजस्वी व्यक्ति हैं, यद्यपि वार्धक्य ने अब उनकी शारीरिक शक्तियां शिथिल कर दी है। बातों ही बातों में स्त्रियों के चरित्र और उनकी स्वाधीनता पर चर्चा चल पड़ती है।

व्याख्या– वकील साहब साल भर योरप और अमेरिका में रह चुके हैं। स्त्रियों के साथ उनकी दोस्ती भी रही है। स्वानुभव और अपने चिंतन–निरीक्षण के आधार पर वे रमानाथ से कहते हैं कि किसी देश की सभ्यता का पता स्त्रियों की स्वाधीनता से चलता है। जिस देश में स्त्रियों को स्वतंत्रता दी जाती है, वह देश उतना ही सभ्य माना जाता है। स्त्रियों की चरित्र रक्षा के नाम पर उन्हें घर के अंदर बंद रखना, परदे में रखना और पुरुष की दृष्टिपात से भी बचाकर उनका अपमान करना है। स्त्रियों की स्वाधीनता छीन लेने का अभिप्राय यही है कि वहां के पुरुष आचारहीन हैं क्योंकि किसी भी प्रकार के चारित्रिक पतन में पुरुषों की भूमिका को कदापि कम नहीं माना जा सकता। योरप में स्त्रियों की स्वाधीनता पर कोई बंधन नहीं है। वे पुरुषों के समान ही पढ़ी–लिखी और राजनीति, धर्म, ललितकला, साहित्य, दर्शन, इतिहास, विज्ञान आदि हजारों विषयों पर पुरुषों की भांति समान अधिकार रखती हैं। स्त्री–पुरुष दोनों ही बहुत से विषयों पर बातचीत करते–करते एक दूसरे के गहरे दोस्त बन जाते हैं। उनमें आपस में स्नेह और सहानुभूति की इतनी बातें पैदा हो जाती हैं कि कामुकता का अंश बहुत थोड़ा रह जाता है। रूढ़िवादी देश के लोगों का अंतःकरण इतना मलिन हो गया है कि स्त्री–पुरुष को एक जगह देखकर आप संदेह किये बिना नहीं रह सकते। भोगेच्छा उन देशों के लिए आकर्षण का प्रधान विषय है, जहां लोगों की मनोवृत्तियां संकुचित हो जाती हैं। संकुचित परिवेश में पले हुए व्यक्ति स्त्री–पुरुष को साथ–साथ देखकर उनके बारे में गलत धारणा बनाये बिना नहीं रह सकते। जहां स्त्री–पुरुष को जबरदस्ती अलग–अलग रखा जाता है, वहां दोनों में मित्रता के स्थान पर कामलिप्सा का ही भाव विकसित होने की संभावना रहती है।

विशेष

- वकील साहब के विचारों में तार्किकता व यथार्थ का पुट है। उनका कथ्य वास्तव में विचारणीय है। सच्चाई यही है कि अधिक दमन से उत्तेजना का ही जन्म होता है।
- समकालीन मुद्दों पर पात्रों के माध्यम से किये गए विचार–विमर्श से उपन्यास में वैचारिकता व कलात्मकता का समावेश होता है। उपन्यास में कथा–रस के साथ–साथ बौद्धिकता का समावेश भी आवश्यक है।
- भाषा–शैली विचार प्रधान विषय होने के कारण सरल, सुबोध व गंभीर है।

टिप्पणी

9. उन्हें अपने जीवन में एक आधार की जरूरत थी–सदेह आधार की, जिसके सहारे वह इस जीर्ण दशा में भी जीवन–संग्राम में खड़े रह सकें, जैसे किसी उपासक को प्रतिमा की जरूरत होती है। बिना प्रतिमा के वह किस पर फूल चढ़ाये, किसे गंगाजल से नहलाये, किसे स्वादिष्ट चीजों का भोग लगाये। इसी भांति वकील साहब को भी पत्नी की जरूरत थी। रतन उनके लिए सदेह कल्पना मात्र थी, जिससे उनकी आत्मिक पिपासा शांत होती थी। कदाचित् रतन के बिना उनका जीवन उतना ही सूना होता, जितना आँखों के बिना मुख। (पृ. 105)

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण हिंदी के अद्वितीय कथा–शिल्पी मुंशी प्रेमचंद के महत्वपूर्ण उपन्यास 'गबन' से उद्धृत है। इस उपन्यास का पूर्वार्द्ध महिलाओं की आभूषण–प्रियता पर आधारित है। इसमें जालपा और रमानाथ की मुख्य कथा के साथ–साथ वकील साहब और उनकी पत्नी रतन की कथा भी साथ–साथ चलती है।

प्रसंग– वकील साहब ने पचपन वर्ष की अवस्था में पहली पत्नी की मौत के तीस वर्ष बाद युवती रतन से विवाह किया। वे उसे पति–सुख देने में तो असमर्थ थे, लेकिन धन से उसकी आभूषण–प्रियता को संतुष्ट करके उसे खुश रखते थे। रतन के कहने भर की देर थी, वे उसे उसकी आवश्यकता की हर वस्तु दिलाकर उसके चेहरे पर प्राप्ति–सुख देखकर स्वयं भी आनन्दित महसूस करते थे। प्रस्तुत अवतरण में वकील साहब द्वारा रतन को हार दिलाने के बाद की मनःस्थिति का चित्रण है।

व्याख्या– वकील साहब के पास रतन को प्रसन्न रखने के लिए धन के सिवा कोई चीज नहीं थी। साठ साल की अवस्था में उनका शरीर अब जीर्ण–शीर्ण हो चुका था, जैसे पुराने लैंटर को एक आधार की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार उन्हें भी एक मजबूत आधार की आवश्यकता थी और यह सशक्त आधार उन्हें रतन के रूप में प्राप्त हुआ था। इस आधार के बलबूते पर वह जीवन–संघर्ष में खड़े रह सकते थे, अन्यथा अकेले तो वह धराशायी ही हो जाते। प्रेमचंद उनके अंतर्संबंध को व्यक्त करने के लिए दूसरा उदाहरण उपासक का देते हैं। उपासक को अपने श्रद्धा व आदर–भाव को व्यक्त करने के लिए किसी प्रतिमा की आवश्यकता होती है, जिसे वह गंगाजल से स्नान कराकर शुद्ध करता है, फल–फूल चढ़ाता है और अंत में स्वादिष्ट चीजों का भोग लगाता है। उसी प्रकार वकील साहब को पत्नी की जरूरत थी, जिसके शौक पूरे करने के लिए वे अपने पैसे खर्च कर सकें, जिसे सुसज्जित रूप में देखकर वे अपने नयन तृप्त कर सकें, जिसके चेहरे पर खुशी पाकर स्वयं को प्रसन्न अनुभव कर सकें। पुरुष समाज में चाहे जितना भी बलिष्ठ प्राणी समझा जाता हो, स्त्री के बिना वह भी स्वयं को अकेला और वंचित अनुभव करता है। रतन वकील साहब के लिए उतनी ही महत्वपूर्ण हो गई थी, जितनी चेहरे पर आंखें होती हैं। चेहरा कितना ही सुंदर व आकर्षक क्यों न हो, लेकिन उसमें सजीवता आंखों से ही आती है।

विशेष

- दाम्पत्य की आवश्यकता का सुंदर निरूपण है। वास्तव में पति–पत्नी एक दूसरे के पूरक होते हैं। स्त्री को पुरुष की जितनी आवश्यकता होती है, उतनी ही आवश्यकता पुरुष को भी स्त्री की होती है। तुलसीदास ने रामचरित मानस में

पति–पत्नी के संबंध को आत्मा और शरीर, तथा नदी और वारि का संबंध माना है– 'जिय बिन देहु, नदी बिनु वारि। तैसेहि नाथ पुरुष बिनु नारी।'

- भाषा–शैली प्रसंगानुरूप साहित्यिक व अलंकृत है।

टिप्पणी

10. उसके सिर पर कैसी ही विपत्ति क्यों न पड़ जाये, उसकी कैसी ही बदनामी क्यों न हो, उसका जीवन ही क्यों न कुचल दिया जाये, पर वह इतना निष्ठुर नहीं हो सकता। उसने अनुरक्त होकर कहा– नजर तो न लगाऊंगा, हाँ, हृदय से लगा लूँगा। इसी एक वाक्य में उसकी सारी चिंताएं, सारी बाधाएं विसर्जित हो गयी। स्नेह–संकोच की वेदी पर उसने अपने को भेंट कर दिया। इस अपमान के सामने जीवन के और सारे क्लेश तुच्छ थे। इस समय उसकी दशा उस बालक की–सी थी जो फोड़े पर नश्तर की क्षणिक पीड़ा न सहकर उसके फूटने, नासूर पड़ने, वर्षों खाट पर पड़े रहने और कदाचित् प्राणान्त हो जाने के भय को भूल जाता है। (पृ. 111)

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यावतरण हिंदी के अनन्य कथाकार मुंशी प्रेमचंद द्वारा लिखित आदर्शोन्मुख यथार्थवादी उपन्यास 'गबन' से व्याख्यार्थ उद्धृत है। प्रेमचंद के सभी उपन्यास किसी न किसी समस्या को लेकर लिखे गए हैं। 'गबन' में स्त्रियों की आभूषणप्रियता की समस्या को आधार बनाया गया है।

प्रसंग– आभूषण खोने की बात सुनकर नवविवाहिता जालपा रोग–शय्या पर पड़ जाती है। उसकी खुशी के लिए पति रमानाथ उधारी पर जेवर ला देता है, तकाजा अधिक होने पर दफ्तर के रुपये देने पड़ जाते हैं और दफ्तर के रुपये समय पर जमा न करने पर गबन के आरोप में जेल का डर सताने लगता है। वह जालपा को पत्र द्वारा सब कुछ बताने का पक्का निश्चय कर लेता है लेकिन उसे कहीं जाने के लिए सुसज्जित रूप में बैठे देखकर उसकी प्रसन्नता को कटु यथार्थ द्वारा खंडित नहीं करना चाहता।

व्याख्या– पत्नी जालपा को अपनी यथार्थ स्थिति से अवगत कराने का संकल्प जब भी रमानाथ ने किया, किसी न किसी कारण से शिथिल पड़ गया। आज भी वह सच्चाई बताने की हिम्मत नहीं कर सका। अब उसने सोचा कि यह विपत्ति उसकी अपनी बनाई हुई है, इसलिए इसे वह खुद ही झेलेगा। जैसी भी परिस्थिति हो, इसका वह खुद ही सामना करेगा। गबन के आरोप में जेल जाना पड़े तो वह यह सजा भी भुगतेगा। जालपा को सुसज्जित शृंगारित रूप में देखकर एक क्षण को कटु यथार्थ भुलाकर वह अनुराग से भर गया और अनुरक्त होकर उसने कहा कि वह इस रूप में वह उसे नजर नहीं लगायेगा लेकिन हृदय से लगाने का अधिकार तो उसे है ही। उसे वह अपने स्नेहपाश में बांध लेगा और ऐसा कहते ही उसका ध्यान अपनी परेशानी और चिंताओं से हट गया और वह दांपत्य प्रेम के स्नेहिल प्रकाश में आ गया। अब वह पत्नी से अपने बुरे हालात का रोना रोकर उसके प्रेम से वंचित नहीं होना चाहता था, उसकी नजरों में गिरना नहीं चाहता था। पत्नी की नजरों का अपमान बाकी सब अपमानों से बड़ा था। इस स्थिति को स्पष्ट करने के लिए एक पीड़ित बालक का उदाहरण देते हुए प्रेमचंद कहते हैं कि वह उस बीमार बच्चे की भांति व्यवहार कर रहा था जो फोड़े पर नश्तर की क्षणिक पीड़ा को बर्दाश्त न करके उसे टाल देता है। वह इस बात पर ध्यान नहीं देता कि भविष्य में यह फोड़ा नासूर बनकर उसे रोग–शय्या पर लेटाकर उसके प्राण भी ले सकता है। इस बार रमानाथ पत्नी को अभी सब कुछ बताकर थोड़ा–सा

मानापमान झेलने को तैयार न था, भले ही यह समस्या कई गुनी अधिक बढ़–चढ़कर सामने आये और वास्तव में ऐसा हुआ भी। उसे घर, शहर छोड़कर भाग जाना पड़ा। पति–पत्नी को लंबा विरह और मानसिक क्लेश झेलना पड़ा।

टिप्पणी

विशेष

- रमानाथ के भावों का बड़ा ही सूक्ष्म चित्रण है। पात्रों के मनोवैज्ञानिक चरित्र–चित्रण से ही कथानक में स्वाभाविकता व गतिशीलता आती है।
- भाषा साहित्यिक, विषयानुरूप है। पीड़ित बालक के उद्धरण ने रमानाथ की मानसिक स्थिति का यथार्थ अंकन कर दिया है।

11. रतन ने विरक्त होकर मुँह फेर लिया। जालपा ने बैग उठा लिया और तेजी से घाट से उतरकर जल–तट तक पहुँच गयी। फिर बैग को उठाकर पानी में फेंक दिया। अपनी निर्बलता पर यह विजय पाकर उसका मुख प्रदीप्त हो गया। आज उसे जितना गर्व और आनन्द हुआ, उतना इन चीजों को पाकर भी न हुआ था। उन असंख्य प्राणियों में जो इस समय स्नान–ध्यान कर रहे थे, कदाचित् किसी को अपने अन्तःकरण में प्रकाश का ऐसा अनुभव न हुआ होगा। मानो प्रभात की सुनहरी ज्योति उसके रोम–रोम में व्याप्त हो रही है। (पृ. 132)

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यावतरण हिंदी के अनन्य सेवी मुंशी प्रेमचंद द्वारा सृजित उपन्यास 'गबन' से व्याख्यार्थ अवतरित है। रमानाथ ने बेरोजगार होते हुए भी संपन्न घर की लड़की जालपा से विवाह किया और अपनी शान जमाने के लिए अपनी संपन्नता का ढोंग किया। उधारी में जालपा को जेवर लाकर दे देता है। दफ्तर के रुपये जेवरों में खर्च हो जाते हैं। अपमान और झिड़की के डर से वह अपने घर–परिवार में भी किसी को कुछ नहीं कह पाता। अंततः गबन और जेल जाने के डर से वह बिना किसी को बताये एक दिन घर से कलकत्ता के लिए निकल जाता है।

प्रसंग– जालपा उसके जाने के बाद वस्तु स्थिति समझती है। और वह रमानाथ की इस विपत्ति के पीछे स्वयं को भी एक कारण मानती है। अब उसे लगता है कि आभूषण प्रेम और तरह–तरह के शृंगार की चीजों के फेर में ही उसके पांव चादर से बाहर आ गए। शृंगार की इन चीजों के फेर से उसकी अपनी असली चीज उसका पति उससे बिछड़ गया। आखिर उसने एक दिन अपनी शृंगार की सब चीजों को जमा किया रेशमी मौजे, तरह तरह की बेलें, फीते, पिन, कंघिया, आईने आदि और इन सबको एक बैग में रखकर गंगा में डुबोने का निश्चय कर लिया। राह में उसकी मित्र रतन मिल गई। उसने उसे समझाने की कोशिश की, लेकिन वह अपने निश्चय से टस से मस न हुई।

व्याख्या– दृढ़संकल्पी जालपा ने सामान से भरा बैग उठाया और घाट से उतरकर जल तट तक पहुंचकर बैग को पूरे वेग के साथ पानी में फेंक दिया। बैग को जल में प्रवाहित कर उसे ऐसा लगा जैसे उसने अपनी कमजोरियों को भी प्रवाहित कर दिया है। रूप–सज्जा के इन साधनों के प्रति उसके मोह ने ही उसके पति को रिश्वतखोरी के लिए प्रेरित किया था। इसीलिए उसे भयंकर पश्चाताप में ऐसा लगा कि जब तक ये चीजें उसकी आंखों से दूर न होंगी, उसका चित्त शांत न होगा। इसी विलासिता ने उसे पति–परित्यक्ता बनाया है। ये चीजें विपत्ति की गठरी थीं, प्रेम की स्मृति नहीं। विलासिता की चीजों को गंगा को प्रवाहित कर उसके चित्त को शांति मिली और शांति

में ही सच्चा आनंद था। अब उसे अपनी दुर्बलताओं पर विजय पाने का गर्व हुआ। इस समय गंगाजी में बहुत से लोग स्नान व ध्यान कर रहे थे, लेकिन जालपा को बैग फेंककर जिस आत्मिक प्रकाश का अनुभव हुआ, वैसा किसी अन्य को नहीं हुआ होगा। आज उसे गंगा के पास आकर ऐसा लग रहा था कि जैसे प्रभात की स्वर्णिम आभा उसके तन–मन को आलोकित कर रही हो।

विशेष

- जालपा के व्यक्तित्व का चित्रांकन है। पहले उसे पति से अधिक आभूषणों और सामानों में अभिरुचि थी, लेकिन पति के दूर चले जाने पर इन बाह्य वस्तुओं की निरर्थकता का अहसास हो गया। सच ही है कि अनुपस्थिति में ही किसी की महत्ता का बोध होता है।
- ऋषि–मुनियों ने अपरिग्रह को ही शांति का मूल माना है क्योंकि चीजों का संग्रह मोह, आसक्ति और कामनाओं की अभिवृद्धि करता है। किसी शायर की एक पंक्ति है–'जितना कम समान रहेगा, सफर उतना आसान रहेगा'।
- भाषा–शैली साहित्यिक सौंदर्य से समृद्ध है। लेखक की कल्पनाएं बड़ी सटीक व प्रभावी हैं।

12. अब वहाँ भी वही मनहूसियत छा गयी। वहाँ आकर उसे अनुभव होता है कि मैं भी संसार में हूँ, उस संसार में जहाँ जीवन है, लालसा है, प्रेम है, विनोद है। उसका अपना जीवन तो व्रत की वेदी पर अर्पित हो गया था। वह तन–मन से उस व्रत का पालन करती थी, पर शिवलिंग के ऊपर रखे हुए घट में क्या वह प्रवाह है, तरंग है, नाद है, जो सरिता में है? वह शिव के मस्तक को शीतल करता रहे, यही उसका काम है, लेकिन क्या उसमें सरिता के प्रवाह और तरंग और नाद का लोप नहीं हो गया। (पृ. 154)

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण हिंदी के विख्यात उपन्यासकार मुंशी प्रेमचंद के प्रसिद्ध उपन्यास 'गबन' से अवतरित है। इस उपन्यास में जालपा और रमानाथ की मुख्य कथा के साथ–साथ रतन और वकील साहब की कथा भी वर्णित है।

प्रसंग– रतन बूढ़े वकील साहब की युवा पत्नी है। यों तो वह एक बड़े से बंगले में रहती है, लेकिन जनशून्यता और बच्चों के बिना उस घर में मुर्दनी–सी छाई रहती है, जहाँ से निकल भागने के लिए उसके पाँव उतावले–से हो जाते हैं।

व्याख्या– वकील साहब के अदालत चले जाने पर वह बड़ा बंगला उसे खाली–खाली और वीरान–सा लगने लगता है। उस वीरानी से डरकर रतन मन बहलाव के लिए जालपा के घर चली आया करती थी। जालपा का घर छोटा सही, लेकिन यहां इन्सानों की रौनक और बच्चों की चहल–पहल तो रहती थी। उसके बंगले की तरह यहां सन्नाटा तो पसरा नहीं रहता। जालपा उसकी उम्र की है, उसके साथ अपने दिल की दो–चार बातें कर लेने से उसका मन बहल जाया करता था। कहा जाता है कि मन की बात मन में रहने से बड़ी घुटन हो जाती है और अभिव्यक्ति से घुटन बाहर निकल जाती है, जिससे चित्त शांत हो जाता है। लेकिन जालपा के घर में रमानाथ के रहते हुए जो प्रफुल्लता रहा करती थी, अब रमानाथ के गायब हो जाने पर यहां भी उदासी और वीरानी पसर गई है। जहां पहले हंसी–खुशी और जिंदादिली का माहौल हुआ

टिप्पणी

करता था, वहां अब मनहूसियत की काली छाया मंडरा रही है। रतन को यहां आकर मानवीय भावों के विविध रूप– प्रेम, इच्छाएं, आकांक्षाएं, मनोविनोद आदि दिखाई पड़ते थे, जिसकी कुछ छींटे उसे भी मिल जाया करती थी। लेकिन जो घर अब स्वयं शोचनीय स्थिति में आ गया है, वह उसे अब जिंदादिली और ताजगी कैसे दे पायेगा?

रतन का तो अब सारा जीवन एक तपस्या तथा व्रत में परिणत हो गया था। वृद्ध पति की सेवा में ही उसका जीवन समर्पित था। वृद्ध पति के साथ भोग–विलास और सैर–सपाटे जैसे शौक तो पूरे हो नहीं सकते थे, उसके जीवन में गति के स्थान पर जड़ता व्याप्त हो गई थी। उसका जीवन शिवलिंग के ऊपर रखे कलश की तरह था, जिसका काम बूंद–बूंद छोड़कर शिव के मस्तक को शीतल करना होता है, लेकिन कलश में जल तो वर्तमान रहता है, मगर सरिता जैसा प्रवाह तो नहीं रह जाता। अर्थात उसमें जल खामोशी से वर्तमान रहता है, इच्छा रूपी लहरों का कोई आलोड़न–विलोड़न नहीं होता। रतन का युवा व्यक्तित्व, जो अपने अनुरूप वर पाकर, मातृत्व से परिपूर्ण होकर सरिता की तरह तरंगित और प्रवहमान हो सकता था वह अब जड़ हो गया। अब एक बूढ़े वकील की पत्नी बनकर उसकी सारी चंचलता और गति विलुप्त हो गई थी। घर में शब्दहीनता का एक ऐसा सन्नाटा–सा छाया रहता था, जिसके कारण उसके लिए घर एक बंदीघर–सा हो जाता था।

विशेष

- रतन के शुष्क जीवन के सूनेपन को बहुत कुशलता से उकेरा गया है।
- घर इंसानों के पारस्परिक संबंधों से ही प्राणवान बनता है। बड़े आकार और बाहरी साज–सज्जा से नहीं।
- रतन के जीवन की शिवलिंग के ऊपर स्थापित कलश से तुलना बड़ी सटीक और मार्मिक बन पड़ी है।

13. जैसे एक शीतल तीव्र बाण रतन के पैर से घुसकर सिर से निकल गया मानो उसकी देह के सारे बन्धन खुल गये, सारे अवयव बिखर गये, उसके मस्तिष्क के सारे परमाणु हवा में उड़ गये। मानो नीचे से धरती निकल गयी, ऊपर से आकाश निकल गया और अब वह निराधार, निस्पन्द, निर्जीव खड़ी है। अवरुद्ध, अनुकंपित कंठ से बोली– घर से किसी को बुलाऊँ! यहाँ किससे सलाह ली जाये? कोई भी तो अपना नहीं है। (पृ. 161)

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण हिंदी के प्रतिष्ठित शब्द–शिल्पी मुंशी प्रेमचंद की जादुई लेखनी से निसृत उपन्यास 'गबन' से व्याख्यार्थ उद्धृत है। उपन्यास का कथा फलक विस्तृत होता है। उसमें मुख्य कथा के साथ कुछ प्रासंगिक कथा भी होती है। इस उपन्यास में भी जालपा व रमानाथ की मुख्य कथा के साथ रतन और वकील साहब की प्रासंगिक कथा भी अनुस्यूत है।

प्रसंग– वकील साहब ने 30 साल का विधुर जीवन जीने के उपरांत रतन से विवाह किया। दोनों में उम्र का बहुत अधिक फासला होने के बावजूद प्रगाढ़ प्रेम है। वकील साहब रोग–शय्या पर तो काफी दिन से चल रहे थे, धीरे–धीरे उनकी तबियत बद से बदतर होती चली गई। रतन उनके बेहतर उपचार के लिए उन्हें काशी से कलकत्ता लेकर आ गई। लेकिन उनकी तबियत लंबे सफर के कारण और अधिक खराब हो गई।

टिप्पणी

दो चार वाक्य बोलने के बाद वे शिथिल हो जाते थे ओर दस–पांच मिनट शांत अचेत पड़े रहते थे। उनके मुख, बुद्धि ओर मस्तिष्क पर मृत्यु की छाया पड़ने लगी थी जिसे देखकर रतन भी एक अस्पष्ट, अज्ञात शंका से भयभीत रहती थी। अचानक एक दिन सावधानी के साथ वकील साहब ने रतन से कहा 'मैं चाहता हूं कि अपनी वसीयत लिखवा दूं।'

व्याख्या– वकील साहब के अपनी वसीयत लिखवाने की बात को सुनकर रतन कांप उठी। उसे अपनी आशंका सही होती जान पड़ी। वह तुरंत इस पर कुछ बोल नहीं सकी। न तो वकील साहब को झूठी तसल्ली दे सकी और न स्वयं को। वकील साहब का वाक्य सुनते ही उसने स्वयं को निराधार और निस्सहाय अनुभव किया। ऐसा लगा कि जैसे कोई अनूठा तीर पैर से घुसकर रतन के सिर से सारे शरीर में हलचल मचाते हुए निकल गया। उस वाक्य रूपी तीर से उसकी देह अंदर ही अंदर बिखर गई। उसे लगा कि उसका सब कुछ हवा में उड़ा जा रहा है। उसके पैरों के नीचे से जमीन भी खिसक गई और ऊपर से आकाश भी निकल गया और असहाय सी निर्जीव की तरह अधर में लटकी पड़ी है। कुछ समय ऐसी ही स्तब्ध स्थिति में रहने के बाद रतन में कुछ चेतना वापस आई। अपनी स्थिति का कुछ भान हुआ। चिंता और वेदना से कंठ अवरुद्ध हुआ और वकील साहब की बात पर प्रतिक्रिया न कर उन्हें संवेदना देते हुए कहा कि क्या वह उनके घर से किसी को बुला दे? यहां तो कोई अपना नहीं दीख पड़ता। ऐसी विकट परिस्थिति में किससे सलाह ली जाये, कुछ समझ नहीं आ रहा।

विशेष

- वृद्ध वकील साहब की युवा पत्नी होते हुए भी वह उनके प्रति पूर्णरूपेण समर्पित और संवेदनशील है। पति की मरणासन्न स्थिति देखकर वह स्वयं को निराधार स्थिति में पाती है। वह धन की लोभी नहीं है। वसीयत की बात सुनकर वह उनसे अपने नाम कुछ भी कर जाने को नहीं कहती। वसीयत की बात करने के पीछे छिपी आशंका को महसूस करके ही स्तब्ध हो जाती है।
- इस अवतरण में रतन के मनोभावों, स्थिति का बड़ा ही मार्मिक अंकन है। परेदश में मरणासन्न पति की अवस्था को देख उसका विचलित होना और किसी अपने के साथ के लिए आकुल–व्याकुल होना स्वाभाविक ही है।
- भाषा शैली काव्यात्मक होते हुए भी सुबोध है। भाषा बहुत सशक्त व प्रभावी है। मार्मिक कल्पनाएं हैं। तत्सम शब्दों– अवयव, निराधार, निस्पन्द, अवरुद्ध, अश्रुकंपित कंठ आदि का स्वाभाविक प्रयोग है। 'नीचे से धरती निकलना' मुहावरे का प्रयोग भी सार्थक है।

14. मानवीय जीवन उस हिलोर के सिवा, उस ध्वनि के सिवा और क्या है? उसका अवसान भी उतना ही शांत, उतना ही अदृश्य हो तो क्या आश्चर्य है। भूतों के भक्त पूछते हैं क्या वस्तु निकल गई? कोई विज्ञान का उपासक कहता है, एक क्षीण ज्योति निकल जाती है। कपोल–विज्ञान के पुजारी कहते हैं, आँखों से प्राण निकले, मुँह से निकले, ब्रह्माण्ड से निकले। कोई उनसे पूछे, हिलोर लय होते समय क्या चमक उठती है? ध्वनि लीन होते समय क्या मूर्तिमान हो जाती है? यह उस अनन्त यात्रा का एक विश्राम मात्र है, जहाँ यात्रा का अन्त नहीं, नया उत्थान होता है। (पृ. 167)

टिप्पणी

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण उपन्यास सम्राट की पदवी से विभूषित मुंशी प्रेमचंद द्वारा रचित 'गबन' उपन्यास से व्याख्यार्थ उद्धृत है। उपन्यास की एक महत्वपूर्ण स्त्री पात्र रतन का विवाह बूढ़े वकील साहब से हो जाता है। उसने स्वयं को उन्हीं के साथ समायोजित कर लिया है। वह उनकी सेवा ओर साहचर्य में ही अपने जीवन की सार्थकता समझ लेती है।

प्रसंग– बूढ़े वकील साहब काफी समय से रोग–शय्या पर हैं। काशी में उनका उपचार चला किंतु आराम न पड़ने पर रतन बेहतर इलाज के लिए कलकत्ता ले आती है, लेकिन यहां आकर उनकी तबियत संभलने के स्थान पर और बिगड़ गई। और एक दिन रतन से क्षमा मांगने के साथ ही उनके प्राण–पखेरू उड़ गये। 'क्या जानता था, इतनी जल्द यह समय आ जायेगा। मैंने तुम्हारे साथ बड़ा अन्याय किया है प्रिये! कितना बड़ा अन्याय! मन की सारी लालसा मन में रह गयी। मैंने तुम्हारे जीवन का सर्वनाश कर दिया– क्षमा करना।' इस अवतरण में लेखक ने मृत्यु के यथार्थ द्वारा अपनी भाव संवेदनाएं व्यक्त की हैं।

व्याख्या– लेखक वकील साहब की बात करते–करते सांस रुकने से हो जाने वाली मृत्यु के संदर्भ में कहता है कि मौत मानव जीवन की सबसे प्रबल घटना है, वह भी कभी–कभी कितनी शांति के साथ घटित हो जाती है। मृत्यु कभी–कभी इतनी अनायास आ जाती है, जितनी सागर में हिलोरें उठती हैं। सागर में हिलोर उठती है और फिर उसी में समा जाती है, उसी प्रकार ईश्वर ही मानव को जन्म देता है और फिर एक दिन मानव उसी में समाहित हो जाता है। बोलते–बोलते मनुष्य के शब्दों की ध्वनियां पता नहीं कहां विलुप्त हो जाती है। मानव जीवन भी उस हिलोर और ध्वनि के समान ही क्षणिक कहा जाये तो कोई अतिश्योक्ति नहीं है।

शरीर में आंख, नाक, कान, हाथ–पांव सब पहले की तरह होते हैं लेकिन शरीर से पता नहीं ऐसी क्या चीज निकल जाती है कि सारी देह नश्वर हो जाती है। भूतों के भक्त आत्मा रूपी उस चीज को वस्तु कहते हैं तो विज्ञान के उपासक एक क्षीण ज्योति। कपोल विज्ञान के पुजारी बताते हैं कि प्राण कहां से निकले। आंखों से, मुंह से अथवा ब्रह्माण्ड से। लेकिन ये सब बातें आधी–अधूरी भर हैं। इस संबंध में बहुत–से प्रश्न ऐसे हैं जिनके उत्तर नहीं मिल पाते। मानव शरीर को क्षणिक और नश्वर कहा गया है। शरीर नष्ट होता है, आत्मा नहीं। आत्मा की यात्रा तो अनंत है। इस जन्म की मृत्यु अनंत यात्रा का एक विश्राम भर कही जाती है। मौत के बाद आत्मा की यात्रा समाप्त नहीं होती, केवल शरीर ही समाप्त हो जाता है। मौत को आत्मा का अंत नहीं, पुनरुत्थान माना जाता है।

विशेष

- मृत्यु के यथार्थ के संदर्भ में लेखक का चिंतन–मनन बहुत मार्मिक बन पड़ा है। इस अवतरण से भाव साम्य रखती बात गीता में भी कही गई है। गीता में कहा गया है कि जिस प्रकार व्यक्ति पुराने वस्त्र छोड़कर नये वस्त्र धारण करता है, उसी प्रकार आत्मा पुराना शरीर छोड़कर नवीन शरीर ग्रहण करती है। लेखक का चिंतन बहुत गंभीर व विचारणीय है।
- भाषा–शैली बहुत प्राणवान तथा विषयानुकूल है।

टिप्पणी

15. "रुदन में कितना उल्लास, कितनी शक्ति, कितना बल है। जो कभी एकान्त में बैठकर किसी की स्मृति में, किसी के वियोग में, सिसक–सिसक कर और बिलख–बिलख कर नहीं रोया, वह जीवन के एक ऐसे सुख से वंचित है, जिस पर सैकड़ों हँसियाँ न्योछावर है। उस मीठी वेदना का आनन्द उन्हीं से पूछो, जिन्होंने यह सौभाग्य प्राप्त किया है। हँसी के बाद मन खिन्न हो जाता है, आत्मा क्षुब्ध हो जाती है, मानो हम थक गये हों, पराभूत हो गये हों। रुदन के पश्चात् एक नवीन स्फूर्ति, एक नवीन जीवन, एक नवीन उत्साह का अनुभव होता है।" (पृ. 191)

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण महान कथा–शिल्पी मुंशी प्रेमचंद विरचित प्रसिद्ध उपन्यास 'गबन' से उद्धृत है।

प्रसंग– नगरपालिका के 300 रुपये घर में खर्च हो जाने के कारण रमानाथ समय रहते अपने दफ्तर में जमा नहीं कर पाता। वह अपनों से मांग नहीं पाता और गैरों से उसे मदद मिलती नहीं। जेल जाने के डर से वह प्रयाग छोड़कर कलकत्ता चला जाता है और गुपचुप ढंग से देवीदीन के घर रहने लगता है। पत्नी जालपा ने उसका पता लगाने के लिए 'प्रजा–मित्र' अखबार में शतरंज का एक नक्शा हल करने के लिए इनाम सहित छपवाया। रमानाथ इसे हल कर देता है। अखबार के कार्यालय से जालपा को रमानाथ की जानकारी का पत्र मिल जाता है।

व्याख्या– 'प्रजा–मित्र' कार्यालय का पत्र पढ़कर उसे हाथ में पकड़े–पकड़े जालपा खूब रोई। छह महीने तक रमानाथ की कुशलता को लेकर वह आशा–निराशा में झूलती रही। आज वह उसकी कुशलता का समाचार पाकर हंसने के स्थान पर भावविह्वल होकर रो पड़ी, यह बड़े आश्चर्य का विषय है। रोना प्रायः कमजोरी, हताशा या दुख का लक्षण माना जाता है। लेकिन हमेशा यही बात सच नहीं होती है। रोना सिर्फ दुख में ही नहीं आता, आशातीत खुशी में भी आ जाता है। रुदन में बड़ा उल्लास और बल छिपा रहता है। रोकर इंसान का मन बड़ा निर्मल हो जाता है। उसकी सारी घुटन आंसुओं के साथ बह जाती है। प्रेमचंद का कहना है कि किसी की याद में बिलख–बिलख कर और सिसक सिसक कर रोने में जितना आत्मिक सुख है, उतना सहस्त्र खुशियों में भी नहीं है। रुदन में एक मीठी वेदना होती है और इस मीठी वेदना में कितना अद्भुत आनन्द होता है, यह एक भुक्तभोगी ही समझ सकता है। हंसी और सुखों से भी बहुत बार मनुष्य थक जाता है, उसका मन खिन्न हो जाता है। लगातार सुख से एकरसता और ऊब पैदा हो जाती है। दुखों के बाद आया सुख ही आनन्दानुभूति प्रदान करता है। दुखों में ही हमारी आत्मा का विकास होता है। हमारी शक्तियों का स्फुरण होता है। रोने के बाद हम में नयी ताजगी और शक्ति का संचार होता है।

विशेष

- दुख की महत्ता को महिमामंडित किया गया है। अज्ञेय का भी कथन है– "दुख सबको मांजता है। वियोग की पीड़ा ही समस्त सृजन का मूल बताई गई है।" सुमित्रानंदन पंत ने भी कहा है–

  वियोगी होगा पहला कवि, आह से उपजा होगा गान।
  उमड़ कर आंखों से चुपचाप, बही होगी कविता अनजान।

- यह अवतरण अतिशय चर्चित है और बहुधा उद्धृत किया जाता है। लेखक ने इसमें एक नया तथ्य स्थापित किया है।
- भाषा–शैली बड़ी ही प्रभावोत्पादक है।

टिप्पणी

16. रमा की इस घृणित कायरता और महान स्वार्थपरता ने जालपा के हृदय को मानो चीर डाला था फिर भी उस प्रणय–बंधन का निशान अभी बना हुआ था। रमा की वह प्रेम–विह्वल मूर्ति, जिसे देखकर एक दिन वह गद्‌गद् हो जाती थी, कभी–कभी उसके हृदय में छाये हुए अँधेरे में क्षीण, मलिन, निरानन्द ज्योत्स्ना की भाँति प्रवेश करती और एक क्षण के लिए वह स्मृतियाँ विलाप कर उठतीं। फिर उसी अन्धकार और नीरवता का परदा पड़ जाता। उसके लिए भविष्य की मृदु स्मृतियाँ न थीं, केवल कठोर, नीरस वर्तमान विकराल रूप से खड़ा घूर रहा था। (पृ. 229)

संदर्भ– मुंशी प्रेमचंद की औपन्यासिक कृति गबन से उद्धृत इस अवतरण में एक कायर व स्वार्थी पति को चित्रित किया गया है।

प्रसंग– नगरपालिका के कुछ सरकारी रुपये जमा न कर पाने पर रमानाथ जेल जाने के भय से कलकत्ता भाग जाता है। यहां एक रात पुलिस के चंगुल में फंस जाता है। पुलिस उसे एक झूठे मुकदमे में मुखबिर बनने को मजबूर कर देती है और अदालत में अपने अनुसार गवाही करा लेती है। जालपा प्रयाग से कलकत्ता आकर उसे गबन के भय से मुक्त कर देशभक्तों के विरुद्ध गवाही देने से मना करती है लेकिन पुलिस द्वारा झूठे मुकदमें में फंसाये जाने का डर और अच्छी नौकरी का प्रलोभन एक बार फिर उसे सच्चाई के पथ से विचलित कर देता है।

व्याख्या– जालपा को पूरी आशा थी कि उससे भेंट होने के बाद गबन के भय से मुक्त होकर रमाकांत सच का साथ देगा और झूठी गवाही वाला अपना बयान बदल लेगा, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। अपने कष्टों से बचने के लिए इतने सारे निर्दोष देशभक्तों को जेल की यातना अथवा फांसी के तख्ते पर पहुंचाने की सोच निस्संदेह भयंकर कायरता और स्वार्थ से परिपूर्ण थी। नैतिकता तो यही कहती है कि सच का साथ देने के लिए सहा गया कष्ट परमपुनीत और ग्राह्य होता है, किंतु इतना समझाने के बावजूद रमानाथ पद और सुविधाएं पाने के लालच में महान देशभक्तों के विरुद्ध झूठी गवाही देकर नैतिकता का घोर अपमान कर रहा था। देशभक्ति के माथे पर कलंक का टीका लगा रहा था।

पति का यह ओछा तथा कुत्सित रूप देखकर जालपा हतप्रभ थी। कभी–कभी अनायास ही उसके हृदय में कुछ क्षणों के लिए प्रेमी रमानाथ की मनोहर छवि अंकित हो जाती थी। रमानाथ की प्रेम भरी स्मृतियां अंधेरी रात में चांदनी की तरह उसके हृदय में प्रविष्ट होतीं, लेकिन ये मधुर स्मृतियां जालपा के मन में अधिक देर न टिक पाती थीं। ये स्मृतियां उसे आनंदित करने के स्थान पर बेचैन कर जाती थीं। जो बातें संयोग के दिनों में मन को हर्षोल्लास से भर देती थीं, आज उन्हें याद करके रुलाई फूट रही थी। अब इन यादों को वह भविष्य के लिए संजोकर भी नहीं रखना चाहती थी। भविष्य तो उसे बड़े कठोर और भयंकर रूप में दृष्टिगत हो रहा था। भविष्य तो वर्तमान के ही सहारे पर खड़ा होता है और उसका वर्तमान रमानाथ की प्रदर्शन–प्रियता,

छल–प्रपंच की आदत और कायरतापूर्ण झूठी गवाही के चलते बड़ा अंधकारमय हो गया था।

विशेष

टिप्पणी

- जालपा की चारित्रिक उज्ज्वलता पर प्रकाश डाला गया है। कल की विलासिनी नारी आज एक निर्भीक और आदर्शवादी देशभक्त के रूप में परिणत हो चुकी है।
- रमानाथ के भीरू और सुविधाभोगी आचरण की ओर संकेत किया गया है।
- भाषा–शैली प्रभावी, कवित्वपूर्ण व मुहावरेदार है।

17. "विलासिनी ने प्रेमोद्यान की दीवारों को देखा था, वह उसी में खुश थी। त्यागिनी बनकर वह उस उद्यान के भीतर पहुँच गई थी– कितना रम्य दृश्य था, कितनी सुगन्ध, कितना वैचित्र्य, कितना विकास। इसकी सुगंध में, इसकी रम्यता में देवत्व भरा हुआ था। प्रेम अपने उच्चतर स्थान पर पहुँचकर देवत्व से मिल जाता है। जालपा को अब कोई शंका नहीं है, इस प्रेम को पाकर वह जन्म–जन्मान्तरों तक सौभाग्यवती बनी रहेगी। इस प्रेम ने उसे वियोग, परिस्थिति और मृत्यु के भय से मुक्त कर दिया, उसे अभय प्रदान कर दिया। इस प्रेम के सामने अब सारा संसार और इसका अखंड वैभव तुच्छ है।"

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचंद द्वारा विरचित बहुचर्चित उपन्यास 'गबन' से उद्धृत है।

प्रसंग– पुलिस के चंगुल में फंसकर रमानाथ ने मजबूरन झूठे मुकदमे में गवाही दे दी। परिणामस्वरूप देशभक्त दिनेश को फांसी हो जाती है और बाकी लोगों को कई वर्षों की सजा। प्रायश्चित स्वरूप जालपा अपनी पहचान छिपाकर दिनेश के घर की देखभाल करने लगती है। जोहरा से जालपा का यह हाल सुनकर रमानाथ दारोगा को धोखा देकर जालपा के समक्ष गहने चुराने सहित समस्त गलतियों को स्वीकार कर लेता है। वह अपने समस्त अपराधों के लिए क्षमा मांगकर बाहर ही से वापस चला जाता है।

व्याख्या– जालपा रमानाथ के जाने के बाद भाव–विह्वल होकर पछताने लगी कि उन्हें रोका क्यों नहीं? आज उसने रमानाथ के हृदय में अपने लिए सच्चे प्रेम के दर्शन किये। आज रमानाथ के अपराध–बोध और प्रायश्चित–भाव से उसकी सारी मलिनता दूर हो गई और वह उसके स्वच्छ–निर्मल हृदय के दर्शन कर पाई। अभी तक रमानाथ उससे कुछ न कुछ परदा रखता था, उसने उसे अपने घर की आर्थिक स्थिति की असलियत कभी न बताई थी। अपने बारे में भी डींगे ही हांकी थी। उसे विलासिनी समझकर सामानों और गहनों से उसके लाड किये थे, किंतु उसने उससे अपना दुख साझा न किया। इसीलिए उनके दाम्पत्य में इतनी समस्याएं आई थीं, किंतु आज रमानाथ के हृदय पर पड़ा स्वार्थपरता का आवरण हटते ही उसके व्यक्तित्व और प्रेम में जैसे देवत्व का समावेश हो गया है। उनका प्रेम जैसे लौकिकता की सीमा को पार कर अलौकिक हो चुका था। विवाह के बाद जब तक जालपा वस्त्राभूषणों की आकांक्षिणी बनी रही, उसे पति का प्रेम तो मिला, किंतु उस प्रेम में भोग–विलास की मात्रा ही ज्यादा थी, प्रेम की गहनता और दिव्यता न थी। वह मानो प्रेम रूपी उद्यान की दीवारों को देखकर ही खुश थी। आज वह विलासिनी से त्यागिनी और सेविका बनकर उसका सच्चा प्रेम पा सकी है। पति के आत्मीय प्रेम को पाकर वह अपने को धन्यभागी समझ रही है। इस प्रेम ने

उसे भविष्य और संसार की सारी आशंकाओं से मुक्त करके निर्भय बना दिया है। आज इस अलौकिक सच्चे प्रेम के सामने दुनिया भर की संपत्तियां उसे बिल्कुल तुच्छ दिखाई पड़ रही हैं।

टिप्पणी

विशेष

- प्रेमचंद ने प्रेम का सच्चा आदर्श त्याग और सेवा के रूप में ही माना है। बाह्याकर्षण क्षणिक होता है। पत्नी कामिनी बनकर नहीं, अपितु त्यागिनी बन कर ही पति का सच्चा प्रेम प्राप्त कर सकती है।
- विश्वास और ईमानदारी पर ही प्रेम का भवन टिका रहता है।
- भाषा–शैली अत्यंत प्रभावी तथा कवित्वपूर्ण है।

अपनी प्रगति जांचिए

1. रमानाथ कहां नौकरी करता था?

   (क) सर्राफ की दुकान पर (ख) पुलिस विभाग में

   (ग) नगरपालिका में (घ) कहीं नहीं

2. पकड़ लिए जाने के डर से रमा कहां छुपा बैठा था?

   (क) काशी (ख) प्रयाग

   (ग) कलकत्ता (घ) लखनऊ

1.3 आपका बंटी (मन्नू भंडारी) से व्याख्या

1. ''उस समय फूफी के सामने माँ की बाँहों से छूटकर भागने के लिए वह ज़रूर कसमसाता रहता है, पर यों उसे मम्मी की गोद में बैठना, उनके साथ सटकर सोना अच्छा लगता है। सोने से पहले मम्मी उसे रोज़ कहानी सुनाती हैं... राजा–रानी की, परियों की। ऐसे–ऐसे राजकुमारों की जो अपनी माँ को बहुत प्यार करते थे और अपनी माँ के लिए बड़े–बड़े समुद्र तैर गए थे, ऊँचे–ऊँचे पहाड़ पार कर गए थे।'' (पृ. 11)

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यांश हिन्दी की शीर्षस्थ कथाकार मन्नू भंडारी द्वारा लिखित उनकी अमर कृति 'आपका बंटी' से अवतरित है।

प्रसंग– बंटी की मम्मी उसे बहुत प्यार करती है और रोज़ उसे राजा–रानी और परियों की कहानी सुनाती है जिसमें राजकुमार अपनी माँ को बहुत प्यार करते हैं।

व्याख्या– लेखिका का कथन है कि बालक बंटी को उसकी मम्मी कभी गोद में लेकर प्यार करती है और कभी अपने पास लिटाकर कहानी सुनाती है। फूफी भी उसे कुछ कहकर चिढ़ाती है। तब बंटी फूफी के सामने ही अपनी माँ की गोद से अलग होकर भागने की कोशिश करता है। यह सब दिखावा है। परन्तु मन में उसकी इच्छा है कि वह मम्मी की गोद में ही बैठा रहे और उसी के साथ लेटकर अच्छी–अच्छी कहानियाँ सुनता रहे। सोने से पहले उसकी मम्मी उसे रोज राजा–रानी, और परियों की कहानी

टिप्पणी

सुनाती है। इन कहानियों में ऐसी कहानी अधिक होती है जिनमें राजकुमार अपनी माँ को अधिक प्यार करता है। इसका प्रभाव बालपन पर अधिक होता है। जब बालक यह सुनता है कि राजकुमार अपनी माँ से प्यार करता है और उसके पास पहुँचने के लिए बड़े–बड़े पहाड़ पार कर लेता है और बड़े–बड़े समुद्र तैर कर पार कर लेता है तो बालक बंटी के मन में अपनी माँ के प्रति प्यार और भी बढ़ जाता है।

विशेष

- बालक की बाल सुलभ वृत्ति का सुंदर चित्रण किया गया है।
- सरल और प्रवाहमयी भाषा है।
- वर्णनात्मक शैली है।
- माधुर्य गुण है।

2. ''मन में जाने कैसा गुस्सा उफन रहा था। उसके मम्मी–पापा की बात उसे नहीं मालूम और टीटू को मालूम। पापा साथ नहीं रहते तो क्या हुआ, वे तो शुरू से ही साथ नहीं रहते। वह तो हमेशा से ही मम्मी के पास रहता है। उसकी मम्मी कोई ऐसी–वैसी हैं। कॉलेज की प्रिंसिपल हैं, आते–जाते लोग कैसे सलाम ठोंकते हैं। करेगा कोई ऐसे सलाम इसकी अम्मा को?'' (पृ. 14)

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यावतरण शीर्षक्थ कलाकार मन्नू भंडारी द्वारा लिखित 'आपका बंटी', नामक उपन्यास से लिया गया है।

प्रसंग– बंटी के पापा उससे दूर रहते हैं। वह अपनी मम्मी के पास रहता है। वह अपने पापा द्वारा भेजी बंदूक लेकर अपने दोस्त टीटू के साथ खेलता है। टीटू उससे बंदूक लेकर चलाने की बात कहता है। तब वह टीटू से कहता है कि यह देखने वाला तमंचा नहीं है। इसे चलाने के लिए समझना पड़ता है। टीटू बंटी की रौब भरी बात सुनने पर कहता है कि तेरे पापा तेरे साथ नहीं रहते। तेरे मम्मी–पापा में लड़ाई हो गई है और अब उनमें तलाक हो गया है। इस तलाक की बात सुनकर बंटी मन में सोचता है।

व्याख्या– बंटी टीटू से अपने मम्मी–पापा के विषय में जो कुछ सुनता है उसे जाने कैसा गुस्सा उसके मन में आता है उसे वह समझ नहीं पाता है। इसका कारण यह कि जो बात मम्मी–पापा के बारे में उसे पता होनी चाहिए वह टीटू को कैसे पता है। यद्यपि उसके पापा उसके साथ नहीं रहते, किन्तु उसे प्यार करते हैं और उसके लिए खिलौने भेजते हैं। उनके पास न रहने से क्या फर्क पड़ता है। बंटी तो शुरू से ही अपनी मम्मी के पास रहता है। वैसे भी बालक का लगाव माँ के प्रति अधिक होता है। पिता तो घर के खर्च हेतु अधिकतर घर से बाहर ही रहते हैं। बंटी को इस बात का गर्व है कि उसकी मम्मी कोई साधारण माँ नहीं है अपितु कॉलेज की प्रिंसिपल है। लोग आते जाते उन्हें सलाम करते हैं। क्या अन्यों की माँ को कोई ऐसे सलाम करेगा? माता–पिता के उच्च पद पर पहुँचने का बालक के जीवन पर प्रभाव पड़ता है।

विशेष

- बंटी के मन का मनोवैज्ञानिक चित्रण है।
- सरल और प्रवाहमयी भाषा है।
- वर्णनात्मक शैली है।

टिप्पणी

3. ''इस समय मम्मी कितनी अच्छी लग रही हैं। वैसे तो शाम के समय मम्मी बिलकुल उसकी अपनी हो जाती हैं। बालों की खूब ढीली–ढीली चोटी और चेहरा भी एकदम मुलायम–सा। कोई तनाव नहीं, कोई सख्ती नहीं। हमेशा ही इस समय बंटी को मम्मी बहुत अच्छी लगती है। मम्मी की ठोड़ी का तिल उसे बहुत अच्छा लगता है। रात में पास लेटता है तो अकसर उस पर धीरे–धीरे उँगली फिराता रहता है।'' (पृ. 15)

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण प्रमुख उपन्यास लेखिका मन्नू भंडारी द्वारा लिखित 'आपका बंटी' उपन्यास से लिया गया है।

प्रसंग– बंटी अपनी मम्मी को देखकर उसके सौंदर्य पर मुग्ध है। लेखिका ने वर्णन किया है कि बंटी की मम्मी लेटी हुई बहुत सुंदर लग रही है और बंटी नज़र बचाकर उसे एक टिक निहार रहा है।

व्याख्या– बंटी अपने बगीचे में पौधों को पानी दे रहा है। उस बगीचे में खिले फूल तोड़ने का अधिकार भी उसे ही है अन्य किसी को नहीं। वह अपने बगीचे से मोगरे का एक फूल तोड़ता है और चुपचाप जाकर लेटी हुई मम्मी के बालों में खोंस देता है। उसकी मम्मी धीरे से मुस्कराकर उसे अपने पास बैठा लेती हैं।

उस समय बंटी को मम्मी बहुत अच्छी लग रही है। यद्यपि सायंकाल जब सोने का समय होता है तो वह और भी सुंदर लगती है क्योंकि तब वह उसे सुंदर–सुंदर कहानियाँ सुनाती है। तब बंटी का मम्मी पर एकाधिकार होता है। उन दोनों के बीच तब कोई नहीं होता है। फूल लगाने के बाद मम्मी का चेहरा सहज, तनाव रहित है। बालों की चोटी भी ढीली–ढीली है। बंटी, कभी–कभी नजर बचाकर अपनी मम्मी को देखता है। उसे मम्मी की ठोड़ी पर तिल बहुत सुंदर लगता है। पास में लेटने पर वह कभी कभी उनके तिल पर हाथ फिराता है। अपने प्यार को दर्शाता है।

विशेष

- सरल एवं प्रवाहमयी भाषा का प्रयोग हुआ है।
- वात्सल्य भाव का सहज चित्रण है।
- अभिधा, व्यंजना शब्द शक्ति का प्रयोग है।
- वर्णनात्मक शैली है।

4. ''अंधेरा यानी कि सोओ। रात–भर अँधेरा रहता है और रात–भर वह सोता भी है। अब दिन में भी अंधेरा कर दोगे तो कोई रात थोड़े ही हो जाएगी। और रात नहीं तो सोए कैसे? पर मम्मी सुनती हैं कोई बात?''

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यावतरण शीर्षस्थ उपन्यास लेखिका मन्नू भंडारी द्वारा लिखित 'आपका बंटी' उपन्यास से लिया गया है।

प्रसंग– बंटी की मम्मी शनिवार को लंच के बाद कॉलेज नहीं जाती हैं। वह खाना खाकर कमरे में आराम से सोने की व्यवस्था करती हैं। सोने का कार्य तो रात में होता है। गरमी में दिन में रोशनी अच्छी नहीं लगती अथवा नींद में बाधा आती है तो उसके लिए खिड़कियों पर परदा लगा देती हैं। इससे कमरे में हल्का–सा अंधेरा हो जाता है और नींद आने में सुविधा रहती है।

टिप्पणी

व्याख्या– संसार में ईश्वर की बनाई व्यवस्था में दिन और रात की व्यवस्था है। दिन जीवन को चलाने के लिए कार्य करने के लिए है और थकने पर रात भर विश्राम करने के लिए है। दिन भर जीवन–यापन के लिए कार्य करने के बाद विश्राम हेतु रात का समय है। तब गहन नींद में सोना चाहिए। अंधेरे का अभिप्राय है कि सोना चाहिए। बंटी सोचता है कि रातभर अंधेरा रहता है वह भी रात भर सोता रहता है। यह तो प्रकृति के अनुरूप है। व्यक्ति इसके विपरीत अपने आराम के लिए दिन में भी सोने का उपक्रम करता है और कृत्रिम ढंग से अंधेरा करके सोने का प्रयास करता है। किन्तु इससे दिन का अंधेरा रात में नहीं बदल सकता। नींद की प्रकृति है रात में सोने की जबकि दिन में रात नहीं तो सोए कैसे? इस बात को बंटी की मम्मी नहीं समझतीं। वह बंटी को सोने के लिए जबरदस्ती पलंग पर लिटा देती हैं।

विशेष

- दिन और रात के अंतर का मनोविज्ञान समझाया है।
- दिन में अंधेरा कर देने से रात नहीं होती, यह विडम्बना है।
- अभिधा और व्यंजना शब्द–शक्ति का प्रयोग है।
- भाषा सरल एवं प्रवाहमयी है।
- विवेचनात्मक शैली है।

5. ''हमेशा बोलते रहने वाले चाचा भी चुप और चाचा के सामने चुप रहने वाली मम्मी भी चुप। अंधेरा–अंधेरा कमरा और भीतर बैठे लोग चुप। जैसे एक अजीब सी उदासी वहाँ उतर आई हो। चाचा कभी एक घूँट पीते हैं, कभी उसकी ओर देखते हैं तो कभी खिड़की की ओर। पर खिड़की तो बंद है, उस पर परदा पड़ा है। वहाँ तो देखने को कुछ है ही नहीं। मम्मी एकटक जमीन ही देखे जा रही हैं और वह है कि कभी मम्मी को देखता है तो कभी चाचा को।'' (पृ. 20)

संदर्भ– व्याख्या हेतु प्रस्तावित प्रस्तुत गद्यांश मन्नू भंडारी द्वारा लिखित उनके प्रसिद्ध उपन्यास 'आपका बंटी' से उद्धृत है।

प्रसंग– बंटी के चाचा उसकी मम्मी और उससे मिलने के लिए आते हैं। वे मम्मी–पापा में, तलाक होने के बाद कुछ बातचीत करने के लिए वहाँ आए हैं। वे घर आकर बंटी की बनाई पेंटिंग्स को देखकर उसे शाबाशी देते हैं, उसकी पीठ थपथपाते हैं और फिर उदास हो जाते हैं। बंटी इस बात को समझ नहीं पाता है। जो चाचा पहले खूब बातें करते थे और हाल–चाल पूछते थे वे अब एकदम इतने चुप कैसे हैं।

व्याख्या– हमेशा बोलने वाले बंटी के चाचा चुप हैं और बंटी की मम्मी भी चुप हैं। यह बड़ी अजीब–सी स्थिति है। जब दो व्यक्ति किसी उद्देश्य को लेकर बैठते हैं वे फिर बातचीत क्यों नहीं कर रहे हैं। कमरे का वातावरण अंधेरा होने के कारण उदासी भरा है। उनके मन में क्या चल रहा है यह सामने बैठे व्यक्ति को नहीं पता चल रहा है। अपनी झेंप मिटाने के लिए वे चाय का एक घूंट पीते हैं और खिड़की की ओर देखते हैं। जबकि खिड़की बंद है, उस पर परदा पड़ा हुआ है। वहाँ देखने के लिए भी कुछ नहीं है। चाचा और मम्मी के बीच कुछ ऐसा चल रहा है कि जिसे प्रकट नहीं किया जा रहा है। बंटी असमंजस में है।

टिप्पणी

विशेष

- सरल एवं प्रवाहमयी भाषा है।
- व्यंजना शब्द शक्ति का प्रयोग है।
- अंतर्मन के भाव दर्शाने का प्रयास किया है।

6. ''मम्मी ने ऐसी चुभती नज़रों से उसे देखा कि वह भीतर तक सहम गया और खट से उसने आँखें बंद कर लीं। पर बंद आँखों से भी वह उस चुभन को महसूस करता रहा। फिर बंद आँखों से ही उसने जाना कि मम्मी भी उसकी बगल में आकर लेट गई हैं। अब सबको सुलाकर मम्मी जागती रहेंगी।'' (पृ. 22)

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यांश हिंदी की प्रसिद्ध लेखिका मन्नू भंडारी के उपन्यास 'आपका बंटी' से उद्धृत है।

प्रसंग– बालक बंटी के मन में मम्मी और चाचा की बातों को लेकर कुछ ऊहापोह चल रहा था। वह कुछ समझ नहीं पा रहा था कि चाचा और मम्मी में किस बात को लेकर इतना असमंजस है।

व्याख्या– मम्मी खाना खिलाकर चाचा को आराम कराने के लिए ड्राइंग रूम में ले गई और चादर बिछाकर उन्हें सोने के लिए कह देती है। चाचा भी उठकर चुपचाप चले गए। फिर बंटी को भी आराम करने के लिए कहती है। मम्मी कहती है कि भरी दोपहर में तुझे नींद क्यों नहीं आती है। उसे तो यह उत्सुकता है कि मम्मी और चाचा में क्या बात हो रही है। जैसे ही बंटी पलंग पर लेटता है तो मम्मी चुभती नजरों से बंटी को देखती है। यह देखकर बंटी भीतर तक सहम जाता है। उसे लगता है कि कोई अनिष्ट बात उसने कह दी है। नजरों की चुभन इतनी गहरी थी कि बंद आँखों से भी महसूस की जा रही थी। थोड़ी देर बाद उसे अहसास हुआ कि मम्मी भी उसके बगल में आकर लेट गई है। स्वाभाविक है कि माँ की ममता उसे खींच लाई हो। माँ बच्चे के प्रति ऊपर से कितनी भी कठोर हो, उसके मन में बच्चे के प्रति प्यार भरा होता है। बंटी को यह आभास हो रहा है कि मम्मी सभी को सुलाने के बाद ही सोएगी अथवा जागती रहेगी। उसके मन में चाचा से हुई बातचीत ने उथल–पुथल मचा रखी है।

विशेष

- भाषा सरल एवं प्रवाहमयी है।
- माँ और बेटे के मनोविज्ञान को समझाने का प्रयास है।
- अभिधा और व्यंजना शब्द शक्ति का प्रयोग है।
- बालक के मन की चुभन को दर्शाने का प्रयास किया है।

7. ''क्या बताएं कुछ भी समझ में नहीं आता। लगता है, जब एक बार धुरी गड़बड़ा जाती है तो फिर जिंदगी लड़खड़ा ही जाती है... फिर कुछ नहीं होता... कुछ भी नहीं...'' और जाने कैसे अचानक चाचा का लंबा–सा हाथ पीछे को लटका और बंटी के सिर से टकरा गया। बंटी एकदम सकपका गया। ये चाचा भी अजीब हैं। बात करनी है, सीधी तरह से करो। इतना हाथ–पैर नचाने की क्या ज़रूरत है?'' (पृ. 24)

टिप्पणी

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यांश मन्नू भंडारी द्वारा लिखित उनकी अमर कृति 'आपका बंटी' उपन्यास से उद्धृत है।

प्रसंग– इसमें जीवन की सहज चलती गाड़ी के पटरी पर से उतरने की स्थिति को स्पष्ट किया गया है।

व्याख्या– बंटी के मम्मी–पापा शकुन और अजय का जीवन सुखद रूप में चल रहा था। कुछ समय पश्चात् उनमें विरोधाभास प्रतीत होने लगा। बात यहाँ तक बिगड़ी कि तलाक की स्थिति आ गई। बंटी के चाचा उन्हें समझाने क लिए आए हैं। वे कहते हैं कि जिंदगी केवल हमारे चाहने से ही हमारे अनुसार नहीं चलती। उसके लिए बहुत कुछ न्योछावर और त्याग करना पड़ता है। जब चाचा शकुन को समझाते हैं तब बंटी भी वहाँ हाजिर है। वे किसी बहाने से उसे वहाँ से भेजना चाहते हैं और उससे खेलने के विषय में पूछते हैं। बंटी उनकी सभी बातें समझता है। वह साफ कहता है कि सीधे से क्यों नहीं कहते कि यहाँ से चले जाओ। वह जानता है कि चाचा बीच–बीच में न जाने किस–किस की बात कह कर मुख्य बात से फिर जाते हैं। जब कुछ समझ में नहीं आता तो बंटी अपनी मम्मी से पूछने की इच्छा करता है, क्योंकि किसी को कहे हुए विचार समझ नहीं आते। चाचा को पता है कि जीवन की धुरी अपनी जगह से जरा भी हट गई तो आगे का जीवन गड़बड़ा जाता है। इसी सोच विचार में चाचा का हाथ बंटी से टकरा जाता है। बंटी बोल उठता है कि यह चाचा भी अजीब है, बात को सीधे न कहकर हाथ–पैर नचाने लगते हैं।

विशेष

- वकील चाचा की ज्यादा होशियारी को दर्शाया गया है।
- भाषा सरल और प्रवाहमयी है।
- अभिधा और व्यंजना शब्द शक्ति का प्रयोग है।

8. ''शकुन के लिए समय जैसे एक लंबे अरसे से ठहर गया था। यों घड़ी की सुई तो बराबर ही चलती थी। रोज़ सवेरे पीछे से आँगन से घुसकर धूप सारे घर को चमकाती–दमकाती दोपहर को लॉन में फैल–पसरकर बैठ जाती और शाम को बड़ी अलसायी–सी धीरे–धीरे सरकती हुई पीछे की पहाड़ियों में छिप जाती। एक दूसरे को ठेलते हुए मौसम भी आते ही रहे। फिर भी शकुन को लगता था, कि समय जैसे ठहर कर जम गया और जमे हुए समय की यह चट्टान न कहीं से पिघलती थी, न टूटती थी, बस, टूटती रही है तो शकुन धीरे–धीरे, तिल–तिल। यों तो पिछले दो–तीन सालों से ही ठहराव का यह एहसास बराबर ही होता रहा है, पर इधर एक साल से तो यह एहसास तीखा होते–होते जैसे असह्य–सा हो गया था। (पृ. 26)

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यांश मन्नू भंडारी द्वारा लिखित 'आपका बंटी' नामक उपन्यास से उद्धृत है।

प्रसंग– इसमें उपन्यास के मुख्य पात्र बंटी की मम्मी शकुन के जीवन के उहापोह को चित्रित किया गया है। उसके जीवन को प्रकृति के सहज प्रवाह से जोड़कर प्रस्तुत किया गया है।

टिप्पणी

व्याख्या– शकुन का जीवन सहज नहीं था। जब से उसके जीवन में तलाक का विचार आया तभी से वह असहज हो गई। इसका असर बेटे बंटी पर भी पड़ा। उसके चाचा कलकत्ता से उन्हें समझाने आए हैं। इस बात को लेकर बंटी बहुत सतर्क है। वह जानना चाहता है परन्तु किससे पूछे। मम्मी से वह कुछ पूछ नहीं सकता। रात को सोने से पहले उसके मन में बार–बार ऐसे ही विचार आ रहे थे। बिना किसी से पूछे और जाने उसे यह लग रहा था कि जरूर कहीं–न–कहीं गड़बड़ी की बात है जिसे बताने के लिए ही चाचा कलकत्ते से यहाँ आए हैं।

शकुन का जीवन लम्बे अरसे से ठहर–सा गया था। उसके जीवन में कोई उत्साह, रोमांस, प्रफुल्लता और प्रसन्नता का भाव नहीं रह गया था। समय अपनी गति से चलता रहता है। घड़ी की सुई यह दर्शाती है। मनुष्य उस घड़ी में समय देखकर अपने सारे दैनिक क्रियाकलाप करता है और आगे बढ़ता रहता है। इसी प्रकार प्रतिदिन सवेरे की धूप आँगन में आती है और सारे घर को प्रकाशित करती है। दोपहर को चमकती हुई दमकती हुई जैसे ठहर सी जाती है और सभी को नया जीवन प्रदान करती है। मनुष्य के जीवन में एक नई ऊर्जा का संचार करती है। फिर धीरे–धीरे अलसायी हुई सी सरकती हुई पहाड़ियों के पीछे छिप जाती है। मनुष्य का जीवन भी इसी तरह बचपन से लेकर बुढ़ापे की ओर बढ़ता रहता है। प्रकृति में परिवर्तित होते मौसम भी एक दूसरे को ठेलते हुए आगे बढ़ते रहे। इतना होते हुए भी शकुन को लगा कि जैसे उसका जीवन ठहर–सा गया है। उसके जीवन में जो गति थी, तेजी थी, आगे बढ़ने की ललक थी, उसमें कहीं–न–कहीं विराम आ गया था। जैसे जमी हुई चट्टान में कोई परिवर्तन नहीं होता, वैसे ही उसके जीवन में स्थिरता आ गई है। जैसे चट्टान पिघलती नहीं अपितु टूटती है और कण–कण में बिखरती है वैसे ही शकुन का जीवन धीरे–धीरे तिल–तिलकर टूट रहा है।

जीवन में ठहराव का अहसास एकदम नहीं आता। परन्तु शकुन के जीवन में एक साल से ठहराव का अहसास कुछ अधिक हो रहा है। जब ऐसी स्थिति असह्य होती है तो वह पीड़ादायक हो जाती है।

विशेष

- शकुन के जीवन के असह्य रूप को दर्शाया है।
- समय के साथ मनुष्य के जीवन को जोड़कर दिखाया गया है।
- भाषा सरल और प्रवाहमयी है।
- अभिधा और व्यंजना–शब्द शक्ति का प्रयोग है।
- व्याख्यात्मक शैली है।

9. ''साथ रहने की यंत्रणा भी बड़ी विकट थी और अलगाव का त्रास भी। अलग रहकर भी वह ठंडा युद्ध कुछ समय तक जारी ही नहीं रहा, बल्कि अनजाने ही अपनी जीत का संभावनाओं को एक नया संबल मिल गया था कि अलग रहकर ही शायद सही तरीके से महसूस होगा कि सामने वाले को खोकर क्या कुछ अमूल्य खो दिया है और वकील चाचा की हर खबर हर बात इन संभावनाओं को बनाती–बिगाड़ती रही थी।'' (पृ. 28)

टिप्पणी

संदर्भ– व्याख्या हेतु प्रस्तुत अवतरण मन्नू भंडारी के प्रसिद्ध उपन्यास 'आपका बंटी' से उद्धृत है।

प्रसंग– दाम्पत्य जीवन में पति–पत्नी के साथ रहने पर बड़ी विकट समस्या उत्पन्न हो जाती है साथ ही उसमें अलगाव की त्रासदी भी झेलनी पड़ती है, यदि सामंजस्य न हो तो तलाक लेने पर अलग रहकर कुछ और यंत्रणा भोगनी पड़ती है।

व्याख्या– अजय और शकुन के दाम्पत्य जीवन की सबसे बड़ी विडंबना यह थी कि दोनों में एक दूसरे से अंडरस्टैंडिंग पैदा करने की इच्छा नहीं थी। अपितु एक दूसरे को पराजित करके अपने अनुकूल बनाने की थी। साथ रहने की यही यंत्रणा थी कि उनका दिन तो तर्क और बहसों में बीत जाता था और रात में करवट बदलते हुए ठंडी लाशों की तरह बेचैन और छटपटाते हुए बीत जाता था। तलाक होने पर अलग रह कर भी कुछ ऐसी ही स्थिति रही। वे इस भ्रम में अपना समय व्यतीत करते रहे कि सामने वाले को खोकर उन्हें क्या हासिल हुआ। क्या उन्होंने अपना कुछ अमूल्य खो दिया है? उन्हें अपनी जीत की संभावनाओं से कुछ नया संबल हासिल करने की प्रतीति हुई।

ऐसी स्थिति में उनके जीवन को दिशा देने के लिए वकील चाचा की ओर से आने वाली हर खबर उनके भावी जीवन की हर संभावनाओं को बनाती–बिगाड़ती रही थी। वे एक उहापोह में जीवन जीते रहे हैं।

विशेष

- संबंध विच्छेद होने पर जीवन की त्रासदी पर प्रकाश डाला गया है।
- भाषा सरल और प्रवाहमयी है।
- सुखी जीवन के लिए स्वयं पर विश्वास करना आवश्यक है।

10. जो होना था सो तो हो ही गया और चलो अच्छा ही हुआ। सारी जिंदगी उस तनाव में काटने की अपेक्षा तो उससे मुक्त होना लाख गुना अच्छा था। यह कानूनी कार्यवाही हो जाएगी सो भी अच्छा ही रहेगा। यह संबंध ही ऐसा है कि लाख लड़ भिड़ लो, अलग रहने लगो, पर कहीं न कहीं आशा का एक तंतु जुड़ा ही रह जाता है। वह आशा चाहे जिंदगी–भर पूरी न हो...होती भी नहीं है...फिर भी मन है कि इधर–उधर नहीं जाता, बस उसी में अटका रह जाता है। (पृ. 32)

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यावतरण मन्नू भंडारी द्वारा लिखित उपन्यास 'आपका बंटी' से उद्धृत है।

प्रसंग– शकुन और अजय में तलाक होता है। इस संबंध विच्छेद की प्रक्रिया कचहरी में पूरी होती है। वकील चाचा ने सारी प्रक्रिया पूरी करा दी है। अलग होने पर उनके सामने बंटी की समस्या है और भावी जीवन में क्या होगा यह सब उनके मन में चल रहा है।

व्याख्या– जीवन की कटु और वीभत्स सच्चाई से शकुन का सामना होता है। वह जीवन की सच्चाई को जानने का प्रयास करती है। वह इन विचारों में डूबी हुई वकील चाचा की आवाज सुनती है। उसे लगता है कि जो होना था, वह हो गया। जो हुआ वह अच्छा ही हुआ। सारी जिंदगी तनाव में काटने की अपेक्षा उससे मुक्त होने में ही भलाई है। संबंध–विच्छेद के लिए कानूनी कार्यवाही हो जाएगी तो अच्छा ही होगा।

टिप्पणी

इससे कुछ तो निश्चिंतता आएगी। शकुन सोचती है कि दाम्पत्य संबंध अपने आप में विशेष है। इसमें पति–पत्नी में झगड़ा होता है, वे लड़ते–भिड़ते हैं और फिर अलग होकर रहने भी लग जाते हैं परन्तु मिलने की आशा का कोई एक तंतु जुड़ा ही रह जाता है। ऐसी आशा जिंदगी भर पूरी नहीं होती है फिर मन इधर–उधर नहीं जाता और वहीं अटका रहता है। एक बार संबंध बनने की यही विशेषता है। जीवन का यही एक रहस्य है।

विशेष

- संबंध विच्छेद होने पर जीवन की स्थिति पर प्रकाश डाला गया है।
- भाषा सरल और प्रवाहमयी है।
- अभिधा और व्यंजना शब्द शक्ति का प्रयोग है।
- तलाकशुदा जीवन की विडम्बना को स्पष्ट किया गया है।

11. ''अजीब–सा उत्साह है, जो मन में नहीं समा रहा है। कहानियों के न जाने कितने राजकुमार मन में तैर गए, जो अपनी–अपनी माँ के लिए समुद्र तैर गए थे या पहाड़ लाँघ गए थे। वह भी किसी से कम नहीं है। माँ के लिए पापा को ले आया। अब दोस्ती भी करवा देगा। वरना कोई ला सकता था पापा को? अब चिढ़ाए फूफी बंटी लड़की है। अब मम्मी कभी उदास नहीं होंगी। लेटे–लेटे छत या आसमान नहीं देखेंगी। टीटू की अम्मा यह नहीं पूछेंगी, ''आते हैं तुम्हारे पापा यहाँ?'' (पृ. 42)

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यांश मन्नू भंडारी द्वारा लिखित 'आपका बंटी' उपन्यास से लिया गया है।

प्रसंग– बंटी पापा के आने की खुशी से उत्साहित है। उसके मन में जो उत्साह है वह उसे खुशी प्रदान कर रहा है।

व्याख्या– बंटी मम्मी को याद कर रोता है परन्तु पापा के समझाने पर वह उत्साहित होता है। उसके मन में अजीब–सा उत्साह है। जिसे वह पचा नहीं पा रहा है। वास्तव में जब किसी बात की अधिक खुशी होती है तो वह मन में समा नहीं पाती। तब वह आँखों से निकले आँसुओं के द्वारा व्यक्त होती है। खुशी के यही आँसू व्यक्ति को भावी जीवन के लिए रास्ता बनाने में सहायक होते हैं। इस उत्साह से बंटी के मन में, अनेक राजकुमारों के रूप तैरने लगे। उसने अनेक कहानियों में ऐसे राजकुमारों की बात सुनी थी जो अपनी माँ के लिए समुद्र में तैर गए या पहाड़ को लाँघ गए। उनकी तुलना करते हुए बंटी कुछ खुशी महसूस करता है क्योंकि वह भी अपनी मम्मी के प्रेम के लिए पापा को ले आया है। अब वह उनकी दोस्ती भी करवा देगा। क्या ऐसा कार्य कोई और करा सकता था। अब उसे लड़की कह कर कोई नहीं चिढ़ाएगा। फूफी भी अब उसे कुछ नहीं कहेगी। मम्मी भी अब उदास नहीं रहेगी। वह भी लेटे हुए छत की ओर नहीं देखेगी। टीटू की अम्मा भी उस पर व्यंग्य नहीं कसेगी और न ही पापा के न आने का उलाहना देगी।

विशेष

- भाषा प्रवाहमयी और सरल है।
- बच्चे की मनःस्थिति का चित्रण हुआ है।
- व्याख्यात्मक शैली है।

टिप्पणी

12. ''अपनी हर समस्या, अपने हर बोझ को बड़े निर्द्वंद्व भाव से डॉक्टर के कंधों पर डालकर निश्चिंत हो जाने वाली शकुन के मन में एक कोना उभर आया था, जिसकी बात वहीं घुमड़ती रहती थी और शकुन थोड़ी–सी भयभीत रहती थी कि कहीं यहाँ की बात बाहर न आ जाए। साथ ही आशंकित भी कि कहीं यह कोना अपनी सीमा तोड़कर फैलना न शुरू कर दे और फिर फैलता ही चला जाए, फैलता ही चला जाए।'' (पृ. 131)

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यावतरण मन्नू भंडारी की अमर कृति 'आपका बंटी' से उद्धृत है।

प्रसंग– शकुन ने अजय से संबंध विच्छेद करके डॉ. जोशी से संबंध जोड़ लिया। अब वह अपने आपको निश्चिंत मान रही है। किन्तु फिर भी कोई शंका उसके मन में विद्यमान है जो उसे आशंकित करती है।

व्याख्या– शकुन ने अपनी हर समस्या और जीवन के हर द्वन्द्व का बोझ डॉ. जोशी के कंधों पर डाल दिया। किन्तु फिर भी उसके मन में कहीं–न–कहीं कोई अव्यक्त आशंका बैठी हुई है। वह आशंका उसके अपने जीवन की है या बेटे बंटी के जीवन को लेकर है, वह उससे अनभिज्ञ है। शकुन इस बात से भी भयभीत रहती है कि जो बात उसके मन में बैठी है वह बाहर न आ जाए। आशंकित हमेशा आशंकित ही रहता है। उससे निकलने की वह कितनी भी कोशिश कर ले, फिर भी उसे डर बना ही रहता है। ऐसी स्थिति आने पर पारस्परिक विश्वास, अपनत्व, सद्भावना आदि सब कुछ करता चला जाता है। बंटी द्वारा हर दिन किया जाने वाला कोई न कोई हंगामा उसे विचलित करता रहता था। उसके असली व्यवहार में भी नकलीपन झलकता था। बंटी के हंगामे का बोझ कम और डॉ. की चुप्पी को बोझ उसे अधिक विचलित करता था।

विशेष

- भाषा सरल और भावानुकूल तथा प्रवाहमयी है।
- शकुन की मनःस्थिति का चित्रण है।
- भयभीत मानव नकारात्मक ही सोचता है।
- अभिधा और व्यंजना शब्द शक्ति का प्रयोग है।
- व्याख्यात्मक शैली है।

13. ''पता नहीं क्या हुआ कि इतनी देर में मन पर रखा हुआ पत्थर जैसे एकाएक ही दरक गया और ढेर–ढेर आँसू उफन आए। आँसू–भरी आँखों के सामने डिब्बे की हर चीज, बैठे हुए अजनबी लोगों के चेहरे पहले धुँधले हुए और धुँधले हुए और फिर एक दूसरे में मिल गए। पापा का चेहरा भी उन्हीं में मिल गया और फिर धीरे–धीरे सारे चेहरे एक दूसरे में गड्ड मड्ड हो गए।'' (पृ. 152)

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यांश मन्नू भंडारी द्वारा लिखित उपन्यास 'आपका बंटी' से उद्धृत है।

प्रसंग– बंटी के पापा उसे हॉस्टल में छोड़ने के लिए जाते हैं। वहां के प्रिंसिपल से मिलवाकर वे वापिस लौटने की तैयारी करते हैं। ऐसे में एक दूसरे से बिछड़ने का भाव कैसा होता है और परिचितों की संवेदना कैसे उभरकर आती है। यह सब समझ से परे होता है।

टिप्पणी

व्याख्या– एक दूसरे से बिछड़ने का दुख व्यक्ति को कितना कचोटता है इसकी अनुमान लगाना कठिन होता है। जैसे ही बंटी को गोद में उठाकर चलने के लिए तैयार होने को कहा गया तो उसके मन पर भावनाओं का जो बोझ था वह हट गया। अंदर की भावनाएँ एकदम आँसुओं के माध्यम से बाहर आ गईं। मन के अंदर का दुख बाहर आकर हल्का कर देता है।

आँसू भरी आँखों के सामने की हर चीज मानो तैरती नज़र आ रही थी। सामने जो भी अजनबी चेहरे थे वे एक दूसरे में मिलते नज़र आने लगे। उन्हीं में बंटी के पापा का चेहरा भी नज़र आया और थोड़ी देर में उन्हीं में मिल गया। फिर एक ऐसी स्थिति आई कि सभी चेहरे एक दूसरे के साथ मिलते गए और सारी स्थिति गडमड हो गई। मन की स्पष्टता धुँधली पड़ती गई।

विशेष

- भाषा सरल और प्रवाहमयी है।
- शैली विचारात्मक है।
- मन का दुख आँसुओं में कैसे बाहर आता है, इसका स्पष्टीकरण किया है।

अपनी प्रगति जांचिए

3. आपका बंटी किस मूल संवेदना पर आधारित उपन्यास है?

   (क) अस्तित्वादी (ख) जनवादी

   (ग) बाल–मनोविज्ञान (घ) स्त्री–विमर्श

4. "जब एक बार धुरी गड़बड़ा जाती है तो फिर जिंदगी लड़खड़ा ही जाती है।" उपन्यास में यह कथन किसका है?

   (क) शकुन (ख) डॉ. जोशी

   (ग) फूफी (घ) वकील चाचा

1.4 गुण्डा (जयशंकार प्रसाद) से व्याख्या

मूल पाठ

वह पचास वर्ष से ऊपर था। तब भी युवकों से अधिक बलिष्ठ और दृढ़ था। चमड़ी पर झुर्रियां नहीं पड़ी थी। वर्षा की झड़ी में, पूस की रातों की छाया में, कड़कती हुई जेठ की धूप में, नंगे शरीर घूमने में वह सुख मानता था। उसकी चढ़ी मूँछें बिच्छू के डंक की तरह, देखने वालों की आंखों में चुभती थी। उसका सांवला रंग, सांप की तरह चिकना और चमकीला था। उसकी नागपुरी धोती का लाल रेशमी किनारा दूर से ही ध्यान आकर्षित करता। कमर में बनारसी सेल्हे का फेंटा, जिसमें सीप की मूठ का बिछुआ खुँसा रहता था। उसके घुँघराले बालों पर सुनहले पल्ले के साफे का छोर उसकी चौड़ी पीठ पर फैला रहता। ऊँचे कन्धे पर टिका हुआ चौड़ी धार का गँड़ासा, यह थी उसकी धज! पंजों के बल जब वह चलता तो उसकी नसें चटाचट बोलती थीं। वह गुण्डा था।

टिप्पणी

ईसा की अठारहवीं शताब्दी के अंतिम भाग में वही काशी नहीं रह गयी थी, जिसमें उपनिषद् के अजातशत्रु की परिषद् में ब्रह्मविद्या सीखने के लिए विद्वान ब्रह्मचारी आते थे। गौतम बुद्ध और शंकराचार्य के धर्म–दर्शन के वाद–विवाद, कई शताब्दियों से लगातार मन्दिरों और मठों के ध्वंस और तपस्वियों के वध के कारण प्रायः बन्द–से हो गये थे। यहां तक कि पवित्रता और छुआछूत में कट्टर वैष्णवधर्म भी उस विशृंखलता में, नवागन्तुक धर्मोन्माद में अपनी असफलता देखकर काशी में अघोर रूप धारण कर रहा था। उसी समय समस्त न्याय और बुद्धिवाद को शस्त्र–बल के सामने झुकते देखकर काशी के विच्छिन्न और निराश नागरिक जीवन ने एक नवीन सम्प्रदाय की सृष्टि की।वीरता जिसका धर्म था। अपनी बात पर मिटना, सिंह–वृत्ति से जीविका ग्रहण करना, प्राण–भिक्षा माँगने वाले कायरों तथा चोट खाकर गिरे हुए प्रतिद्वन्द्वी पर शस्त्र न उठाना, सताये निर्बलों को सहायता देना और प्रत्येक क्षण प्राणों को हथेली पर लिये घूमना, उनका बाना था। उन्हें लोग काशी में गुण्डा कहते थे।

जीवन की किसी अलभ्य अभिलाषा से वंचित होकर जैसे प्रायः लोग विरक्त हो जाते हैं, ठीक उसी तरह किसी मानसिक चोट से घायल होकर, एक प्रतिष्ठित जमींदार का पुत्र होने पर भी, नन्हकूसिंह गुण्डा हो गया था। दोनों हाथ से उसने अपनी संपत्ति लुटायी। नन्हकूसिंह ने बहुत–सा रुपया खर्च करके जैसा स्वांग खेला था, उसे काशी वाले बहुत दिनों तक नहीं भूल सके। वसन्त ऋतु में यह प्रहसनपूर्ण अभिनय खेलने के लिए उन दिनों प्रचुर धन, बल, निर्भीकता और उच्छृंखलता की आवश्यकता होती थी। एक बार नन्हकूसिंह ने भी एक पैर में नूपुर, एक हाथ में तोड़ा, एक आंख में काजल, एक कान में हजारों के मोती तथा दूसरे कान में फटे हुए जूतों का तल्ला लटकाकर, एक में जड़ाऊ मूठ की तलवार, दूसरा हाथ आभूषणों से लदी हुई अभिनय करने वाली प्रेमिका के कन्धे पर रखकर गाया था–

'कहीं बैगन वाली मिले तो बुला देना।'

प्रायः बनारस के बाहर की हरियालियों में, अच्छे पानी वाले कुओं पर, गंगा की धारा में मचलती हुई डोंगी पर वह दिखलायी पड़ता था। कभी–कभी जुआखाने से निकलकर जब वह चौक में आ जाता, तो काशी की रंगीली वेश्याएं मुस्कराकर उसका स्वागत करतीं और उसके दृढ़ शरीर को सस्पृह देखतीं। वह तमोली की ही दुकान पर बैठकर गीत सुनता, ऊपर कभी नहीं जाता था। जुए की जीत को मुट्ठियों में भर–भरकर, उनकी खिड़की में वह इस तरह उछालता कि कभी–कभी समाजी लोग अपना सिर सहलाते, तब वह ठठाकर हंस देता। जब कभी लोग कोठे में ऊपर चलने के लिए कहते, तो वह उदासी की सांस खींचकर चुप हो जाता।

वह अभी वंशी के जुआखाने से निकला था। आज उसकी कौड़ी ने साथ न दिया। सोलह परियों के नृत्य में उसका मन न लगा। मन्नू तमोली की दुकान पर बैठते हुए उसने कहा–'आज सायत अच्छी नहीं रही, मन्नू!

'क्यों मालिक! चिन्ता किस बात की है। हम लोग किस दिन के लिए हैं। सब आप ही का तो है।'

'अरे, बुद्धू ही रहे तुम! नन्हकूसिंह जिस दिन किसी से लेकर जुआ खेलने लगे उसी दिन समझना वह मर गये। तुम जानते नहीं कि मैं जुआ खेलने कब जाता हूं।

टिप्पणी

जब मेरे पास पैसा नहीं रहता; उसी दिन नाल पर पहुंचते ही जिधर बड़ी ढेरी रहती है, उसी को दबाता हूं और फिर वही दांव आता भी है। बाबा कीनाराम का यह वरदान है!'

'तब आज क्यों, मालिक?'

'पहला दांव तो आया ही, फिर दो–चार हाथ बदने पर सब निकल गया। तब भी लो, यह पांच रुपये बचे हैं। एक रुपया तो पान के लिए रख लो और चार दे दो मलूकी कथक को, कह दो कि दुलारी से गाने के लिए कह दे। हां, वही एक गीत–

'बिलमि विदेश रहे।'

नन्हकूसिंह की बात सुनते ही मलूकी, जो अभी गाँजे की चिलम पर रखने के लिए अंगारा चूर कर रहा था, घबराकर उठ उड़ा हुआ। वह सीढ़ियों पर दौड़ता हुआ चढ़ गया। चिलम को देखता ही ऊपर चढ़ा, इसलिए उसे चोट भी लगी; पर नन्हकूसिंह की भृकुटी देखने की शक्ति उसमें कहां। उसे नन्हकूसिंह की वह मूर्ति न भूली थी, जब इसी पान की दुकान पर जुएखाने से जीता हुआ, रुपये से भरा तोड़ा लिये वह बैठा था। दूर से बोधीसिंह की बरात का बाजा बजता हुआ आ रहा था। नन्हकू ने पूछा–'यह किसकी बारात है?'

ठाकुर बोधीसिंह के लड़के की।'–मन्नू के इतना कहते ही नन्हकू के ओंठ फड़कने लगे। उसने कहा–'मन्नू! यह नहीं हो सकता। आज इधर से बारात न जायेगी। बोधीसिंह हमसे निपटकर तब बारात इधर से ले जा सकेंगे।

मन्नू ने कहा–'तब मालिक, मैं क्या करूं?'

नन्हकू गँड़ासा कन्धे पर से और ऊँचा करके मलूकी से बोला–'मलुकिया देखता है, अभी जा ठाकुर से कह दे, कि बाबू नन्हकूसिंह आज यहीं लगाने के लिए खड़े हैं। समझकर आवें, लड़के की बारात है।' मलुकिया काँपता हुआ ठाकुर बोधीसिंह के पास गया। बोधीसिंह और नन्हकू का पांच वर्ष से सामना नहीं हुआ है। किसी दिन नाल पर कुछ बातों में ही कहा–सुनी होकर, बीच–बचाव हो गया था। फिर सामना नहीं हो सका। आज नन्हकू जान पर खेलकर अकेले खड़ा है बोधीसिंह भी उस आन को समझते थे। उन्होंने मलूकी से कहा–'जा बे, कह दे कि हमको क्या मालूम कि बाबू साहब वहां खड़े हैं। जब वह हैं ही, तो दो समधी जाने का क्या काम है' बोधीसिंह लौट गये और मलूकी के कंधे पर तोड़ा लादकर बाजे के आगे नन्हकूसिंह बारात लेकर गये। ब्याह में जो कुछ लगा, खर्च किया। ब्याह कराकर तब, दूसरे दिन इसी दुकान तक आकर रुक गये। लड़के को और उसकी बारात को उसके घर भेज दिया।

मलूकी को भी दस रुपया मिला था उस दिन। नन्हकूसिंह की बात सुनकर बैठे रहना और यम को न्योता देना एक ही बात थी। उसने जाकर दुलारी से कहा–'हम ठेका लगा रहे हैं, तुम गाओ, तब तक बल्लू सारंगी वाला पानी पीकर आता है।'

'बाप रे, कोई आफत आयी है क्या बाबू साहब? सलाम।'–कहकर खिड़की से मुस्कराकर झाँका था कि नन्हकूसिंह उसके सलाम का जवाब देकर, दूसरे एक आने वाले को देखने लगे।

हाथ में हरौती की पतली–सी छड़ी, आंखों में सुरमा, मुंह में पान, मेहंदी लगी हुई लाल दाढ़ी, जिसकी सफेद जड़ दिखलायी पड़ रही थी, कुव्वेदार टोपी, छकलिया

टिप्पणी

अंगरखा और साथ में लैसदार परत वाले दो सिपाही! कोई मौलवी साहब हैं, नन्हकू हंस पड़ा। नन्हकू की ओर बिना देखे ही मौलवी ने एक सिपाही से कहा–'जाओ, दुलारी से कह दो कि आज रेजीडेण्ट साहब की कोठी पर मुजरा करना होगा, अभी चले, देखो तब तक हम जानअली से कुछ इत्र ले रहे हैं।' सिपाही ऊपर चढ़ रहा था और मौलवी दूसरी ओर चले थे कि नन्हकू ने ललकारकर कहा–'दुलारी! हम कब तक यहां बैठे रहें! क्या अभी सरंगिया नहीं आया?'

दुलारी ने कहा–'वाह बाबू साहब! आप ही के लिए तो मैं यहां आ बैठी हूं, सुनिये न! आप तो कभी ऊपर...'मौलवी जल उठा। उसने कड़ककर कहा–'चोबदार! अभी वह सूअर की बच्ची उतरी नहीं। जाओ, कोतवाल के पास मेरा नाम लेकर कहो कि मौलवी अलाउद्दीन कुबरा ने बुलाया है। आकर उसकी मरम्मत करें। देखता हूं जब से नवाबी गयी, इन काफिरों की मस्ती चढ़ गयी है।'

कुबरा मौलवी! बाप रे–तमोली अपनी दुकान सँभालने लगा। पास ही एक दुकान पर बैठकर ऊँघता हुआ बजाज चौंककर सिर में चोट खा गया! इसी मौलवी ने तो महाराज चेतसिंह से साढ़े तीन सेर चींटी के सिर का तेल मांगा था। मौलवी अलाउद्दीन कुबरा! बाजार में हलचल मच गयी। नन्हकूसिंह ने कहा, 'बाईजी! इधर–उधर हिलने का काम नहीं। तुम गाओ। हमने ऐसे घसियारे बहुत–से देखे हैं। अभी कल रमल के पासे फेंककर अधेला–अधेला मांगता था, आज चला है रौब गाँठने।'

अब कुबरा ने घूमकर उसकी ओर देखकर कहा–'कौन है यह पाजी!'

'तुम्हारे चाचा बाबू नन्हकूसिंह!'–के साथ ही पूरा बनारसी झापड़ पड़ा। कुबरा का सिर घूम गया। लैंस के परतले वाले सिपाही दूसरी ओर भाग चले और मौलवी साहब चौंधियाकर जानअली की दुकान पर लड़खड़ाते, गिरते–पड़ते किसी तरह पहुंच गये।

जानअली ने मौलवी से कहा–'मौलवी साहब! भला आप भी उस गुण्डे के मुंह लगने लगे। यह तो कहिये कि उसने गँड़ासा नहीं तौल दिया।' कुबरा के मुंह से बोली नहीं निकल रही थी। उधर दुलारी गा रही थी, '...बिलमि विदेस रहे...' गाना पूरा हुआ, कोई आया–गया नहीं। तब नन्हकूसिंह धीरे–धीरे टहलता हुआ, दूसरी ओर चला गया। थोड़ी देर में एक डोली रेशमी परदे से ढंकी हुई आयी साथ मे एक चोबदार भी था। उसने दुलारी को राजमाता पन्ना की आज्ञा सुनायी।

दुलारी चुपचाप डोली पर जा बैठी। डोली धूल और सन्ध्याकाल के धुएं से भरी हुई बनारस की तंग गलियों से होकर शिवालय घाट की ओर चली।

श्रावण का अंतिम सोमवार था। राजमाता पन्ना शिवालय में बैठकर पूजन कर रही थीं। दुलारी बाहर बैठी कुछ अन्य गाने वालियों के साथ भजन गा रही थी। आरती हो जाने पर फूलों की अंजलि बिखेरकर पन्ना ने भक्तिभाव से देवता के चरणों में प्रणाम किया। फिर प्रसाद लेकर बाहर आते ही उन्होंने दुलारी को देखा। उसने खड़ी होकर हाथ जोड़ते हुए कहा–'मैं पहले ही पहुंच जाती। क्या करूं, वह कुबरा मौलवी निगोड़ा आकर रेजीडेण्ट की कोठी पर ले जाने लगा। घण्टों इसी झंझट में बीत गया, सरकार!'

'कुबरा मौलवी! जहां सुनती हूं, उसी का नाम। सुना है कि उसने यहां भी आकर कुछ...'–फिर न जाने क्या सोचकर बात बदलते हुए पन्ना ने कहा–हां, तब फिर क्या हुआ? तुम कैसे यहां आ सकीं?'

टिप्पणी

'बाबू नन्हकूसिंह उधर से आ गये। मैंने कहा–सरकार की पूजा पर मुझे भजन गाने को जाना है। और यह जाने नहीं दे रहा है। उन्होंने मौलवी को ऐसा झापड़ लगाया कि उसकी हेकड़ी भूल गयी और तब जाकर मुझे किसी तरह यहां आने की छुट्टी मिली।'

दुलारी ने सिर नीचा करके कहा–'अरे, क्या सरकार को नहीं मालूम? बाबू निरंजनसिंह के लड़के! उस दिन, जब मैं बहुत छोटी थी, आपकी बारी में झूला झूल रही थी, जब नवाब का हाथी बिगड़कर आ गया था, बाबू निरंजनसिंह के कुंवर ने ही तो उस दिन हम लोगों की रक्षा की थी।'

राजमाता का मुख उस प्राचीन घटना को स्मरण करके न जाने क्यों विवर्ण हो गया। फिर अपने को संभालकर उन्होंने पूछा–'तो बाबू नन्हकूसिंह उधर कैसे आ गये?''

दुलारी ने मुस्कराकर सिर नीचे कर लिया। दुलारी राजमाता पन्ना के पिता की जमींदारी मे रहने वाली वेश्या की लड़की थी। उसके साथ ही कितनी बार झूले–हिंडोले अपने बचपन में पन्ना झूल चुकी थी। वह बचपन से ही गाने में सुरीली थी। सुन्दरी होने पर चंचल भी थी। पन्ना जब काशीराज की माता थी, तब दुलारी काशी की प्रसिद्ध गाने वाली थी। राजमहल में उसका गाना–बजाना हुआ ही करता। महाराज बलवन्तसिंह के समय से ही संगीत पन्ना के जीवन का आवश्यक अंश था। हां, अब प्रेम–दुःख और दर्द–भरी विरह–कल्पना के गीत की ओर अधिक रुचि न थी। अब सात्विक भावपूर्ण भजन होता था। राजमाता पन्ना का वैधव्य से दीप्त शान्त मुख–मण्डल कुछ मलिन हो गया।

बड़ी रानी की सापत्न्य ज्वाला बलवन्तसिंह के मर जाने पर भी नहीं बुझी। अन्तःपुर कलह का रंगमंच बना रहता, इसी से प्रायः पन्ना काशी के राजमन्दिर मे आकर पूजा–पाठ में अपना मन लगाती। रामनगर में उसको चैन नहीं मिला। नयी रानी होने के कारण बलवन्तसिंह की प्रेयसी होने का गौरव तो उसे था ही, साथ में पुत्र उत्पन्न करने का सौभाग्य भी मिला, फिर भी असवर्णता का सामाजिक दोष उसके हृदय को व्यथित किया करता। उसे अपने ब्याह की आरम्भिक चर्चा का स्मरण हो आया।

छोटे–से मंच पर बैठी, गंगा की उमड़ती हुई धारा को पन्ना अन्यमनस्क होकर देखने लगी। उस बात को, जो अतीत में एक बार, हाथ से अनजाने में खिसक जाने वाली वस्तु की तरह गुप्त हो गयी हो; सोचने का कोई कारण नहीं। उससे कुछ बनता–बिगड़ता भी नहीं, परन्तु मानव–स्वभाव हिसाब रखने की प्रथानुसार कभी–कभी कह बैठता है, 'कि यदि वह बात हो गयी होती तो?' ठीक उसी तरह पन्ना भी राजा बलवंतसिंह द्वारा बलपूर्वक रानी बनायी जाने के पहले की एक संभावना को सोचने लगी थी। सो भी बाबू नन्हकूसिंह का नाम सुन लेने पर। गेंदा मुंहलगी दासी थी। वह पन्ना के साथ उसी दिन से है, जिस दिन से पन्ना बलवंतसिंह की प्रेयसी हुई। राज्य–भर का अनुसंधान उसी के द्वारा मिला करता। और उसे न जाने कितनी जानकारी भी थी। उसने दुलारी का रंग उखाड़ने के लिए कुछ कहना आवश्यक समझा।

'महारानी! नन्हकूसिंह अपनी सब जमींदारी स्वाँग, भैंसों की लड़ाई, घुड़दौड़ और गाने–बजाने में उड़ाकर अब डाकू हो गया है। जितने खून होते हैं, सब में उसी का

टिप्पणी

हाथ रहता है। जितनी...' उसे रोककर दुलारी ने कहा–'यह झूठ है। बाबू साहब के ऐसा धर्मात्मा तो कोई है ही नहीं। कितनी विधवाएं उनकी दी हुई धोती से अपना तन ढंकती हैं। कितनी लड़कियों की ब्याह–शादी होती है। कितने सताये हुए लोगों की उनके द्वारा रक्षा होती है।

रानी पन्ना के हृदय में एक तरलता उद्वेलित हुई। उन्होंने हंसकर कहा–'दुलारी, वे तेरे यहां आते हैं न? इसी से तू उनको बड़ाई...।'

'नहीं सरकार! शपथ खाकर कह सकती हूं कि बाबू नन्हकूसिंह ने आज तक कभी मेरे कोठे पर पैर भी नहीं रखा।'

राजमाता न जाने क्यों इस अद्‌भुत व्यक्ति को समझने के लिए चंचल हो उठी थीं। तब भी उन्होंने दुलारी को आगे कुछ न कहने के लिए तीखी दृष्टि से देखा। वह चुप हो गयी। पहले पहर की शहनाई बजने लगी। दुलारी छुट्टी मांगकर डोली पर बैठ गयी तब गेंदा ने कहा–'सरकार! आजकल नगर की दशा बड़ा बुरी है। दिन–दहाड़े लोग लूट लिए जाते हैं। सैकड़ों जगह नाल पर जुए में लोग अपना सर्वस्व गंवाते हैं। बच्चे फुसलाये जाते हैं। गलियों में लाठियां और छुरा चलने के लिए टेढ़ी भौंहें कारण बन जाती हैं। उधर रेजीडेण्ट साहब से महाराज की अनबन चल रही है।' राजमाता चुप रही।

दूसरे दिन राजा चेतसिंह के पास रेजीडेण्ट मार्कहेम की चिट्‌ठी आयी, जिसमें नगर की दुर्व्यवस्था की कड़ी आलोचना थी। डाकुओं और गुण्डों को पकड़ने के लिए, उन पर कड़ा नियंत्रण रखने की सम्पत्ति भी आने की सूचना थी। शिवालय–घाट और रामनगर मे हलचल मच गयी! कोतवाल हिम्मतसिंह पागल की तरह, जिसके हाथ में लाठीं, लोहाँगी, गँड़ासा, बिछुआ और करौली देखते, उसी को पकड़ने लगे।

एक दिन नन्हकूसिंह सुम्भा के नाले के संगम पर, ऊँचे से टीले की घनी हरियाली में अपने चुने हुए साथियों के साथ दूधिया छान रहे थे। गंगा में, उनकी पतली डोंगी बड़ की जटा से बँधी थी। कथकों का गाना हो रहा था। चार उलाँकी इक्के कसे–कसाये खड़े थे।

नन्हकूसिंह ने अकस्मात् कहा–'मलूकी! गाना जमता नहीं है। उलाँकी पर बैठकर जाओ, दुलारी को बुला लाओ।' मलूकी वहां मजीरा बजा रहा था। दौड़कर इक्के पर जा बैठा। आज नन्हकूसिंह का मन उखड़ा था। बूटी कई बार छानने पर भी नशा नहीं। एक घंटे में दुलारी सामने आ गयी। उसने मुस्कराकर कहा–'क्या हुक्म है बाबू साहब?'

'दुलारी! आज गाना सुनने का मन कर रहा है।'

'इस जंगल में क्यों?'–उसने सशंक हंसकर कुछ अभिप्राय से पूछा।

'तुम किसी तरह का खटका न करो।' नन्हकूसिंह ने हंसकर कहा।

'यह तो मैं उस दिन महारानी से भी कह आयी हूं।'

'क्या, किससे?'

'राजमाता पन्नादेवी से'–फिर उस दिन गाना नहीं जमा। दुलारी ने आश्चर्य से देखा कि तानों में नन्हकू की आंखें तर हो जाती हैं। गाना–बजाना समाप्त हो गया था।

टिप्पणी

वर्षा की रात में झिल्लियों का स्वर उस झुरमुट में गूँज रहा था। मन्दिर के समीप ही छोटे–से कमरे में नन्हकूसिंह चिन्ता–निमग्न बैठा था। आंखों में नींद नहीं। और सब लोग तो सोने लगे थे, दुलारी जाग रही थी। वह भी कुछ सोच रही थी। आज उसे, अपने को रोकने के लिए कठिन प्रयत्न करना पड़ रहा था; किन्तु असफल होकर वह उठी और नन्हकू के समीप धीरे–धीरे चली आयी। कुछ आहट पाते ही चौंककर नन्हकूसिंह ने पास ही पड़ी हुई तलवार उठा ली। तब तक हंसकर दुलारी ने कहा–'बाबू साहब, यह क्या? स्त्रियों पर भी तलवार चलायी जाती है!'

छोटे–से दीपक के प्रकाश में वासना–भरी रमणी का मुख देखकर नन्हकू हंस पड़ा। उसने कहा–'क्यों बाईजी! क्या इसी समय जाने की पड़ी है! मौलवी ने फिर बुलाया है क्या?' दुलारी नन्हकू के पास बैठ गयी। नन्हकू ने कहा–'क्या तुमको डर लग रहा है?'

'नहीं, मैं कुछ पूछने आयी हूं।'

'क्या?'

'क्या...यही कि...कभी तुम्हारे हृदय में...'

'उसे न पूछो दुलारी! हृदय को बेकार ही समझकर तो उसे हाथ में लिये फिर रहा हूं। कोई कुछ कर देता–कुचलता–चीरता–उछालता! मर जाने के लिए सब कुछ तो करता हूं, पर मरने नहीं पाता।'

'मरने के लिए भी कहीं खोजने जाना पड़ता है। आपको काशी का हाल क्या मालूम! न जाने घड़ी भर में क्या हो जाय! क्या उलट–पलट होने वाला है, बनारस की गलियां जैसे काटने दौड़ती हैं।'

'कोई नयी बात इधर हुई है क्या?'

'कोई हेस्टिंग्ज आया है। सुना है, उसने शिवालयघाट पर तिलंगों की कंपनी का पहरा बैठा दिया है। राजा–चेतसिंह और राजमाता पन्ना वहीं हैं। कोई–कोई कहता है कि उनको पकड़कर कलकत्ता भेजने...'

'क्या पन्ना भी...रनिवास भी वहीं हैं'–नन्हकू अधीर हो उठा था।

'क्यों बाबू साहब, आज रानी पन्ना का नाम सुनकर आपकी आंखों में आंसू क्यो आ गये?'

सहसा नन्हकू का मुख भयानक हो उठा। उसने कहा–'चुप रहो, तुम उसको जानकर क्या करोगी?' वह उठ खड़ा हुआ। उद्विग्न की तरह न जाने क्या खोजने लगा। फिर स्थित होकर उसने कहा–'दुलारी! जीवन मे आज यह पहला ही दिन है कि एकान्त रात में एक स्त्री मेरे पलंग पर आकर बैठ गयी है, मैं चिरकुमार! अपनी की प्रतिज्ञा का निर्वाह करने के लिए सैकड़ों असत्य, अपराध करता फिर रहा हूं। क्यों? तुम जानती हो? मैं स्त्रियों का घोर विद्रोह हूं और पन्ना!...किन्तु उसका क्या अपराध! अत्याचारी बलवंतसिंह के कलेजे में बिछुआ मैं न उतार सका। किन्तु पन्ना! उसे पकड़कर गोरे कलकत्ते भेज देंगे! वही...।'

नन्हकूसिंह उन्मत्त हो उठा था। दुलारी ने देखा, नन्हकू अंधकार में ही वटवृक्ष के नीचे पहुंचा और गंगा की उमड़ती हुई धारा में डोंगी खोल दी–उसी घने अंधकार में। दुलारी का हृदय काँप उठा।

टिप्पणी

16 अगस्त, सन् 1881 को काशी डाँवाडोल हो रही थी। शिवालय–घाट में राजा चेतसिंह लेफ्टिनेण्ट इस्टाकर के पहरे में थे। नगर में आतंक था। दुकानें बन्द थी। घरों में बच्चे अपनी मां से पूछते थे–'मां, आज हलुएवाला नहीं आया।' वह कहती–'चुप बेटे!–'सड़कें सूनी पड़ी थीं। तिलंगों की कम्पनी के आगे–आगे कुबरा मौलवी कभी–कभी, आता–जाता दिखायी पड़ता था। उस समय खुली हुई खिड़कियां–बन्द हो जाती थीं। भय और सन्नाटे का राज्य था। चौक मे चिथरूसिंह की हवेली अपने भीतर काशी की वीरता को बन्द किये कोतवाल का अभिनय कर रही थी। इसी समय किसी ने पुकारा–'हिम्मतसिंह!'

खिड़की में से सिर निकालकर हिम्मतसिंह ने पूछा–'कौन?'

'बाबू नन्हकूसिंह!'

'अच्छा, तुम अब तक बाहर ही हो?'

'पागल! राजा कैद हो गये हैं। छोड़ दो इन सब बहादुरों को! हम एक बार इनको लेकर शिवालयघाट जायें।'

'ठहरो'–कहकर हिम्मतसिंह ने कुछ आज्ञा दी, सिपाही बाहर निकले। नन्हकू की तलवार चमक उठी। सिपाही भीतर आए। नन्हकू ने कहा–'नमक–हरामो, चूड़ियां पहन लो।' लोगों के देखते–देखते नन्हकूसिंह चला गया। कोतवाली के सामने फिर सन्नाटा हो गया।

नन्हकू उन्मत्त था। उसके थोड़े–से साथी उसकी आज्ञा पर जान देने के लिए तुले थे। वह नहीं जानता था कि राजा चेतसिंह का क्या राजनैतिक अपराध है। उसने कुछ सोचकर अपने थोड़े–से साथियों को फाटक पर गड़बड़ मचाने के लिए भेज दिया। इधर अपनी डोंगी लेकर शिवालय की खिड़की के नीचे धारा काटता हुआ पहुंचा। किसी तरह निकले हुए पत्थर में रस्सी अटकाकर, चंचल डोंगी को उसने स्थिर किया और बन्दर की तरह उछलकर खिड़की के भीतर हो रहा। उस समय वहां राजमाता पन्ना और राजा चेतसिंह से बाबू मनियार सिंह कह रहे थे–'आपके यहां रहने से, हम लोग क्या करें, यह समझ में नहीं आता। पूजा–पाठ समाप्त करके आप रामनगर चली गयी होतीं, तो यह...'

तेजस्विनी पन्ना ने कहा–'मैं रामनगर कैसे चली जाऊँ?'

मनियार सिंह दुखी होकर बोले–'कैसे बताऊँ? मेरे सिपाही तो बन्दी हैं।'

इतने में फाटक पर कोलाहल मचा। राज–परिवार अपनी मन्त्रणा में डूबा था कि नन्हकूसिंह का आना उन्हें मालूम हुआ। सामने का द्वार बन्द था। नन्हकूसिंह ने एक बार गंगा की धारा को देखा–उसमें एक नाव घाट पर लगने के लिए लहरों से लड़ रही थी। वह प्रसन्न हो उठा। इसी की प्रतीक्षा में वह रुका था। उसने जैसे सबको सचेत करते हुए कहा–'महारानी कहां हैं?'

सबने घूमकर देखा–एक अपरिचित वीर–मूर्ति! शस्त्रों से लदा हुआ पूरा देव!

चेतसिंह ने पूछा–'तुम कौन हो?'

'राज–परिवार का एक बिना दाम का सेवक!'

पन्ना के मुंह से हलकी–सी एक सांस निकलकर रह गयी। उसने पहचान लिया। इतने वर्षों बाद! वही नन्हकूसिंह।

टिप्पणी

मनियार सिंह ने पूछा–'तुम क्या कर सकते हो?'

'मैं मर सकता हूं! पहले महारानी को डोंगी पर बिठाइए। नीचे दूसरी डोंगी पर अच्छे मल्लाह हैं। फिर बात कीजिए।'–मनियारसिंह ने देखा, जनानी ड्योढ़ी का दारोगा राज की एक डोंगी पर चार मल्लाहों के साथ खिड़की से नाव सटाकर प्रतीक्षा में है। उन्होंने पन्ना से कहा–'चलिए, मैं साथ चलता हूं।'

'और...चेतसिंह को देखकर, पुत्रवत्सला ने संकेत से एक प्रश्न किया, इसका उत्तर किसी के पास न था। मनियार सिंह ने कहा–'तब मैं यहीं?'

नन्हकू ने हंसकर कहा–मेरे मालिक, आप नाव पर बैठें। जब तक राजा भी नाव पर न बैठ जायेंगे, तब तक सत्रह गोली खाकर भी नन्हकूसिंह जीवित रहने की प्रतिज्ञा करता है।'

पन्ना ने नन्हकू को देखा। एक क्षण के लिए चारों आंखें मिलीं, जिनमें जन्म–जन्म का विश्वास ज्योति की तरह जल रहा था। फाटक बलपूर्वक खोला जा रहा था। नन्हकू ने उन्मत्त होकर कहा–'मालिक! जल्दी कीजिए।'

दूसरे क्षण पन्ना डोंगी पर थी और नन्हकूसिंह फाटक पर इस्टाकर के साथ। चेतराम ने आकर एक चिट्ठी मनियार सिंह को हाथ में दी।

लेफ्टिनेण्ट ने कहा–'आपके आदमी गड़बड़ मचा रहे हैं। अब मैं अपने सिपाहियों को गोली चलाने से नहीं रोक सकता।'

'मेरे सिपाही यहां हैं, साहब?' मनियार सिंह ने हंसकर कहा। बाहर कोलाहाल बढ़ने लगा।

चेतराम ने कहा–'पहले चेतसिंह को कैद कीजिए।'

'कौन ऐसी हिम्मत करता है?' कड़ककर कहते हुए बाबू मनियार सिंह ने तलवार खींच ली। अभी बात पूरी न हो सकी थी कि कुबरा मौलवी वहां पहुंचा। यहां मौलवी साहब की कलम नहीं चल सकती थीं, और न ये बाहर ही जा सकते थे। उन्होंने कहा–'देखते क्या हो चेतराम!'

चेतराम ने राजा के ऊपर हाथ रखा ही था कि नन्हकू के सधे हुए हाथ ने उसकी भुजा उड़ा दी। इस्टाकर आगे बढ़े, मौलवी साहब चिल्लाने लगे। नन्हकूसिंह ने देखते–देखते इस्टाकर और उसके कई साथियों को धराशायी किया। फिर मौलवी साहब कैसे बचते!

नन्हकूसिंह ने कहा–'क्यों, उस दिन के झापड़ ने तुमको समझाया नहीं? पाजी!'–कहकर ऐसा साफ जनेवा मारा कि कुबरा ढेर हो गया। कुछ ही क्षणों में वह भीषण घटना हो गयी, जिसके लिए अभी कोई प्रस्तुत न था।

नन्हकूसिंह ने ललकारकर चेतसिंह से कहा–'आप क्या देखते हैं? उतरिए डोंगी पर!'–उसके घावों से रक्त के फुहारे छूट रहे थे। उधर फाटक से तिलंगे भीतर आने लगे थे। चेतसिंह ने खिड़की से उतरते हुए देखा कि बीसों तिलंगों की संगीनों में वह अविचलित होकर तलवार चला रहा है। नन्हकू के चट्टान सदृश शरीर से गैरिक की तरह रक्त की धारा बह रही है। गुण्डे का एक–एक अंग कटकर वहीं गिरने लगा। वह काशी का गुण्डा था!

व्याख्या भाग

टिप्पणी

1. वह पचास.....वह गुण्डा था।

सन्दर्भ–प्रस्तुत गद्यांश जयशंकर प्रसाद की कहानी 'गुण्डा' से उद्धृत है।

प्रसंग–इसमें गुण्डा घोषित किए गए एक व्यक्ति की कद–काठी और पहनावे के बारे में वर्णन किया गया है।

व्याख्या–उस गुण्डे की उम्र 50 साल से अधिक है फिर भी बहुत ही ताकतवर है। उसकी चमड़ी पर झुरियां तक नहीं पड़ी थी। वर्षा हो जाड़ा हो कड़कड़ी जेठ की धूप हो सब में वह नंगे शरीर घूमता रहता है। उसकी मूँछे बिच्छू के डंक की तरह देखने वालों की आंखों में चुभती थी। उसका रंग सांप की तरह चिकना और चमकीला था। उसकी धोती की लाल किनारी दूर से ही देखने में सुन्दर लगती थी जिससे सबका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करती थी। कमर में बनारसी सेल्हे का फेटा लगाने वाले इस गुण्डे के घुंघराले बालों पर सुनहरे पल्ले के साफे का छोर उसकी चौड़ी पीठ तक फैला रहता। उसके कंधे पर टिका हुआ गँडासा उसके प्रभाव में वृद्धि कर रहा था। जब वह पंजों के बल वह चलता तो उसकी नसें चटाचट बोलती थी। लेखक के अनुसार उस गुण्डे का नाम नन्हकू सिंह था।

विशेष

- इस गद्यांश में लेखक ने बड़ी बारीकी से उसकी वेशभूषा का वर्णन किया है।
- बड़ी बारीकी से नायक के शारीरिक सौन्दर्य का भी वर्णन किया है।

2. श्रावण.....बीत गया सरकार।

सन्दर्भ–प्रस्तुत गद्यांश जयशंकर प्रसाद की कहानी 'गुण्डा' से उद्धृत है।

प्रसंग–राजमाता पन्ना शिवालय में बैठकर पूजा कर रही है। दुलारी अन्य गानेवालियों के साथ बाहर बैठकर भजन गा रही है।

व्याख्या–श्रावण मास का अंतिम सोमवार था। राजमाता पन्ना शिवालय में बैठकर पूजन कर रही हैं। दुलारी नाम की एक स्त्री जो गाना गाने वाली है, अन्य गानेवालियों के साथ भजन गा रही थी। आरती खत्म हो जाने पर पन्ना ने फूलों की अंजलि बिखेरकर भक्तिभाव से भगवान को प्रणाम किया। इसके बाद प्रसाद लेकर बाहर आयी और आते ही दुलारी को देखा–तो दुलारी ने हाथ जोड़ते हुए कहा मैं तो पहले ही पहुंच जाती। महारानी पर क्या करूँ, वह कुबरा मौलवी आकर रेजीडेण्ट की कोठी पर ले जाने लगा था। घण्टों इसी झंझट के कारण बीत गया सरकार–इसी कारण आने में देर हो गई।

विशेष– सरल एवं सटीक भाषा का प्रयोग।

3. दूसरे दिन.....पकड़ने लगे।

सन्दर्भ–प्रस्तुत गद्यांश जयशंकर प्रसाद की कहानी गुण्डा से उद्धृत है।

प्रसंग–शहर में गड़बड़ी की शिकायत आने पर रेजीडेण्ट मार्कहेम की चिट्ठी राजा चेतसिंह के पास आयी। उसमें नगर की दुर्व्यवस्था के बारे में आलोचना की गई थी।

व्याख्या–राजा चेतसिंह के पास रेजीडेण्ट मार्कहेम की चिट्ठी आयी जिसमें नगर की दुर्व्यवस्था के बारे में लिखा हुआ था और उसकी कड़ी आलोचना की गई थी। इस

टिप्पणी

चिट्ठी में डाकुओं और गुण्डों को पकड़ने के आदेश दिए गए थे। उन पर कड़ी निगरानी रखने की सम्मति दी गयी थी। इस चिट्ठी में मौलवी के साथ घटी हुई घटना का भी जिक्र किया गया था। हेर्स्टिंग्स के आने की जानकारी भी दी गई थी। शिवालय–घाट और रामनगर में हलचल सी मच गई थी। कोतवाल हिम्मतसिंह जो कि पागल के समान था, वह जिसके हाथ में भी लाठी, लोहांगी, गँड़ासा, बिछुआ और करौली दिखती, उसको गिरफ्तार करने लगा था, पकड़ने लगा था, जिससे सारे लोग भयभीत हो गये थे।

विशेष– सरल एवं बोलचाल की भाषा का प्रयोग।

4. नन्हकू उन्मत्त था.....गयी होती।

सन्दर्भ–प्रस्तुत गद्यांश जयशंकर प्रसाद की कहानी गुण्डा से उद्धृत है।

प्रसंग–नन्हकूसिंह राजा चेतसिंह की मदद करने के लिए अपने थोड़े से साथियों के साथ आ जाता है। उसे पता चलता है सिपाही उन्हे पकड़ने वाले हैं।

व्याख्या–नन्हकूसिंह उन्मत्त होकर अपने थोड़े से साथियों के साथ राजा की मदद करने के लिए आ गये थे। उसके साथी हमेशा की तरह उसकी एक आवाज पर आज भी जान देने को तैयार थे। नन्हकूसिंह राजा चेतसिंह का क्या राजनैतिक अपराध था; यह सब नहीं जानता था। फिर भी उसने अपने थोड़े से साथियों को फाटक पर गड़बड़ मचाने के लिए भेज दिया; जिससे सिपाहियों का ध्यान उधर आकर्षित हो जाये। इधर डोंगी लेकर वह खिड़की के नीचे पहुंचा और उछलकर ऊपर पहुंच गया। उस समय वहां पर राजमाता पन्ना से राजा चेतसिंह और मनियार सिंह कह रहे थे कि–पूजा–पाठ समाप्त करके रामनगर चली गयी होती तो अच्छा रहता। यह भी नन्हकू ने सुन लिया और उनको निकालने की योजना में लग गया।

विशेष– सरल एवं विचारपूर्ण वार्तालाप।

अपनी प्रगति जांचिए

5. काशी में 'गुण्डा' के नाम से कौन मशहूर था?

(क) मनियार सिंह (ख) हिम्मत सिंह

(ग) बोधी सिंह (घ) नन्हकू सिंह

6. 'गुण्डा' कहानी में उद्धृत अंतिम घटना की तिथि क्या है?

(क) 15 अगस्त, 1881 (ख) 16 अगस्त, 1882

(ग) 16 अगस्त, 1881 (घ) 15 अगस्त, 1882

1.5 कफन (प्रेमचन्द) से व्याख्या

मूल पाठ

झोपड़े के द्वार पर बाप और बेटा दोनों एक बुझे हुए अलाव के सामने चुपचाप बैठे हुए हैं और अन्दर बेटे की जवान बीबी बुधिया प्रसव–वेदना में पछाड़ खा रही थी।

रह–रहकर उसके मुँह से ऐसी दिल हिला देने वाली आवाज निकलती थी, कि दोनों कलेजा थाम लेते थे। जाड़ों की रात थी, प्रकृति सन्नाटे में डूबी हुई, सारा गाँव अन्धकार में लय हो गया था।

टिप्पणी

घीसू ने कहा–मालूम होता है, बचेगी नहीं। सारा दिन दौड़ते हो गया, जा देख तो आ।

माधव चिढकर बोला–मरना ही तो है जल्दी मर क्यों नहीं जाती? देखकर क्या करूँ?

'तू बड़ा बेदर्द है बे! साल–भर जिसके साथ सुख–चैन से रहा, उसी के साथ इतनी बेवफाई!'

'तो मुझसे तो उसका तड़पना और हाथ–पाँव पटकना नहीं देखा जाता।'

चमारों का कुनबा था और सारे गाँव में बदनाम। घीसू एक दिन काम करता तो तीन दिन आराम करता। माधव इतना काम–चोर था कि आध घण्टे काम करता तो घण्टे भर चिलम पीता। इसलिए उन्हें कहीं मजदूरी नहीं मिलती थी। घर में मुठ्ठी–भर भी अनाज मौजूद हो, तो उनके लिए काम करने की कसम थी। जब दो–चार फाके हो जाते तो घीसू पेड़ पर चढकर लकड़ियाँ तोड़ लाता और माधव बाजार से बेच लाता और जब तक वह पैसे रहते, दोनों इधर–उधर मारे–मारे फिरते। गाँव में काम की कमी न थी। किसानों का गाँव था, मेहनती आदमी के लिए पचास काम थे। मगर इन दोनों को उसी वक्त बुलाते, जब दो आदमियों से एक का काम पाकर भी सन्तोष कर लेने के सिवा और कोई चारा न होता। अगर दोनो साधु होते, तो उन्हें सन्तोष और धैर्य के लिए, संयम और नियम की बिलकुल जरूरत न होती। यह तो इनकी प्रकृति थी। विचित्र जीवन था इनका! घर में मिट्टी के दो–चार बर्तन के सिवा कोई सम्पत्ति नहीं। फटे चीथड़ों से अपनी नग्नता को ढाँके हुए जिये जाते थे। संसार की चिन्ताओं से मुक्त कर्ज से लदे हुए। गालियाँ भी खाते, मार भी खाते, मगर कोई गम नहीं। दीन इतने कि वसूली की बिलकुल आशा न रहने पर भी लोग इन्हें कुछ–न–कुछ कर्ज दे देते थे। मटर, आलू की फसल में दूसरों के खेतों से मटर या आलू उखाड़ लाते और भून–भानकर खा लेते या दस–पाँच ऊख उखाड़ लाते और रात को चूसते। घीसू ने इसी आकाश–वृत्ति से साठ साल की उम्र काट दी और माधव भी सपूत बेटे की तरह बाप ही के पद–चिह्नों पर चल रहा था, बल्कि उसका नाम और भी उजागर कर रहा था। इस वक्त भी दोनों अलाव के सामने बैठकर आलू भून रहे थे, जो कि किसी खेत से खोद लाये थे। घीसू की स्त्री का तो बहुत दिन हुए, देहान्त हो गया था। माधव का ब्याह पिछले साल हुआ था। जब से यह औरत आयी थी, उसने इस खानदान में व्यवस्था की नींव डाली थी और इन दोनों बे–गैरतों का दोजख भरती रहती थी। जब से वह आयी, यह दोनों और भी आरामतलब हो गये थे। बल्कि कुछ अकडने भी लगे थे। कोई कार्य करने को बुलाता, तो निर्ब्याज भाव से दुगुनी मजदूरी माँगते। वही औरत आज प्रसव–वेदना से मर रही थी और यह दोनों इसी इन्तजार में थे कि वह मर जाए, तो आराम से सोयें।

घीसू ने आलू निकालकर छीलते हुए कहा–जाकर देख तो, क्या दशा है उसकी? चुड़ैल का फिसाद होगा, और क्या? यहाँ तो ओझा भी एक रुपया माँगता है!

टिप्पणी

माधव को भय था, कि वह कोठरी में गया, तो घीसू आलुओं का बड़ा भाग साफ कर देगा। बोला–मुझे वहाँ जाते डर लगता है।

'डर किस बात का है, मैं तो यहाँ हूँ ही।'

'तो तुम्हीं जाकर देखो न?'

'मेरी औरत जब मरी थी, तो मैं तीन दिन तक उसके पास से हिला तक नहीं और फिर मुझसे लजाएगी कि नहीं? जिसका कभी मुँह नहीं देखा, आज उसका उघड़ा हुआ बदन देखूँ! उसे तन की सुध भी तो न होगी? मुझे देख लेगी तो खुलकर हाथ–पाँव भी न पटक सकेगी!'

'मैं सोचता हूँ कोई बाल–बच्चा हुआ, तो क्या होगा? सोंठ, गुड़, तेल, कुछ भी तो नहीं है घर में!'

'सब कुछ आ जाएगा। भगवान् दें तो! जो लोग अभी एक पैसा नहीं दे रहे हैं, वे ही कल बुलाकर रुपये देंगे। मेरे नौ लड़के हुए, घर में कभी कुछ न था मगर भगवान् ने किसी–न–किसी तरह बेड़ा पार ही लगाया।'

जिस समाज में रात–दिन मेहनत करने वालों की हालत उनकी हालत से कुछ बहुत अच्छी न थी, और किसानों के मुकाबले में वे लोग, जो किसानों की दुर्बलताओं से लाभ उठाना जानते थे, कहीं ज्यादा सम्पन्न थे, वहाँ इस तरह की मनोवृत्ति का पैदा हो जाना कोई अचरज की बात न थी। हम तो कहेंगे, घीसू किसानों से कहीं ज्यादा विचारवान् था और किसानों के विचार–शून्य समूह में शामिल होने के बदले बैठकबाजों की कुत्सित मण्डली में जा मिला था। हाँ, उसमें यह शक्ति न थी, कि बैठकबाजों के नियम और नीति का पालन करता। इसलिए जहाँ उसकी मण्डली के और लोग गाँव के सरगना और मुखिया बने हुए थे, उस पर सारा गाँव उँगली उठाता था। फिर भी उसे यह तसकीन तो थी ही कि अगर वह फटेहाल है तो कम–से–कम उसे किसानों की–सी जी–तोड़ मेहनत तो नहीं करनी पड़ती, और उसकी सरलता और निरीहता से दूसरे लोग बेजा फायदा तो नहीं उठाते! दोनों आलू निकाल–निकालकर जलते–जलते खाने लगे। कल से कुछ नहीं खाया था। इतना सब्र न था कि ठण्डा हो जाने दें। कई बार दोनों की जबानें जल गयीं। छिल जाने पर आलू का बाहरी हिस्सा जबान, हलक और तालू को जला देता था और उस अंगारे को मुँह में रखने से ज्यादा खैरियत इसी में थी कि वह अन्दर पहुँच जाए। वहाँ उसे ठण्डा करने के लिए काफी सामान थे। इसलिए दोनों जल्द–जल्द निगल जाते। हालाँकि इस कोशिश में उनकी आँखों से आँसू निकल आते।

घीसू को उस वक्त ठाकुर की बरात याद आयी, जिसमें बीस साल पहले वह गया था। उस दावत में उसे जो तृप्ति मिली थी, वह उसके जीवन में एक याद रखने लायक बात थी, और आज भी उसकी याद ताजी थी, बोला–वह भोज नहीं भूलता। तब से फिर उस तरह का खाना और भरपेट नहीं मिला। लडकी वालों ने सबको भर पेट पूडियाँ खिलाई थीं, सबको! छोटे–बड़े सबने पूडियाँ खायीं और असली घी की! चटनी, रायता, तीन तरह के सूखे साग, एक रसेदार तरकारी, दही, चटनी, मिठाई, अब क्या बताऊँ कि उस भोज में क्या स्वाद मिला, कोई रोक–टोक नहीं थी, जो चीज चाहो, माँगो, जितना

टिप्पणी

चाहो, खाओ। लोगों ने ऐसा खाया, ऐसा खाया, कि किसी से पानी न पिया गया। मगर परोसने वाले हैं कि पत्तल में गर्म–गर्म, गोल–गोल सुवासित कचौड़ियाँ डाल देते हैं। मना करते हैं कि नहीं चाहिए, पत्तल पर हाथ रोके हुए हैं, मगर वह हैं कि दिये जाते हैं। और जब सबने मुँह धो लिया, तो पान–इलायची भी मिली। मगर मुझे पान लेने की कहाँ सुध थी? खड़ा हुआ न जाता था। चटपट जाकर अपने कम्बल पर लेट गया। ऐसा दिल–दरियाव था वह ठाकुर!

माधव ने इन पदार्थों का मन–ही–मन मजा लेते हुए कहा–अब हमें कोई ऐसा भोज नहीं खिलाता।

'अब कोई क्या खिलाएगा? वह जमाना दूसरा था। अब तो सबको किफायत सूझती है। सादी–ब्याह में मत खर्च करो, क्रिया–कर्म में मत खर्च करो। पूछो, गरीबों का माल बटोर–बटोरकर कहाँ रखोगे? बटोरने में तो कमी नहीं है। हाँ, खर्च में किफायत सूझती है!'

'तुमने एक बीस पूरियाँ खायी होंगी?'

'बीस से ज्यादा खायी थीं!'

'मैं पचास खा जाता!'

'पचास से कम मैंने न खायी होंगी। अच्छा पका था। तू तो मेरा आधा भी नहीं है।'

आलू खाकर दोनों ने पानी पिया और वहीं अलाव के सामने अपनी धोतियाँ ओढ़कर पाँव पेट में डाले सो रहे। जैसे दो बड़े–बड़े अजगर गेंडुलिया मारे पड़े हों।

और बुधिया अभी तक कराह रही थी।

2

सबेरे माधव ने कोठरी में जाकर देखा, तो उसकी स्त्री ठण्डी हो गयी थी। उसके मुँह पर मक्खियाँ भिनक रही थीं। पथराई हुई आँखें ऊपर टँगी हुई थीं। सारी देह धूल से लथपथ हो रही थी। उसके पेट में बच्चा मर गया था।

माधव भागा हुआ घीसू के पास आया। फिर दोनों जोर–जोर से हाय–हाय करने और छाती पीटने लगे। पड़ोस वालों ने यह रोना–धोना सुना, तो दौड़े हुए आये और पुरानी मर्यादा के अनुसार इन अभागों को समझाने लगे।

मगर ज्यादा रोने–पीटने का अवसर न था। कफन की और लकड़ी की फिक्र करनी थी। घर में तो पैसा इस तरह गायब था, जैसे चील के घोंसले में माँस?

बाप–बेटे रोते हुए गाँव के जमींदार के पास गये। वह इन दोनों की सूरत से नफरत करते थे। कई बार इन्हें अपने हाथों से पीट चुके थे। चोरी करने के लिए, वादे पर काम पर न आने के लिए। पूछा–क्या है बे घिसुआ, रोता क्यों है? अब तो तू कहीं दिखलाई भी नहीं देता! मालूम होता है, इस गाँव में रहना नहीं चाहता।

घीसू ने जमीन पर सिर रखकर आँखों में आँसू भरे हुए कहा–सरकार! बड़ी विपत्ति में हूँ। माधव की घरवाली रात को गुजर गयी। रात–भर तड़पती रही सरकार!

टिप्पणी

हम दोनों उसके सिरहाने बैठे रहे। दवा–दारू जो कुछ हो सका, सब कुछ किया, मुदा वह हमें दगा दे गयी। अब कोई एक रोटी देने वाला भी न रहा मालिक! तबाह हो गये। घर उजड़ गया। आपका गुलाम हूँ, अब आपके सिवा कौन उसकी मिट्टी पार लगाएगा। हमारे हाथ में तो जो कुछ था, वह सब तो दवा–दारू में उठ गया। सरकार ही की दया होगी, तो उसकी मिट्टी उठेगी। आपके सिवा किसके द्वार पर जाऊँ।

जमींदार साहब दयालु थे। मगर घीसू पर दया करना काले कम्बल पर रंग चढ़ाना था। जी में तो आया, कह दें, चल, दूर हो यहाँ से। यों तो बुलाने से भी नहीं आता, आज जब गरज पड़ी तो आकर खुशामद कर रहा है। हरामखोर कहीं का, बदमाश! लेकिन यह क्रोध या दण्ड देने का अवसर न था। जी में कुढ़ते हुए दो रुपये निकालकर फेंक दिए। मगर सान्त्वना का एक शब्द भी मुँह से न निकला। उसकी तरफ ताका तक नहीं। जैसे सिर का बोझ उतारा हो।

जब जमींदार साहब ने दो रुपये दिये, तो गाँव के बनिये–महाजनों को इनकार का साहस कैसे होता? घीसू जमींदार के नाम का ढिंढोरा भी पीटना जानता था। किसी ने दो आने दिये, किसी ने चारे आने। एक घण्टे में घीसू के पास पाँच रुपये की अच्छी रकम जमा हो गयी। कहीं से अनाज मिल गया, कहीं से लकड़ी। और दोपहर को घीसू और माधव बाजार से कफन लाने चले। इधर लोग बाँस–वाँस काटने लगे।

गाँव की नर्मदिल स्त्रियाँ आ–आकर लाश देखती थीं और उसकी बेकसी पर दो बूँद आँसू गिराकर चली जाती थीं।

३

बाजार में पहुँचकर घीसू बोला–लकड़ी तो उसे जलाने–भर को मिल गयी है, क्यों माधव!

माधव बोला–हाँ, लकड़ी तो बहुत है, अब कफन चाहिए।

'तो चलो, कोई हलका–सा कफन ले लें।'

'हाँ, और क्या! लाश उठते–उठते रात हो जाएगी। रात को कफन कौन देखता है?'

'कैसा बुरा रिवाज है कि जिसे जीते जी तन ढाँकने को चीथड़ा भी न मिले, उसे मरने पर नया कफन चाहिए।'

'कफन लाश के साथ जल ही तो जाता है।'

'और क्या रखा रहता है? यही पाँच रुपये पहले मिलते, तो कुछ दवा–दारू कर लेते।'

दोनों एक–दूसरे के मन की बात ताड़ रहे थे। बाजार में इधर–उधर घूमते रहे। कभी इस बजाज की दूकान पर गये, कभी उसकी दूकान पर! तरह–तरह के कपड़े, रेशमी और सूती देखे, मगर कुछ जँचा नहीं। यहाँ तक कि शाम हो गयी। तब दोनों न जाने किस दैवी प्रेरणा से एक मधुशाला के सामने जा पहुँचे। और जैसे किसी पूर्व निश्चित व्यवस्था से अन्दर चले गये। वहाँ जरा देर तक दोनों असमंजस में खड़े रहे। फिर घीसू ने गद्दी के सामने जाकर कहा–साहूजी, एक बोतल हमें भी देना।

टिप्पणी

उसके बाद कुछ चिखौना आया, तली हुई मछली आयी और दोनों बरामदे में बैठकर शान्तिपूर्वक पीने लगे।

कई कुज्जियाँ ताबड़तोड़ पीने के बाद दोनों सरूर में आ गये।

घीसू बोला–कफन लगाने से क्या मिलता? आखिर जल ही तो जाता। कुछ बहू के साथ तो न जाता।

माधव आसमान की तरफ देखकर बोला, मानों देवताओं को अपनी निष्पापता का साक्षी बना रहा हो–दुनिया का दस्तूर है, नहीं लोग बाँभनों को हजारों रुपये क्यों दे देते हैं? कौन देखता है, परलोक में मिलता है या नहीं!

'बड़े आदमियों के पास धन है, फूँके। हमारे पास फूँकने को क्या है?'

'लेकिन लोगों को जवाब क्या दोगे? लोग पूछेंगे नहीं, कफन कहाँ है?'

घीसू हँसा–अबे, कह देंगे कि रुपये कमर से खिसक गये। बहुत ढूँढ़ा, मिले नहीं। लोगों को विश्वास न आएगा, लेकिन फिर वही रुपये देंगे।

माधव भी हँसा–इस अनपेक्षित सौभाग्य पर। बोला–बड़ी अच्छी थी बेचारी! मरी तो खूब खिला–पिलाकर!

आधी बोतल से ज्यादा उड़ गयी। घीसू ने दो सेर पूडियाँ मँगाई। चटनी, अचार, कलेजियाँ। शराबखाने के सामने ही दूकान थी। माधव लपककर दो पत्तलों में सारे सामान ले आया। पूरा डेढ़ रुपया खर्च हो गया। सिर्फ थोड़े से पैसे बच रहे।

दोनों इस वक्त इस शान में बैठे पूडियाँ खा रहे थे जैसे जंगल में कोई शेर अपना शिकार उड़ा रहा हो। न जवाबदेही का खौफ था, न बदनामी की फिक्र। इन सब भावनाओं को उन्होंने बहुत पहले ही जीत लिया था।

घीसू दार्शनिक भाव से बोला–हमारी आत्मा प्रसन्न हो रही है तो क्या उसे पुन्न न होगा?

माधव ने श्रद्धा से सिर झुकाकर तसदीक की–जरूर–से–जरूर होगा। भगवान, तुम अन्तर्यामी हो। उसे बैकुण्ठ ले जाना। हम दोनों हृदय से आशीर्वाद दे रहे हैं। आज जो भोजन मिला वह कभी उम्र–भर न मिला था।

एक क्षण के बाद माधव के मन में एक शंका जागी। बोला–क्यों दादा, हम लोग भी एक–न–एक दिन वहाँ जाएँगे ही?

घीसू ने इस भोले–भाले सवाल का कुछ उत्तर न दिया। वह परलोक की बातें सोचकर इस आनन्द में बाधा न डालना चाहता था।

'जो वहाँ हम लोगों से पूछे कि तुमने हमें कफन क्यों नहीं दिया तो क्या कहोगे?'

'कहेंगे तुम्हारा सिर!'

'पूछेगी तो जरूर!'

'तू कैसे जानता है कि उसे कफन न मिलेगा? तू मुझे ऐसा गधा समझता है? साठ साल क्या दुनिया में घास खोदता रहा हूँ? उसको कफन मिलेगा और बहुत अच्छा मिलेगा!'

टिप्पणी

माधव को विश्वास न आया। बोला–कौन देगा? रुपये तो तुमने चट कर दिये। वह तो मुझसे पूछेगी। उसकी माँग में तो सेंदुर मैंने डाला था।

'कौन देगा, बताते क्यों नहीं?'

'वही लोग देंगे, जिन्होंने अबकी दिया। हाँ, अबकी रुपये हमारे हाथ न आएँगे।'

'ज्यों–ज्यों अँधेरा बढ़ता था और सितारों की चमक तेज होती थी, मधुशाला की रौनक भी बढ़ती जाती थी। कोई गाता था, कोई डींग मारता था, कोई अपने संगी के गले लिपटा जाता था। कोई अपने दोस्त के मुँह में कुल्हड़ लगाये देता था।

वहाँ के वातावरण में सरूर था, हवा में नशा। कितने तो यहाँ आकर एक चुल्लू में मस्त हो जाते थे। शराब से ज्यादा यहाँ की हवा उन पर नशा करती थी। जीवन की बाधाएँ यहाँ खींच लाती थीं और कुछ देर के लिए यह भूल जाते थे कि वे जीते हैं या मरते हैं। या न जीते हैं, न मरते हैं।

और यह दोनों बाप–बेटे अब भी मजे ले–लेकर चुसकियाँ ले रहे थे। सबकी निगाहें इनकी ओर जमी हुई थीं। दोनों कितने भाग्य के बली हैं! पूरी बोतल बीच में है।

भरपेट खाकर माधव ने बची हुई पूडियों का पत्तल उठाकर एक भिखारी को दे दिया, जो खड़ा इनकी ओर भूखी आँखों से देख रहा था। और देने के गौरव, आनन्द और उल्लास का अपने जीवन में पहली बार अनुभव किया।

घीसू ने कहा–ले जा, खूब खा और आशीर्वाद दे! जिसकी कमाई है, वह तो मर गयी। मगर तेरा आशीर्वाद उसे जरूर पहुँचेगा। रोयें–रोयें से आशीर्वाद दो, बड़ी गाढ़ी कमाई के पैसे हैं!

माधव ने फिर आसमान की तरफ देखकर कहा–वह बैकुण्ठ में जाएगी दादा, बैकुण्ठ की रानी बनेगी।

घीसू खड़ा हो गया और जैसे उल्लास की लहरों में तैरता हुआ बोला–हाँ, बेटा बैकुण्ठ में जाएगी। किसी को सताया नहीं, किसी को दबाया नहीं। मरते–मरते हमारी जिन्दगी की सबसे बड़ी लालसा पूरी कर गयी। वह न बैकुण्ठ जाएगी तो क्या ये मोटे–मोटे लोग जाएँगे, जो गरीबों को दोनों हाथों से लूटते हैं, और अपने पाप को ध ोने के लिए गंगा में नहाते हैं और मन्दिरों में जल चढ़ाते हैं?

श्रद्धालुता का यह रंग तुरन्त ही बदल गया। अस्थिरता नशे की खासियत है। दुरूख और निराशा का दौरा हुआ।

माधव बोला–मगर दादा, बेचारी ने जिन्दगी में बड़ा दुरूख भोगा। कितना दुरूख झेलकर मरी!

वह आँखों पर हाथ रखकर रोने लगा। चीखें मार–मारकर।

घीसू ने समझाया–क्यों रोता है बेटा, खुश हो कि वह माया–जाल से मुक्त हो गयी, जंजाल से छूट गयी। बड़ी भाग्यवान थी, जो इतनी जल्द माया–मोह के बन्धन तोड़ दिये।

और दोनों खड़े होकर गाने लगे–

'ठगिनी क्यों नैना झमकावे! ठगिनी।

पियक्कड़ों की आँखें इनकी ओर लगी हुई थीं और यह दोनों अपने दिल में मस्त गाये जाते थे। फिर दोनों नाचने लगे। उछले भी, कूदे भी। गिरे भी, मटके भी। भाव भी बताये, अभिनय भी किये। और आखिर नशे में मदमस्त होकर वहीं गिर पड़े।

टिप्पणी

व्याख्या भाग

1. ''अगर दोनों साधू होते, ... इन्हें कुछ–न–कुछ कर्ज दे देते थे।

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यावतरण प्रेमचंद की कहानी 'कफन' से उद्धृत है।

प्रसंग– इसमें पिता–पुत्र घीसू और माधव–जो प्रथम श्रेणी के आलसी और निकम्मे थे कि यथार्थ स्थिति का चित्रण किया गया है–

व्याख्या– अगर घीसू और माधव साधु होते, तो उन्हें संतोष और धैर्य का गुण अपने भीतर लाने के लिए साधना और नियम की आवश्यकता नहीं होती न ही उन्हें किसी नियम के निर्वाह करने की आवश्यकता होती क्योंकि संयम और संतोष जैसे महान गुण उनमें पूरी तरह से भरे पड़े थे। या यों भी कहा जा सकता है कि संतोष और संयम उनका स्वभाव ही बन गया था। साथ ही इन बाप–बेटों का जीवन सबसे अलग और परम अनोखा था, जो दूसरों से सर्वथा भिन्न था।

गरीबी मनुष्य जीवन का अभिशाप है। घीसू और माधव के जीवन को गरीबी ने अत्यंत विचित्र बना दिया था। इनके घर में मिट्टी के दो–चार टूटे बर्तनों को छोड़कर और कुछ भी नहीं था। उनके शरीर पर फटे हुए चिथड़े थे, जिनमें वे अपनी नग्नता को ढंके रहते थे। वे कर्ज से लदे हुए थे। कर्ज लेने पर उनको गालियां मिलती थीं, कभी–कभी पिटाई भी हो जाती थी, परंतु इस बात का वे तनिक भी विचार नहीं करते थे। वे इस संसार की चिंताओं से अपनी इस दयनीय दशा में भी मुक्त थे। यद्यपि कर्ज देने वालों को इनसे वसूल होने की कोई आशा नहीं थी, परंतु फिर भी इनको थोड़ा बहुत कर्ज बस्ती में रहने के कारण मिल जाया करता था।

विशेष

- घीसू और माधव के व्यक्तित्व को नये अंदाज के साथ प्रस्तुत किया गया है।
- ये पात्र जहां व्यक्ति हैं वहीं वे प्रतिनिधि भी हैं, उस सच्चाई के जो विषम सामाजिक ढांचे में फल–फूल रही है।
- भाषा का वह सर्जनात्मक रूप 'कफन' में खूब निखरा है। भाषा सरल, व्यावहारिक एवं परिष्कृत है। शैली वर्णनात्मक एवं व्यंजनात्मक है।

2. ''जिस समाज में रात–दिन मेहनत करने वालों की हालत .... उसे किसानों की–सी जी तोड़ मेहनत नहीं करनी पड़ती।

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यावतरण प्रेमचंद की कहानी 'कफन' से उद्धृत है।

प्रसंग– प्रेमचंद की कहानी 'कफन' में दो ऐसे व्यक्तियों का चित्र उभारा गया है जो सर्वथा निकम्मे थे, परिणामतः उनकी आर्थिक स्थिति दयनीय थी। प्रेमचंद यहां यह

संकेत कर रहे थे कि जो कृषक घोर परिश्रमी था, उसकी ही हालत कौन–सी उत्तम थी।

टिप्पणी

व्याख्या– प्रेमचंद जी के समय में निम्न समाज, जिसमें प्रेमचंद इस स्थल पर कृषक और खेतिहर मजदूर की बात कर रहे हैं– कुछ बहुत अच्छी नहीं थी, जबकि वे दिन–रात मेहनत करते थे। इसके विपरीत जो कुछ भी काम नहीं करते थे, केवल किसानों की दुर्बलताओं से लाभ उठाना जानते थे, कहीं अधिक संपन्न थे। प्रेमचंद जी की मान्यता है कि जब एक ओर कठोर परिश्रम करके कृषक भूखों मर रहा हो और निकम्मे व्यक्ति (कृषकों के, शोषक) दूसरी ओर मौज मना रहे हों शायद इसी विचार ने उन दोनों को ही निकम्मा बना दिया था।

प्रेमचंद जी भी मानते हैं कि घीसू अन्य किसानों से अधिक बुद्धिमान और विचार वाला था। कारण कि किसानों का समूह विचार शून्य था– उसकी मेहनत पर लोग मौज उड़ा रहे थे परंतु उनके कान पर जूं तक नहीं रेंग रही थी। घीसू ने ऐसे नासमझ किसानों के बीच में उठना–बैठना छोड़ दिया था, वह बैठकबाजों (मौज–मस्ती करने वालों) की मंडली में जा मिला था भले ही वह मंडली दुष्ट लोगों की थी। हां यह बात दूसरी थी कि बैठकबाजों के जो नियम होते हैं– नशे, मौज–मस्ती अश्लील कार्य आदि–उनको पूरा करने की सामर्थ्य उसमें नहीं थी। पर उसे एक बात का परम संतोष था कि वह भले ही फटे हाल है, पर उसे उस जैसी जी–तोड़ मेहनत से मुक्ति मिल ही गयी है जो अन्य कृषकों को करनी पड़ती है जिससे बैठकबाज मुक्त रहते हैं।

विशेष

- ग्रामीण वातावरण का यथार्थ चित्र अंकित है जिसमें कृषकों की यथार्थ स्थिति और उनका शोषण व्यंजित है।
- प्रेमचंद वातावरण की सृष्टि में पर्याप्त कुशल हैं।
- भाषा परिष्कृत, परिमार्जित एवं भावों को मूर्त करने में सक्षम हैं। शैली विचार प्रधान एवं व्यंजना प्रधान है।

3. दोनों एक–दूसरे के मन की बात ताड़ रहे थे। .... फिर घीसू ने गद्दी के सामने जाकर कहा ''साहूजी, एक बोतल हमें भी देना।''

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यावतरण प्रेमचंद की कहानी 'कफन' से उद्धृत है।

प्रसंग– प्रेमचंद की 'कफन' कहानी में जब घीसू और माधव महिला हेतु (जो माधव की पत्नी है) चंदे के पैसों से कफन खरीदने जाते हैं, वहां भी उनका मन और जीभ काबू में नहीं है। वे शराब पीने और कलेजी खाने को व्याकुल हो उठते हैं।

व्याख्या– घीसू और माधव दोनों शहर में कपड़ा खरीदते फिर रहे थे, जिसका उपयोग माधव की पत्नी के कफन हेतु होना था, पर उनकी धूर्त प्रवृत्ति उन पर हावी हो जाती है। उस चंदे के पैसों से भी मौज–मस्ती करना चाहते हैं और यह बात दोनों के मन में घुमड़ रही थी।

टिप्पणी

साथ ही वे एक–दूसरे की लालसा को पहचान भी लेते थे क्योंकि दोनों ही जानते थे कि इस समय दूसरे व्यक्ति के मन में क्या होना चाहिए। वे कफन की तलाश में घूम रहे थे–बाजार में इधर–उधर घूम रहे थे, कभी वे एक दुकान में कपड़ा देखते कभी दूसरी दुकान पर। घूमना तो एकमात्र बहाना था, वे कुछ अन्य खोज रहे थे। उन्होंने हर प्रकार के वस्त्र देखे, जिनमें सूती और रेशमी दोनों प्रकार के वस्त्र थे, पर कोई नहीं जंचा क्योंकि वे वस्त्र खरीदना अभी टालना चाहते थे। धीरे–धीरे शाम हो चली। उस समय दोनों ही एक शराब की दुकान पर खिंचे चले गए मानो उन्हें कोई रस्से से बांधकर खींच कर ले गया हो या ईश्वर ने ही उन्हें वहां उपस्थित हो जाने की प्रेरणा दी हो। उन्हें भीतर जाना ही था मानो यह कार्य पहले ही निश्चित कर लिया गया था। उनके मन का देवता जगा– मूर्ख यह चंदे से एकत्रित किए गए कफन के पैसे हैं इन पर भी तेरी गिद्ध–दृष्टि है, भला लोग क्या कहेंगे, पर तुरंत उसके भीतर का शैतान भड़क उठा–चल देखा जाएगा। इस प्रकार वे वहां कुछ क्षण अनिर्णय की स्थिति में खड़े रहे पर अब अधिक देर यह सब सहना कठिन था अतः दुकानदार की गद्दी के समीप जाकर घीसू ने कहा साहू जी! एक बोतल (शराब) हमको भी दीजिए।

विशेष

- इससे पूर्व दोनों अपने वाक्य–जाल से यह सिद्ध करने में लगे थे कि ''कफन तो जलकर राख हो जायेगा फिर उसका महत्व क्या है'' यही स्थिति संकेत कर रही थी कि उनकी चेतना में कुछ और भी उभर रहा था।
- लत कितनी बुरी होती है, मानव को शैतान बना देती है।
- भाषा सरल, सुबोध, व्यवस्थित एवं परिष्कृत है, शैली व्यंजना प्रधान है।

अपनी प्रगति जांचिए

7. माधव की पत्नी का क्या नाम था?

(क) धनिया (ख) बुधिया

(ग) लक्ष्मी (घ) दुलारी

8. 'कफन' किस प्रकार की कहानी है?

(क) मार्क्सवादी (ख) अति यथार्थवादी

(ग) प्रगतिवादी (घ) यथार्थवादी

1.6 अपना–अपना भाग्य (जैनेन्द्र कुमार) से व्याख्या

मूल पाठ

बहुत कुछ निरूद्देश्य घूम चुकने पर हम सड़क के किनारे एक बेंच पर बैठ गए। नैनीताल की संध्या धीरे–धीरे उतर रही थी। रूई के रेशे–से भाप–से बादल हमारे सिरों को छू–छूकर बेरोक–टोक घूम रहे थे। हल्के प्रकाश और अंधियारी से रंगकर कभी वे नीले

टिप्पणी

दीखते, कभी सफेद और फिर देर में अरुण पड़ जाते। वे जैसे हमारे साथ खेलना चाह रहे थे।

पीछे हमारे पोलो वाला मैदान फैला था। सामने अंग्रेजों का एक प्रमोदगृह था, जहां सुहावना, रसीला बाजा बज रहा था और पार्श्व में था वही सुरम्य अनुपम नैनीताल।

ताल में किश्तियां अपने सफेद पाल उड़ती हुई एक–दो अंग्रेज यात्रियों को लेकर, इधर से उधर और उधर से इधर खेल रही थीं। कहीं कुछ अंग्रेज एक–एक देवी सामने प्रतिस्थापित कर, अपनी सुई–सी शक्ल की डोंगियों को, मानो शर्त बांधकर सरपट दौड़ा रहे थे। कहीं किनारे पर कुछ साहब अपनी बंसी डाले, सधैर्य, एकाग्र, एकस्थ, एकनिष्ठ मछली–चिन्तन कर रहे थे। पीछे पोलो–लान में बच्चे किलकारियां मारते हुए हॉकी खेल रहे थे।

शोर, मार–पीट, गाली–गलौच भी जैसे खेल का ही अंश था। इस तमाम खेल को उतने क्षणों का उद्देश्य बना, वे बालक अपना सारा मन, सारी देह, समग्र बल और समूची विधा लगाकर मानो खत्म कर देना चाहते थे। उन्हें आगे की चिन्ता न थी, बीते का ख्याल न था। वे शुद्ध तत्काल के प्राणी थे। वे शब्द की सम्पूर्ण सच्चाई के साथ जीवित थे।

सड़क पर से नर–नारियों का अविरल प्रवाह आ रहा था और जा रहा था। उसका न ओर था न छोर। यह प्रवाह कहां जा रहा था, और कहां से आ रहा था, कौन बता सकता है? सब उम्र के, सब तरह के लोग उसमें थे। मानो मनुष्यता के नमूनों का बाजार सजकर सामने से इठलाता निकला चला जा रहा हो।

अधिकार–गर्व में तने अंग्रेज उसमें थे और चिथड़ों से सजे घोड़ों की बाग थामे वे पहाड़ी उसमें थे, जिन्होंने अपनी प्रतिष्ठा और सम्मान को कुचलकर शून्य बना लिया है और जो बड़ी तत्परता से दुम हिलाना सीख गए हैं।

भागते, खेलते, हंसते, शरारत करते लाल–लाल अंग्रेज बच्चे थे और पीली–पीली आंखें फाड़े, पिता की उंगली पकड़कर चलते हुए अपने हिन्दुस्तानी नौनिहाल भी थे। अंग्रेज पिता थे, जो अपने बच्चों के साथ भाग रहे थे, हंस रहे थे और खेल रहे थे। उधर भारतीय पितृदेव भी थे, जो बुजुर्गी को अपने चारों तरफ लपेटे धन–संपन्नता के लक्षणों का प्रदर्शन करते हुए चल रहे थे।

अंग्रेज रमणियां थीं, जो धीरे–धीरे नहीं चलती थीं, तेज चलती थीं। उन्हें न चलने में थकावट आती थी, न हंसने में मौत आती थी। कसरत के नाम पर घोड़े पर भी बैठ सकती थीं और घोड़े के साथ ही साथ, जरा जी होते ही किसी–किसी हिन्दुस्तानी पर कोड़े भी फटकार सकती थीं। वे दो–दो, तीन–तीन, चार–चार की टोलियों में निःशंक, निरापद इस प्रवाह में मानो अपने स्थान को जानती हुई, सड़क पर चली जा रही थीं।

उधर हमारी भारत की कुललक्ष्मी, सड़क के बिल्कुल किनारे दामन बचाती और संभालती हुई, साड़ी की कई तहों में सिमट–सिमटकर, लोक–लाज, स्त्रीत्व और भारतीय गरिमा के आदर्श को अपने परिवेष्टनों में छिपाकर सहमी–सहमी धरती में आंख गाड़े, कदम–कदम पर बढ़ रही थीं।

इसके साथ ही भारतीयता का एक और नमूना था। अपने कालेपन को खुरच–खुरचकर बहा देने की इच्छा करनेवाला अंग्रेजीदां पुरुषोत्तम भी थे, जो नेटिवों

टिप्पणी

को देखकर मुंह फेर लेते थे और अंग्रेज को देखकर आंखें बिछा देते थे। दुम हिलाने लगते थे। वैसे वे अकड़कर चलते थे– मानो भारतभूमि को इसी अकड़ के साथ कुचल–कुचलकर चलने का उन्हें अधिकार मिला है।

घण्टे के घण्टे सरक गए। अंधकार गाढ़ा हो गया। बादल सफेद होकर जम गए। मनुष्यों का वह तांता एक–एक कर क्षीण हो गया। अब इक्का–दुक्का आदमी सड़क पर छतरी लगाकर निकल रहा था। हम वहीं के वहीं बैठे थे। सर्दी–सी मालूम हुई। हमारे ओवरकोट भीग गए थे। पीछे फिरकर देखा। यह लाल बर्फ की चादर की तरह बिल्कुल स्तब्ध और सुन्न पड़ा था।

सब सन्नाटा था। तल्लीलाल की बिजली की रोशनियां दीप–मालिका–सी जगमगा रही थीं। वह जगमगाहट दो मील तक फैले हुए प्रकृति के जलदर्पण पर प्रतिबिम्बित हो रही थी और दर्पण का कांपता हुआ, लहरें लेता हुआ, जल प्रतिबिम्बों को सौगुना, हजारगुना करके, उनके प्रकाश को मानो एकत्र और पूंजीभूत करके व्याप्त कर रहा था। पहाड़ों के सिर पर की रोशनाईयां तारों–सी जान पड़ती थीं।

हमारे देखते–देखते एक घने पर्दे ने आकर इन सबको ढक दिया। रोशनियां मानो मर गईं। जगमगाहट लुप्त हो गईं। वे काले–काले भूत–से पहाड़ भी इस सफेद पर्दे के पीछे छिप गए। पास की वस्तु भी न दीखने लगी। मानो यह घनीभूत प्रलय था। सब कुछ उस घनी गहरी सफेदी में दब गया। एक शुभ्र महासागर ने फैलकर संस्कृति के सारे अस्तित्व को डुबो दिया। ऊपर–नीचे, चारों तरफ वह निर्भेद्य, सफेद शून्यता ही फैली हुई थी।

ऐसा घना कुहासा हमने कभी न देखा था। वह टप–टप टपक रहा था। मार्ग अब बिल्कुल निर्जन–चुप था। वह प्रवाह न जाने किन घोंसलों में जा छिपा था। उस वृहदाकार शुभ्र शून्य में कहीं से, ग्यारह बार टन–टन हो उठा। जैसे कहीं दूर कब्र में से आवाज आ रही हो। हम अपने–अपने होटलों के लिए चल दिए। रास्ते में दो मित्रों का होटल मिला। दोनों वकील मित्र छुट्टी लेकर चले गए। हम दोनों आगे बढ़े। हमारा होटल आगे था।

ताल के किनारे–किनारे हम चले जा रहे थे। हमारे ओवरकोट तर हो गए थे। बारिश नहीं मालूम होती थी, पर वहां तो ऊपर–नीचे हवा से कण–कण में बारिश थी। सर्दी इतनी थी कि सोचा, कोट पर एक कम्बल और होता तो अच्छा होता।

रास्ते में ताल के बिलकुल किनारे पर बेंच पड़ी थी। मैं जी में बेचैन हो रहा था। झटपट होटल पहुंचकर इन भीगे कपड़ों से छुट्टी पा, गरम बिस्तर में छिपकर सोना चाहता था पर साथ के मित्रों की सनक कब उठेगी, कब थमेगी– इसका पता न था। और वह कैसी क्या होगी–इसका भी कुछ अन्दाज न था। उन्होंने कहा– "आओ, जरा यहां बैठें।"

हम उस चूते कुहरे में रात के ठीक एक बजे तालाब के किनारे उस भीगी बरफ–सी ठंडी हो रही लोहे की बेंच पर बैठ गए।

पांच, दस, पन्द्रह मिनट हो गए। मित्र के उठने का इरादा न मालूम हुआ। मैंने खिसियाकर कहा–

"चलिए भी।"

टिप्पणी

"अरे जरा बैठो भी।"

हाथ पकड़कर जरा बैठने के लिए जब इस जोर से बैठा लिया गया तो और चारा न रहा– लाचार बैठे रहना पड़ा। सनक से छुटकारा आसान न था, और यह जरा बैठना जरा न था, बहुत था।

चुपचाप बैठे तंग हो रहा था, कुढ़ रहा था कि मित्र अचानक बोले–

"देखो... वह क्या है?"

मैंने देखा– कुहरे की सफेदी में कुछ ही हाथ दूर से एक काली–सी सूरत हमारी तरफ बढ़ी आ रही थी। मैंने कहा– "होगा कोई।"

तीन गज की दूरी से दीख पड़ा, एक लड़का सिर के बड़े–बड़े बालों को खुजलाता चला आ रहा है। नंगे पैर है, नंगा सिर। एक मैली–सी कमीज लटकाए है। पैर उसके न जाने कहां पड़ रहे हैं, और वह न जाने कहां जा रहा है– कहां जाना चाहता है। उसके कदमों से जैसे कोई न अगला है, न पिछला है, न दायां है, न बायां है।

पास ही चुंगी की लालटेन के छोटे–से प्रकाशवृत्त में देखा–कोई दस बरस का होगा। गोरे रंग का है, पर मैल से काला पड़ गया है। आंखें अच्छी बड़ी पर रूखी हैं। माथा जैसे अभी से झुर्रियां खा गया है। वह हमें न देख पाया। वह जैसे कुछ भी नहीं देख रहा था। न नीचे की धरती, न ऊपर चारों तरफ फैला हुआ कुहरा, न सामने का तालाब और न बाकी दुनिया। वह बस, अपने विकट वर्तमान को देख रहा था।

मित्र ने आवाज दी–"ए!"

उसने जैसे जागकर देखा और पास आ गया।

"तू कहां जा रहा है?"

उसने अपनी सूनी आंखें फाड़ दीं।

"दुनिया सो गई, तू ही क्यों घूम रहा है?"

बालक मौन–मूक, फिर भी बोलता हुआ चेहरा लेकर खड़ा रहा।

"कहां सोएगा?"

"यहीं कहीं।"

"कल कहां सोया था?"

"दुकान पर।"

"आज वहां क्यों नहीं?"

"नौकरी से हटा दिया।"

"क्या नौकरी थी?"

"सब काम। एक रुपया और जूठा खाना!"

"फिर नौकरी करेगा?"

टिप्पणी

"हां।"

"बाहर चलेगा।"

"हां।"

"आज क्या खाना खाया?"

"कुछ नहीं।"

"अब खाना मिलेगा?"

"नहीं मिलेगा।"

"यों ही सो जाएगा?"

"हां।"

"कहां।"

"यहीं कहीं।"

"इन्हीं कपड़ों में?"

बालक फिर आंखों से बोलकर मूक खड़ा रहा। ओखें मानो बोलती थीं– यह भी कैसा मूर्ख प्रश्न!

"मां–बाप हैं?"

"हैं।"

"कहां?"

"पन्द्रह कोस दूर गांव में।"

"तू भाग आया?"

"हां!"

"क्यों?"

"मेरे कई छोटे भाई–बहिन हैं– सो भाग आया। वहां काम नहीं, रोटी नहीं। बाप भूखा रहता था और मारता था। मां भूखी रहती थी और रोती थी। सो भाग आया। एक साथी और था। उसी गांव का। मुझसे बड़ा था। दोनों साथ यहां आए। वह वह नहीं है।

"कहां गया?"

"मर गया।"

"मर गया।"

"मर गया?"

"हां, साहब ने मारा, मर गया।"

"अच्छा, हमारे साथ चल।"

वह साथ चल दिया। लौटकर हम वकील दोस्तों के होटल में पहुंचे।

टिप्पणी

"वकील साहब!"

वकील लोग होटल के ऊपर के कमरे से उतरकर आए। कश्मीरी दोशाला लपेटे थे, मोजे–चढ़े पैरों में चप्पल थी। स्वर में हल्की–सी झुंझलाहट थी, कुछ लापरवाही थी।

"आ–हा फिर आप! कहिए।"

"आपको नौकर की जरूरत थी न? देखिए, यह लड़का है।"

"कहां से ले आए? इसे आप जानते हैं?"

"जानता हूं–यह बेईमान नहीं हो सकता।"

"अजी, ये पहाड़ी बड़े शैतान होते हैं। बच्चे–बच्चे में गुल छिपे रहते हैं। आप भी क्या अजीब हैं। उठा लाए कहीं से–लो जी, यह नौकर लो।"

"मानिए तो, यह लड़का अच्छा निकलेगा।"

"आप भी... जी, बस खूब है। ऐरे–गैरे को नौकर बना लिया जाए, अगले दिन वह न जाने क्या–क्या लेकर चम्पत हो जाए!"

"आप मानते ही नहीं, मैं क्या करूं?"

"मानें क्या, खाक? आप भी... जी अच्छा मजाक करते हैं।... अच्छा, अब हम सोने जाते हैं।" और वे चार रुपये रोज के किराये वाले कमरे में सजी मसहरी पर सोने झटपट चले गए।

वकील साहब के चले जाने पर, होटल के बाहर आकर मित्र ने अपनी जेब में हाथ डालकर कुछ टटोला। पर झट कुछ निराश भाव से हाथ बाहर कर मेरी ओर देखने लगे।

"क्या है?"

"इसे खाने के लिए कुछ–देना चाहता था" अंग्रेजी में मित्र ने कहा– "मगर, दस–दस के नोट हैं।"

"नोट ही शायद मेरे पास हैं, देखूं?"

सचमुच मेरे पाकिट में भी नोट ही थे। हम फिर अंग्रेजी में बोलने लगे। लड़के के दांत बीच–बीच में कटकटा उठते थे। कड़ाके की सर्दी थी।

मित्र ने पूछा– "तब?"

मैंने कहा– "दस का नोट ही दे दो।" सकपकाकर मित्र मेरा मुंह देखने लगे– "अरे यार! बजट बिगड़ जाएगा। हृदय में जितनी दया है, पास में उतने पैसे तो नहीं हैं।"

"तो जाने दो, यह दया ही इस जमाने में बहुत है।" मैंने कहा। मित्र चुप रहे। जैसे कुछ सोचते रहे। फिर लड़के से बोले– "अब आज तो कुछ नहीं हो सकता। कल मिलना। वह 'होटल डी पब' जानता है? वहीं कल दस बजे मिलेगा?"

"हां, कुछ काम देंगे हुजूर?"

"हां, हां, ढूढ दूंगा।"

"तो जाऊं?"

टिप्पणी

"हां," ठंडी सांस खींचकर मित्र ने कहा– "कहां सोएगा?"

"यहीं कहीं बेंच पर, पेड़ के नीचे किसी दुकान की भट्ठी में।"

बालक फिर उसी प्रेत–गति से एक ओर बढ़ा और कुहरे में मिल गया। हम भी होटल की ओर बढे। हवा तीखी थी– हमारे कोटों को पार कर बदन में तीर–सी लगती थी।

सिकुड़ते हुए मित्र ने कहा– "भयानक शीत है। उसके पास कम–बहुत कम कपड़े..."

"यह संसार है यार!" मैंने स्वार्थ की फिलासफी सुनाई– "चलो, पहले बिस्तर में गर्म हो लो, फिर किसी और की चिन्ता करना।"

उदास होकर मित्र ने कहा– "स्वार्थ!– जो कहो, लाचारी कहो, निष्ठुरता हो, या बेहयाई!"

दूसरे दिन नैनीताल–स्वर्ग के किसी काले गुलाम पशु के दुलारे का वह बेटा– वह बालक, निश्चित समय पर हमारे –होटल डी पब' में नहीं आया। हम अपनी नैनीताल की सैर खुशी–खुशी खत्म कर चलने को हुए। उस लड़के की आस लगाते बैठे रहने की जरूरत हमने न समझी।

मोटर में सवार होते ही थे कि यह समाचार मिला कि पिछली रात, एक पहाड़ी बालक सड़क के किनारे, पेड़ के नीचे, ठिठुरकर मर गया!

मरने के लिए उसे वही जगह, वही दस बरस की उम्र और वही काले चिथड़ों की कमीज मिली। आदमियों की दुनिया ने बस यही उपहार उसके पास छोड़ा था।

पर बताने वालों ने बताया कि गरीब के मुंह पर, छाती मुट्ठी और पैरों पर बरफ की हल्की–सी चादर चिपक गई थी। मानो दुनिया की बेहयाई ढकने के लिए प्रकृति ने शव के लिए सफेद ठण्डे कफन का प्रबन्ध कर दिया था।

सब सुना और सोचा, अपना–अपना भाग्य।

व्याख्या भाग

1. ''बहुत कुछ निरुद्देश्य घूम चुकने पर हम सड़क के किनारे की एक बेंच पर बैठ गए। ..... वे जैसे हमारे साथ खेलना चाह रहे थे।''

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण श्रेष्ठ कहानीकार जैनेन्द्र कुमार द्वारा रचित कहानी 'अपना–अपना भाग्य' से अवतरित है।

प्रसंग– प्रस्तुत कहानी में लेखक ने अपने नैनीताल के भ्रमण में होने वाले अनुभव को चित्रित किया है।

व्याख्या– लेखक भ्रमण के लिए पर्वतीय प्रदेश के सुरम्य अंचल नैनीताल पहुँचता है। वहाँ निरुद्देश्य घूमने के उपरांत कुछ विचार करते हुए एक स्थान पर सड़क के किनारे रखी हुई बेंच पर बैठ जाता है। सुरम्य वातावरण है! दिन ढलने लगा है। पहाड़ी स्थान में नैनीताल और भी सुंदर लग रहा है। धीरे–धीरे संध्या होती जा रही है। नैनीताल बर्फीला अंचल है। झील से उठने वाले भाप के बादल रुई के रेशे–रेशे से उनके सिर को छूकर घूम रहे हैं। ढलते सूर्य के प्रकाश में वे बादल के टुकड़े कभी नीले दीखते

और कभी सफेद और फिर लालिमा से भरे नजर आते थे। इधर–उधर फैलते हुए वे बादल ऐसे लगते थे मानो हमारे साथ खेलना चाह रहे हों। प्रकृति का वह रूप हमारी कल्पना के अनुसार चलता–फिरता प्रतीत होता था।

टिप्पणी

विशेष

- भाषा सजीव और सरल है।
- मानवीकरण की छटा दर्शनीय है।
- वर्णनात्मक शैली का प्रयोग है।
- भाव, भाषा और शैली का त्रिवेणी संगम है।
- सांध्य की महत्ता पर प्रकाश डाला गया है।

2. ''ताल में किश्तियाँ अपने सफेद पाल उड़ाती हुई ..... बच्चे किलकारियाँ मारते हुए हॉकी खेल रहे थे।''

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण सुप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक, कहानीकार स्वनाम धन्य जैनेन्द्र द्वारा रचित उनकी सुप्रसिद्ध कहानी 'अपना–अपना भाग्य' से उद्धृत है।

प्रसंग– इस कहानी में लेखक ने माता–पिता से उपेक्षित बालक की दयनीय स्थिति को दर्शाया है। इस अवतरण में लेखक ने नैनीताल के प्राकृतिक रूप–सौंदर्य का चित्रण किया है।

व्याख्या– नैनीताल की झील में लोग नौकायन का आनन्द ले रहे हैं। किश्तियों पर सफेद पाल लहलहा रहे थे। उन किश्तियों में कुछ अंग्रेज यात्री बैठे हैं। किश्तियाँ इधर–उधर घूम रही हैं। कुछ साहब लोग ताल के किनारे बैठकर बंसी पानी में डालकर मछलियाँ पकड़ने का प्रयास कर रहे हैं। वे एकनिष्ठ, धैर्यपूर्वक, एकाग्र और एकरूप होकर मछली पकड़ने का कार्य कर रहे हैं। जबकि निकट के पोलो मैदान में बच्चे किलकारियाँ मारते हुए हॉकी खेलते हुए अपना समय व्यतीत कर रहे हैं। वस्तुतः सभी अपने–अपने मनोरंजन के कार्यों में व्यस्त हैं।

विशेष

- भाषा सजीव, सरल तथा सुबोध है।
- उर्दू के शब्द प्रयुक्त हुए हैं।
- जैनेन्द्र जी ने आम बोलचाल की भाषा प्रयुक्त की है।
- पर्यटन का आनन्द लेते लोगों पर ध्यान दिया गया है।

3. ''शोर मारपीट गाली–गलौच भी जैसे खेल का ही अंश था। ..... वे शब्द की सम्पूर्ण सच्चाई के साथ जीवित थे।''

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण बहुचर्चित मनोवैज्ञानिक कहानीकार जैनेन्द्र द्वारा रचित महत्वपूर्ण कहानी 'अपना–अपना भाग्य' से उद्धृत है।

प्रसंग– अपने भावी जीवन की चिंताओं से मुक्त बालकों के जीवन और उनके क्रियाकलाप का चित्रण किया गया है। वे बालक आपस में गाली गलौच करते हुए अपना सारा ध्यान खेल खेलने में व्यतीत करते हैं।

टिप्पणी

व्याख्या– तालाब के किनारे बने पोलो के मैदान में खेलने वाले लड़के आपस में बिना किसी संकोच के गाली–गलौच भी करते हैं, आपस में मारपीट भी करते हैं। ऐसा लगता है जैसे ये सब उनके खेल का ही हिस्सा है। उन लड़कों ने खेल को ही अपने जीवन का उद्देश्य बना लिया है। उनका सारा ध्यान, तन–मन, बल और एकाग्र चिंतन, रास्ते में आने वाली समस्याओं के निराकरण के लिए प्रयोग किया जा रहा है। नई पीढ़ी के ये सब लड़के वर्तमान में जीने के अभ्यस्त हैं। वे सब अपनी आयु के अनुसार मस्त जीवन जीने के अभ्यस्त हैं। इतना ही नहीं, वे अपने जीवन को अपनी दृष्टि में श्रेष्ठ मानने के पक्षपाती हैं। वे बालक आधुनिक नई पीढ़ी के विचारों को मानकर चलने में विश्वास करते हैं। इसीलिए उनकी सोच ऐसी बन गई है।

विशेष

- नई पीढ़ी के बालकों का मनोवैज्ञानिक चित्रण है।
- भाव पक्ष और कला पक्ष का अद्‌भुत सामंजस्य है।
- भाषा सरल और प्रवाहमयी है।
- प्रसाद गुण का समावेश है।

4. ''अंग्रेज रमणियां थीं, जो धीरे–धीरे नहीं चलती थीं, ... सड़क पर चली जा रही थीं।''

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण सुप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक कहानीकार जैनेन्द्र द्वारा लिखित उनकी महत्वपूर्ण कहानी 'अपना–अपना भाग्य' से अवतरित है।

प्रसंग– प्रस्तुत कहानी में पहाड़ी क्षेत्र के सुरम्य रमणीक स्थल नैनीलाल में पर्यटकों के भ्रमण का चित्रण किया गया है। उन पर्यटकों में अंग्रेज लोग भी सम्मिलित हैं।

व्याख्या– पहाड़ों के सौंदर्य का आनन्द लेते हुए सभी वर्गों के लोग चले जा रहे हैं। उनके बच्चे बूढ़े सभी थे। अंग्रेज बच्चे शरारत करते हुए और हिन्दुस्तानी नौनिहाल अपने अभिभावकों के साथ चले जा रहे थे। उन्हीं में अंग्रेज स्त्रियाँ भी अपनी शक्ति, स्फूर्ति के साथ चल रही थीं क्योंकि वे धीरे–धीरे नहीं चल सकती थीं। वे बहुत उत्फुल्ल मन से प्रकृति के उस सौंदर्य का आनन्द ले रही थी। उन्हें न चलने में थकावट थी और न हंसने से कोई परहेज था। कसरत या व्यायाम के नाम पर वे घोड़े पर भी बैठ सकती थी और अपनी सुविधानुसार घोड़े के साथ भी चल सकती थी। वे इतनी क्रूर भी थी कि जरा भी मन में दुर्भाव आते ही किसी–किसी हिन्दुस्तानी पर कोड़े भी फटकार देती थी। वे दो–दो, तीन–तीन, चार–चार की टोलियों में चलती थी। वे निःशंक होकर चलती थी। उन्हें किसी की रोकटोक नहीं थी। वे सड़क पर बिना किसी रुकावट के चलती जाती थी।

विशेष

- अंग्रेज रमणियों की प्रकृति पर प्रकाश डाला गया है।
- भाषा सरल, सजीव और सहज है।
- छोटे–छोटे वाक्यों द्वारा प्रभावशाली चित्रण हुआ है।
- वर्णनात्मक शैली का प्रयोग है।

टिप्पणी

5. "उधर हमारी भारत की कुललक्ष्मी, ... कदम–कदम बढ़ रही थीं।"

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यांश सुप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक कहानीकार जैनेन्द्र द्वारा रचित कहानी 'अपना–अपना भाग्य' से अवतरित है।

प्रसंग– इसमें पर्वतीय क्षेत्र नैनीताल में आने वाले पर्यटकों के विचरण और घूमने–फिरने की स्थिति का चित्रण है। एक ओर अंग्रेज नर–नारी पर्यटकों के रूप में आते थे वहीं हिन्दुस्तानी भी वहाँ घूमने–फिरने आते थे। यहाँ भारतीय रमणियों के चलने–फिरने और घूमने का वर्णन है।

व्याख्या– पर्यटक स्थल नैनीताल के प्राकृतिक सौंदर्य का अवलोकन करने और मानसिक शांति प्राप्त करने के लिए विदेशी ही नहीं अपितु भारतीय भी वहां पहुंचते थे। अपनी–अपनी मनोवृत्ति के अनुसार सभी की चलना–फिरना अलग–अलग था। लेखक के अनुसार भारतीय स्त्रियां अपने परिधान और सांस्कृतिक भावों का ध्यान रखते हुए चली जाती हैं। अपने देश की गरिमा का ध्यान रखते हुए सड़क के किनारे दामन बचाती हुई, अपने पहनावे साड़ी की कई तहों में लिपटी हुई चली जा रही हैं। उन्हें लोक लाज और स्त्रीत्व का भी पूरा ध्यान है। वे भारतीय संस्कृति की गरिमा का ध्यान रखते हुए अपने आदर्श का पालन करती हुई आगे बढ़ती जाती हैं। इतना ही नहीं उन्हें सामाजिक मर्यादा का भी ध्यान है, अतः नीची निगाहें किए हुए धीमे–धीमे कदम बढ़ाते हुए आगे बढ़ रही हैं। भारतीय संस्कृति में लोक–लाज को नारी का आभूषण बताया गया है। यहां प्रत्येक स्त्री उसका पालन करने में अपना कर्तव्य समझती है। इसी विशेषता के कारण भारतीय नारी आदरणीय, पूजनीय और गरिमामय बनी हुई है।

विशेष

- भाषा सजीव, सरल और सुबोध है। संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग हुआ है।
- भारतीय नारी के वैशिष्ट्य को उजागर किया गया है।
- भाषा–शैली विवेचनात्मक है।

6. "इसके साथ ही भारतीयता का एक और नमूना था। ..... मानो भारतभूमि को इसी अकड़ के साथ कुचल–कुचल कर चलने का उन्हें अधिकार मिला है।"

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यांश सुप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक कहानीकार जैनेन्द्र द्वारा रचित उनकी महत्वपूर्ण कहानी 'अपना–अपना भाग्य' से लिया गया है।

प्रसंग– इसमें लेखक ने भारतीयता के एक अन्य पक्ष का चित्रण किया है कि अंग्रेजों के सामने यहां के लोगों का व्यवहार कुछ है और भारतीयों के साथ दूसरा है।

व्याख्या– नैनीताल घूमने वाले पर्यटकों में देशी–विदेशी सभी प्रकार के लोग थे। सभी का अपनी–अपनी संस्कृति के अनुसार व्यवहार था। लेखिका भारतीयता के व्यावहारिक पक्ष का चित्रण करते हुए विचार व्यक्त करता है कि भारतीय लोगों में भी अंग्रेजों का अनुकरण करने की प्रवृत्ति विद्यमान है। वे अपने कालेपन को खुरच–खुरच कर गोरा

होने की इच्छा रखते हैं। उनमें अंग्रेजियत का भाव जगा हुआ है। यह नकल की प्रवृत्ति उन्हें कहीं का भी नहीं छोड़ती।

टिप्पणी

भारतीयों का बनावटीपन ऐसा है कि वे अंग्रेजों की प्रशंसा करने में वे आगे रहते हैं और उनके लिए आंखें बिछा देते हैं जबकि भारतीय को देखकर मुंह फेर लेते हैं। अपने आत्मीयजनों एवं देशवासियों के सामने वे अकड़–अकड़ कर चलते थे। ऐसा लगता था कि मातृभूमि को इसी अकड़ के साथ कुचल–कुचल कर चलने का उन्हें अधिकार प्राप्त हो गया है। यह निरीह गुलामी का घिनौना रूप है जो अंग्रेजों के दबाव के सामने दिखाई देता है। यह अंग्रेजियत का क्रूर सच है जिसने भारतीयों के स्वाभिमान से दबाया हुआ था।

विशेष

- भाषा सजीव, सरल और सुबोध है।
- अंग्रेजियत के सामने भारतीयता के ओछेपन को दिखाया है।
- शैली विवेचनात्मक है।
- प्रसाद गुण है।

7. "सब सन्नाटा था। ..... पहाड़ों के सिर पर की रोशनाइयां तारों–सी जान पड़ती थीं।"

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण सुप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक कहानीकार जैनेन्द्र की प्रसिद्ध कहानी 'अपना–अपना भाग्य' से अवतरित है।

प्रसंग– इसमें लेखक ने नैनीताल के सायंकालीन प्राकृतिक सौंदर्य का चित्रण किया है। रोशनी से जगमगाती नैनीताल की झील बहुत सुंदर लग रही थी।

व्याख्या– नैनीताल की पहाड़ियों पर चारों ओर बर्फ पड़ रही थी। सायंकाल का समय था। सब तरफ बिजली की रोशनी से जगमग हो रहा था। एक सन्नाटा था। सड़कों पर और मकानों पर बिजली की रोशनी दीप–मालिका की तरह जगमगा रही थी। इस जगमगाहट का प्रतिबिम्ब प्रकृति के जल–दर्पण पर प्रतिबिम्बित हो रहा था। जैसे–जैसे जल में हवा के कारण लहर उठती थी वैसे ही उसके रोशनी का प्रतिबिम्ब हिलोरे लेने लगता था। वह कई गुना बढ़कर सुंदरता को फैला रहा था। इससे होने वाला प्रकाश–पुंज प्रतिबिम्बों में वृद्धि कर रहा था। इसी के साथ पहाड़ी क्षेत्र पर बने घरों में जलती रोशनी दूर से तारों के समान जान पड़ती थी। सारा आकाश जगमग और भरा हुआ जान पड़ता था। बहुत ही अद्‌भुत दृश्य बन रहा था। सायंकालीन प्रकृति की गोद में जल पर पड़नेवाली जगमग रोशनी वातावरण को सुंदर बना रही थी।

विशेष

- भाषा सरल तथा सुबोध है। तत्सम शब्दों का प्रयोग है।
- प्रकृति के सौंदर्य का मनोहारी चित्रण है।
- भावपक्ष और कलापक्ष की दृष्टि से उत्तम है।

टिप्पणी

- अभिधा और व्यंजना शब्द–शक्ति का प्रयोग है।
- वर्णनात्मक शैली है।

8. "मरने के लिए उसे वही जगह, ... सब सुना और सोचा, अपना–अपना भाग्य।"

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण सुप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक कहानीकार स्वनाम धन्य जैनेन्द्र कुमार द्वारा रचित कहानी 'अपना–अपना भाग्य' से अवतरित है।

प्रसंग– इसमें एक उपेक्षित बालक की मृत्यु की विडम्बना को दर्शाया गया है। भाग्य में कुछ आते–जाते कैसे फिसल गया और दुनिया से जाना पड़ा।

व्याख्या– नैनीताल जैसी स्वर्गिक जगह पर गरीब व्यक्ति का बालक अभावग्रस्त होकर इधर–उधर भटक रहा है। लेखक ने अपने मित्र के सहयोग से उसे सहायता पहुंचाने का प्रयास किया। किन्तु भाग्य में कुछ और ही था। बालक को सहायता के लिए अगले दिन होटल आने के लिए कहा लेकिन नियति में कुछ और ही था।

लेखक अपने मित्र के साथ नैनीताल की यात्रा समाप्त कर लौट रहा है। उन्हें मोटर में सवार होते ही एक पहाड़ी बालक की सड़क के किनारे मृत्यु का समाचार मिला, जो ठंड से ठिठुर कर मर गया था। जिस बालक के प्रति लेखक की सहानुभूति थी वह दस बरस की उम्र में काले चिथड़ों की कमीज पहने हुए इस दुनिया को छोड़ गया। यह मनुष्य की निष्ठुरता का रूप है कि एक बालक को अभाव का सामना करना पड़ा। प्रत्यक्षदर्शियों ने बताया कि उस गरीब के मुंह, छाती, पैरों पर बर्फ की हल्की–सी चादर चिपक गई थी। मानो दुनिया की बेहयाई ढकने के लिए प्रकृति ने शव के लिए सफेद और ठंडे कफन का इंतजाम किया था। यही भाग्य की विडम्बना है।

विशेष

- भाषा सरल और सुबोध है। बोलचाल की भाषा प्रयुक्त की है।
- अनाथ बालक की नियति का चित्रण है।
- विश्लेषण सजीव और मार्मिक है।

अपनी प्रगति जांचिए

9. कथाकार 'अपना–अपना भाग्य' कहानी में किस जगह की प्राकृतिक सुंदरता का वर्णन करता है?

(क) दिल्ली (ख) मुंबई

(ग) नैनीताल (घ) मसूरी

10. लेखक और उसके मित्र ने लड़के को पैसे क्यों नहीं दिए थे?

(क) भीग जाने की वजह से (ख) बजट बिगड़ जाने के डर से

(ग) नौकरी देने की वजह से (घ) इनमें से कोई नहीं

1.7 तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम (फणीश्वरनाथ रेणु) से व्याख्या

टिप्पणी

मूल पाठ

हिरामन गाड़ीवान की पीठ में गुदगुदी लगती है...

पिछले बीस साल से गाड़ी हाँकता है हिरामन। बैलगाड़ी। सीमा के उस पार, मोरंग राज नेपाल से धान और लकड़ी ढो चुका है। कंट्रोल के जमाने में चोरबाजारी का माल इस पार से उस पार पहुँचाया है। लेकिन कभी तो ऐसी गुदगुदी नहीं लगी पीठ में!

कंट्रोल का जमाना! हिरामन कभी भूल सकता है उस जमाने को! एक बार चार खेप सीमेंट और कपड़े की गाँठों से भरी गाड़ी, जोगबानी में विराटनगर पहुँचने के बाद हिरामन का कलेजा पोख्ता हो गया था। फारबिसगंज का हर चोर–व्यापारी उसको पक्का गाड़ीवान मानता। उसके बैलों की बड़ाई बड़ी गद्दी के बड़े सेठ जी खुद करते, अपनी भाषा में।

गाड़ी पकड़ी गई पाँचवीं बार, सीमा के इस पार तराई में।

महाजन का मुनीम उसी की गाड़ी पर गाँठों के बीच चुक्की–मुक्की लगा कर छिपा हुआ था। दारोगा साहब की डेढ़ हाथ लंबी चोरबत्ती की रोशनी कितनी तेज होती है, हिरामन जानता है। एक घंटे के लिए आदमी अंधा हो जाता है, एक छटक भी पड़ जाए आँखों पर! रोशनी के साथ कड़कती हुई आवाज – 'ऐ–य! गाड़ी रोको! साले, गोली मार देंगे?'

बीसों गाड़ियाँ एक साथ कचकचा कर रुक गईं। हिरामन ने पहले ही कहा था, 'यह बीस विषावेगा!' दारोगा साहब उसकी गाड़ी में दुबके हुए मुनीम जी पर रोशनी डाल कर पिशाची हँसी हँसे – 'हा–हा–हा! मुनीम जी–ई–ई–ई! ही–ही–ही! ऐ–य, साला गाड़ीवान, मुँह क्या देखता है रे–ए–ए! कंबल हटाओ इस बोरे के मुँह पर से!' हाथ की छोटी लाठी से मुनीम जी के पेट में खोंचा मारते हुए कहा था, 'इस बोरे को! स–स्साला!'

बहुत पुरानी अखज–अदावत होगी दारोगा साहब और मुनीम जी में। नहीं तो उतना रूपया कबूलने पर भी पुलिस–दरोगा का मन न डोले भला! चार हजार तो गाड़ी पर बैठा ही दे रहा है। लाठी से दूसरी बार खोंचा मारा दारोगा ने। 'पाँच हजार!' फिर खोंचा – 'उतरो पहले...'

मुनीम को गाड़ी से नीचे उतार कर दारोगा ने उसकी आँखों पर रोशनी डाल दी। फिर दो सिपाहियों के साथ सड़क से बीस–पच्चीस रस्सी दूर झाड़ी के पास ले गए। गाड़ीवान और गाड़ियों पर पाँच–पाँच बंदूकवाले सिपाहियों का पहरा! हिरामन समझ गया, इस बार निस्तार नहीं। जेल? हिरामन को जेल का डर नहीं। लेकिन उसके बैल? न जाने कितने दिनों तक बिना चारा–पानी के सरकारी फाटक में पड़े रहेंगे – भूखे–प्यासे। फिर नीलाम हो जाएँगे। भैया और भौजी को वह मुँह नहीं दिखा सकेगा कभी। ...नीलाम की बोली उसके कानों के पास गूँज गई – एक–दो–तीन! दारोगा और मुनीम में बात पट नहीं रही थी शायद।

हिरामन की गाड़ी के पास तैनात सिपाही ने अपनी भाषा में दूसरे सिपाही से धीमी आवाज में पूछा, 'का हो? मामला गोल होखी का?' फिर खैनी–तंबाकू देने के बहाने उस सिपाही के पास चला गया।

टिप्पणी

एक–दो–तीन! तीन–चार गाड़ियों की आड़। हिरामन ने फैसला कर लिया। उसने धीरे–से अपने बैलों के गले की रस्सियाँ खोल लीं। गाड़ी पर बैठे–बैठे दोनों को जुड़वाँ बाँध दिया। बैल समझ गए उन्हें क्या करना है। हिरामन उतरा, जुती हुई गाड़ी में बाँस की टिकटी लगा कर बैलों के कंधों को बेलाग किया। दोनों के कानों के पास गुदगुदी लगा दी और मन–ही–मन बोला, 'चलो भैयन, जान बचेगी तो ऐसी–ऐसी सग्गड़ गाड़ी बहुत मिलेगी।' ...एक–दो–तीन! नौ–दो–ग्यारह! ..

गाड़ियों की आड़ में सड़क के किनारे दूर तक घनी झाड़ी फैली हुई थी। दम साध कर तीनों प्राणियों ने झाड़ी को पार किया – बेखटक, बेआहट! फिर एक ले, दो ले – दुलकी चाल! दोनों बैल सीना तान कर फिर तराई के घने जंगलों में घुस गए। राह सूँघते, नदी–नाला पार करते हुए भागे पूँछ उठा कर। पीछे–पीछे हिरामन। रात–भर भागते रहे थे तीनों जन।

घर पहुँच कर दो दिन तक बेसुध पड़ा रहा हिरामन। होश में आते ही उसने कान पकड़ कर कसम खाई थी – अब कभी ऐसी चीजों की लदनी नहीं लादेंगे। चोरबाजारी का माल? तोबा, तोबा!... पता नहीं मुनीम जी का क्या हुआ! भगवान जाने उसकी सग्गड़ गाड़ी का क्या हुआ! असली इस्पात लोहे की धुरी थी। दोनों पहिए तो नहीं, एक पहिया एकदम नया था। गाड़ी में रंगीन डोरियों के फुँदने बड़े जतन से गूँथे गए थे।

दो कसमें खाई हैं उसने। एक चोरबाजारी का माल नहीं लादेंगे। दूसरी – बाँस। अपने हर भाड़ेदार से वह पहले ही पूछ लेता है – 'चोरी– चमारीवाली चीज तो नहीं? और, बाँस? बाँस लादने के लिए पचास रूपए भी दे कोई, हिरामन की गाड़ी नहीं मिलेगी। दूसरे की गाड़ी देखे।

बाँस लदी हुई गाड़ी! गाड़ी से चार हाथ आगे बाँस का अगुआ निकला रहता है और पीछे की ओर चार हाथ पिछुआ! काबू के बाहर रहती है गाड़ी हमेशा। सो बेकाबूवाली लदनी और खरैहिया। शहरवाली बात! तिस पर बाँस का अगुआ पकड़ कर चलनेवाला भाड़ेदार का महाभकुआ नौकर, लड़की–स्कूल की ओर देखने लगा। बस, मोड़ पर घोड़ागाड़ी से टक्कर हो गई। जब तक हिरामन बैलों की रस्सी खींचे, तब तक घोड़ागाड़ी की छतरी बाँस के अगुआ में फँस गई। घोड़ा–गाड़ीवाले ने तड़ातड़ चाबुक मारते हुए गाली दी थी! बाँस की लदनी ही नहीं, हिरामन ने खरैहिया शहर की लदनी भी छोड़ दी। और जब फारबिसगंज से मोरंग का भाड़ा ढोना शुरू किया तो गाड़ी ही पार! कई वर्षों तक हिरामन ने बैलों को आधीदारी पर जोता। आधा भाड़ा गाड़ीवाले का और आधा बैलवाले का। हिस्स! गाड़ीवानी करो मुफ्त! आधीदारी की कमाई से बैलों के ही पेट नहीं भरते। पिछले साल ही उसने अपनी गाड़ी बनवाई है।

देवी मैया भला करें उस सरकस–कंपनी के बाघ का। पिछले साल इसी मेले में बाघगाड़ी को ढोनेवाले दोनों घोड़े मर गए। चंपानगर से फारबिसगंज मेला आने के

टिप्पणी

समय सरकस–कंपनी के मैनेजर ने गाड़ीवान–पट्टी में ऐलान करके कहा – 'सौ रूपया भाड़ा मिलेगा!' एक–दो गाड़ीवान राजी हुए। लेकिन, उनके बैल बाघगाड़ी से दस हाथ दूर ही डर से डिकरने लगे – बाँ–आँ! रस्सी तुड़ा कर भागे। हिरामन ने अपने बैलों की पीठ सहलाते हुए कहा, 'देखो भैयन, ऐसा मौका फिर हाथ न आएगा। यही है मौका अपनी गाड़ी बनवाने का। नहीं तो फिर आधेदारी। अरे पिंजड़े में बंद बाघ का क्या डर? मोरंग की तराई में दहाड़ते हुई बाघों को देख चुके हो। फिर पीठ पर मैं तो हूँ।...'

गाड़ीवानों के दल में तालियाँ पटपटा उठीं थीं एक साथ। सभी की लाज रख ली हिरामन के बैलों ने। हुमक कर आगे बढ़ गए और बाघगाड़ी में जुट गए – एक–एक करके। सिर्फ दाहिने बैल ने जुतने के बाद ढेर–सा पेशाब किया। हिरामन ने दो दिन तक नाक से कपड़े की पट्टी नहीं खोली थी। बड़ी गद्दी के बड़े सेठ जी की तरह नकबंधन लगाए बिना बघाइन गंध बरदास्त नहीं कर सकता कोई।

बाघगाड़ी की गाड़ीवानी की है हिरामन ने। कभी ऐसी गुदगुदी नहीं लगी पीठ में। आज रह–रह कर उसकी गाड़ी में चंपा का फूल महक उठता है। पीठ में गुदगुदी लगने पर वह अँगोछे से पीठ झाड़ लेता है।

हिरामन को लगता है, दो वर्ष से चंपानगर मेले की भगवती मैया उस पर प्रसन्न है। पिछले साल बाघगाड़ी जुट गई। नकद एक सौ रूपए भाड़े के अलावा बुताद, चाह–बिस्कुट और रास्ते–भर बंदर–भालू और जोकर का तमाशा देखा सो फोकट में!

और, इस बार यह जनानी सवारी। औरत है या चंपा का फूल! जब से गाड़ी मह–मह महक रही है।

कच्ची सड़क के एक छोटे–से खड्ड में गाड़ी का दाहिना पहिया बेमौके हिचकोला खा गया। हिरामन की गाड़ी से एक हल्की 'सिस' की आवाज आई। हिरामन ने दाहिने बैल को दुआली से पीटते हुए कहा, 'साला! क्या समझता है, बोरे की लदनी है क्या?'

'अहा! मारो मत!'

अनदेखी औरत की आवाज ने हिरामन को अचरज में डाल दिया। बच्चों की बोली जैसी महीन, फेनूगिलासी बोली!

मथुरामोहन नौटंकी कंपनी में लैला बननेवाली हीराबाई का नाम किसने नहीं सुना होगा भला! लेकिन हिरामन की बात निराली है! उसने सात साल तक लगातार मेलों की लदनी लादी है, कभी नौटंकी–थियेटर या बायस्कोप सिनेमा नहीं देखा। लैला या हीराबाई का नाम भी उसने नहीं सुना कभी। देखने की क्या बात! सो मेला टूटने के पंद्रह दिन पहले आधी रात की बेला में काली ओढ़नी में लिपटी औरत को देख कर उसके मन में खटका अवश्य लगा था। बक्सा ढोनेवाले नौकर से गाड़ी–भाड़ा में मोल–मोलाई करने की कोशिश की तो ओढ़नीवाली ने सिर हिला कर मना कर दिया। हिरामन ने गाड़ी जोतते हुए नौकर से पूछा, 'क्यों भैया, कोई चोरी चमारी का माल–वाल तो नहीं?' हिरामन को फिर अचरज हुआ। बक्सा ढोनेवाले आदमी ने हाथ के इशारे से गाड़ी हाँकने को कहा और अँधेरे में गायब हो गया। हिरामन को मेले में तंबाकू बेचनेवाली बूढ़ी की काली साड़ी की याद आई थी।

टिप्पणी

ऐसे में कोई क्या गाड़ी हाँके!

एक तो पीठ में गुदगुदी लग रही है। दूसरे रह–रह कर चंपा का फूल खिल जाता है उसकी गाड़ी में। बैलों को डाँटो तो 'इस–बिस' करने लगती है उसकी सवारी। उसकी सवारी! औरत अकेली, तंबाकू बेचनेवाली बूढ़ी नहीं! आवाज सुनने के बाद वह बार–बार मुड़ कर टप्पर में एक नजर डाल देता है, अँगोछे से पीठ झाड़ता है। ...भगवान जाने क्या लिखा है इस बार उसकी किस्मत में! गाड़ी जब पूरब की ओर मुड़ी, एक टुकड़ा चाँदनी उसकी गाड़ी में समा गई। सवारी की नाक पर एक जुगनू जगमगा उठा। हिरामन को सबकुछ रहस्यमय – अजगुत–अजगुत – लग रहा है। सामने चंपानगर से सिंधिया गाँव तक फैला हुआ मैदान... कहीं डाकिन–पिशाचिन तो नहीं?

हिरामन की सवारी ने करवट ली। चाँदनी पूरे मुखड़े पर पड़ी तो हिरामन चीखते–चीखते रूक गया – अरे बाप! ई तो परी है!

परी की आँखें खुल गईं। हिरामन ने सामने सड़क की ओर मुँह कर लिया और बैलों को टिटकारी दी। वह जीभ को तालू से सटा कर टि–टि–टि–टि आवाज निकालता है। हिरामन की जीभ न जाने कब से सूख कर लकड़ी–जैसी हो गई थी!

'भैया, तुम्हारा नाम क्या है?'

हू–ब–हू फेनूगिलास! ...हिरामन के रोम–रोम बज उठे। मुँह से बोली नहीं निकली। उसके दोनों बैल भी कान खड़े करके इस बोली को परखते हैं।

'मेरा नाम! ...नाम मेरा है हिरामन!'

उसकी सवारी मुस्कराती है। ...मुस्कराहट में खुशबू है।

'तब तो मीता कहूँगी, भैया नहीं। – मेरा नाम भी हीरा है।'

'इस्स!' हिरामन को परतीत नहीं, 'मर्द और औरत के नाम में फर्क होता है।'

'हाँ जी, मेरा नाम भी हीराबाई है।'

कहाँ हिरामन और कहाँ हीराबाई, बहुत फर्क है!

हिरामन ने अपने बैलों को झिड़की दी – 'कान चुनिया कर गप सुनने से ही तीस कोस मंजिल कटेगी क्या? इस बाएँ नाटे के पेट में शैतानी भरी है।' हिरामन ने बाएँ बैल को दुआली की हल्की झड़प दी।

'मारो मत, धीरे धीरे चलने दो। जल्दी क्या है!'

हिरामन के सामने सवाल उपस्थित हुआ, वह क्या कह कर 'गप' करे हीराबाई से? 'तोहे' कहे या 'अहाँ'? उसकी भाषा में बड़ों को 'अहाँ' अर्थात 'आप' कह कर संबोधित किया जाता है, कचराही बोली में दो–चार सवाल–जवाब चल सकता है, दिल–खोल गप तो गाँव की बोली में ही की जा सकती है किसी से।

आसिन–कातिक के भोर में छा जाने वाले कुहासे से हिरामन को पुरानी चिढ़ है। बहुत बार वह सड़क भूल कर भटक चुका है। किंतु आज के भोर के इस घने कुहासे में भी वह मगन है। नदी के किनारे धन–खेतों से फूले हुए धान के पौधों की पवनिया

टिप्पणी

गंध आती है। पर्व–पावन के दिन गाँव में ऐसी ही सुगंध फैली रहती है। उसकी गाड़ी में फिर चंपा का फूल खिला। उस फूल में एक परी बैठी है। ...जै भगवती।

हिरामन ने आँख की कनखियों से देखा, उसकी सवारी ...मीता ...हीराबाई की आँखें गुजुर–गुजुर उसको हेर रही हैं। हिरामन के मन में कोई अजानी रागिनी बज उठी। सारी देह सिरसिरा रही है। बोला, 'बैल को मारते हैं तो आपको बहुत बुरा लगता है?'

हीराबाई ने परख लिया, हिरामन सचमुच हीरा है।

चालीस साल का हट्टा–कट्टा, काला–कलूटा, देहाती नौजवान अपनी गाड़ी और अपने बैलों के सिवाय दुनिया की किसी और बात में विशेष दिलचस्पी नहीं लेता। घर में बड़ा भाई है, खेती करता है। बाल–बच्चेवाला आदमी है। हिरामन भाई से बढ़ कर भाभी की इज्जत करता है। भाभी से डरता भी है। हिरामन की भी शादी हुई थी, बचपन में ही गौने के पहले ही दुलहिन मर गई। हिरामन को अपनी दुलहिन का चेहरा याद नहीं।...दूसरी शादी? दूसरी शादी न करने के अनेक कारण हैं। भाभी की जिद, कुमारी लड़की से ही हिरामन की शादी करवाएगी। कुमारी का मतलब हुआ पाँच–सात साल की लड़की। कौन मानता है सरधा–कानून? कोई लड़कीवाला दोब्याहू को अपनी लड़की गरज में पड़ने पर ही दे सकता है। भाभी उसकी तीन–सत्त करके बैठी है, सो बैठी है। भाभी के आगे भैया की भी नहीं चलती! ...अब हिरामन ने तय कर लिया है, शादी नहीं करेगा। कौन बलाय मोल लेने जाए! ...ब्याह करके फिर गाड़ीवानी क्या करेगा कोई! और सब कुछ छूट जाए, गाड़ीवानी नहीं छोड़ सकता हिरामन।

हीराबाई ने हिरामन के जैसा निश्छल आदमी बहुत कम देखा है। पूछा, 'आपका घर कौन जिल्ला में पड़ता है?' कानपुर नाम सुनते ही जो उसकी हँसी छूटी, तो बैल भड़क उठे। हिरामन हँसते समय सिर नीचा कर लेता है। हँसी बंद होने पर उसने कहा, 'वाह रे कानपुर! तब तो नाकपुर भी होगा?' और जब हीराबाई ने कहा कि नाकपुर भी है, तो वह हँसते–हँसते दुहरा हो गया।

'वाह रे दुनिया! क्या–क्या नाम होता है! कानपुर, नाकपुर!' हिरामन ने हीराबाई के कान के फूल को गौर से देखा। नाक की नकछवि के नग देख कर सिहर उठा – लहू की बूँद!

हिरामन ने हीराबई का नाम नहीं सुना कभी। नौटंकी कंपनी की औरत को वह बाईजी नहीं समझता है। ...कंपनी में काम करनेवाली औरतों को वह देख चुका है। सरकस कंपनी की मालकिन, अपनी दोनों जवान बेटियों के साथ बाघगाड़ी के पास आती थी, बाघ को चारा–पानी देती थी, प्यार भी करती थी खूब। हिरामन के बैलों को भी डबलरोटी–बिस्कुट खिलाया था बड़ी बेटी ने।

हिरामन होशियार है। कुहासा छँटते ही अपनी चादर से टप्पर में परदा कर दिया –'बस दो घंटा! उसके बाद रास्ता चलना मुश्किल है। कातिक की सुबह की धूल आप बर्दास्त न कर सकिएगा। कजरी नदी के किनारे तेगछिया के पास गाड़ी लगा देंगे। दुपहरिया काट कर...।'

टिप्पणी

सामने से आती हुई गाड़ी को दूर से ही देख कर वह सतर्क हो गया। लीक और बैलों पर ध्यान लगा कर बैठ गया। राह काटते हुए गाड़ीवान ने पूछा, 'मेला टूट रहा है क्या भाई?'

हिरामन ने जवाब दिया, वह मेले की बात नहीं जानता। उसकी गाड़ी पर 'बिदागी' (नैहर या ससुराल जाती हुई लड़की) है। न जाने किस गाँव का नाम बता दिया हिरामन ने।

'छतापुर–पचीरा कहाँ है?'

'कहीं हो, यह ले कर आप क्या करिएगा?' हिरामन अपनी चतुराई पर हँसा। परदा डाल देने पर भी पीठ में गुदगुदी लगती है।

हिरामन परदे के छेद से देखता है। हीराबाई एक दियासलाई की डिब्बी के बराबर आईने में अपने दाँत देख रही है। ...मदनपुर मेले में एक बार बैलों को नन्हीं–चित्ती कौड़ियों की माला खरीद दी थी हिरामन ने, छोटी–छोटी, नन्हीं–नन्हीं कौड़ियों की पाँत।

तेगछिया के तीनों पेड़ दूर से ही दिखलाई पड़ते हैं। हिरामन ने परदे को जरा सरकाते हुए कहा, 'देखिए, यही है तेगछिया। दो पेड़ जटामासी बड़ है और एक उस फूल का क्या नाम है, आपके कुरते पर जैसा फूल छपा हुआ है, वैसा ही, खूब महकता है, दो कोस दूर तक गंध जाती है, उस फूल को खमीरा तंबाकू में डाल कर पीते भी हैं लोग।'

'और उस अमराई की आड़ से कई मकान दिखाई पड़ते हैं, वहाँ कोई गाँव है या मंदिर?'

हिरामन ने बीड़ी सुलगाने के पहले पूछा, 'बीड़ी पीएँ? आपको गंध तो नहीं लगेगी? ...वही है नामलगर ड्योढ़ी। जिस राजा के मेले से हम लोग आ रहे हैं, उसी का दियाद–गोतिया है। ...जा रे जमाना!'

हिरामन ने जा रे जमाना कह कर बात को चाशनी में डाल दिया। हीराबाई ने टप्पर के परदे को तिरछे खोंस दिया। हीराबाई की दंतपंक्ति।

'कौन जमाना?' ठुड्डी पर हाथ रख कर साग्रह बोली।

'नामलगर ड्योढ़ी का जमाना! क्या था और क्या–से–क्या हो गया!'

हिरामन गप रसाने का भेद जानता है। हीराबाई बोली, 'तुमने देखा था वह जमाना?'

'देखा नहीं, सुना है। राज कैसे गया, बड़ी हैफवाली कहानी है। सुनते हैं, घर में देवता ने जन्म ले लिया। कहिए भला, देवता आखिर देवता है। है या नहीं? इंदरासन छोड़ कर मिरतूभुवन में जन्म ले ले तो उसका तेज कैसे सम्हाल सकता है कोई! सूरजमुखी फूल की तरह माथे के पास तेज खिला रहता। लेकिन नजर का फेर, किसी ने नहीं पहचाना। एक बार उपलैन में लाट साहब मय लाटनी के, हवागाड़ी से आए थे। लाट ने भी नहीं, पहचाना आखिर लटनी ने। सुरजमुखी तेज देखते ही बोल उठी – ए मैन राजा साहब, सुनो, यह आदमी का बच्चा नहीं है, देवता है।'

टिप्पणी

हिरामन ने लाटनी की बोली की नकल उतारते समय खूब डैम–फैट–लैट किया। हीराबाई दिल खोल कर हँसी। हँसते समय उसकी सारी देह दुलकती है।

हीराबाई ने अपनी ओढ़नी ठीक कर ली। तब हिरामन को लगा कि... लगा कि...

'तब? उसके बाद क्या हुआ मीता?'

'इस्स! कथा सुनने का बड़ा सौक है आपको? ...लेकिन, काला आदमी, राजा क्या महाराजा भी हो जाए, रहेगा काला आदमी ही। साहेब के जैसे अक्किल कहाँ से पाएगा! हँस कर बात उड़ा दी सभी ने। तब रानी को बार–बार सपना देने लगा देवता! सेवा नहीं कर सकते तो जाने दो, नहीं, रहेंगे तुम्हारे यहाँ। इसके बाद देवता का खेल शुरू हुआ। सबसे पहले दोनों दंतार हाथी मरे, फिर घोड़ा, फिर पटपटांग...।'

'पटपटांग क्या है?'

हिरामन का मन पल–पल में बदल रहा है। मन में सतरंगा छाता धीरे–धीरे खिल रहा है, उसको लगता है। ...उसकी गाड़ी पर देवकुल की औरत सवार है। देवता आखिर देवता है!

'पटपटांग! धन–दौलत, माल–मवेसी सब साफ! देवता इंदरासन चला गया।'

हीराबाई ने ओझल होते हुए मंदिर के कँगूरे की ओर देख कर लंबी साँस ली।

'लेकिन देवता ने जाते–जाते कहा, इस राज में कभी एक छोड़ कर दो बेटा नहीं होगा। धन हम अपने साथ ले जा रहे हैं, गुन छोड़ जाते हैं। देवता के साथ सभी देव–देवी चले गए, सिर्फ सरोसती मैया रह गई। उसी का मंदिर है।'

देसी घोड़े पर पाट के बोझ लादे हुए बनियों को आते देख कर हिरामन ने टप्पर के परदे को गिरा दिया। बैलों को ललकार कर बिदेसिया नाच का बंदनागीत गाने लगा–

'जै मैया सरोसती, अरजी करत बानी,

हमरा पर होखू सहाई हे मैया, हमरा पर होखू सहाई!'

घोड़लद्दे बनियों से हिरामन ने हुलस कर पूछा, 'क्या भाव पटुआ खरीदते हैं महाजन?'

लँगड़े घोड़ेवाले बनिए ने बटगमनी जवाब दिया – 'नीचे सताइस–अठाइस, ऊपर तीस। जैसा माल, वैसा भाव।'

जवान बनिये ने पूछा, 'मेले का क्या हालचाल है, भाई? कौन नौटंकी कंपनी का खेल हो रहा है, रौता कंपनी या मथुरामोहन?'

'मेले का हाल मेलावाला जाने?' हिरामन ने फिर छतापुर–पचीरा का नाम लिया।

सूरज दो बाँस ऊपर आ गया था। हिरामन अपने बैलों से बात करने लगा – 'एक कोस जमीन! जरा दम बाँध कर चलो। प्यास की बेला हो गई न! याद है, उस बार तेगछिया के पास सरकस कंपनी के जोकर और बंदर नचानेवाला साहब में झगड़ा हो गया था। जोकरवा ठीक बंदर की तरह दाँत किटकिटा कर किकियाने लगा था, न जाने किस–किस देस–मुलुक के आदमी आते हैं!'

टिप्पणी

हिरामन ने फिर परदे के छेद से देखा, हीराबाई एक कागज के टुकड़े पर आँख गड़ा कर बैठी है। हिरामन का मन आज हल्के सुर में बँधा है। उसको तरह–तरह के गीतों की याद आती है। बीस–पच्चीस साल पहले, बिदेसिया, बलवाही, छोकरा–नाचने वाले एक–से–एक गजल खेमटा गाते थे। अब तो, भोंपा में भोंपू–भोंपू करके कौन गीत गाते हैं लोग! जा रे जमाना! छोकरा–नाच के गीत की याद आई हिरामन को –

'सजनवा बैरी हो ग' य हमारो! सजनवा.....!

अरे, चिठिया हो ते सब कोई बाँचे, चिठिया हो तो....

हाय! करमवा, होय करमवा....

गाड़ी की बल्ली पर उँगलियों से ताल दे कर गीत को काट दिया हिरामन ने। छोकरा–नाच के मनुवाँ नटुवा का मुँह हीराबाई–जैसा ही था। ...कहाँ चला गया वह जमाना? हर महीने गाँव में नाचनेवाले आते थे। हिरामन ने छोकरा–नाच के चलते अपनी भाभी की न जाने कितनी बोली–ठोली सुनी थी। भाई ने घर से निकल जाने को कहा था।

आज हिरामन पर माँ सरोसती सहाय हैं, लगता है। हीराबाई बोली, 'वाह, कितना बढ़िया गाते हो तुम!'

हिरामन का मुँह लाल हो गया। वह सिर नीचा कर के हँसने लगा।

आज तेगछिया पर रहने वाले महावीर स्वामी भी सहाय हैं हिरामन पर। तेगछिया के नीचे एक भी गाड़ी नहीं। हमेशा गाड़ी और गाड़ीवानों की भीड़ लगी रहती हैं यहाँ। सिर्फ एक साइकिलवाला बैठ कर सुस्ता रहा है। महावीर स्वामी को सुमर कर हिरामन ने गाड़ी रोकी। हीराबाई परदा हटाने लगी। हिरामन ने पहली बार आँखों से बात की हीराबाई से – साइकिलवाला इधर ही टकटकी लगा कर देख रहा है।

बैलों को खोलने के पहले बाँस की टिकटी लगा कर गाड़ी को टिका दिया। फिर साइकिलवाले की ओर बार–बार घूरते हुए पूछा, 'कहाँ जाना है? मेला? कहाँ से आना हो रहा है? बिसनपुर से? बस, इतनी ही दूर में थसथसा कर थक गए? – जा रे जवानी!'

साइकिलवाला दुबला–पतला नौजवान मिनमिना कर कुछ बोला और बीड़ी सुलगा कर उठ खड़ा हुआ। हिरामन दुनिया–भर की निगाह से बचा कर रखना चाहता है हीराबाई को। उसने चारों ओर नजर दौड़ा कर देख लिया – कहीं कोई गाड़ी या घोड़ा नहीं।

कजरी नदी की दुबली–पतली धारा तेगछिया के पास आ कर पूरब की ओर मुड़ गई है। हीराबाई पानी में बैठी हुई भैसों और उनकी पीठ पर बैठे हुए बगुलों को देखती रही।

हिरामन बोला, 'जाइए, घाट पर मुँह–हाथ धो आइए!'

हीराबाई गाड़ी से नीचे उतरी। हिरामन का कलेजा धड़क उठा। ...नहीं, नहीं! पाँव सीधे हैं, टेढ़े नहीं। लेकिन, तलुवा इतना लाल क्यों हैं? हीराबाई घाट की ओर चली

टिप्पणी

गई, गाँव की बहू–बेटी की तरह सिर नीचा कर के धीरे–धीरे। कौन कहेगा कि कंपनी की औरत है! ...औरत नहीं, लड़की। शायद कुमारी ही है।

हिरामन टिकटी पर टिकी गाड़ी पर बैठ गया। उसने टप्पर में झाँक कर देखा। एक बार इधर–उधर देख कर हीराबाई के तकिए पर हाथ रख दिया। फिर तकिए पर केहुनी डाल कर झुक गया, झुकता गया। खुशबू उसकी देह में समा गई। तकिए के गिलाफ पर कढ़े फूलों को उँगलियों से छू कर उसने सूँघा, हाय रे हाय! इतनी सुगंध! हिरामन को लगा, एक साथ पाँच चिलम गाँजा फूँक कर वह उठा है। हीराबाई के छोटे आईने में उसने अपना मुँह देखा। आँखें उसकी इतनी लाल क्यों हैं?

हीराबाई लौट कर आई तो उसने हँस कर कहा, 'अब आप गाड़ी का पहरा दीजिए, मैं आता हूँ तुरंत।'

हिरामन ने अपना सफरी झोली से सहेजी हुई गंजी निकाली। गमछा झाड़ कर कंधे पर लिया और हाथ में बालटी लटका कर चला। उसके बैलों ने बारी–बारी से 'हुँक–हुँक' करके कुछ कहा। हिरामन ने जाते–जाते उलट कर कहा, 'हाँ,हाँ, प्यास सभी को लगी है। लौट कर आता हूँ तो घास दूँगा, बदमासी मत करो!'

बैलों ने कान हिलाए।

नहा–धो कर कब लौटा हिरामन, हीराबाई को नहीं मालूम। कजरी की धारा को देखते–देखते उसकी आँखों में रात की उचटी हुई नींद लौट आई थी। हिरामन पास के गाँव से जलपान के लिए दही–चूड़ा–चीनी ले आया है।

'उठिए, नींद तोड़िए! दो मुट्ठी जलपान कर लीजिए!'

हीराबाई आँख खोल कर अचरज में पड़ गई। एक हाथ में मिट्टी के नए बरतन में दही, केले के पत्ते। दूसरे हाथ में बालटी–भर पानी। आँखों में आत्मीयतापूर्ण अनुरोध!

'इतनी चीजें कहाँ से ले आए!'

'इस गाँव का दही नामी है। ...चाह तो फारबिसगंज जा कर ही पाइएगा।

हिरामन की देह की गुदगुदी मिट गई। 'हीराबाई ने कहा, 'तुम भी पत्तल बिछाओ। ...क्यों? तुम नहीं खाओगे तो समेट कर रख लो अपनी झोली में। मैं भी नहीं खाऊँगी।'

'इस्स!' हिरामन लजा कर बोला, 'अच्छी बात! आप खा लीजिए पहले!'

'पहले–पीछे क्या? तुम भी बैठो।'

हिरामन का जी जुड़ा गया। हीराबाई ने अपने हाथ से उसका पत्तल बिछा दिया, पानी छींट दिया, चूड़ा निकाल कर दिया। इस्स! धन्न है, धन्न है! हिरामन ने देखा, भगवती मैया भोग लगा रही है। लाल होठों पर गोरस का परस! ...पहाड़ी तोते को दूध ा–भात खाते देखा है?

दिन ढल गया।

टप्पर में सोई हीराबाई और जमीन पर दरी बिछा कर सोए हिरामन की नींद एक ही साथ खुली। ...मेले की ओर जानेवाली गाड़ियाँ तेगछिया के पास रूकी हैं। बच्चे कचर–पचर कर रहे हैं।

टिप्पणी

हिरामन हड़बड़ा कर उठा। टप्पर के अंदर झाँक कर इशारे से कहा – दिन ढल गया! गाड़ी में बैलों को जोतते समय उसने गाड़ीवानों के सवालों का कोई जवाब नहीं दिया। गाड़ी हाँकते हुए बोला, 'सिरपुर बाजार के इसपिताल की डागडरनी हैं। रोगी देखने जा रही हैं। पास ही कुड़मागाम।'

हीराबाई छत्तापुर–पचीरा का नाम भूल गई। गाड़ी जब कुछ दूर आगे बढ़ आई तो उसने हँस कर पूछा, 'पत्तापुर–छपीरा?'

हँसते–हँसते पेट में बल पड़ जाए हिरामन के – 'पत्तापुर–छपीरा! हा–हा। वे लोग छत्तापुर–पचीरा के ही गाड़ीवान थे, उनसे कैसे कहता! ही–ही–ही!'

हीराबाई मुस्कराती हुई गाँव की ओर देखने लगी।

सड़क तेगछिया गाँव के बीच से निकलती है। गाँव के बच्चों ने परदेवाली गाड़ी देखी और तालियाँ बजा–बजा कर रटी हुई पंक्तियाँ दुहराने लगे –

'लाली–लाली डोलिया में

लाली रे दुलहिनिया

पान खाए...!'

हिरामन हँसा। ...दुलहिनिया ...लाली–लाली डोलिया! दुलहिनिया पान खाती है, दुलहा की पगड़ी में मुँह पोंछती है। ओ दुलहिनिया, तेगछिया गाँव के बच्चों को याद रखना। लौटती बेर गुड़ का लड्डू लेती आइयो। लाख बरिस तेरा दुलहा जीए! ...कितने दिनों का हौसला पूरा हुआ है हिरामन का! ऐसे कितने सपने देखे हैं उसने! वह अपनी दुलहिन को ले कर लौट रहा है। हर गाँव के बच्चे तालियाँ बजा कर गा रहे हैं। हर आँगन से झाँक कर देख रही हैं औरतें। मर्द लोग पूछते हैं, 'कहाँ की गाड़ी है, कहाँ जाएगी? उसकी दुलहिन डोली का परदा थोड़ा सरका कर देखती है। और भी कितने सपने...

गाँव से बाहर निकल कर उसने कनखियों से टप्पर के अंदर देखा, हीराबाई कुछ सोच रही है। हिरामन भी किसी सोच में पड़ गया। थोड़ी देर के बाद वह गुनगुनाने लगा–

'सजन रे झूठ मति बोलो, खुदा के पास जाना है।

नहीं हाथी, नहीं घोड़ा, नहीं गाड़ी –

वहाँ पैदल ही जाना है। सजन रे...।'

हीराबाई ने पूछा, 'क्यों मीता? तुम्हारी अपनी बोली में कोई गीत नहीं क्या?'

हिरामन अब बेखटक हीराबाई की आँखों में आँखें डाल कर बात करता है। कंपनी की औरत भी ऐसी होती है? सरकस कंपनी की मालकिन मेम थी। लेकिन हीराबाई! गाँव की बोली में गीत सुनना चाहती है। वह खुल कर मुस्कराया – 'गाँव की बोली आप समझिएगा?'

'हूँ–ऊँ–ऊँ !' हीराबाई ने गर्दन हिलाई। कान के झुमके हिल गए।

हिरामन कुछ देर तक बैलों को हाँकता रहा चुपचाप। फिर बोला, 'गीत जरूर ही सुनिएगा? नहीं मानिएगा? इस्स! इतना सौक गाँव का गीत सुनने का है आपको! तब लीक छोड़ानी होगी। चालू रास्ते में कैसे गीत गा सकता है कोई!'

टिप्पणी

हिरामन ने बाएँ बैल की रस्सी खींच कर दाहिने को लीक से बाहर किया और बोला, 'हरिपुर हो कर नहीं जाएँगे तब।'

चालू लीक को काटते देख कर हिरामन की गाड़ी के पीछेवाले गाड़ीवान ने चिल्ला कर पूछा, 'काहे हो गाड़ीवान, लीक छोड़ कर बेलीक कहाँ उधर?'

हिरामन ने हवा में दुआली घुमाते हुए जवाब दिया – 'कहाँ है बेलीकी? वह सड़क नननपुर तो नहीं जाएगी।' फिर अपने–आप बड़बड़ाया, 'इस मुलुक के लोगों की यही आदत बुरी है। राह चलते एक सौ जिरह करेंगे। अरे भाई, तुमको जाना है, जाओ। ...देहाती भुच्च सब!'

नननपुर की सड़क पर गाड़ी ला कर हिरामन ने बैलों की रस्सी ढीली कर दी। बैलों ने दुलकी चाल छोड़ कर कदमचाल पकड़ी।

हीराबाई ने देखा, सचमुच नननपुर की सड़क बड़ी सूनी है। हिरामन उसकी आँखों की बोली समझता है – 'घबराने की बात नहीं। यह सड़क भी फारबिसगंज जाएगी, राह–घाट के लोग बहुत अच्छे हैं। ...एक घड़ी रात तक हम लोग पहुँच जाएँगे।'

हीराबाई को फारबिसगंज पहुँचने की जल्दी नहीं। हिरामन पर उसको इतना भरोसा हो गया कि डर–भय की कोई बात नहीं उठती है मन में। हिरामन ने पहले जी–भर मुस्करा लिया। कौन गीत गाए वह! हीराबाई को गीत और कथा दोनों का शौक है ...इस्स! महुआ घटवारिन? वह बोला, 'अच्छा, जब आपको इतना सौक है तो सुनिए महुआ घटवारिन का गीत। इसमें गीत भी है, कथा भी है।'

...कितने दिनों के बाद भगवती ने यह हौसला भी पूरा कर दिया। जै भगवती! आज हिरामन अपने मन को खलास कर लेगा। वह हीराबाई की थमी हुई मुस्कुराहट को देखता रहा।

'सुनिए! आज भी परमार नदी में महुआ घटवारिन के कई पुराने घाट हैं। इसी मुलुक की थी महुआ! थी तो घटवारिन, लेकिन सौ सतवंती में एक थी। उसका बाप दारू–ताड़ी पी कर दिन–रात बेहोश पड़ा रहता। उसकी सौतेली माँ साच्छात राकसनी! बहुत बड़ी नजर–चालाक। रात में गाँजा–दारू–अफीम चुरा कर बेचनेवाले से ले कर तरह–तरह के लोगों से उसकी जान–पहचान थी। सबसे घुट्टा–भर हेल–मेल। महुआ कुमारी थी। लेकिन काम कराते–कराते उसकी हड्डी निकाल दी थी राकसनी ने। जवान हो गई, कहीं शादी–ब्याह की बात भी नहीं चलाई। एक रात की बात सुनिए!'

हिरामन ने धीरे–धीरे गुनगुना कर गला साफ किया –

हे अ–अ–अ– सावना–भादवा के – र– उमड़ल नदिया –गे–में–मैं–यो–ओ–ओ,

मैयो गे रैनि भयावनि–हे–ए–ए–एय

तड़का–तड़के–धड़के करेज–आ–आ मोरा

कि हमहूँ जे बार–नान्ही रे–ए–ए ...।'

ओ माँ! सावन–भादों की उमड़ी हुई नदी, भयावनी रात, बिजली कड़कती है, मैं बारी–क्वारी नन्हीं बच्ची, मेरा कलेजा धड़कता है। अकेली कैसे जाऊँ घाट पर? सो भी

टिप्पणी

परदेशी राही–बटोही के पैर में तेल लगाने के लिए! सत–माँ ने अपनी बज्जर–किवाड़ी बंद कर ली। आसमान में मेघ हड़बड़ा उठे और हरहरा कर बरसा होने लगी। महुआ रोने लगी, अपनी माँ को याद करके। आज उसकी माँ रहती तो ऐसे दुरदिन में कलेजे से सटा कर रखती अपनी महुआ बेटी को। गे मइया, इसी दिन के लिए, यही दिखाने के लिए तुमने कोख में रखा था? महुआ अपनी माँ पर गुस्साई – क्यों वह अकेली मर गई, जी–भर कर कोसती हुई बोली।

हिरामन ने लक्ष्य किया, हीराबाई तकिए पर केहुनी गड़ा कर, गीत में मगन एकटक उसकी ओर देख रही है। ...खोई हुई सूरत कैसी भोली लगती है!

हिरामन ने गले में कँपकँपी पैदा की –

'हूँ–ऊँ–ऊँ–रे डाइनियाँ मैयो मोरी–ई–ई,

नोनवा चटाई काहे नाहिं मारलि सौरी–घर–अ–अ।

एहि दिनवाँ खातिर छिनरो धिया

तेंहु पोसलि कि नेनू–दूध उगटन ..।

हिरामन ने दम लेते हुए पूछा, 'भाखा भी समझती हैं कुछ या खाली गीत ही सुनती हैं?'

हीरा बोली, 'समझती हूँ। उगटन माने उबटन – जो देह में लगाते हैं।'

हिरामन ने विस्मित हो कर कहा, 'इस्स!' ...सो रोने–धोने से क्या होए! सौदागर ने पूरा दाम चुका दिया था महुआ का। बाल पकड़ कर घसीटता हुआ नाव पर चढ़ा और माँझी को हुकुम दिया, नाव खोलो, पाल बाँधो! पालवाली नाव परवाली चिड़िया की तरह उड़ चली। रात–भर महुआ रोती–छटपटाती रही। सौदागर के नौकरों ने बहुत डराया–धमकाया – चुप रहो, नहीं तो उठा कर पानी में फेंक देंगे। बस, महुआ को बात सूझ गई। भोर का तारा मेघ की आड़ से जरा बाहर आया, फिर छिप गया। इधर महुआ भी छपाक से कूद पड़ी पानी में। ...सौदागर का एक नौकर महुआ को देखते ही मोहित हो गया था। महुआ की पीठ पर वह भी कूदा। उलटी धारा में तैरना खेल नहीं, सो भी भरी भादों की नदी में। महुआ असल घटवारिन की बेटी थी। मछली भी भला थकती है पानी में! सफरी मछली–जैसी फरफराती, पानी चीरती भागी चली जा रही है। और उसके पीछे सौदागर का नौकर पुकार–पुकार कर कहता है – 'महुआ जरा थमो, तुमको पकड़ने नहीं आ रहा, तुम्हारा साथी हूँ। जिंदगी–भर साथ रहेंगे हम लोग।' लेकिन...।

हिरामन का बहुत प्रिय गीत है यह। महुआ घटवारिन गाते समय उसके सामने सावन–भादों की नदी उमड़ने लगती है, अमावस्या की रात और घने बादलों में रह–रह कर बिजली चमक उठती है। उसी चमक में लहरों से लड़ती हुई बारी–कुमारी महुआ की झलक उसे मिल जाती है। सफरी मछली की चाल और तेज हो जाती है। उसको लगता है, वह खुद सौदागर का नौकर है। महुआ कोई बात नहीं सुनती। परतीत करती नहीं। उलट कर देखती भी नहीं। और वह थक गया है, तैरते–तैरते।

इस बार लगता है महुआ ने अपने को पकड़ा दिया। खुद ही पकड़ में आ गई है। उसने महुआ को छू लिया है, पा लिया है, उसकी थकन दूर हो गई है। पंद्रह–बीस

टिप्पणी

साल तक उमड़ी हुई नदी की उलटी धारा में तैरते हुए उसके मन को किनारा मिल गया है। आनंद के आँसू कोई भी रोक नहीं मानते।

उसने हीराबाई से अपनी गीली आँखें चुराने की कोशिश की। किंतु हीरा तो उसके मन में बैठी न जाने कब से सब कुछ देख रही थी। हिरामन ने अपनी काँपती हुई बोली को काबू में ला कर बैलों को झिड़की दी – 'इस गीत में न जाने क्या है कि सुनते ही दोनों थसथसा जाते हैं। लगता है, सौ मन बोझ लाद दिया किसी ने।'

हीराबाई लंबी साँस लेती है। हिरामन के अंग–अंग में उमंग समा जाती है।

'तुम तो उस्ताद हो मीता!'

'इस्स!'

आसिन–कातिक का सूरज दो बाँस दिन रहते ही कुम्हला जाता है। सूरज डूबने से पहले ही नननपुर पहुँचना है, हिरामन अपने बैलों को समझा रहा है – 'कदम खोल कर और कलेजा बाँध कर चलो ...ए ...छि ...छि! बढ़के भैयन! ले–ले–ले–ए हे –य!'

नननपुर तक वह अपने बैलों को ललकारता रहा। हर ललकार के पहले वह अपने बैलों को बीती हुई बातों की याद दिलाता – याद नहीं, चौधरी की बेटी की बरात में कितनी गाड़ियाँ थीं, सबको कैसे मात किया था! हाँ, वह कदम निकालो। ले–ले–ले! नननपुर से फारबिसगंज तीन कोस! दो घंटे और!

नननपुर के हाट पर आजकल चाय भी बिकने लगी है। हिरामन अपने लोटे में चाय भर कर ले आया। ...कंपनी की औरत जानता है वह, सारा दिन, घड़ी घड़ी भर में चाय पीती रहती है। चाय है या जान!

हीरा हँसते–हँसते लोट–पोट हो रही है – 'अरे, तुमसे किसने कह दिया कि क्वारे आदमी को चाय नहीं पीनी चाहिए?'

हिरामन लजा गया। क्या बोले वह? ...लाज की बात। लेकिन वह भोग चुका है एक बार। सरकस कंपनी की मेम के हाथ की चाय पी कर उसने देख लिया है। बडी गर्म तासीर!

'पीजिए गुरू जी!' हीरा हँसी!

'इस्स!'

नननपुर हाट पर ही दीया–बाती जल चुकी थी। हिरामन ने अपना सफरी लालटेन जला कर पिछवा में लटका दिया। आजकल शहर से पाँच कोस दूर के गाँववाले भी अपने को शहरू समझने लगे हैं। बिना रोशनी की गाड़ी को पकड़ कर चालान कर देते हैं। बारह बखेड़ा !

'आप मुझे गुरू जी मत कहिए।'

'तुम मेरे उस्ताद हो। हमारे शास्तर में लिखा हुआ है, एक अच्छर सिखानेवाला भी गुरू और एक राग सिखानेवाला भी उस्ताद!'

'इस्स! सास्तर–पुरान भी जानती हैं! ...मैंने क्या सिखाया? मैं क्या ...?'

हीरा हँस कर गुनगुनाने लगी – 'हे–अ–अ–अ– सावना–भादवा के–र ...!'

टिप्पणी

हिरामन अचरज के मारे गूँगा हो गया। ...इस्स! इतना तेज जेहन! हू–ब–हू महुआ घटवारिन!

गाड़ी सीताधार की एक सूखी धारा की उतराई पर गड़गड़ा कर नीचे की ओर उतरी। हीराबाई ने हिरामन का कंधा धर लिया एक हाथ से। बहुत देर तक हिरामन के कंधे पर उसकी उँगलियाँ पड़ी रहीं। हिरामन ने नजर फिरा कर कंधे पर केंद्रित करने की कोशिश की, कई बार। गाड़ी चढाई पर पहुँची तो हीरा की ढीली उँगलियाँ फिर तन गईं।

सामने फारबिसगंज शहर की रोशनी झिलमिला रही है। शहर से कुछ दूर हट कर मेले की रोशनी ...टप्पर में लटके लालटेन की रोशनी में छाया नाचती है आसपास।. .. डबडबाई आँखों से, हर रोशनी सूरजमुखी फूल की तरह दिखाई पड़ती है।

फारबिसगंज तो हिरामन का घर–दुआर है!

न जाने कितनी बार वह फारबिसगंज आया है। मेले की लदनी लादी है। किसी औरत के साथ? हाँ, एक बार। उसकी भाभी जिस साल आई थी गौने में। इसी तरह तिरपाल से गाड़ी को चारों ओर से घेर कर बासा बनाया गया था।

हिरामन अपनी गाड़ी को तिरपाल से घेर रहा है, गाड़ीवान–पट्टी में। सुबह होते ही रौता नौटंकी कंपनी के मैनेजर से बात करके भरती हो जाएगी हीराबाई। परसों मेला खुल रहा है। इस बार मेले में पालचट्टी खूब जमी है। ...बस, एक रात। आज रात–भर हिरामन की गाड़ी में रहेगी वह। ...हिरामन की गाड़ी में नहीं, घर में!

"कहाँ की गाड़ी है? ...कौन, हिरामन! किस मेले से? किस चीज की लदनी है?"

गाँव–समाज के गाड़ीवान, एक–दूसरे को खोज कर, आसपास गाड़ी लगा कर बासा डालते हैं। अपने गाँव के लालमोहर, धुन्नीराम और पलटदास वगैरह गाड़ीवानों के दल को देख कर हिरामन अचकचा गया। उधर पलटदास टप्पर में झाँक कर भड़का। मानो बाघ पर नजर पड़ गई। हिरामन ने इशारे से सभी को चुप किया। फिर गाड़ी की ओर कनखी मार कर फुसफुसाया – 'चुप! कंपनी की औरत है, नौटंकी कंपनी की।'

'कंपनी की –ई–ई–ई!'

' ? ? ...? ? ...!'

एक नहीं, अब चार हिरामन! चारों ने अचरज से एक–दूसरे को देखा। कंपनी नाम में कितना असर है! हिरामन ने लक्ष्य किया, तीनों एक साथ सटक–दम हो गए। लालमोहर ने जरा दूर हट कर बतियाने की इच्छा प्रकट की, इशारे से ही। हिरामन ने टप्पर की ओर मुँह करके कहा, 'होटिल तो नहीं खुला होगा कोई, हलवाई के यहाँ से पक्की ले आवें!'

'हिरामन, जरा इधर सुनो। ...मैं कुछ नहीं खाऊँगी अभी। लो, तुम खा आओ।'

'क्या है, पैसा? इस्स!' ...पैसा दे कर हिरामन ने कभी फारबिसगंज में कच्ची–पक्की नहीं खाई। उसके गाँव के इतने गाड़ीवान हैं, किस दिन के लिए? वह छू नहीं सकता पैसा। उसने हीराबाई से कहा, 'बेकार, मेला–बाजार में हुज्जत मत कीजिए। पैसा

रखिए।' मौका पा कर लालमोहर भी टप्पर के करीब आ गया। उसने सलाम करते हुए कहा, 'चार आदमी के भात में दो आदमी खुसी से खा सकते हैं। बासा पर भात चढा हुआ है। हें–हें–हें! हम लोग एकहि गाँव के हैं। गौंवाँ–गिरामिन के रहते होटिल और हलवाई के यहाँ खाएगा हिरामन?'

टिप्पणी

हिरामन ने लालमोहर का हाथ टीप दिया – 'बेसी भचर–भचर मत बको।'

गाड़ी से चार रस्सी दूर जाते–जाते धुन्नीराम ने अपने कुलबुलाते हुए दिल की बात खोल दी – 'इस्स! तुम भी खूब हो हिरामन! उस साल कंपनी का बाघ, इस बार कंपनी की जनानी!'

हिरामन ने दबी आवाज में कहा, 'भाई रे, यह हम लोगों के मुलुक की जनाना नहीं कि लटपट बोली सुन कर भी चुप रह जाए। एक तो पच्छिम की औरत, तिस पर कंपनी की!'

धुन्नीराम ने अपनी शंका प्रकट की – 'लेकिन कंपनी में तो सुनते हैं पतुरिया रहती है।'

'धत्!' सभी ने एक साथ उसको दुरदुरा दिया, 'कैसा आदमी है! पतुरिया रहेगी कंपनी में भला! देखो इसकी बुद्धि। सुना है, देखा तो नहीं है कभी!'

धुन्नीराम ने अपनी गलती मान ली। पलटदास को बात सूझी – 'हिरामन भाई, जनाना जात अकेली रहेगी गाड़ी पर? कुछ भी हो, जनाना आखिर जनाना ही है। कोई जरूरत ही पड़ जाए!'

यह बात सभी को अच्छी लगी। हिरामन ने कहा, 'बात ठीक है। पलट, तुम लौट जाओ, गाड़ी के पास ही रहना। और देखो, गपशप जरा होशियारी से करना। हाँ!'

हिरामन की देह से अतर–गुलाब की खुशबू निकलती है। हिरामन करमसाँड़ है। उस बार महीनों तक उसकी देह से बघाइन गंध नहीं गई। लालमोहर ने हिरामन की गमछी सूँघ ली – 'ए–ह!'

हिरामन चलते–चलते रूक गया – 'क्या करें लालमोहर भाई, जरा कहो तो! बड़ी जिद्द करती है, कहती है, नौटंकी देखना ही होगा।'

'फोकट में ही?'

'और गाँव नहीं पहुँचेगी यह बात?'

हिरामन बोला, 'नहीं जी! एक रात नौटंकी देख कर जिंदगी–भर बोली–ठोली कौन सुने? ...देसी मुर्गी विलायती चाल!'

धुन्नीराम ने पूछा, 'फोकट में देखने पर भी तुम्हारी भौजाई बात सुनाएगी?'

लालमोहर के बासा के बगल में, एक लकड़ी की दुकान लाद कर आए हुए गाड़ीवानों का बासा है। बासा के मीर–गाड़ीवान मियाँजान बूढ़े ने सफरी गुड़गुड़ी पीते हुए पूछा, 'क्यों भाई, मीनाबाजार की लदनी लाद कर कौन आया है?'

मीनाबाजार! मीनाबाजार तो पतुरिया–पट्टी को कहते हैं। ...क्या बोलता है यह बूढ़ा मियाँ? लालमोहर ने हिरामन के कान में फुसफुसा कर कहा, 'तुम्हारी देह मह–मह–महकती है। सच!'

टिप्पणी

लहसनवाँ लालमोहर का नौकर–गाड़ीवान है। उम्र में सबसे छोटा है। पहली बार आया है तो क्या? बाबू–बबुआइनों के यहाँ बचपन से नौकरी कर चुका है। वह रह–रह कर वातावरण में कुछ सूँघता है, नाक सिकोड़ कर। हिरामन ने देखा, लहसनवाँ का चेहरा तमतमा गया है। कौन आ रहा है धड़धड़ाता हुआ? – 'कौन, पलटदास? क्या है?'

पलटदास आ कर खड़ा हो गया चुपचाप। उसका मुँह भी तमतमाया हुआ था। हिरामन ने पूछा, 'क्या हुआ? बोलते क्यों नहीं?'

क्या जवाब दे पलटदास! हिरामन ने उसको चेतावनी दे दी थी, गपशप होशियारी से करना। वह चुपचाप गाड़ी की आसनी पर जा कर बैठ गया, हिरामन की जगह पर। हीराबाई ने पूछा, 'तुम भी हिरामन के साथ हो?' पलटदास ने गरदन हिला कर हामी भरी। हीराबाई फिर लेट गई। ...चेहरा–मोहरा और बोली–बानी देख–सुन कर, पलटदास का कलेजा काँपने लगा, न जाने क्यों। हाँ! रामलीला में सिया सुकुमारी इसी तरह थकी लेटी हुई थी। जै! सियावर रामचंद्र की जै! ...पलटदास के मन में जै–जैकार होने लगा। वह दास–वैस्नव है, कीर्तनिया है। थकी हुई सीता महारानी के चरण टीपने की इच्छा प्रकट की उसने, हाथ की उँगलियों के इशारे से, मानो हारमोनियम की पटरियों पर नचा रहा हो। हीराबाई तमक कर बैठ गई – 'अरे, पागल है क्या? जाओ, भागो!...'

पलटदास को लगा, गुस्साई हुई कंपनी की औरत की आँखों से चिनगारी निकल रही है – छटक्–छटक्! वह भागा।

पलटदास क्या जवाब दे! वह मेला से भी भागने का उपाय सोच रहा है। बोला, 'कुछ नहीं। हमको व्यापारी मिल गया। अभी ही टीसन जा कर माल लादना है। भात में तो अभी देर हैं। मैं लौट आता हूँ तब तक।'

खाते समय धुन्नीराम और लहसनवाँ ने पलटदास की टोकरी–भर निंदा की। छोटा आदमी है। कमीना है। पैसे–पैसे का हिसाब जोड़ता है। खाने–पीने के बाद लालमोहर के दल ने अपना बासा तोड़ दिया। धुन्नी और लहसनवाँ गाड़ी जोत कर हिरामन के बासा पर चले, गाड़ी की लीक धर कर। हिरामन ने चलते–चलते रूक कर, लालमोहर से कहा, 'जरा मेरे इस कंधे को सूँघो तो। सूँघ कर देखो न?'

लालमोहर ने कंधा सूँघ कर आँखे मूँद लीं। मुँह से अस्फुट शब्द निकला – ए – ह!'

हिरामन ने कहा, 'जरा–सा हाथ रखने पर इतनी खुशबू! ...समझे!' लालमोहर ने हिरामन का हाथ पकड़ लिया – 'कंधे पर हाथ रखा था, सच? ...सुनो हिरामन, नौटंकी देखने का ऐसा मौका फिर कभी हाथ नहीं लगेगा। हाँ!'

'तुम भी देखोगे?' लालमोहर की बत्तीसी चौराहे की रोशनी में झिलमिला उठी।

बासा पर पहुँच कर हिरामन ने देखा, टप्पर के पास खड़ा बतिया रहा है कोई, हीराबाई से। धुन्नी और लहसनवाँ ने एक ही साथ कहा, 'कहाँ रह गए पीछे? बहुत देर से खोज रही है कंपनी...!'

हिरामन ने टप्पर के पास जा कर देखा – अरे, यह तो वही बक्सा ढोनेवाला नौकर, जो चंपानगर मेले में हीराबाई को गाड़ी पर बिठा कर अँधेरे में गायब हो गया था।

टिप्पणी

'आ गए हिरामन! अच्छी बात, इधर आओ। ...यह लो अपना भाड़ा और यह लो अपनी दच्छिना! पच्चीस–पच्चीस, पचास।'

हिरामन को लगा, किसी ने आसमान से धकेल कर धरती पर गिरा दिया। किसी ने क्यों, इस बक्सा ढोनेवाले आदमी ने। कहाँ से आ गया? उसकी जीभ पर आई हुई बात जीभ पर ही रह गई ...इस्स! दच्छिना! वह चुपचाप खड़ा रहा।

हीराबाई बोली, 'लो पकड़ो! और सुनो, कल सुबह रौता कंपनी में आ कर मुझसे भेंट करना। पास बनवा दूँगी। ...बोलते क्यों नहीं?'

लालमोहर ने कहा, 'इलाम–बकसीस दे रही है मालकिन, ले लो हिरामन! हिरामन ने कट कर लालमोहर की ओर देखा। ...बोलने का जरा भी ढंग नहीं इस लालमोहरा को।'

धुन्नीराम की स्वगतोक्ति सभी ने सुनी, हीराबाई ने भी – गाड़ी–बैल छोड़ कर नौटंकी कैसे देख सकता है कोई गाड़ीवान, मेले में?

हिरामन ने रूपया लेते हुए कहा, 'क्या बोलेंगे!' उसने हँसने की चेष्टा की। कंपनी की औरत कंपनी में जा रही है। हिरामन का क्या! बक्सा ढोनेवाला रास्ता दिखाता हुआ आगे बढ़ा – 'इधर से।' हीराबाई जाते–जाते रूक गई। हिरामन के बैलों को संबोधित करके बोली, 'अच्छा, मैं चली भैयन।'

बैलों ने, भैया शब्द पर कान हिलाए।

'? ? ..!'

'भा–इ–यो, आज रात! दि रौता संगीत कंपनी के स्टेज पर! गुलबदन देखिए, गुलबदन! आपको यह जान कर खुशी होगी कि मथुरामोहन कंपनी की मशहूर एक्ट्रेस मिस हीरादेवी, जिसकी एक–एक अदा पर हजार जान फिदा हैं, इस बार हमारी कंपनी में आ गई हैं। याद रखिए। आज की रात। मिस हीरादेवी गुलबदन...!'

नौटंकीवालों के इस एलान से मेले की हर पट्टी में सरगर्मी फैल रही है। ... हीराबाई? मिस हीरादेवी? लैला, गुलबदन...? फिलिम एक्ट्रेस को मात करती है।

तेरी बाँकी अदा पर मैं खुद हूँ फिदा,

तेरी चाहत को दिलबर बयाँ क्या करूँ!

यही ख्वाहिश है कि इ–इ–इ तू मुझको देखा करे

और दिलोजान मैं तुमको देखा करूँ।

...किर्र–र्र–र्र–र्र ...कडड़ड़ड़डड़र्र–ई–घन–घन–धड़ाम।

हर आदमी का दिल नगाड़ा हो गया है।

लालमोहर दौड़ता–हाँफता बासा पर आया – 'ऐ, ऐ हिरामन, यहाँ क्या बैठे हो, चल कर देखो जै–जैकार हो रहा है! मय बाजा–गाजा, छापी–फाहरम के साथ हीराबाई की जै–जै कर रहा हूँ।'

हिरामन हड़बड़ा कर उठा। लहसनवाँ ने कहा, 'धुन्नी काका, तुम बासा पर रहो, मैं भी देख आऊँ।'

टिप्पणी

धुन्नी की बात कौन सुनता है। तीनों जन नौटंकी कंपनी की एलानिया पार्टी के पीछे–पीछे चलने लगे। हर नुक्कड़ पर रूक कर, बाजा बंद कर के एलान किया जाना है। एलान के हर शब्द पर हिरामन पुलक उठता है। हीराबाई का नाम, नाम के साथ अदा–फिदा वगैरह सुन कर उसने लालमोहर की पीठ थपथपा दी – 'धन्न है, धन्न है! है या नहीं?'

लालमोहर ने कहा, 'अब बोलो! अब भी नौटंकी नहीं देखोगे?' सुबह से ही धुन्नीराम और लालमोहर समझा रहे थे, समझा कर हार चुके थे – 'कंपनी में जा कर भेंट कर आओ। जाते–जाते पुरसिस कर गई है।' लेकिन हिरामन की बस एक बात – 'धत्त, कौन भेंट करने जाए! कंपनी की औरत, कंपनी में गई। अब उससे क्या लेना–देना! चीन्हेगी भी नहीं!'

वह मन–ही–मन रूठा हुआ था। एलान सुनने के बाद उसने लालमोहर से कहा, 'जरूर देखना चाहिए, क्यों लालमोहर?'

दोनों आपस में सलाह करके रौता कंपनी की ओर चले। खेमे के पास पहुँच कर हिरामन ने लालमोहर को इशारा किया, पूछताछ करने का भार लालमोहर के सिर। लालमोहर कचराही बोलना जानता है। लालमोहर ने एक काले कोटवाले से कहा, 'बाबू साहेब, जरा सुनिए तो!'

काले कोटवाले ने नाक–भौं चढ़ा कर कहा – 'क्या है? इधर क्यों?'

लालमोहर की कचराही बोली गड़बड़ा गई – तेवर देख कर बोला, 'गुलगुल.. नहीं–नहीं ...बुल–बुल ...नहीं ... ।'

हिरामन ने झट–से सम्हाल दिया – 'हीरादेवी किधर रहती हैं, बता सकते हैं?' उस आदमी की आँखें हठात लाल हो गई। सामने खड़े नेपाली सिपाही को पुकार कर कहा, 'इन लोगों को क्यों आने दिया इधर?'

'हिरामन!' ...वही फेनूगिलासी आवाज किधर से आई? खेमे के परदे को हटा कर हीराबाई ने बुलाया – यहाँ आ जाओ, अंदर! ...देखो, बहादुर! इसको पहचान लो। यह मेरा हिरामन है। समझे?'

नेपाली दरबान हिरामन की ओर देख कर जरा मुस्कराया और चला गया। काले कोटवाले से जा कर कहा, 'हीराबाई का आदमी है। नहीं रोकने बोला!'

लालमोहर पान ले आया नेपाली दरबान के लिए – 'खाया जाए!'

'इस्स! एक नहीं, पाँच पास। चारों अठनिया! बोली कि जब तक मेले में हो, रोज रात में आ कर देखना। सबका खयाल रखती है। बोली कि तुम्हारे और साथी है, सभी के लिए पास ले जाओ। कंपनी की औरतों की बात निराली होती है! है या नहीं?'

लालमोहर ने लाल कागज के टुकड़ों को छू कर देखा – 'पा–स! वाह रे हिरामन भाई! ...लेकिन पाँच पास ले कर क्या होगा? पलटदास तो फिर पलट कर आया ही नहीं है अभी तक।'

हिरामन ने कहा, 'जाने दो अभागे को। तकदीर में लिखा नहीं। ...हाँ, पहले गुरूकसम खानी होगी सभी को, कि गाँव–घर में यह बात एक पंछी भी न जान पाए।'

टिप्पणी

लालमोहर ने उत्तेजित हो कर कहा, 'कौन साला बोलेगा, गाँव में जा कर? पलटा ने अगर बदनामी की तो दूसरी बार से फिर साथ नहीं लाऊँगा।'

हिरामन ने अपनी थैली आज हीराबाई के जिम्मे रख दी है। मेले का क्या ठिकाना! किस्म–किस्म के पाकिटकाट लोग हर साल आते हैं। अपने साथी–संगियों का भी क्या भरोसा! हीराबाई मान गई। हिरामन के कपड़े की काली थैली को उसने अपने चमड़े के बक्स में बंद कर दिया। बक्से के ऊपर भी कपड़े का खोल और अंदर भी झलमल रेशमी अस्तर! मन का मान–अभिमान दूर हो गया।

लालमोहर और धुन्नीराम ने मिल कर हिरामन की बुद्धि की तारीफ की, उसके भाग्य को सराहा बार–बार। उसके भाई और भाभी की निंदा की, दबी जबान से। हिरामन के जैसा हीरा भाई मिला है, इसीलिए! कोई दूसरा भाई होता तो... ।'

लहसनवाँ का मुँह लटका हुआ है। एलान सुनते–सुनते न जाने कहाँ चला गया कि घड़ी–भर साँझ होने के बाद लौटा है। लालमोहर ने एक मालिकाना झिड़की दी है, गाली के साथ – 'सोहदा कहीं का!'

धुन्नीराम ने चूल्हे पर खिचड़ी चढ़ाते हुए कहा, 'पहले यह फैसला कर लो कि गाड़ी के पास कौन रहेगा!'

'रहेगा कौन, यह लहसनवाँ कहाँ जाएगा?'

लहसनवाँ रो पड़ा – 'ऐ–ए–ए मालिक, हाथ जोड़ते हैं। एक्को झलक! बस, एक झलक!'

हिरामन ने उदारतापूर्वक कहा, 'अच्छा–अच्छा, एक झलक क्यों, एक घंटा देखना। मैं आ जाऊँगा।'

नौटंकी शुरू होने के दो घंटे पहले ही नगाड़ा बजना शुरू हो जाता है। और नगाड़ा शुरू होते ही लोग पतिंगों की तरह टूटने लगते हैं। टिकटघर के पास भीड़ देख कर हिरामन को बड़ी हँसी आई – 'लालमोहर, उधर देख, कैसी धक्कमधुक्की कर रहे हैं लोग!'

हिरामन भाय!'

'कौन, पलटदास! कहाँ की लदनी लाद आए?' लालमोहर ने पराए गाँव के आदमी की तरह पूछा।

पलटदास ने हाथ मलते हुए माफी माँगी – 'कसूरबार हैं, जो सजा दो तुम लोग, सब मंजूर है। लेकिन सच्ची बात कहें कि सिया सुकुमारी... ।'

हिरामन के मन का पुरइन नगाड़े के ताल पर विकसित हो चुका है। बोला, 'देखो पलटा, यह मत समझना कि गाँव–घर की जनाना है। देखो, तुम्हारे लिए भी पास दिया है, पास ले लो अपना, तमासा देखो।'

लालमोहर ने कहा, 'लेकिन एक सर्त पर पास मिलेगा। बीच–बीच में लहसनवाँ को भी... ।'

पलटदास को कुछ बताने की जरूरत नहीं। वह लहसनवाँ से बातचीत कर आया है अभी।

टिप्पणी

लालमोहर ने दूसरी शर्त सामने रखी – 'गाँव में अगर यह बात मालूम हुई किसी तरह...!'

'राम–राम!' दाँत से जीभ को काटते हुए कहा पलटदास ने।

पलटदास ने बताया – 'अठनिया फाटक इधर है!' फाटक पर खड़े दरबान ने हाथ से पास ले कर उनके चेहरे को बारी–बारी से देखा, बोला, 'यह तो पास है। कहाँ से मिला?'

अब लालमोहर की कचराही बोली सुने कोई! उसके तेवर देख कर दरबान घबरा गया – 'मिलेगा कहाँ से? अपनी कंपनी से पूछ लीजिए जा कर। चार ही नहीं, देखिए एक और है।' जेब से पाँचवा पास निकाल कर दिखाया लालमोहर ने।

एक रूपयावाले फाटक पर नेपाली दरबान खड़ा था। हिरामन ने पुकार कर कहा, 'ए सिपाही दाजू, सुबह को ही पहचनवा दिया और अभी भूल गए?'

नेपाली दरबान बोला, 'हीराबाई का आदमी है सब। जाने दो। पास हैं तो फिर काहे को रोकता है?'

अठनिया दर्जा!

तीनों ने 'कपड़घर' को अंदर से पहली बार देखा। सामने कुरसी–बेंचवाले दर्जे हैं। परदे पर राम–बन–गमन की तसवीर है। पलटदास पहचान गया। उसने हाथ जोड़ कर नमस्कार किया, परदे पर अंकित रामसिया सुकुमारी और लखनलला को। 'जै हो, जै हो!' पलटदास की आँखें भर आई।

हिरामन ने कहा, 'लालमोहर, छापी सभी खड़े हैं या चल रहे हैं?'

लालमोहर अपने बगल में बैठे दर्शकों से जान–पहचान कर चुका है। उसने कहा, 'खेला अभी परदा के भीतर है। अभी जमिनका दे रहा है, लोग जमाने के लिए।'

पलटदास ढोलक बजाना जानता है, इसलिए नगाड़े के ताल पर गरदन हिलाता है और दियासलाई पर ताल काटता है। बीड़ी आदान–प्रदान करके हिरामन ने भी एकाध जान–पहचान कर ली। लालमोहर के परिचित आदमी ने चादर से देह ढकते हुए कहा, 'नाच शुरू होने में अभी देर है, तब तक एक नींद ले लें। ...सब दर्जा से अच्छा अठनिया दर्जा। सबसे पीछे सबसे ऊँची जगह पर है। जमीन पर गरम पुआल! हे–हे! कुरसी–बेंच पर बैठ कर इस सरदी के मौसम में तमासा देखनेवाले अभी घुच–घुच कर उठेंगे चाह पीने।'

उस आदमी ने अपने संगी से कहा, 'खेला शुरू होने पर जगा देना। नहीं–नहीं, खेला शुरू होने पर नहीं, हिरिया जब स्टेज पर उतरे, हमको जगा देना।'

हिरामन के कलेजे में जरा आँच लगी। ...हिरिया! बड़ा लटपटिया आदमी मालूम पड़ता है। उसने लालमोहर को आँख के इशारे से कहा, 'इस आदमी से बतियाने की जरूरत नहीं।'

घन–घन–घन–धड़ाम! परदा उठ गया। हे–ए, हे–ए, हीराबाई शुरू में ही उतर गई स्टेज पर! कपड़घर खचमखच भर गया है। हिरामन का मुँह अचरज में खुल गया। लालमोहर को न जाने क्यों ऐसी हँसी आ रही है। हीराबाई के गीत के हर पद पर वह हँसता है, बेवजह।

टिप्पणी

गुलबदन दरबार लगा कर बैठी है। एलान कर रही है, जो आदमी तख्तहजारा बना कर ला देगा, मुँहमाँगी चीज इनाम में दी जाएगी। ...अजी, है कोई ऐसा फनकार, तो हो जाए तैयार, बना कर लाए तख्तहजारा–आ! किड़किड़–किर्रि–! अलबत्त नाचती है! क्या गला है! मालूम है, यह आदमी कहता है कि हीराबाई पान–बीड़ी, सिगरेट–जर्दा कुछ नहीं खाती! ठीक कहता है। बड़ी नेमवाली रंडी है। कौन कहता है कि रंडी है! दाँत में मिस्सी कहाँ है। पौडर से दाँत धो लेती होगी। हरगिज नहीं। कौन आदमी है, बात की बेबात करता है! कंपनी की औरत को पतुरिया कहता है! तुमको बात क्यों लगी? कौन है रंडी का भड़वा? मारो साले को! मारो! तेरी...।

हो–हल्ले के बीच, हिरामन की आवाज कपड़घर को फाड़ रही है – 'आओ, एक–एक की गरदन उतार लेंगे।'

लालमोहर दुआली से पटापट पीटता जा रहा है सामने के लोगों को। पलटदास एक आदमी की छाती पर सवार है – 'साला, सिया सुकुमारी को गाली देता है, सो भी मुसलमान हो कर?'

धुन्नीराम शुरू से ही चुप था। मारपीट शुरू होते ही वह कपड़घर से निकल कर बाहर भागा।

काले कोटवाले नौटंकी के मैनेजर नेपाली सिपाही के साथ दौड़े आए। दारोगा साहब ने हंटर से पीट–पाट शुरू की। हंटर खा कर लालमोहर तिलमिला उठा, कचराही बोली में भाषण देने लगा – 'दारोगा साहब, मारते हैं, मारिए। कोई हर्ज नहीं। लेकिन यह पास देख लीजिए, एक पास पाकिट में भी हैं। देख सकते हैं हुजूर। टिकट नहीं, पास! ...तब हम लोगों के सामने कंपनी की औरत को कोई बुरी बात करे तो कैसे छोड़ देंगे?'

कंपनी के मैनेजर की समझ में आ गई सारी बात। उसने दारोगा को समझाया – 'हुजूर, मैं समझ गया। यह सारी बदमाशी मथुरामोहन कंपनीवालों की है। तमाशे में झगड़ा खड़ा करके कंपनी को बदनाम ...नहीं हुजूर, इन लोगों को छोड़ दीजिए, हीराबाई के आदमी हैं। बेचारी की जान खतरे में हैं। हुजूर से कहा था न!'

हीराबाई का नाम सुनते ही दारोगा ने तीनों को छोड़ दिया। लेकिन तीनों की दुआली छीन ली गई। मैनेजर ने तीनों को एक रूपएवाले दरजे में कुरसी पर बिठाया –'आप लोग यहीं बैठिए। पान भिजवा देता हूँ।' कपड़घर शांत हुआ और हीराबाई स्टेज पर लौट आई।

नगाड़ा फिर घनघना उठा।

थोड़ी देर बाद तीनों को एक ही साथ धुन्नीराम का खयाल हुआ – अरे, धुन्नीराम कहाँ गया?

'मालिक, ओ मालिक!' लहसनवाँ कपड़घर से बाहर चिल्ला कर पुकार रहा है, 'ओ लालमोहर मा–लि–क...!'

लालमोहर ने तारस्वर में जवाब दिया – 'इधर से, उधर से! एकटकिया फाटक से।' सभी दर्शकों ने लालमोहर की ओर मुड़ कर देखा। लहसनवाँ को नेपाली सिपाही

लालमोहर के पास ले आया। लालमोहर ने जेब से पास निकाल कर दिखा दिया। लहसनवाँ ने आते ही पूछा, 'मालिक, कौन आदमी क्या बोल रहा था? बोलिए तो जरा। चेहरा दिखला दीजिए, उसकी एक झलक!'

टिप्पणी

लोगों ने लहसनवाँ की चौड़ी और सपाट छाती देखी। जाड़े के मौसम में भी खाली देह! ...चेले–चाटी के साथ हैं ये लोग!

लालमोहर ने लहसनवाँ को शांत किया।

तीनों–चारों से मत पूछे कोई, नौटंकी में क्या देखा। किस्सा कैसे याद रहे! हिरामन को लगता था, हीराबाई शुरू से ही उसी की ओर टकटकी लगा कर देख रही है, गा रही है, नाच रही है। लालमोहर को लगता था, हीराबाई उसी की ओर देखती है। वह समझ गई है, हिरामन से भी ज्यादा पावरवाला आदमी है लालमोहर! पलटदास किस्सा समझता है। ...किस्सा और क्या होगा, रमैन की ही बात। वही राम, वही सीता, वही लखनलाल और वही रावन! सिया सुकुमारी को राम जी से छीनने के लिए रावन तरह–तरह का रूप धर कर आता है। राम और सीता भी रूप बदल लेते हैं। यहाँ भी तख्त–हजारा बनानेवाला माली का बेटा राम है। गुलबदन सिया सुकुमारी है। माली के लड़के का दोस्त लखनलला है और सुलतान है रावन। धुन्नीराम को बुखार है तेज! लहसनवाँ को सबसे अच्छा जोकर का पार्ट लगा है ...चिरैया तोंहके लेके ना जइवै नरहट के बजरिया! वह उस जोकर से दोस्ती लगाना चाहता है। नहीं लगावेगा दोस्ती, जोकर साहब?

हिरामन को एक गीत की आधी कड़ी हाथ लगी है – 'मारे गए गुलफाम!' कौन था यह गुलफाम? हीराबाई रोती हुई गा रही थी – 'अजी हाँ, मरे गए गुलफाम!' टिड़िड़िड़ि... बेचारा गुलफाम!

तीनों को दुआली वापस देते हुए पुलिस के सिपाही ने कहा, 'लाठी–दुआली ले कर नाच देखने आते हो?'

दूसरे दिन मेले–भर में यह बात फैल गई – मथुरामोहन कंपनी से भाग कर आई है हीराबाई, इसलिए इस बार मथुरामोहन कंपनी नहीं आई है। ...उसके गुंडे आए हैं। हीराबाई भी कम नहीं। बड़ी खेलाड़ औरत है। तेरह–तेरह देहाती लठैत पाल रही है। ...वाह मेरी जान भी कहे तो कोई! मजाल है!

दस दिन... दिन–रात...!

दिन–भर भाड़ा ढोता हिरामन। शाम होते ही नौटंकी का नगाड़ा बजने लगता। नगाड़े की आवाज सुनते ही हीराबाई की पुकार कानों के पास मँडराने लगती – भैया ...मीता ...हिरामन ...उस्ताद गुरू जी! हमेशा कोई–न–कोई बाजा उसके मन के कोने में बजता रहता, दिन–भर। कभी हारमोनियम, कभी नगाड़ा, कभी ढोलक और कभी हीराबाई की पैजनी। उन्हीं साजों की गत पर हिरामन उठता–बैठता, चलता–फिरता। नौटंकी कंपनी के मैनेजर से ले कर परदा खींचनेवाले तक उसको पहचानते हैं। ... हीराबाई का आदमी है।

पलटदास हर रात नौटंकी शुरू होने के समय श्रद्धापूर्वक स्टेज को नमस्कार करता, हाथ जोड़ कर। लालमोहर, एक दिन अपनी कचराही बोली सुनाने गया था

टिप्पणी

हीराबाई को। हीराबाई ने पहचाना ही नहीं। तब से उसका दिल छोटा हो गया है। उसका नौकर लहसनवाँ उसके हाथ से निकल गया है, नौटंकी कंपनी में भर्ती हो गया है। जोकर से उसकी दोस्ती हो गई है। दिन–भर पानी भरता है, कपड़े धोता है। कहता है, गाँव में क्या है जो जाएँगे! लालमोहर उदास रहता है। धुन्नीराम घर चला गया है, बीमार हो कर।

हिरामन आज सुबह से तीन बार लदनी लाद कर स्टेशन आ चुका है। आज न जाने क्यों उसको अपनी भौजाई की याद आ रही है। ...धुन्नीराम ने कुछ कह तो नहीं दिया है, बुखार की झोंक में! यहीं कितना अटर–पटर बक रहा था – गुलबदन, तख्त–हजारा! लहसनवाँ मौज में है। दिन–भर हीराबाई को देखता होगा। कल कह रहा था, हिरामन मालिक, तुम्हारे अकबाल से खूब मौज में हूँ। हीराबाई की साड़ी धोने के बाद कठौते का पानी अत्तरगुलाब हो जाता है। उसमें अपनी गमछी डुबा कर छोड़ देता हूँ। लो, सूँघोगे? हर रात, किसी–न–किसी के मुँह से सुनता है वह – हीराबाई रंडी है। कितने लोगों से लड़े वह! बिना देखे ही लोग कैसे कोई बात बोलते हैं! राजा को भी लोग पीठ–पीछे गाली देते हैं! आज वह हीराबाई से मिल कर कहेगा, नौटंकी कंपनी में रहने से बहुत बदनाम करते हैं लोग। सरकस कंपनी में क्यों नही काम करती? सबके सामने नाचती है, हिरामन का कलेजा दप–दप जलता रहता है उस समय। सरकस कंपनी में बाघ को ...उसके पास जाने की हिम्मत कौन करेगा! सुरक्षित रहेगी हीराबाई! किधर की गाड़ी आ रही है?

'हिरामन, ए हिरामन भाय!' लालमोहर की बोली सुन कर हिरामन ने गरदन मोड़ कर देखा। ...क्या लाद कर लाया है लालमोहर?

'तुमको ढूँढ़ रही है हीराबाई, इस्टिसन पर। जा रही है।' एक ही साँस में सुना गया। लालमोहर की गाड़ी पर ही आई है मेले से।

'जा रही है? कहाँ? हीराबाई रेलगाड़ी से जा रही है?'

हिरामन ने गाड़ी खोल दी। मालगुदाम के चौकीदार से कहा, 'भैया, जरा गाड़ी–बैल देखते रहिए। आ रहे हैं।'

'उस्ताद!' जनाना मुसाफिरखाने के फाटक के पास हीराबाई ओढ़नी से मुँह–हाथ ढक कर खड़ी थी। थैली बढ़ाती हुई बोली, 'लो! हे भगवान! भेंट हो गई, चलो, मैं तो उम्मीद खो चुकी थी। तुमसे अब भेंट नहीं हो सकेगी। मैं जा रही हूँ गुरू जी!'

बक्सा ढोनेवाला आदमी आज कोट–पतलून पहन कर बाबूसाहब बन गया है। मालिकों की तरह कुलियों को हुकम दे रहा है – 'जनाना दर्जा में चढ़ाना। अच्छा?'

हिरामन हाथ में थैली ले कर चुपचाप खड़ा रहा। कुरते के अंदर से थैली निकाल कर दी है हीराबाई ने। चिड़िया की देह की तरह गर्म है थैली।

'गाड़ी आ रही है।' बक्सा ढोनेवाले ने मुँह बनाते हुए हीराबाई की ओर देखा। उसके चेहरे का भाव स्पष्ट है – इतना ज्यादा क्या है?

हीराबाई चंचल हो गई। बोली, 'हिरामन, इधर आओ, अंदर। मैं फिर लौट कर जा रही हूँ मथुरामोहन कंपनी में। अपने देश की कंपनी है। ...वनैली मेला आओगे न?'

हीराबाई ने हिरामन के कंधे पर हाथ रखा, ...इस बार दाहिने कंधे पर। फिर अपनी थैली से रूपया निकालते हुए बोली, 'एक गरम चादर खरीद लेना...।'

टिप्पणी

हिरामन की बोली फूटी, इतनी देर के बाद – 'इस्स! हरदम रूपैया–पैसा! रखिए रूपैया! क्या करेंगे चादर?'

हीराबाई का हाथ रूक गया। उसने हिरामन के चेहरे को गौर से देखा। फिर बोली, 'तुम्हारा जी बहुत छोटा हो गया है। क्यों मीता? महुआ घटवारिन को सौदागर ने खरीद जो लिया है गुरू जी!'

गला भर आया हीराबाई का। बक्सा ढोनेवाले ने बाहर से आवाज दी – 'गाड़ी आ गई।' हिरामन कमरे से बाहर निकल आया। बक्सा ढोनेवाले ने नौटंकी के जोकर जैसा मुँह बना कर कहा, 'लाटफारम से बाहर भागो। बिना टिकट के पकड़ेगा तो तीन महीने की हवा...।'

हिरामन चुपचाप फाटक से बाहर जा कर खड़ा हो गया। ...टीसन की बात, रेलवे का राज! नहीं तो इस बक्सा ढोनेवाले का मुँह सीधा कर देता हिरामन।

हीराबाई ठीक सामनेवाली कोठरी में चढ़ी। इस्स! इतना टान! गाड़ी में बैठ कर भी हिरामन की ओर देख रही है, टुकुर–टुकुर। लालमोहर को देख कर जी जल उठता है, हमेशा पीछे–पीछे, हरदम हिस्सादारी सूझती है।

गाड़ी ने सीटी दी। हिरामन को लगा, उसके अंदर से कोई आवाज निकल कर सीटी के साथ ऊपर की ओर चली गई – कू–ऊ–ऊ! इ–स्स!

–छी–ई–ई–छक्क! गाड़ी हिली। हिरामन ने अपने दाहिने पैर के अँगूठे को बाएँ पैर की एड़ी से कुचल लिया। कलेजे की धड़कन ठीक हो गई। हीराबाई हाथ की बैंगनी साफी से चेहरा पोंछती है। साफी हिला कर इशारा करती है ...अब जाओ। आखिरी डिब्बा गुजरा, प्लेटफार्म खाली सब खाली ...खोखले ...मालगाड़ी के डिब्बे! दुनिया ही खाली हो गई मानो! हिरामन अपनी गाड़ी के पास लौट आया।

हिरामन ने लालमोहर से पूछा, 'तुम कब तक लौट रहे हो गाँव?'

लालमोहर बोला, 'अभी गाँव जा कर क्या करेंगे? यहाँ तो भाड़ा कमाने का मौका है! हीराबाई चली गई, मेला अब टूटेगा।'

– 'अच्छी बात। कोई संवाद देना है न?

लालमोहर ने हिरामन को समझाने की कोशिश की। लेकिन हिरामन ने अपनी गाड़ी गाँव की ओर जानेवाली सड़क की ओर मोड़ दी। अब मेले में क्या धरा है! खोखला मेला!

रेलवे लाइन की बगल से बैलगाड़ी की कच्ची सड़क गई है दूर तक। हिरामन कभी रेल पर नहीं चढ़ा है। उसके मन में फिर पुरानी लालसा झाँकी, रेलगाड़ी पर सवार हो कर, गीत गाते हुए जगरनाथ–धाम जाने की लालसा। उलट कर अपने खाली टप्पर की ओर देखने की हिम्मत नहीं होती है। पीठ में आज भी गुदगुदी लगती है। आज भी रह–रह कर चंपा का फूल खिल उठता है, उसकी गाड़ी में। एक गीत की टूटी कड़ी पर नगाड़े का ताल कट जाता है, बार–बार!

उसने उलट कर देखा, बोरे भी नहीं, बाँस भी नहीं, बाघ भी नहीं – परी ...देवी ...मीता ...हीरादेवी ...महुआ घटवारिन – को–ई नहीं। मरे हुए मुहर्तों की गूँगी आवाजें

मुखर होना चाहती है। हिरामन के होंठ हिल रहे हैं। शायद वह तीसरी कसम खा रहा है – कंपनी की औरत की लदनी...।

हिरामन ने हठात अपने दोनों बैलों को झिड़की दी, दुआली से मारते हुए बोला, 'रेलवे लाइन की ओर उलट–उलट कर क्या देखते हो?' दोनों बैलों ने कदम खोल कर चाल पकड़ी। हिरामन गुनगुनाने लगा – 'अजी हाँ, मारे गए गुलफाम...!'

टिप्पणी

व्याख्या भाग

1. ''दो कसमें खाई हैं उसने। ..... दूसरे की गाड़ी देखे।

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण हिंदी के एक विशिष्ट कहानीकार और आंचलिक कथाकार फणीश्वरनाथ रेणु की प्रसिद्ध कहानी 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम' से अवतरित है।

प्रसंग– प्रस्तुत कहानी में लेखक ने ग्राम्यांचल में गाड़ी द्वारा माल ढोने वाले एक गाड़ीवान के जीवन के अनुभव को चित्रित किया है।

व्याख्या– प्रस्तुत कहानी में हीरामन नामक एक ग्रामीण बैलगाड़ी द्वारा सामान ढोकर अपना जीवन यापन करता है। वह निश्छल भाव का सीधा–सादा ग्रामीण युवक है। गाड़ीवानी के कटु अनुभवों के आधार पर वह दो कसमें खा चुका है। पहली कसम है कि वह चोरबाजारी का सामान नहीं लादेगा और दूसरी कसम है कि बाँस नहीं लादेगा। अपने हर भाड़ेदार से वह पहले ही पूछ लेता है कि जो सामान लादने के लिए कह रहे हैं वह चोरी का तो नहीं है। इसी प्रकार बाँस के विषय में भी साफ कह देता है। क्योंकि गाड़ी में बाँस लादने से खतरा बढ़ जाता है। चार हाथ बाँस गाड़ी से आगे निकला रहता है और चार हाथ पीछे निकला रहता है। बाँस का अगुआ पकड़कर चलने वाला भाड़ेदार का नौकर रास्ते में इधर–उधर ध्यान बटने पर किसी से भी टक्कर खा सकता है। हीरामन को यदि कोई बाँस लादने के लिए पचास रुपये रिश्वत देने की कोशिश करता है तो भी उसकी गाड़ी नहीं मिलेगी इसके लिए भाड़ेदार को किसी अन्य की गाड़ी देखनी पड़ेगी। नाम के अनुरूप हीरामन सच्चाई के रास्ते पर चलकर अपनी रोजी–रोटी कमाना चाहता है।

विशेष

- भाषा, सरल, सहज और आंचलिकता से युक्त है।
- कहानी में वैचित्र्यपूर्ण सरस शिल्प की संयोजना है।
- मानवीय मनोभावना का सहज चित्रण है।
- अभिधा शब्द शक्ति का प्रयोग है।

2. ''हिरामन के सामने सवाल उपस्थित हुआ, ... दिल खोल गए तो गांव की बोली में ही की जा सकती है, किसी से।''

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण हिन्दी के ग्राम्यांचल के चितेरे विशिष्ट कहानीकार फणीश्वरनाथ रेणु की प्रसिद्ध कहानी 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम' से अवतरित है।

प्रसंग– प्रस्तुत कहानी में लेखक ने सीधे–सादे निश्छल हृदय ग्रामीण युवक के कटु अनुभवों को प्रस्तुत किया है।

टिप्पणी

व्याख्या– भाषा व्यवहार सामाजिक संदर्भों से जुड़कर एक रूप नहीं रह पाता है। वह विषमरूपी हो जाता है। समाज कभी भी एक रूप नहीं होता। वह वर्गों में बंटा होता है। इस दृष्टि से हमारा संबोधन व्यक्ति के व्यवसाय, आयु और उससे हमारे संबंधों पर निर्भर करता है। हिरामन के सामने भी यही प्रश्न उपस्थित हो गया। वह हीराबाई को क्या कहकर संबोधित करे? उसकी भाषा में बड़ों को 'अहाँ' अर्थात् 'आप' कहकर संबोधित किया जाता है। भाषा की यही सामाजिकता है। इसमें अपने बड़ों को आदर देने के लिए 'आप' शब्द का ही प्रयोग उचित है। जैसे–'आप' शब्द को आदरार्थ प्रयोग में लाया जाता है। यह आदर भाव बड़ों के साथ–साथ छोटों के लिए भी हो सकता है और बराबर वालों के लिए भी। यही समस्या हिरामन के सामने थी। कचराही बोली में एक दूसरे के सामने प्रश्नोत्तर रूप में एक दो बातें कही जा सकती हैं, परन्तु अपने दिल की बात निःसंकोच रूप में तो अपनी गाँव की बोली में ही की जा सकती है। इसी से मातृभाषा को महत्त्व दिया जाता है। दिल खोलकर बात करने का आनन्द भी अपनी बोली में है। वहाँ किसी प्रकार का कोई दुराव–छिपाव नहीं होता है।

विशेष

- भाषा, सरल, सहज और प्रवाहमयी है।
- भाषा में आंचलिकता का पुट है।
- हिरामन की निश्छलता को प्रकट किया गया है।
- ग्रामीण युवक हिरामन की सहज उदारता को स्पष्ट किया है।

3. ''लेकिन देवता ने जाते–जाते कहा, ... उसी का मंदिर है।''

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण हिंदी के आंचलिक रचनाकार फणीश्वरनाथ रेणु की श्रेष्ठ कहानी 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम' से अवतरित है।

प्रसंग– इस कहानी में गाँव के भोले–भाले, कर्मठ और सहृदय व्यक्ति हिरामन और हीराबाई के मन में उपजे अनायास भावों को चित्रित किया गया है। यहाँ व्यक्ति के गुणों को अधिक महत्व दिया गया है।

व्याख्या– हिरामन हीराबाई को बीते समय की कोई कथा सुनाता है। उस कथा में देवता को मनुष्य से श्रेष्ठ बताकर महत्त्व दिया गया है। हीराबाई को कथा सुनाते हुए हिरामन का मन पल–पल में बदल रहा है। उसे ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे उसकी गाड़ी में देवकुल की स्त्री सवार है। उसे यह भी विश्वास है कि देवता को देवता ही होते हैं। देवता अपने मुख से जो बात कहते हैं वह पूरी होती है। देवता ने जाते–जाते इस राज को कह दिया कि एक को छोड़कर दो बेटे नहीं होंगे। जिसमें धन और गुण की स्पर्धा है। धन को वे अपने साथ ले जा रहे हैं अर्थात् जो अर्जित किया है वह उनके साथ है। इस संसार में तो वे अपने गुण छोड़ जाते हैं। गुण यानी कि विद्या/और विद्या की देवी सरस्वती है। जब देवता ही सांसारिकता से रूठकर चले जाते हैं तो अन्य देव–देवी भी उसी के साथ चले जाते हैं। वहाँ केवल सरस्वती रह जाती है। अतः उसी के मंदिर को अक्षुण्ण रखा जाता है।

विशेष

- भाषा, सहज, सरल और प्रवाहमयी है।

टिप्पणी

- छोटे वाक्यों और सरल शब्दावली में गूढ़ भावों की अभिव्यंजना हुई है।
- हीराबाई के मन के भावों का चित्रांकन है।
- अभिधा एवं व्यंजना शब्द शक्ति का प्रयोग हुआ है।
- व्याख्यात्मक शैली है।

4. "ओ माँ। सावन–भादों की उमड़ी हुई नदी, ... घटवारिन रोने लगी, अपनी माँ को याद करके।

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण हिंदी साहित्य के विशिष्ट कथा–शिल्पी और आंचलित संवेदनाओं के चितेरे फणीश्वरनाथ रेणु की विशिष्ट कहानी 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम' से अवतरित है।

प्रसंग– प्रस्तुत कहानी में हिरामन अपनी मौज में अपने अनुभवों को हीराबाई को सुनाता है और एक गीत के माध्यम से ग्रामीण परिवेश की स्थिति को समझाता है।

व्याख्या– हिरामन अपनी गाड़ी में सवार हीराबाई के चेहरे पर मुस्कराहट देखने और समय व्यतीत करने के उद्देश्य से गाँव की बात सुनाता है। उसे पता है कि हीराबाई को गीत और कथा दोनों ही पसंद हैं। इस बात से उसे संतुष्टि होती है कि वह हीराबाई के चेहरे पर मुस्कराहट देखेगा। वह हीराबाई को महुआ घटवारिन के जीवन की घटना बताने के लिए एक गीत सुनाता है। महुआ घटवारिन जैसे काम करते–करते जवान हो गई। कहीं शादी–ब्याह की बात भी नहीं चली। उसके जीवन में क्या हुआ यही बात लेकर वह गीत गुनगुनाता है। एक रात सावन–भादों के महीने में नदी उमड़ रही थी। बिजली कड़क रही थी, डर के मारे महुआ का कलेजा काँप रहा था। वह घाट पर जाने में संकोच कर रही थी। कोई साथ नहीं था। अकेली कैसे जाए? तब वह अपनी माँ को याद कर रोने लगी। यदि आज उसकी माँ होती उसे अपनी गोद में बैठाकर रखती। महुआ यही सोचकर दुखी है कि उसकी माँ अकेले कैसे मर गई और उसे इस संसार में दुखी होने के लिए छोड़ गई। हीराबाई एकटक इस गीत को सुनती रही है।

विशेष

- भाषा, सहज, सरल और भाषानुकूल है।
- भाषा में आंचलिकता के शब्दों का प्रयोग है।
- प्रकृति का सजीव चित्र है।
- भाव, भाषा और शैली की त्रिवेणी का अनूठा संगम है।
- अभिधा और व्यंजना शब्द शक्ति का प्रयोग है।

5. "हिरामन का बहुत प्रिय गीत है यह। ..... महुआ कोई बात नहीं सुनती।

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण ग्राम्यांचल के चितेरे फणीश्वरनाथ रेणु की प्रसिद्ध कहानी 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम' से अवतरित है।

प्रसंग– यह अवतरण एक गीत के माध्यम से ग्राम बाला महुआ के जीवन को स्पष्ट करता है। इससे महुआ के जीवन की उस विडम्बना को बताया है जिसमें वह सौदागर के हाथों बिक गई थी और अपना जीवन समाप्त करना चाहता थी।

टिप्पणी

व्याख्या– हिरामन इस गीत को बहुत ही मस्ती के साथ गाता था। वह गीत उसे बहुत प्रिय था क्योंकि इसमें एक ग्रामीण लड़की महुआ के जीवन के संघर्ष को प्रस्तुत किया गया था। महुआ घटवारिन जब उसे गाती थी तब उसमें प्रकृति के मनोहर रूप को सामने देखती थी। सावन–भादों में जब वर्षा की झड़ी लगती है। वर्षा के जल से नदी उमड़ने लगती है। अमावस्या की रात और घने बादलों के बीच बिजली रह रहकर चमकती है। उसी चमक में लहरों के बीच संघर्ष करती हुई कुमारी महुआ की झलक उसे मिलती है। प्रकृति मनुष्य को संघर्ष करना सिखा देती है। पानी में रहने वाली मछली विपरीत परिस्थितियों में संघर्ष करती है और पानी की धारा के विपरीत तेज चाल से आगे बढ़ती जाती है। सौदागर का नौकर पानी में कूदने वाली महुआ को बचाने का प्रयत्न करता है। महुआ उससे अपने आपको बचाने का प्रयत्न करती थी। वह उस पर विश्वास नहीं करती है। फिर भी कुछ मन में आते ही वह उस नौकर की पकड़ में आ जाती है। उसे जैसे जीवन की नदी की विपरीत धारा में तैरते हुए एक किनारा मिल गया है।

विशेष

- भाषा, सरल, सहज और प्रभावी है। भावानुकूल है।
- गीत में प्रकृति के मनोहर रूप का चित्रण है।
- भाव, भाषा और शैली की त्रिवेणी का अनूठा संगम है।
- अभिधा, व्यंजना शब्द शक्ति का प्रयोग है।
- माधुर्य गुण है।

6. ''तीनों चारों से मत पूछे कोई, ... हिरामन से भी ज्यादा पावरवाला आदमी है लालमोहर।''

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण हिंदी के ग्रामांचल भावों के चितेरे फणीश्वरनाथ रेणु की प्रसिद्ध कहानी 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम से अवतरित है।

प्रसंग– प्रस्तुत कहानी में ग्रामीण क्षेत्र में आई नौटंकी तमाशे में कुछ उद्दण्ड लोगों द्वारा की गई शरारत का चित्रण ही कुछ लोग कंपनी के खेल को बिगाड़ने और बदनाम करने का प्रयास करते हैं।

व्याख्या– तीन चार शरारती किस्म के व्यक्ति नौटंकी के खेल में पहुंचते हैं। वस्तुतः वे मनचले हैं जो हीराबाई के सुंदर रूप और उसके गीत पर आकर्षित हैं। खेल शुरू होने से पहले ही वे अपने क्रियाकलाप शुरू कर देते हैं। पुलिस आकर उनको पकड़ती है परन्तु जब कम्पनी का मैनेजर दारोगा जी को समझाता है कि ये हीराबाई के आदमी हैं और उन्हीं की रक्षा में तैनात रहते हैं तब उन्हें छोड़कर अलग बैठाया जाता है। मैनेजर उन्हें एक रुपये वाले दरजे में बैठाता है। तभी वहां लहसनवाँ आकर सभी को अपने रौब से शांत करता है। उन तीनों चारों से कोई क्या पूछेगा। उन्हें कुछ पता नहीं कि नौटंकी में क्या हुआ। वे तो अपनी मस्ती में थे। उन्हें नौटंकी के किस्से की क्या याद रहती। इसके विपरीत हिरामन शुरू से ही हीराबाई के सुंदर रूप की ओर मोहित था और टकटकी लगाकर उसी ओर देख रहा था। हीराबाई नाच रही थी, गा रही थी।

लाल मोहर को लगता था कि हीराबाई उसे देख रही है। हीराबाई यह समझ रही है कि यह लाल मोहर हिरामन से भी अधिक पावर वाला आदमी है। ये नाचने गाने वाले समाज के शक्तिशाली व्यक्तियों की ओर अधिक झुकते हैं। शक्ति को सभी सलाम करते हैं।

विशेष

- भाषा, सहज, सरल और प्रवाहमयी है।
- नौटंकी के कलाकार की महत्ता को दर्शाया है।
- ग्रामीण लोगों के मनोरंजन के साधन को स्पष्ट किया है।
- भाव, भाषा और शैली की त्रिवेणी का संगम है।

7. ''उसने उलट कर देखा, ... शायद वह तीसरी कसम खा रहा है–कम्पनी की औरत की लदनी....।''

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण हिंदी के विशिष्ट का कथाकार, अभिनव रचना धार्मिक के पोषक और ग्राम्यांचल के चितेरे फणीश्वरनाथ रेणु की प्रसिद्ध कहानी 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम' से अवतरित है।

प्रसंग– इस कहानी में लेखक ने बैलगाड़ी चलाने वाले गाड़ीवान हिरामन के जीवन के कटु अनुभव को चित्रित किया है जिसें वह अपने अनुभव के आधार पर तीन कार्य न करने की तीन कसम खाता है।

व्याख्या– लेखक का कथन है कि नौटंकी का खेल खत्म होने पर हीराबाई भी अपने साथियों के साथ अन्य स्थान पर जा रही है। हिरामन रेलवे लाइन के बगल से जाने वाली सड़क पर अपनी बैलगाड़ी लेकर कच्ची सड़क से जाता है। वह कभी रेलगाड़ी में नहीं बैठा। फिर भी उसके मन में यह लालसा थी। वह किसी गीत के बोल मन में लाता है।

हिरामन उलटकर देखता है कि उसकी गाड़ी में न तो बोरे हैं और न बांस है, कम्पनी के जानवर बाघ भी नहीं हैं। कम्पनी की परी, देवी, हीरादेवी, महुआ घटवारिन कोई नहीं है। उसने अपने जीवन के कटु अनुभव के आधार पर दो कसमें खाई थीं कि चोरबाजारी का माल नहीं लादेगा और बांस नहीं लादेगा। अब वह तीसरी कसम खा रहा है कि कंपनी की औरत की लदनी नहीं करेगा। क्योंकि जिस कंपनी की औरत के लिए उसके दिल में जगह बनी और जिसे वह अधिक चाहने लगा था अब वह भी उसे छोड़कर जा रही है। मन में ऐसा ख्याल आते ही उसने अपने बैलों को झिड़की देते हुए आगे बढ़ने के लिए दुआली मारी। बैलों ने कदम खोलकर चाल पकड़ी। वह गुनगुनाने लगा–''अजी हाँ, मारे गए गुलफाम...?''

विशेष

- भाषा भावानुकूल सहज, सरल और सुबोध है।
- हिरामन के जीवन के कटु अनुभव के आधार पर खाई गई तीनों कसमों की सार्थकता सिद्ध की गई है।

टिप्पणी

- हीराबाई का प्रेमी 'मीता' हिरामन उसे गाड़ी में बैठाने के कारण एकाधिक बार संकटग्रस्त हुआ है।
- अभिधा और व्यंजना शब्द शक्ति का प्रयोग है।

अपनी प्रगति जांचिए

11. हीराबाई हिरामन को क्या कहकर बुलाती है?

(क) मीता (ख) भैयन

(ग) हिरामन (घ) गाड़ीवान

12. हिरामन ने पहली कसम क्या खाई थी?

(क) बांस की लदनी न करने की

(ख) सर्कस की लदनी न करने की

(ग) नाच–गाना–बायस्कोप न देखने की

(घ) चोरबाजारी का माल न लादने की

1.8 चीफ की दावत (भीष्म साहनी) से व्याख्या

मूल पाठ

आज मिस्टर शामनाथ के घर चीफ की दावत थी।

शामनाथ और उनकी धर्मपत्नी को पसीना पोंछने की फुर्सत न थी। पत्नी ड्रेसिंग गाउन पहने, उलझे हुए बालों का जूड़ा बनाए, मुँह पर फैली हुई सुर्खी और पाउडर को मले और मिस्टर शामनाथ सिगरेट–पर–सिगरेट फूँकते हुए, चीजों की फेहरिस्त हाथ में थामे, एक कमरे से दूसरे कमरे में आ–जा रहे थे।

आखिर पाँच बजते–बजते तैयारी मुकम्मल होने लगी। कुर्सियाँ, मेज, तिपाइयाँ, नैपकिन, फूल सब बरामदे में पहुँच गए। ड्रिंक का इंतजाम बैठक में कर दिया गया। अब घर का फालतू सामान अलमारियों के पीछे और पलंगों के नीचे छिपाया जाने लगा, तभी शामनाथ के सामने सहसा एक अड़चन खड़ी हो गई, माँ का क्या होगा?

इस बात की ओर न उनका और न उनकी कुशल गृहिणी का ध्यान गया था। मिस्टर शामनाथ, श्रीमती की ओर घूमकर अंग्रेजी में बोले– 'माँ का क्या होगा।'

श्रीमती काम करते–करते ठहर गईं और थोड़ी देर तक सोचने के बाद बोलीं, "इन्हें पिछवाड़े इनकी सहेली के घर भेज दो, रात–भर बेशक वहीं रहें। कल आ जाएँ।"

शामनाथ सिगरेट मुँह में रखे, सिकुड़ी आँखों से श्रीमती के चेहरे की ओर देखते हुए पल–भर सोचते रहे, फिर सिर हिलाकर बोले, "नहीं, मैं नहीं चाहता कि उस बुढ़िया का आना–जाना यहाँ फिर से शुरू हो। पहले ही बड़ी मुश्किल से बंद किया था। माँ से कहें कि जल्दी की खाना खा के शाम को ही अपनी कोठरी में चली जाएँ। मेहमान कहीं आठ बजे आएँगे। इससे पहले ही अपने काम से निबट लें।"

टिप्पणी

सुझाव ठीक था। दोनों को पसंद आया। मगर फिर सहास श्रीमती बोल उठीं, "जो वह सो गईं और नींद के खर्राटे लेने लगीं, तो? साथ ही तो बरामदा है, जहाँ लोग खाना खाएँगे।"

"तो इन्हें कह देंगे कि अंदर से दरवाजा बंद कर लें। मैं बाहर से ताला लगा दूँगा या माँ को कह देता हूँ कि अंदर जाकर सोएँ नहीं, बैठी रहें और क्या?"

"और जो सो गईं, तो? डिनर का क्या मालूम कब तक चले। ग्यारह–ग्यारह बजे तक तो तुम ड्रिंक ही करते रहते हो।"

शामनाथ कुछ खीज उठे, हाथ झटकते हुए बोले, "अच्छी–भली यह भाई के पास जा रही थीं। तुमने यूँ ही खुद अच्छा बनने के लिए बीच में टाँग अड़ा दी!"

"वाह! तुम माँ और बेटे की बातों में मैं क्यों बुरी बनूँ? तुम जानो और वह जानें।"

मिस्टर शामनाथ चुप रहे। यह मौका बहस का न था, समस्या का हल ढूँढ़ने का था। उन्होंने घूमकर माँ की कोठरी की ओर देखा। कोठारी का दरवाजा बरामदे में खुलता था। बरामदे की ओर देखते हुए झट से बोले, "मैंने साच लिया है" और उन्हीं कदमों माँ की कोठरी के बाहर जा खड़े हुए। माँ दीवार के साथि एक चौकी पर बैठी, दुपट्ट में मुँह–सिर लपेटे, माला जप रही थीं। सुबह से तैयारी होती देखते हुए माँ का भी दिल धड़क रहा था। बेटे के दफ्तर का बड़ासाहब घर पर आ रहा है, सारा काम सुभीते से चल जाए।

"माँ, आज तुम खाना जल्दी खा लेना। मेहमान लोग साढ़े सात बजे आ जाएँगे।"

माँ ने धीरे–से मुँह पर से दुपट्टा हटाया और बेटे को देखते हुए कहा, "आज मुझे खाना नहीं खाना है, बेटा, तुम जानते तो हो, माँस–मछली बने, तो मैं कुछ नहीं खाती।"

"जैसे भी हो, अपने काम से जल्दी निबट लेना।"

"अच्छा बेटा!"

"और माँ, हम लोग पहले बैठक में बैठेंगे। उतनी देर तुम यहाँ बरामदे में बैठना। फिर जब हम यहाँ आ जाएँ, तो तुम गुसलखाने के रास्ते बैठक में चली जाना।"

माँ अवाक् बेटे का चेहरा देखने लगीं। फिर धीरे–से बोलीं, "अच्छा बेटा!"

"और माँ, आज जल्दी सो नहीं जाना! तुम्हारे खर्राटों की आवाज दूर तक जाती है।"

माँ लज्जित–सी आवाज में बोलीं, "क्या करूँ बेटा, मेरे बस की बात नहीं है। जब से बीमारी से उठी हूँ, नाक से साँस नहीं ले सकती।"

मिस्टर शामनाथ ने इंतजाम तो कर दिया, फिर भी उनकी उधेड़बुन खत्म नहीं हुई। जो चीफ अचानक उधर आ निकला तो? आठ–दस मेहमान होंगे, देसी अफसर, उनकी स्त्रियाँ होंगी, कोई भी गुसलखाने की तरफ जा सकता है। क्षोभ और क्रोध में वह फिर झुंझलाने लगे। एक कुर्सी को उठाकर बरामदे में कोठरी के बाहर रखते हुए बोले, "आओ माँ, इस पर जरा बैठो तो।"

टिप्पणी

माँ माला सभालती, पल्ला ठीक करते उठी और धीरे–से कुर्सी पर आकर बैठ गईं।

"यूँ नहीं, माँ, टाँगे ऊपर चढ़ाकर नहीं बैठते। यह खाट नहीं है।"

माँ ने टाँगें नीचे उतार लीं।

"और खुदा के वास्ते नंगे पाँव नहीं घूमना। न ही वह खड़ाऊँ पहनकर सामने आना। किसी दिन तुम्हारी यह खड़ाऊँ उठाकर मैं बाहर फेंक दूँगा।"

माँ चुप रही।

"कपड़े कौन–से पहनोगी, माँ?"

"जो हैं, वही पहनूँगी बेटा! जो कहो, पहन लूँ।"

मिस्टर शामनाथ सिगरेट मुँह में रखे, फिर अधखुली आँखों से माँ की ओर देखने लगे और माँ के कपड़ों की सोचने लगे। शामनाथ हर बात में तरतीब चाहते थे। घर का सब संचालन उनके अपने हाथ में था। खूँटियाँ कमरों में कहाँ लगाई जाएँ, बिस्तर कहाँ पर बिछें, किस रंग के पर्दे लगाए जाएँ, श्रीमती कौन–सी साड़ी पहनें, मेज किस साइज की बनें। शामनाथ की चिंता थी कि अगर चीफ का साक्षात् माँ से हो गया, तो कहीं लज्जित न होना पड़े। माँ को सिर से पाँव तक देखते हुए बोले, "तुम सफेद कमी और सफेद सलवार पहन लो, माँ। पहन के आओ तो, जरा देखूँ।"

माँ धीरे–से उठीं और अपनी कोठरी में कपड़े नहनने चली गईं।

"यह माँ का झमेला ही रहेगा," उन्होंने फिर अंग्रेजी में अपनी स्त्री से कहा, "कोई ढंग की बात हो, तो भी कोई कहे। अगर कहीं कोई उल्टी–सीधी बात हो गई, चीफ को बुरा लगा, तो सारा मजा जाता रहेगा।"

माँ सफेद कमीज और सफेद सलवार पहनकर बाहर निकलीं, छोटा–सा कद, सफेद कपड़ों में लिपटा, छोटा–सा सूखा हुआ शरीर, धुंधली आँखें, केवल सिर के आधे झड़े हुए बाल पल्ले की ओट में छिप पाए थे। पहले से कुछ ही कम कुरूप नजर आ रही थीं।

"चलो, ठीक है। कोई चूड़ियाँ–वूड़ियाँ हों, तो वह भी पहन लो। कोई हर्ज नहीं।"

"चूड़ियाँ कहाँ से लाऊँ, बेटा? तुम तो जानते हो, सब जेवर तुम्हारी पढ़ाई में बिक गए।"

यह वाक्य शामनाथ को तीर की तरह लगा। तिनक कर बोला, "यह कौन–सा राग छेड़ दिया, माँ! सीधा कह दो, नहीं है जेवर, बस! इससे पढ़ाई–वढ़ाई का क्या ताल्लुक है? जो जेवर बिका, तो कुछ बनकर ही आया हूँ, निरा लंडूरा तो नहीं लौट आया। जितना दिया था, उससे दुगना ले लेना।"

"मेरी जीभ जल जाए, बेटा, तुमसे जेवर लूँगी?" मेरे मुँह से यूँ ही निकल गया। जो होते, तो लाख बार पहनती।"

साढ़े पाँच बज चुके थे। अभी मिस्टर शामनाथ को खुद भी नहा–धोकर तैयार होना था। श्रीमती कब की अपने कमरे में जा चुकी थीं। शामनाथ जाते हुए एक बार फिर माँ को हिदायत करते गए, "माँ, रोज की तरह गुमसुम बनके नहीं बैठी रहना।

टिप्पणी

अगर साहब इधर आ निकलें और कोई बात पूछें, तो ठीक तरह से बात का जवाब देना।"

"मैं न पढ़ी, न लिखी, बेटा, मैं क्या बात करूँगी। तुम कह देना, माँ अनपढ़ हैं, कुछ जानती–समझती नहीं। वह नहीं पूछेगा।"

सात बजते–बजते माँ का दिल धक्–धक् करने लगा। अगर चीफ सामने आ गया और उसने कुछ पूछा, तो वह क्या जवाब देंगी, अंग्रेज को तो दूर से ही देखकर वह घबरा उठती थीं, वह तो अमेरिकी है। न मालूम क्या पूछे। मैं क्या कहूँगी। माँ का जी चाहा कि चुपचाप पिछवाड़े विधवा सहेली के घर चली जाएँ। मगर बेटे के हुक्म को कैसे टाल सकती थीं। चुपचाप कुर्सी पर से टाँगे लटकाए वहीं बैठी रहीं।

एक कामयाब पार्टी वह है, जिसमें ड्रिंक कामयाबी से चल जाए। शामनाथ की पार्टी सफलता के शिखर चूमने लगी। वार्तालाप उसी रौ में बह रहा था, जिस रौ में गिलास भरे जा रहे थे। कहीं कोई रुकावट न थी, कोई अड़चन न थी। साहब को व्हिस्की पसंद आई थी। मेरा साहब को पर्दे पसंद आए थे, सोफा–कवर का डिजाइन पसंद आया था, कमरे की सजावट पसंद आई थी। इससे बढ़कर क्या चाहिए। साहब तो ड्रिंक के दूसरे दौर में ही चुटकुले और कहानियाँ कहने लग गए थे। दफ्तर में जितना रौब रखते थे, यहाँ पर उतने ही दोस्त–परवर हो रहे थे और उनकी स्त्री, काला गाउन पहने, गले में सफेद मोतियों का हार, सेण्ट और पाउडर की महक से ओत–प्रोत, कमरे में बैठी सभी देसी स्त्रियों की आराधना का केन्द्र बनी हुई थीं। बात–बात पर हँसती, बात–बात पर सिर हिलातीं और शामनाथ की स्त्री से तो ऐसे बातें कर रही थीं, जैसे उनकी पुरानी सहेली हों।

और इसी रौ में पीते–पिलाते साढ़े दस बज गए। वक्त गुजरते पता ही न चला।

आखिर सब लोग अपने–अपने गिलासों में से आखिरी घूँट पीकर खाना खाने के लिए उठे और बैठक से बाहर निकले। आगे–आगे शामनाथ रास्ता दिखाते हुए, पीछे चीफ और दूसरे मेहमान।

बरामदे में पहुँचते ही शामनाथ सहसा ठिठक गए। जो दृश्य उन्होंने देखा, उससे उनकी टाँगें लड़खड़ा गईं और क्षण–भर में सारा नशा हिरन होने लगा। बरामदे में ऐन कोठड़ी के बाहर माँ अपनी कुर्सी पर ज्यों–की–त्यों बैठी थीं। मगर दोनों पाँव कुर्सी की सीट पर रखे हुए और सिर दायें से बायें और बायें से दायें झूल रहा था और मुँह में से लगातार गहरे खर्राटों की आवाजें आ रही थीं। जब सिर कुछ देर के लिए टेढ़ा होकर एक तरफ को थम जाता, तो खर्राटे और भी गहरे हो उठते और फिर जब झटके से नींद टूटती, तो सिर फिर दायें से बायें झूलने लगता। पल्ला सिर पर से खिसक आया था और माँ के झरे हुए बाल, आधे गंजे सिर पर अस्त–व्यस्त बिखर रहे थे।

देखते ही शामनाथ क्रुद्ध हो उठे। जी चाहा कि माँ को धक्का देकर उठा दें और उन्हें कोठरी में धकेल दें, मगर ऐसा करना संभव न था, चीफ और बाकी मेहमान पास खड़े थे।

माँ को देखते ही अफसरों की कुछ स्त्रियाँ हँस दीं कि इतने में चीफ ने धीरे–से कहा– "पुअर डियर!"

माँ हड़बड़ा के उठ बैठी। सामने खड़े इतने लोगों को देखकर ऐसी घबरायीं कि कुछ कहते न बना। झट–से पल्ला सिर पर रखती हुई खड़ी हो गईं और जमीन को देखने लगीं। उनके पाँव लड़खड़ाने लगे और हाथों की उंगलियाँ थर–थर काँपने लगीं।

टिप्पणी

"माँ, तुम जाके सो जाओ, तुम क्यों इतनी देर तक जाग रही थीं?" और खिसियायी हुई नजरों से शामनाथ चीफ के मुँह की ओर देखने लगे।

चीफ के चेहरे पर मुस्कराहट थी। वह वहीं खड़े–खड़े बोले, "नमस्ते"

माँ ने झिझकते हुए, अपने में सिमटते हुए दोनों हाथ जोड़े, मगर एक हाथ दुपट्टे के अंदर माला को पकड़े हुए था, दूसरा बाहर। ठीक तरह से नमस्ते भी न कर पाईं। शामनाथ इस पर भी खिन्न हो उठे।

इतने में चीफ ने अपना दायाँ हाथ, हाथ मिलाने के लिए माँ के आगे किया। माँ और भी घबरा उठीं।

"माँ, हाथ मिलाओ।"

पर हाथ कैसे मिलातीं? दायें हाथ में तो माला थी। घबराहट में माँ ने बायाँ हाथ ही साहब के दायें हाथ में रख दिया। शामनाथ दिल–ही–दिल में जल उठे। देसी अफसरों की स्त्रियाँ खिलखिलाकर हँस पड़ीं।

"यूँ नहीं, माँ!" तुम तो जानती हो, दायाँ हाथ मिलाया जाता है। दायाँ हाथ मिलाओ।"

मगर तक तक चीफ माँ का बायाँ हाथ ही बार–बार हिलाकर कह रहे थे– "हौ डू यू डू?"

"कहाँ माँ, मैं ठीक हूँ, खैरियत से हूँ।"

माँ कुछ बड़बड़ाई।

"माँ कहती हैं, मैं ठीक हूँ, कहो माँ, हौ डू यू डू!"

माँ धीरे से सकुचाते हुए बोलीं– "हौ डू डू..."

एक बार फिर कहकहा उठा।

वातावरण हल्का होने लगा। साहब ने स्थिति संभाल ली थी। लोग हँसने–चहकने लगे थे। शामनाथ के मन का क्षोभ भी कुछ–कुछ कम होने लगा था।

साहब अपने हाथ में माँ का हाथ अब भी पकड़े हुए थे और माँ सिकुड़ी जा रही थीं। साहब के मुँह से शराब की बू आ रही थी।

शामनाथ अंग्रेजी में बोले, "मेरी माँ गाँव की रहने वाली हैं। उमर–भर गाँव में रहीं हैं। इसलिए आपसे लजाती हैं।"

साहब इस पर खुश नजर आए। बोले, "सच? मुझे गाँव के लोग बहुत पसंद हैं, तब तो तुम्हारी माँ गाँव के गीत और नाच भी जानती होंगी?" चीफ खुशी से सिर हिलाते हुए माँ को टिकटिकी बाँधे देखने लगे।

"माँ, साहब कहते हैं, कोई गाना सुनाओ। कोई पुराना गीत, तुम्हें तो कितने ही याद होंगे।"

टिप्पणी

माँ धीरे–से बोलीं, "मैं क्या गाऊँगी बेटा! मैंने कब गाया है?"

"वाह माँ! मेहमान का कहा भी कोई टालता है?"

"साहब ने इतनी रीझ से कहा है, नहीं गाओगी, तो साहब बुरा मानेंगे।"

"मैं क्या गाऊँ, बेटा, मुझे क्या आता है?"

"वाह! कोई बढ़िया टप्पे सुना दो। दो पत्तर अनारां दे...."

देसी अफसर और उनकी स्त्रियों ने इस सुझाव पर लालियाँ पीटीं। माँ कभी दीन दृष्टि से बेटे के चेहरे को देखती, कभी पास खड़ी बहू के चेहरे को।

इतने में बेटे ने गंभीर आदेश–भरे लहजे में कहा, "माँ!"

इसके बाद हाँ या न का सवाल ही न उठता था। माँ बैठ गई और क्षीण, दुर्बल, लरजती आवाज में एक पुराना विवाह का गीत गाने लगीं–

हरिया नी माये, हरिया नी भैणे

हरिया ते भागी भरिया है!

देसी स्त्रियाँ खिलखिला के हँस उठी। तीन पंक्तियाँ गा माँ चुप हो गईं।

बरामदा तालियों गूँज उठा। साहब तालियाँ पीटना बंद ही न करते थे। शामनाथ की खीज प्रसन्नता और गर्व में बदल उठी थी। माँ ने पार्टी में नया रंग भर दिया था।

तालियाँ थमने पर साहब बोले, "पंजाब के गाँवों की दस्तकारी क्या है?"

शामनाथ खुशी में झूम रहे थे। बोले, "ओ, बहुत कुछ साहब! मैं आपको एक सेट उन चीजों का भेंट करूँगा। आप उन्हें देखकर खुश होंगे।"

मगर साहब ने सिर हिलाकर अंग्रेजी में फिर पूछा, "नहीं, मैं दुकानों की चीज नहीं माँगता, पंजाबियों के घरों में क्या बनता है, औरतें खुद क्या बनाती हैं?"

शामनाथ कुछ सोचते हुए बोले, "लड़कियाँ गुड़ियाँ बनाती हैं, औरतें फुलकारियाँ बनाती हैं।"

"फूलकारी क्या है?"

शामनाथ फुलकारी का मतलब समझाने की असफल चेष्ट करने के बाद माँ को बोले, "क्यों, माँ, कोई पुरानी फुलकारी घर में है?"

माँ चुपचाप अंदर गईं और अपनी पुरानी फुलकारी उठा लाई।

साहब बड़ी रुचि से फुलकारी देखने लगे। पुरानी फलकारी थी, जगह–जगह से उसके तागे टूट रहे थे और कपड़ा फटने लगा था। साहब की रुचि को देखकर शामनाथ बोले, "यह फटी हुई है, साहब, मैं आपको नई बनवा दूँगा। माँ बना देंगी। क्यों, माँ, साहब को फुलकारी बहुत पसंद है, इन्हें ऐसी ही फुलकारी बना दोगी न?"

माँ चुप रहीं। फिर डरते–डरते धीरे–से बोलीं, "अब मेरी नजर कहाँ है, बेटा?" बूढ़ी आँखें क्या देखेंगी।"

मगर माँ का वाक्य बीच ही में तोड़ते हुए शामनाथ साहब को बोले, "वह जरूर बना देंगी, आप उसे देखकर खुश होंगे।"

टिप्पणी

साहब ने सिर हिलाया, धन्यवाद किया और हल्के–हल्के झूमते हुए खाने की मेज की ओर बढ़ गए। बाकी मेहमान भी उनके पीछे–पीछे हो लिए।

जब मेहमान बैठ गए और माँ पर से सबकी आँखें हट गईं, तो माँ धीरे–से कुर्सी पर से उठीं, और सबसे नजरें बचाती हुईं अपनी कोठरी में चली गईं।

मगर कोठरी में बैठने की देर थी कि आँखों से छल–छल आँसू बहने लगे। वह दुपट्टे से बार–बार उन्हें पोंछती पर वह बार–बार उमड़ आते, जैसे बरसों का बाँध तोड़कर उमड़ आए हों। माँ ने बहुतेरा दिल को समझाया, हाथ जोड़े, भगवान का नाम लिया, बेटे के चिरायु होने की प्रार्थना की, बार–बार आंखें बंद कीं, मगर आँसू बरसात के पानी की तरह जैसे थमने में ही न आते थे।

आधी रात का वक्त होगा। मेहमान खाना खाकर एक–एक करके जा चुके थे। माँ दीवार से सटकर बैठी आँखें फाड़े दीवार को देखे जा रही थी। घर के वातावरण में तनाव ढीला पड़ चुका था। मुहल्ले की निस्तब्धता शामनाथ के घर पर भी छा चुकी थी, केवल रसोई में प्लेटों के खनकने की आवाज आ रही थी। तभी सहसा माँ की कोठरी का दरवाजा जोर से खटकने लगा।

"माँ, दरवाजा खोलो।"

माँ का दिल बैठ गया। हड़बड़ाकर उठ बैठी। क्या मुझसे फिर कोई भूल हो गई? माँ कितनी देर से अपने–आपको कोस रही थी कि क्यों उन्हें नींद आ गई, क्यों वह ऊँघने लगी। क्या बेटे ने अभी तक क्षमा नहीं किया? माँ उठीं और काँपते हाथों से दरवाजा खोल दिया।

दरवाजा खुलते ही शामनाथ झूमते हुए आगे बढ़ आए और माँ को आलिंगन में भर लिया।

"ओ अम्मी! तुमने तो आज रंग ला दिया!... साहब तुमसे इतना खुश हुआ कि क्या कहूँ। ओ अम्मी! अम्मी!"

माँ की छोटी–सी काया सिमटकर बेटे के आलिंगन में छिप गई। माँ की आँखों में फिर आँसू आ गए। उन्हें पोंछती हुई धीरे–से बोली, "बेटा, तुम मुझे हरिद्वार भेज दो। मैं कब से कह रही हूँ।"

शामनाथ का झूमना सहसा बंद हो गया और उनकी पेशानी पर फिर तनाव के बल पड़ने लगे। उनकी बाहें माँ के शरीर पर से हट आईं।

"क्या कहा, माँ? यह कौन–सा राग तुमने फिर छेड़ दिया?"

शामनाथ का क्रोध बढ़ने लगा था, बोलते गए– तुम मुझे बदनाम करना चाहती हो, ताकि दुनिया कहे कि बेटा माँ को अपने पास नहीं रख सकता।

"नहीं बेटा, अब तुम अपनी बहू के साथ जैसा मन चाहे रहो। मैंने अपना खा–पहन लिया। अब यहाँ क्या करूँगी। जो थोड़े दिन जिंदगानी के बाकी हैं, भगवान का नाम लूँगी, तुम मुझे हरिद्वार भेज दो।"

"तुम चली जाओगी, तो फुलकारी कौन बनाएगा? साहब से तुम्हारे सामने ही फुलकारी देने का इकरार किया है।"

टिप्पणी

"मेरी आँखें अब नहीं हैं, बेटा, जो फुलकारी बना सकूँ। तुम कहीं और से बनवा लो। बनी–बनाई ले लो।"

"माँ, तुम मुझे धोखा देके यूँ चली जाओगी। मेरा बनता काम बिगाड़ोगी? जानती नहीं, साहब खुश होगा, तो मुझे तरक्की मिलेगी।"

माँ चुप हो गईं। फिर बेटे के मुँह की ओर देखती हुई बोलीं,– "क्या तेरी तरक्की होगी? क्या साहब तेरी तरक्की कर देगा? क्या उसने कुछ कहा?"

"कहा नहीं, मगर देखती नहीं, कितना खुश गया है। कहता था, जब तेरी माँ फुलकारी बनाना शुरू करेंगी, तो मैं देखने आऊँगा कि कैसे बनाती हैं। जो साहब खुश हो गया, तो मुझे इससे बड़ी नौकरी भी मिल सकती है, मैं बड़ा अफसर बन सकता हूँ।"

माँ के चेहरे का रंग बदलने लगा, धीरे–धीरे उसका झुर्रियों–भरा मुँह खिलने लगा, आँखों में हल्की–हल्की चमक आने लगी।

"तो तेरी तरक्की होगी, बेटा?"

"तरक्की यूँ ही हो जाएगी? साहब को खुश रखूँगा, तो कुछ करेगा, वर्ना उसकी खिदमत करने वाले और थोड़े हैं?"

"तो मैं बना दूँगी, बेटा, जैसा बन पड़ेगा, बना दूँगी।"

और माँ दिल–ही–दिल में फिर बेटे के उज्ज्वल भविष्य की कामनाएँ करने लगीं और मिस्टर शामनाथ, "अब सो जाओ मां!" कहते हुए तनिक लड़खड़ाते हुए अपने कमरे की ओर घूम गए।

व्याख्या भाग

1. आखिर पांच बजते–बजते तैयारी मुकम्मल होने लगी। .....
मां का क्या होगा?

संदर्भ–ये पंक्तियां भीष्म साहनी की कहानी 'चीफ की दावत' से ली गई हैं।

प्रसंग–मिस्टर शामनाथ के यहां चीफ की दावत की तैयारियां कुछ यूं चल रही थीं।

व्याख्या–मिस्टर शामनाथ के यहां आज शाम को चीफ की दावत का होना निश्चित हुआ था। सो, मिस्टर शामनाथ और उनकी पत्नी सिर से चोटी तक का जोर लगाकर तैयारियों में जुटे थे। परिणाम, पांच बजे के आस–पास तैयारियां पूर्ण होने को हुईं। पीने–पिलाने का प्रबंध बैठक में किया गया। फर्नीचर, नैपकिन, फूलादि सब बरामदे में एक तरफ रख दिए गए। घर का फालतू सामान इधर–उधर छिपा दिया गया। तभी शामनाथ की निगाह यकायक अपनी बूढ़ी मां पर गई, वे सोचने लगे मां का क्या होगा? मां को चीफ की निगाहों से कैसे, कहां छिपाया जाएगा। यही सब सोच–सोचकर उनका दिमाग चकराने लगा।

विशेष

- स्थिति व वातावरण के अनुकूल शब्द–चयन ने कथा को जीवंत कर दिया है।
- वाक्य रचना लघु व सरल है।
- शब्दों के माध्यम से चित्र उकेर देने की कला में भीष्म साहनी सिद्धहस्त हैं।

2. मिस्टर शामनाथ चुप रहे। ..... सारा काम सुभीते से चल जाये।

संदर्भ– पूर्ववत!

टिप्पणी

प्रसंग– मां को लेकर कि 'मां का क्या किया जाये' पति–पत्नी के बीच कहन–सुनन होने लगी। ऐसे में चीफ के आने का समय होता जानकर शामनाथ बोले–

व्याख्या– पत्नी के मत्थे न लगना उचित समझकर शामनाथ ने चुप ही रहना अच्छा समझा। वह सोचने लगे कि ये अवसर बहस में समय खराब करने का नहीं है–सो वे समस्या के समाधान में फिर लग गए। उनकी निगाह अचानक मां की कोठरी की ओर चली गई। कोठरी का द्वार बरामदे की तरफ खुलता था। सो, बरामदे की तरफ देखकर तुरंत बोले–'मैंने सोच लिया है, ये कहते हुए वे कोठरी के सामने जाकर रुक गए। उन्होंने देखा मां दीवार के साथ चौकी पर बैठी माला जप रही थी। उन्होंने मुंह और सिर अपने दुपट्टे से ढक रखा था। मां सारी तैयारियां होती देख, सोच रही थी; कि कोई बात तो अवश्य है, तभी तो ये दोनों चकरघिन्नी बने हुए हैं। इससे मां के दिल की धड़कन भी तेज हो रही थी। उनको इतनी भनक तो लग ही गई थी कि बेटे का बड़ा साहब दफ्तर से उनके घर आ रहा है। ऐसे में वे शुभ मना रही थी कि सारा कार्य खुशी–खुशी ही हो जाये तो भगवान भला करें।

विशेष

- एक बूढ़ी अनपढ़ माँ का चित्रण बहुत ही सहज और वास्तविक रूप में किया गया है।
- 'यह मौका बहस का न था', इस एक पंक्ति में गिरते मूल्यों की विद्रूपता प्रदर्शित होती है कि किस प्रकार एक पुत्र अपनी बूढ़ी माँ को घर के किसी सामान के दर्जे में रख देता है।

3. सात बजते–बजते मां का दिल धक्–धक् करने लगा। .... चुपचाप कुर्सी पर से टांगें लटकाये वहीं बैठी रहीं।

संदर्भ– पूर्ववत।

प्रसंग– 'चीफ घर आने वाले हैं', यही सब सोच–सोचकर मिस्टर शामनाथ की अनपढ़ बूढ़ी देहाती मां अपनी ही उधेड़–बुन में लगी थी।

व्याख्या– शामनाथ की बूढ़ी मां सोच रही थी। मैं ठहरी बूढ़ी, अनपढ़, अंग्रेजी का फूटा अक्षर न जानने वाली खूसट बूढ़ी। अगर चीफ सामने पड़ ही गया और कुछ पूछ बैठा तो क्या होगा। कारण वह न तो अंग्रेजी जानती और न कभी अंग्रेजों के सामने ही पड़ी थी। यह चीफ ठहरा अमेरिकी तो क्या होगा–कडुवा और नीम चढ़ा। ऐसे में उनका दिल घबराने लगा। ऐसे में उन्होंने सोचा/चाहा कि क्यों न वे चुपचाप पिछवाड़े जाकर विधवा सहेली के यहां ही बैठ जाएं। न होगा बांस, न बजेगी बांसुरी। लेकिन फिर वे सोचने लगी कि वे अपने बेटे के आदेश को कैसे टाल सकती हैं। सो चुपचाप कुर्सी पर टांगें लटकाकर बैठ गईं।

विशेष

- माँ के मनोभावों को बहुत ही सहजता और प्रभावोत्पादकता के साथ लेखक ने कलमबद्ध किया है।

टिप्पणी

- 'बजते–बजते' और 'धक्–धक्' में पुनरुक्ति ने स्थिति की गंभीरता को यथावत प्रस्तुत किया है।

4. बरामदे में पहुंचते ही शामनाथ सहसा ठिठक गए। ..... और मां के झरे हुए बाल, आधे गंजे सिर पर अस्त–व्यस्त बिखर रहे थे।

संदर्भ– पूर्ववत।

प्रसंग– चीफ घर दावत पर आ चुके हैं। पीने–पिलाने के दौर के बाद चीफ बैठक से बाहर आ गए। शामनाथ उनके संग हैं। चीफ के साथ बरामदे में आकर जो दृश्य शामनाथ ने देखा तो वे ठिठक गए, अब आगे–

व्याख्या– बरामदे का दृश्य देखकर मिस्टर शामनाथ की टांगें लड़खड़ा गईं। उनका सारा नशा छू–मन्तर हो गया। मां ठीक कोठरी के सामने कुर्सी पर बैठी थीं। उनके दोनों पांव कुर्सी पर थे। सिर दाएं से बाएं और बाएं से दाएं घूमे जा रहा था। खर्राटों की आवाजें आ रही थीं। सिर रुकते ही खर्राटे और ज्यादा आने लगते। शोर करने लगते। क्षण भर बाद सिर झटके से फिर हिलना शुरू कर देता। ये ही होते–होते बूढ़ी मां का आंचल सिर से खिसक गया। ऐसा हो गया तो मां के झरे हुए बालों के कारण उनका गंजा सिर और उस पर हल्के अस्त–व्यस्त खिचडी बाल दिखायी देने लगे। ये सब दृश्य देखकर मिस्टर शामनाथ का क्रोध आसमान को छूने लगा।

विशेष

- शब्दों से दृश्य को जीवंत रूप इस प्रकार दिया गया है कि पाठक के सम्मुख स्थिति बिल्कुल साफ चित्रित हो जाती है।
- भाषा में मुहावरे के प्रयोग में लेखक की चतुराई द्रष्टव्य है। यथा– 'नशा हिरन होने लगा।

5. साहब बड़ी रुचि से फुलकारी देखने लगे। ..... इन्हें ऐसी ही एक फुलकारी बना दोगी न?''

संदर्भ–पूर्ववत।

प्रसंग– चीफ साहब पुरानी फुलकारी को देखने में व्यस्त हैं। उसी का वर्णन इन पंक्तियों में है–

व्याख्या– चीफ साहब पुरानी फुलकारी को आश्चर्य से निहार रहे हैं। हालांकि पुरानी फुलकारी थी। सो जगह–जगह से उसके तागे निकल रहे थे। कपड़ा भी फट रहा था। लेकिन चीफ साहब की रुचि में कोई कमी न दिखलायी दे रही थी। ये देख शामनाथ चीफ साहब से बोले–साहब, मैं आपको नई बनवा दूंगा। मां बना देंगी। फिर मां से पूछने लगे– "मां ऐसी फुलकारी तो बना दोगी न?'' ये सुनकर मां चुप रही।

विशेष

- लेखक ने शामनाथ का स्वार्थी चरित्र इस प्रकार दिखाया है कि पाठक को अनायास ही शामनाथ से कोफ्त होने लगे।
- छोटे–छोटे लेकिन अपने में पूर्ण वार्तालापों ने कहानी को अद्भुत कसाव दिया है।

अपनी प्रगति जांचिए

13. मिसटर शामनाथ के चीफ किस देश के थे?

(क) अमेरिका (ख) इंग्लैंड

(ग) फ्रांस (घ) जर्मनी

14. चीफ साहब को क्या बहुत पसंद आया था?

(क) दावत (ख) घर

(ग) फुलकारी (घ) शामनाथ की मां

1.9 दोपहर का भोजन (अमरकांत) से व्याख्या

मूल पाठ

सिद्धेश्वरी ने खाना बनाने के बाद चूल्हे को बुझा दिया और दोनों घुटनों के बीच सिर रख कर शायद पैर की उँगलियाँ या जमीन पर चलते चीटें–चीटियों को देखने लगी।

अचानक उसे मालूम हुआ कि बहुत देर से उसे प्यास नहीं लगी है। वह मतवाले की तरह उठी और गगरे से लोटा–भर पानी ले कर गट–गट चढ़ा गई। खाली पानी उसके कलेजे में लग गया और वह हाय राम कह कर वहीं जमीन पर लेट गई।

आधे घंटे तक वहीं उसी तरह पड़ी रहने के बाद उसके जी में जी आया। वह बैठ गई, आँखों को मल–मल कर इधर–उधर देखा और फिर उसकी दृष्टि ओसारे में अध–टूटे खटोले पर सोए अपने छह वर्षीय लड़के प्रमोद पर जम गई।

लड़का नंग–धड़ंग पड़ा था। उसके गले तथा छाती की हड्डियाँ साफ दिखाई देती थीं। उसके हाथ–पैर बासी ककड़ियों की तरह सूखे तथा बेजान पड़े थे और उसका पेट हंडिया की तरह फूला हुआ था। उसका मुख खुला हुआ था और उस पर अनगिनत मक्खियाँ उड़ रही थीं।

वह उठी, बच्चे के मुँह पर अपना एक फटा, गंदा ब्लाउज डाल दिया और एक–आध मिनट सुन्न खड़ी रहने के बाद बाहर दरवाजे पर जा कर किवाड़ की आड़ से गली निहारने लगी। बारह बज चुके थे। धूप अत्यंत तेज थी और कभी एक–दो व्यक्ति सिर पर तौलिया या गमछा रखे हुए या मजबूती से छाता ताने हुए फुर्ती के साथ लपकते हुए–से गुजर जाते।

दस–पंद्रह मिनट तक वह उसी तरह खड़ी रही, फिर उसके चेहरे पर व्यग्रता फैल गई और उसने आसमान तथा कड़ी धूप की ओर चिंता से देखा। एक–दो क्षण बाद उसने सिर को किवाड़ से काफी आगे बढ़ा कर गली के छोर की तरफ निहारा, तो उसका बड़ा लड़का रामचंद्र धीरे–धीरे घर की ओर सरकता नजर आया।

उसने फुर्ती से एक लोटा पानी ओसारे की चौकी के पास नीचे रख दिया और चौके में जा कर खाने के स्थान को जल्दी–जल्दी पानी से लीपने–पोतने लगी। वहाँ

टिप्पणी

पीढ़ा रख कर उसने सिर को दरवाजे की ओर घुमाया ही था कि रामचंद्र ने अंदर कदम रखा।

रामचंद्र आ कर धम–से चौकी पर बैठ गया और फिर वहीं बेजान–सा लेट गया। उसका मुँह लाल तथा चढ़ा हुआ था, उसके बाल अस्त–व्यस्त थे और उसके फटे–पुराने जूतों पर गर्द जमी हुई थी।

सिद्धेश्वरी की पहले हिम्मत नहीं हुई कि उसके पास आए और वहीं से वह भयभीत हिरनी की भाँति सिर उचका–घुमा कर बेटे को व्यग्रता से निहारती रही। किंतु, लगभग दस मिनट बीतने के पश्चात भी जब रामचंद्र नहीं उठा, तो वह घबरा गई। पास जा कर पुकारा – बड़कू, बड़कू! लेकिन उसके कुछ उत्तर न देने पर डर गई और लड़के की नाक के पास हाथ रख दिया। साँस ठीक से चल रही थी। फिर सिर पर हाथ रख कर देखा, बुखार नहीं था। हाथ के स्पर्श से रामचंद्र ने आँखें खोलीं। पहले उसने माँ की ओर सुस्त नजरों से देखा, फिर झट–से उठ बैठा। जूते निकालने और नीचे रखे लोटे के जल से हाथ–पैर धोने के बाद वह यंत्र की तरह चौकी पर आ कर बैठ गया।

सिद्धेश्वर ने डरते–डरते पूछा, "खाना तैयार है। यहीं लगाऊँ क्या?"

रामचंद्र ने उठते हुए प्रश्न किया, "बाबू जी खा चुके?"

सिद्धेश्वरी ने चौके की ओर भागते हुए उत्तर दिया, "आते ही होंगे।"

रामचंद्र पीढ़े पर बैठ गया। उसकी उम्र लगभग इक्कीस वर्ष की थी। लंबा, दुबला–पतला, गोरा रंग, बड़ी–बड़ी आँखें तथा होठों पर झुर्रियाँ।

वह एक स्थानीय दैनिक समाचार पत्र के दफ्तर में अपनी तबीयत से प्रूफरीडरी का काम सीखता था। पिछले साल ही उसने इंटर पास किया था।

सिद्धेश्वरी ने खाने की थाली सामने ला कर रख दी और पास ही बैठ कर पंखा करने लगी। रामचंद्र ने खाने की ओर दार्शनिक की भाँति देखा। कुल दो रोटियाँ, भर–कटोरा पनियाई दाल और चने की तली तरकारी।

रामचंद्र ने रोटी के प्रथम टुकड़े को निगलते हुए पूछा, "मोहन कहाँ हैं? बड़ी कड़ी धूप हो रही है।"

मोहन सिद्धेश्वरी का मँझला लड़का था। उम्र अठ्ठारह वर्ष थी और वह इस साल हाईस्कूल का प्राइवेट इम्तहान देने की तैयारी कर रहा था। वह न मालूम कब से घर से गायब था और सिद्धेश्वरी को स्वयं पता नहीं था कि वह कहाँ गया है।

किंतु सच बोलने की उसकी तबीयत नहीं हुई और झूठ–मूठ उसने कहा, "किसी लड़के के यहाँ पढ़ने गया है, आता ही होगा। दिमाग उसका बड़ा तेज है और उसकी तबीयत चौबीस घंटे पढ़ने में ही लगी रहती है। हमेशा उसी की बात करता रहता है।"

रामचंद्र ने कुछ नहीं कहा। एक टुकड़ा मुँह में रख कर भरा गिलास पानी पी गया, फिर खाने लग गया। वह काफी छोटे–छोटे टुकड़े तोड़ कर उन्हें धीरे–धीरे चबा रहा था।

टिप्पणी

सिद्धेश्वरी भय तथा आतंक से अपने बेटे को एकटक निहार रही थी। कुछ क्षण बीतने के बाद डरते–डरते उसने पूछा, "वहाँ कुछ हुआ क्या?"

रामचंद्र ने अपनी बड़ी–बड़ी भावहीन आँखों से अपनी माँ को देखा, फिर नीचा सिर करके कुछ रुखाई से बोला, "समय आने पर सब ठीक हो जाएगा।"

सिद्धेश्वरी चुप रही। धूप और तेज होती जा रही थी। छोटे आँगन के ऊपर आसमान में बादल में एक–दो टुकड़े पाल की नावों की तरह तैर रहे थे। बाहर की गली से गुजरते हुए एक खड़खड़िया इक्के की आवाज आ रही थी। और खटोले पर सोए बालक की साँस का खर–खर शब्द सुनाई दे रहा था।

रामचंद्र ने अचानक चुप्पी को भंग करते हुए पूछा, "प्रमोद खा चुका?"

सिद्धेश्वरी ने प्रमोद की ओर देखते हुए उदास स्वर में उत्तर दिया, "हाँ, खा चुका।"

"रोया तो नहीं था?"

सिद्धेश्वरी फिर झूठ बोल गई, "आज तो सचमुच नहीं रोया। वह बड़ा ही होशियार हो गया है। कहता था, बड़का भैया के यहाँ जाऊँगा। ऐसा लड़का..."

पर वह आगे कुछ न बोल सकी, जैसे उसके गले में कुछ अटक गया। कल प्रमोद ने रेवड़ी खाने की जिद पकड़ ली थी और उसके लिए डेढ़ घंटे तक रोने के बाद सोया था।

रामचंद्र ने कुछ आश्चर्य के साथ अपनी माँ की ओर देखा और फिर सिर नीचा करके कुछ तेजी से खाने लगा।

थाली में जब रोटी का केवल एक टुकड़ा शेष रह गया, तो सिद्धेश्वरी ने उठने का उपक्रम करते हुए प्रश्न किया, "एक रोटी और लाती हूँ?"

रामचंद्र हाथ से मना करते हुए हडबड़ा कर बोल पड़ा, "नहीं–नहीं, जरा भी नहीं। मेरा पेट पहले ही भर चुका है। मैं तो यह भी छोड़नेवाला हूँ। बस, अब नहीं।"

सिद्धेश्वरी ने जिद की, "अच्छा आधी ही सही।"

रामचंद्र बिगड़ उठा, "अधिक खिला कर बीमार कर डालने की तबीयत है क्या? तुम लोग जरा भी नहीं सोचती हो। बस, अपनी जिद। भूख रहती तो क्या ले नहीं लेता?"

सिद्धेश्वरी जहाँ–की–तहाँ बैठी ही रह गई। रामचंद्र ने थाली में बचे टुकड़े से हाथ खींच लिया और लोटे की ओर देखते हुए कहा, "पानी लाओ।"

सिद्धेश्वरी लोटा ले कर पानी लेने चली गई। रामचंद्र ने कटोरे को उँगलियों से बजाया, फिर हाथ को थाली में रख दिया। एक–दो क्षण बाद रोटी के टुकड़े को धीरे–से हाथ से उठा कर आँख से निहारा और अंत में इधर–उधर देखने के बाद टुकड़े को मुँह में इस सरलता से रख लिया, जैसे वह भोजन का ग्रास न हो कर पान का बीड़ा हो।

मँझला लड़का मोहन आते ही हाथ–पैर धो कर पीढ़े पर बैठ गया। वह कुछ साँवला था और उसकी आँखें छोटी थीं। उसके चेहरे पर चेचक के दाग थे। वह अपने

टिप्पणी

भाई ही की तरह दुबला–पतला था, किंतु उतना लंबा न था। वह उम्र की अपेक्षा कहीं अधिक गंभीर और उदास दिखाई पड़ रहा था।

सिद्धेश्वरी ने उसके सामने थाली रखते हुए प्रश्न किया, "कहाँ रह गए थे बेटा? भैया पूछ रहा था।"

मोहन ने रोटी के एक बड़े ग्रास को निगलने की कोशिश करते हुए अस्वाभाविक मोटे स्वर में जवाब दिया, "कहीं तो नहीं गया था। यहीं पर था।"

सिद्धेश्वरी वहीं बैठ कर पंखा डुलाती हुई इस तरह बोली, जैसे स्वप्न में बड़बड़ा रही हो, "बड़का तुम्हारी बड़ी तारीफ कर रहा था। कह रहा था, मोहन बड़ा दिमागी होगा, उसकी तबीयत चौबीसों घंटे पढ़ने में ही लगी रहती है।" यह कह कर उसने अपने मँझले लड़के की ओर इस तरह देखा, जैसे उसने कोई चोरी की हो।

मोहन अपनी माँ की ओर देख कर फीकी हँसी हँस पड़ा और फिर खाने में जुट गया। वह परोसी गई दो रोटियों में से एक रोटी कटोरे की तीन–चौथाई दाल तथा अधिकांश तरकारी साफ कर चुका था।

सिद्धेश्वरी की समझ में नहीं आया कि वह क्या करे। इन दोनों लड़कों से उसे बहुत डर लगता था। अचानक उसकी आँखें भर आईं। वह दूसरी ओर देखने लगी।

थोड़ी देर बाद उसने मोहन की ओर मुँह फेरा, तो लड़का लगभग खाना समाप्त कर चुका था।

सिद्धेश्वरी ने चौंकते हुए पूछा, "एक रोटी देती हूँ?"

मोहन ने रसोई की ओर रहस्यमय नेत्रों से देखा, फिर सुस्त स्वर में बोला, "नहीं।"

सिद्धेश्वरी ने गिड़गिड़ाते हुए कहा, "नहीं बेटा, मेरी कसम, थोड़ी ही ले लो। तुम्हारे भैया ने एक रोटी ली थी।"

मोहन ने अपनी माँ को गौर से देखा, फिर धीरे–धीरे इस तरह उत्तर दिया, जैसे कोई शिक्षक अपने शिष्य को समझाता है, "नहीं रे, बस, अव्वल तो अब भूख नहीं। फिर रोटियाँ तूने ऐसी बनाई हैं कि खाई नहीं जातीं। न मालूम कैसी लग रही हैं। खैर, अगर तू चाहती ही है, तो कटोरे में थोड़ी दाल दे दे। दाल बड़ी अच्छी बनी है।"

सिद्धेश्वरी से कुछ कहते न बना और उसने कटोरे को दाल से भर दिया।

मोहन कटोरे को मुँह लगा कर सुड़–सुड़ पी रहा था कि मुंशी चंद्रिका प्रसाद जूतों को खस–खस घसीटते हुए आए और राम का नाम ले कर चौकी पर बैठ गए। सिद्धेश्वरी ने माथे पर साड़ी को कुछ नीचे खिसका लिया और मोहन दाल को एक साँस में पी कर तथा पानी के लोटे को हाथ में ले कर तेजी से बाहर चला गया।

दो रोटियाँ, कटोरा–भर दाल, चने की तली तरकारी। मुंशी चंद्रिका प्रसाद पीढ़े पर पालथी मार कर बैठे रोटी के एक–एक ग्रास को इस तरह चुभला–चबा रहे थे, जैसे बूढ़ी गाय जुगाली करती है। उनकी उम्र पैंतालीस वर्ष के लगभग थी, किंतु पचास–पचपन के लगते थे। शरीर का चमड़ा झूलने लगा था, गंजी खोपड़ी आईने की भाँति चमक रही थी। गंदी धोती के ऊपर अपेक्षाकृत कुछ साफ बनियान तार–तार लटक रही थी।

टिप्पणी

मुंशी जी ने कटोरे को हाथ में ले कर दाल को थोडा सुड़कते हुए पूछा, "बड़का दिखाई नहीं दे रहा?"

सिद्धेश्वरी की समझ में नहीं आ रहा था कि उसके दिल में क्या हो गया है – जैसे कुछ काट रहा हो। पंखे को जरा और जोर से घुमाती हुई बोली, "अभी–अभी खा कर काम पर गया है। कह रहा था, कुछ दिनों में नौकरी लग जाएगी। हमेशा, बाबू जी, बाबू जी किए रहता है। बोला, बाबू जी देवता के समान हैं।"

मुंशी जी के चेहरे पर कुछ चमक आई। शरमाते हुए पूछा, "ऐं, क्या कहता था कि बाबू जी देवता के समान हैं? बड़ा पागल है।"

सिद्धेश्वरी पर जैसे नशा चढ़ गया था। उन्माद की रोगिणी की भाँति बड़बड़ाने लगी, "पागल नहीं है, बड़ा होशियार है। उस जमाने का कोई महात्मा है। मोहन तो उसकी बड़ी इज्जत करता है। आज कह रहा था कि भैया की शहर में बड़ी इज्जत होती हैं, पढ़ने–लिखनेवालों में बड़ा आदर होता है और बड़का तो छोटे भाइयों पर जान देता हैं। दुनिया में वह सब कुछ सह सकता है, पर यह नहीं देख सकता कि उसके प्रमोद को कुछ हो जाए।"

मुंशी जी दाल–लगे हाथ को चाट रहे थे। उन्होंने सामने की ताक की ओर देखते हुए हँस कर कहा, "बड़का का दिमाग तो खैर काफी तेज है, वैसे लड़कपन में नटखट भी था। हमेशा खेल–कूद में लगा रहता था, लेकिन यह भी बात थी कि जो सबक मैं उसे याद करने को देता था, उसे बर्राक रखता था। असल तो यह कि तीनों लड़के काफी होशियार हैं। प्रमोद को कम समझती हो?" यह कह कर वह अचानक जोर से हँस पड़े।

मुंशी जी डेढ़ रोटी खा चुकने के बाद एक ग्रास से युद्ध कर रहे थे। कठिनाई होने पर एक गिलास पानी चढ़ा गए। फिर खर–खर खाँस कर खाने लगे।

फिर चुप्पी छा गई। दूर से किसी आटे की चक्की की पुक–पुक आवाज सुनाई दे रही थी और पास की नीम के पेड़ पर बैठा कोई पंडूक लगातार बोल रहा था।

सिद्धेश्वरी की समझ में नहीं आ रहा था कि क्या कहे। वह चाहती थी कि सभी चीजें ठीक से पूछ ले। सभी चीजें ठीक से जान ले और दुनिया की हर चीज पर पहले की तरह धड़ल्ले से बात करे। पर उसकी हिम्मत नहीं होती थी। उसके दिल में जाने कैसा भय समाया हुआ था।

अब मुंशी जी इस तरह चुपचाप दुबके हुए खा रहे थे, जैसे पिछले दो दिनों से मौन–व्रत धारण कर रखा हो और उसको कहीं जा कर आज शाम को तोड़ने वाले हों।

सिद्धेश्वरी से जैसे नहीं रहा गया। बोली, "मालूम होता है, अब बारिश नहीं होगी।"

मुंशी जी ने एक क्षण के लिए इधर–उधर देखा, फिर निर्विकार स्वर में राय दी, "मक्खियाँ बहुत हो गई हैं।"

सिद्धेश्वरी ने उत्सुकता प्रकट की, "फूफा जी बीमार हैं, कोई समाचार नहीं आया।"

टिप्पणी

मुंशी जी ने चने के दानों की ओर इस दिलचस्पी से दृष्टिपात किया, जैसे उनसे बातचीत करनेवाले हों। फिर सूचना दी, 'गंगाशरण बाबू की लड़की की शादी तय हो गई। लड़का एम.ए. पास है।'

सिद्धेश्वरी हठात चुप हो गई। मुंशी जी भी आगे कुछ नहीं बोले। उनका खाना समाप्त हो गया था और वे थाली में बचे–खुचे दानों को बंदर की तरह बीन रहे थे।

सिद्धेश्वरी ने पूछा, "बड़का की कसम, एक रोटी देती हूँ। अभी बहुत–सी हैं।"

मुंशी जी ने पत्नी की ओर अपराधी के समान तथा रसोई की ओर कनखी से देखा, तत्पश्चात किसी छँटे उस्ताद की भाँति बोले, "रोटी? रहने दो, पेट काफी भर चुका है। अन्न और नमकीन चीजों से तबीयत ऊब भी गई है। तुमने व्यर्थ में कसम धरा दी। खैर, कसम रखने के लिए ले रहा हूँ। गुड़ होगा क्या?"

सिद्धेश्वरी ने बताया कि हंडिया में थोडा सा गुड़ है।

मुंशी जी ने उत्साह के साथ कहा, "तो थोडे गुड़ का ठंडा रस बनाओ, पीऊँगा। तुम्हारी कसम भी रह जाएगी, जायका भी बदल जाएगा, साथ–ही–साथ हाजमा भी दुरूस्त होगा। हाँ, रोटी खाते–खाते नाक में दम आ गया है।" यह कह कर वे ठहाका मार कर हँस पड़े।

मुंशी जी के निबटने के पश्चात सिद्धेश्वरी उनकी जूठी थाली ले कर चौके की जमीन पर बैठ गई। बटलोई की दाल को कटोरे में उड़ेल दिया, पर वह पूरा भरा नहीं। छिपुली में थोड़ी–सी चने की तरकारी बची थी, उसे पास खींच लिया। रोटियों की थाली को भी उसने पास खींच लिया। उसमें केवल एक रोटी बची थी। मोटी–भद्दी और जली उस रोटी को वह जूठी थाली में रखने जा रही थी कि अचानक उसका ध्यान ओसारे में सोए प्रमोद की ओर आकर्षित हो गया। उसने लड़के को कुछ देर तक एकटक देखा, फिर रोटी को दो बराबर टुकड़ों में विभाजित कर दिया। एक टुकड़े को तो अलग रख दिया और दूसरे टुकड़े को अपनी जूठी थाली में रख लिया। तदुपरांत एक लोटा पानी ले कर खाने बैठ गई। उसने पहला ग्रास मुँह में रखा और तब न मालूम कहाँ से उसकी आँखों से टप–टप आँसू चूने लगे।

सारा घर मक्खियों से भनभन कर रहा था। आँगन की अलगनी पर एक गंदी साड़ी टँगी थी, जिसमें पैबंद लगे हुए थे। दोनों बड़े लड़कों का कहीं पता नहीं था। बाहर की कोठरी में मुंशी जी औंधे मुँह हो कर निश्चिंतता के साथ सो रहे थे, जैसे डेढ़ महीने पूर्व मकान–किराया–नियंत्रण विभाग की क्लर्की से उनकी छँटनी न हुई हो और शाम को उनको काम की तलाश में कहीं जाना न हो।

व्याख्या भाग

1. सिद्धेश्वरी की पहले हिम्मत नहीं हुई ..... फिर सिर पर हाथ रखकर देखा, बुखार नहीं था।

संदर्भ– प्रस्तुत अंश अमरकांत की बहुप्रसिद्ध कहानी 'दोपहर का भोजन' से व्याख्यार्थ उद्धृत है।

प्रसंग– अमरकांत की प्रसिद्ध कहानी 'दोपहर का भोजन' से लिए गए इस अंश में सिद्धेश्वरी के भय और आशंका को अभिव्यक्ति दी गई है।

टिप्पणी

व्याख्या– रामचंद्र जब फर्श पर निढाल लेट गया और बड़ी देर तक वैसे ही पड़ा रहा तो सिद्धेश्वरी घबरा गई। वह किसी आशंका से इस हद तक ग्रसित हो गई कि उसकी हिम्मत ही नहीं हुई उसके पास तक जाने की। न जाने उसे क्या हो गया हो। बुरे समय में वैसे भी व्यक्ति इस हद तक नकारात्मक हो जाता है कि छोटी से छोटी बात में भी भयानक आशंकाओं को पाल बैठता है। सिद्धेश्वरी से जब नहीं रहा गया तो उसने बेटे की नाक के आगे उंगली लगाकर उसकी सांस जांची। सांस ठीक थी तो उसे लगा कि कहीं बुखार तो नहीं है। किंतु जब उसने सिर छूकर भी देख लिया तो वह आश्वस्त हो गई कि वह ठीक ही है और वह जो कुछ सोच रही थी, वह सिर्फ भ्रम था।

विशेष

- यह भय और आशंका की पराकाष्ठा है कि सिद्धेश्वरी उसकी नाक के आगे उंगली लगाकर यह जांचती है कि उसकी सांसें चल रही हैं अथवा नहीं।

2. सिद्धेश्वरी वहीं बैठकर पंखा डुलाती हुई इस तरह बोली, ... जैसे उसने कोई चोरी की हो।

संदर्भ– पूर्ववत्।

प्रसंग– अमरकांत की प्रसिद्ध कहानी 'दोपहर का भोजन' के इस अंश में सिद्धेश्वरी किसी अनजान आशंका के वशीभूत होकर अपने मंझले बेटे से झूठ कह रही है।

व्याख्या– सिद्धेश्वरी अपने मंझले लड़के मोहन को जब खाना खिलाने बैठी तो वह किसी आशंका के वशीभूत होकर उससे झूठे ही बोलने लगी कि बड़ा भाई तुम्हारी बड़ी प्रशंसा कर रहा था। उसने बताया कि बड़का यह कहकर तुम्हारी तारीफ कर रहा था कि मोहन बड़ा समझदार और बुद्धिमान लड़का साबित होगा और यह भी कि वह बहुत मन लगाकर मेहनत से पढ़ता है। यह कहकर जब उसने मोहन की ओर देखा तो लगा जैसे यह कहकर उसने कोई चोरी करने जैसा काम किया हो। वस्तुतः सिद्धेश्वरी को परिस्थितियों का इतना डर लगा रहता है कि कहीं उसके दोनों लड़कों में किसी बात को लेकर कोई झगड़ा या मनमुटाव न हो जाए। चूंकि ऐसे हालातो में व्यक्ति निराश या हताश होकर चिड़चिड़ा हो जाता है तो ऐसे में कुछ गलत भी घट सकता है।

विशेष

- उपरोक्त गद्यांश में सिद्धेश्वरी के भय, द्वंद्व व आशंकाओं को प्रभावी व गहन सटीकता से चित्रित किया गया है।
- शब्दांकन मार्मिक बन रहा है, जो विडंबना को उभारने में सफल साबित हुआ है।
- आम बोलचाल वाली भाषा का सरल–सहज रूप में प्रयोग किया गया है।

3. मुंशी जी ने उत्साह के साथ कहा, ... यह कहकर वे ठहाका मारकर हंस पड़े।

संदर्भ– पूर्ववत्।

प्रसंग– अमरकांत की प्रसिद्ध कहानी 'दोपहर का भोजन' से लिए गए इस अंश में मुंशी चंद्रिका प्रसाद अपनी भूख के यथार्थ को छिपाने का यत्न कर रहे हैं।

टिप्पणी

व्याख्या– मुंशी चंद्रिका प्रसाद जब दोपहर के भोजन में दो रोटी खा चुके तो सिद्धेश्वरी ने पुत्र की कसम देते हुए एक रोटी और ले लेने का आग्रह किया। चूंकि वह जानती है कि अभी मुंशी जी की भूख नहीं मिटी होगी। लेकिन मुंशी जी ने रोटी लेने से इंकार कर दिया, क्योंकि वे वस्तुस्थिति से भली–भांति परिचित थे। उन्होंने थोड़े से गुड़ का ठंडा रस बनाने को कहा। साथ में वे इसके फायदे भी गिनाने लगे कि इससे स्वाद में भी थोड़ा बदलाव आ जाएगा और पाचन में तो यह सहायक होता ही है। आखिर में मुंशी जी यह कहकर हंस पड़े कि रोटी खाते–खाते वे परेशान हो चुके हैं। उनके इस कथन में नियति की विडंबना स्पष्ट होती है। भूख और रोटी से जुड़ी ऐसी व्यंग्योक्ति अन्यत्र दुर्लभ है।

विशेष

- लेखक ने भूख से संबंधित बेहतरीन व्यंग्योक्ति का प्रयोग किया है– 'हां, रोटी खाते–खाते नाक में दम आ गया है।'
- सरल शब्दों में प्रभावशाली संवाद है।

अपनी प्रगति जांचिए

15. 'दोपहर का भोजन' कहानी के लेखक कौन हैं?

(क) कमलेश्वर (ख) यशपाल

(ग) प्रेमचन्द (घ) अमरकांत

16. मुंशी जी के मंझले लड़के का नाम क्या था?

(क) रामचन्द्र (ख) मोहन

(ग) राकेश (घ) प्रमोद

1.10 रीछ (दूधनाथ सिंह) से व्याख्या

मूल पाठ

इसका पता, कुछ दिन पहले बिस्तर में ही चल गया था। गलती उसी की थी। उस वक्त, जब वह लगातार उस खूँखार से लड़ रहा था, उसे सोने के कमरे में इस तरह अचानक नहीं चले आना चाहिए था। लेकिन या तो वह भूल गया था, या कुछ पलों के लिए अपना मानसिक संतुलन खो बैठा था। ...या शायद वह बुरी तरह डर गया था और उसे मददगार की जरूरत महसूस हुई थी। जो हो, अचानक ही वह बीच का दरवाजा खोल कर सोने के कमरे में चला आया था।

पत्नी बच्चे को सुला कर इंतजार करती–करती सो गई थी। वह उसकी बगल में बिस्तर पर लगभग ढह–सा गया। ...लेकिन तभी उसे अहसास हुआ कि उसने गलती की है। क्षण–भर को वह पत्नी के सोते हुए चेहरे की ओर देखता रहा। वह, यह भाँपने की कोशिश करता रहा कि अगर वह सो गई है और उसके इधर आने की खबर उसे नहीं लग सकी है तो वह उठ कर चला जाएगा और उधर जाकर सुस्ता लेगा,

टिप्पणी

स्वाभाविक हो लेगा, तब इधर जाएगा। लेकिन वह कुछ भी अंदाजा नहीं लगा सका। वर्षों से ऐसा होता आया था। केवल शुरू के कुछ दिनों को छोड़कर, जब वह भयानक रूप से लड़ती थी। फिर वह सहसा ही चुप हो गई थी। तब से वह अकसर इसी तरह सोई हुई मिलती। कई बार यह समझकर कि वह गहरी नींद में है, वह उठने की कोशिश करता तो पाता कि उसने धीरे से बाँहें बढ़ाकर उसकी कमर घेर ली है और मुस्करा रही है। पत्नी के प्यार अथवा वासना के आवाहन का यह ढंग अब उसका इतना तकियाकलाम बन गया था कि उसे केवल चिढ़ ही होती है। लेकिन बिस्तर में आ जाने के बाद वह कुछ नहीं कर सकता था, सिवा...। शायद वह इस तरह शरीर के स्तर पर उतर कर सब कुछ भूलना चाहता था। लेकिन ऐसा कुछ भी न हो पाता। तब वह चिड़चिड़ा उठता या जल्दी खत्म कर लेता। खत्म होने के तुरंत बाद ही उसे लगता कि वह एक मरी हुई चीज के पास लेटा है। लेकिन वह चीज जिंदा होती और दुबारा उसका भान होते ही वह फिर उसी तरह उस खूँखार से लड़ना शुरू कर देता।

सहमते–सहमते वह ज्यों ही उठा, पत्नी तपाक से उठकर बैठ गई। उसकी निगाहों में जिस शक का इंतजार उसे था, वह सहज ही वहाँ दिखाई दे गया। "क्या हुआ? तुम इतने परेशान क्यों नजर आ रहे हो?" वह पूछ ही बैठी।

वह जैसा–का–तैसा स्तंभित–सा खड़ा रह गया। अगर वह रोज की तरह अपनी वह हरकत दुहराती तो उसे इतना डर नहीं लगता। लेकिन उसके इस तरह चौंक कर उठ–बैठने से उसे विश्वास हो आया कि वह पकड़ लिया गया है। उसे दुर्गंध लग गई है और अब उसके सहारे टटोल कर वह वहाँ तक आसानी से पहुँच जाएगी। ...तभी वह उठ कर खड़ी हो गई। वह सहसा जैसे होश में आया। अपनी आवाज को भरसक संयत करते हुए उसने कह दिया कि "वह ठीकठाक है। अचानक उसे एक काम याद आ गया। एक जरूरी फाइल रह गई है। निपटा कर अभी आया।" इस तरह बोलते हुए उसने मुस्करा कर सारी बात को स्वाभाविक बनाने की कोशिश की।

अपने निजी कमरे में आ कर उसने दरवाजा बंद कर लिया और तख्त पर बैठ गया। टाँगें फैला दी और खिड़की की टेक लगा कर उठँग गया। शायद वह अभिनय में चूक गया था उसने सोचा। पत्नी को विश्वास नहीं आया था। उसने मुस्कुराहट के बीच की दरारों से अंदर झाँक लिया था। वह वैसे ही शक्की निगाहों से देखती हुई खड़ी–की–खड़ी रह गई थी। शायद वह अब भी खड़ी होगी उधर, सोच रही होगी और इंतजार कर रही होगी कि वह आए तो उसे तुरंत कठघरे में खड़ा करे। ...अब शायद, सब कुछ खत्म हो गया...। आज नहीं तो कल... कल नहीं तो परसों वह पकड़ लिया जाएगा। नहीं वह ऐसा नहीं होने देगा। या तो वह पहले ही बता देगा और उसे कमरे में ले जाकर सब कुछ दिखा देगा... या... या वह खुद ही उस रक्त–पिपासु को जान से मार डालेगा। उसे तहखाने में सदा के लिए उसे दफनाकर, उसका दरवाजा मूँद देगा... अथवा...।

बैठे–ही–बैठे गर्दन जरा–सी मोड़कर उसने तहखाने के खुले दरवाजे की ओर देखा। उसका खयाल था कि अब तक रोज की तरह, वह अंदर चला गया होगा और खर्राटे ले रहा होगा। तभी उसने देखा कि वह दरवाजे की चौखट पर अपने दोनों पाँव फैलाए अधलेटा पड़ा था। उसके बड़े–बड़े काले नाखून बघनख की तरह चमक रहे थे।

टिप्पणी

उन्हीं पर उसका थूथन टिका था और अजीब–सी अधमुँदी पलकों से वह उसे घूर रहा था। उसके थोबड़े जैसे जबड़े से झाग निकल कर उसके काले–काले पंजों पर चिमट गई थी और खून–सनी आँखों के इर्द–गिर्द पसीना पिघल रहा था। क्षण–भर को उसे झुरझुरी–सी छूट आई। शायद वह बहुत थक गया है या कहीं गहरी चोट लगी है। या? उसने सोचा, क्या वह बदला लेने की ताक में है और इसी लिए अंदर नहीं गया। तो क्या उछल कर फिर उस पर सवार हो जाएगा और अंततः... उसे खत्म करके ही दम लेगा। नहीं, फिलहाल तो इससे बचे रहना ही ठीक होगा, उसने अपने को टटोला। वह बिलकुल थक गया था और इस वक्त वह सचमुच आक्रमण कर दे तो मिनटों में उसका काम तमाम कर सकता है। वह थोड़ा सजग होकर तख्त पर बैठ गया और किसी भी क्षण उसके लंबे उछाल का इंतजार करने लगा। फिर उसे ध्यान आया कि पत्नी उधर अभी भी जगी होगी और भाँप रही होगी। शायद वह इधर भी आ जाय। या ऐसा न हो कि वह उठ कर उधर जाने लगे तो यह खूँखार भी उसी वक्त उछलकर साथ ही साथ सोने के कमरे में दाखिल हो जाय! नहीं, इस तरह आकस्मिक रूप से वह यह सब कुछ उद्‌घाटित होने देना नहीं चाहता था। न ही उसकी पत्नी यह सब कुछ अचानक सह सकती थी। वह निर्णय तो बाद में लेगी। उसके पहले उसका क्या होगा, इसकी कल्पना से ही इसके रोंगटे खड़े हो जाते। उसने फिर उधर देखा। यह अंदाजा करना कठिन था कि वह सो रहा है या निशाना तक रहा है। ...फिर भी वह उठा और धीरे–धीरे तहखाने के दरवाजे तक गया।

दरवाजा हल्के–से हिला तो उसने अपनी पूरी–की–पूरी आँखें खोल दीं और उठ कर खड़ा हो गया। लगा, उसने अपना एक पंजा जरा–सा सरका कर फिर ऊपर की ओर उठाया। जैसे वह पूरी तैयारी के बाद अंतिम और सफलतम वार करने जा रहा हो। उसने सहम कर जरा–सा परे हटने की कोशिश की। लेकिन तब तक उसने अपने दोनों पंजे उसकी छाती पर रख दिए और थूथन उठाकर उसके होंठ छूने की कोशिश करने लगा। अचानक ही उसका भय अपनी चरम सीमा पर जा कर टूट गया और उसकी जगह एक थकान और सहानुभूति ने ले ली। यह सहानुभूति अपने और उसके, दोनों के ही प्रति थी। एक विवश–सी पहचान... आने वाले अतीत की... या अतीत के अवसान की। उसने धीरे से उसको परे हटा दिया और चुमकारता हुआ सहलाने लगा। सहलाते हुए उसने गौर किया कि उसकी पहले की काली खूबसूरत आँखें अब ललछौंहीं रहने लगी थीं। हाँ, कई वर्ष हो गए थे, कई धुँधले वर्ष। अब वह और ज्यादा खूँखार लग रहा था। ...उसने रोज की तरह उसे दरवाजे के भीतर ठेल दिया और सावधानी से दरवाजा बंद कर दिया। फिर लौट कर उसी तरह तख्त पर बैठ गया। हाथ–पाँव ढीले छोड़ दिए और आँखें मूँद लीं। लेकिन चाहने पर भी वह अपने शरीर को ढीला नहीं छोड़ सका। वह इतना थक गया था कि वह नामुमकिन था। सारा बदन अकड़ा हुआ था जैसे अभी तड़तड़ा कर टूट जाएगा। कनपटियों के बगल में दो मोटी–मोटी नसें धड़कती हुई अंदर दिमाग की तहों को फाड़ती हुई–सी प्रवेश कर रही थीं। उसने लक्ष्य किया कि नीचे लटकता हुआ उसका एक पैर एक खास लय में थरथरा रहा था। उसने पैर ठीक कर लिया। लेकिन कुछ सेकेंडों बाद ही कँपकँपी फिर शुरू हो गई। उसने पाँव ऊपर कर लिया। उसकी नजर बीच के दरवाजे की ओर चली गई। उस ओर सोने

टिप्पणी

के कमरे में अँधेरा था दरवाजे की संधि से रोशनी की लकीर नहीं दिख रही थी। वह सो गई है। वह कल सुबह निश्चिंत भाव से सफाई माँगेगी, आराम के साथ, उसने पत्नी के बारे में सोचा। यह सोचकर, कि चलो इस वक्त तो खतरा टला, उसे थोड़ा आराम महसूस हुआ। लेकिन दूसरे ही क्षण उस बात के आकस्मिक रूप से खुल जाने का भय उस पर छा गया। कल के बाद अगला कल... फिर एक दिन और फिर एक दिन... और फिर एक दिन... और वह अंतिम दिन...।

उठ कर दुबारा सोने के कमरे में जाने का खयाल आते ही फिर जैसे उन्हीं ताँत की जालियों में वह जकड़ गया। क्या वह पत्नी को सब कुछ बता दे? यही उसने चाहा था। बहुत शुरू में... बल्कि शादी के पहले ही उसने इस बात का निर्णय ले लिया था। उन दिनों वह एक आदर्शवादी की तरह सोचता था जिसके मन में पाप की गहरी अनुभूति होती है। अब उस बात को याद करना भी, कि वह 'कनफेशन' में विश्वास रखता था, कितना हास्यास्पद लगता है। लेकिन जब उन दिनों, इसी किस्म के उत्साह में उसने पहली रात को प्रयत्न किया था। इसमें वह सफल नहीं हो सका था। इधर–उधर की बातों द्वारा अपनी मूल बात पर आने की भूमिका उसने कई बार तैयार की थी। बल्कि बार–बार वह यही करता रहा। और हर बार पत्नी उसकी भूमिका को चीर कर एक नए अनागत खौफ में उसे जकड़ देती। फिर जकड़ देती... फिर छोड़ती और फिर जकड़ देती। सारी रात यही चलता रहता। सुबह, जैसे सभी कुछ अपने–आप तय हो गया था। इस तरह सोच कर उसने इस बात को भविष्य पर छोड़ दिया था। ...विवाह से पहले उनका प्रेम संबंध बहुत लंबे दिनों का नहीं था। उसे हमेशा लगता था कि अगर कहीं उसने लड़की को सोचने–विचारने के लिए ज्यादा वक्त दिया तो यह संबंध टूट जाएगा। शुरू के परिचय के दिनों में लड़की उसे छुई–मुई और मूर्खा–सी लगती थी। वह मिलने पर हमेशा उसे मुग्ध भाव से तका करती या ऊटपटाँग बातें किया करतीं। उसने सोचा था कि विवाह के बाद भी वह ऐसी ही रहेगी और तब सब कुछ कह सकना बहुत आसान होगा। हालाँकि उन शुरू के थोड़े से दिनों के बाद ही, यह स्वीकार कर लेने पर कि वे दोनों एक दूसरे को चाहते हैं, लड़की ने अचानक ही यह सवाल उसके सामने रख दिया था, "आपने क्या इसके पहले भी कभी...?" उसने वाक्य अधूरा छोड़कर अपनी शंका और संकोच, दोनों व्यक्त कर दिए।

वह अचकचा कर उसे देखता रह गया था। नहीं, उस वक्त उसे भड़काना ठीक नहीं होगा। फिर भी उसने झूठ बोलने की कोशिश नहीं की। गोल–मोल–सा जवाब दे दिया, "तुम इस तरह के बेकार सवाल क्यों पूछती हो? सच यह है कि मैं तुम्हें...।" उसने पहले वाक्य पर गुस्सा होने का अभिनय किया और दूसरे वाक्य पर भावुक होने का।

लड़की पर इस अभिनय का अनुकूल असर हुआ। उसने अपने सवाल के लिए माफी माँग ली। बाद में कई दिनों तक मिलने पर वह बार–बार अपना एक वाक्य बातों के सिलसिले में अवसर निकाल कर जरूर दुहरा देती, "क्या आप सचमुच नाराज हैं? क्या माफी नहीं मिल सकती।" सच यह था कि वह जानती थी कि न तो वह नाराज है, न ही अब तक उसने माफ नहीं किया। सिर्फ ऐसा कहकर वह बार–बार खुद को यकीन दिलाती कि वह मात्र उसी को चाहता है।

टिप्पणी

लेकिन वह सवाल रख कर उसी दिन से, उसने ये ताँत की जालियाँ उसके इर्द–गिर्द बिछानी शुरू कर दी थी। एक हल्का–सा संकोच और छिपाव तभी उसके मन में आ गया थ। उस दिन यह पूछ कर लड़की ने दूर–दूर दो–चार पतले तार बिछा दिए थे। उस पहली रात, उसने निश्चय किया था कि वह उन्हें काट कर फेंक देगा। लेकिन उसकी हर कोशिश भोंथरी साबित होती और लगता कि कटने की जगह दो–चार और तार बिछ गए हैं। एक बार उसने कहना शुरू किया, "स्त्री, पुरुष की सबसे बड़ी कमजोरी होती है। इतिहास में इसके कितने उदाहरण हैं...।"

"तुम तो उन इतिहास–पुरुषों में से नहीं हो?" पत्नी बीच ही में तोड़ देती।

"मैं तो ऐसे ही कह रहा था।"

"ऐसे ही कह रहे थे। हम से ऐसी बातें मत किया करो। हमें नहीं सुननी हैं ऐसी बातें। हम वैसे नहीं हैं। क्या हैं?" अंतिम वाक्य पर वह घूरने लगती।

वह कोई और बात छेड़ देता।

"मैं यह नहीं सह सकती।"

"छोड़ो भी।"

घंटे भर बाद वह फिर उठ बैठती और पूछने लगती, "मैं यह सोच भी नहीं सकती। हाउ इट हैपेन्स? हाउ दे टालरेट, आई डू नाट नो। ...बताओ?"

उसने महसूस किया कि अब उन हल्के–हल्के तारों की एक जाली–सी बुन गई है और उसे धीरे–धीरे कस रही है।

उसके बाद यह भी सोचता रहा कि इस तरह का निर्णय उसने बेकार ही लिया था। उसे कहीं, अपने अंदर ही 'उसको' मर जाने देना चाहिए था। उसमें भी क्या, सिवा एक ठंडे और भयावने अपमान के। यदि वह साहस करके उसे प्रकट भी कर देता तो या तो उसे लिजलिजी–सी दया मिलती या हिकारत भरा उपहास। वह इन दोनों परिणामों के लिए तैयार नहीं था। ठीक है, अगर 'वह' अंदर–ही–अंदर मर जाय। वह, उस रात, यह सोच कर थोड़ी देर के लिए कुछ हल्का हो लिया था। लेकिन वह डरता भी था। यदि वह सचमुच मर गया तो उसकी सड़न और बदबू को वह कतई छिपा नहीं सकेगा। सारा कमरा दुर्गंध से भर जाएगा। चूमते वक्त उसकी साँसों में दुर्गंध निकलेगी। उसके बदन पर पीले–मटमैले दाग उभर आएँगे। जीभ पर फफोले आ जाएँगे या जहाँ–तहाँ मुँह बंद फोड़े निकलते दीख पड़ेंगे। उसको वह मरने देना चाहकर भी कहीं अंदर से जीवित रखने की उत्कृष्ट लालसा से पीड़ित था। कहीं–न–कहीं उन दोनों में आपस में एक गहरी अनजान–सी कोमल पहचान थी... उस अपमान की तह में छिपी हुई, जिसे दोनों एक दूसरे के लिए सँजोए हुए थे। यह एक दूसरी तरह का कसाव था। जिसे वह निकलना नहीं चाहता था। जो भी हो, वह उसे कहीं छोड़ आया था। तब वह बहुत छोटा–सा था। कोमल और बिलकुल भोला। यह सोचता था कि वह रास्ता भूल गया होगा और लौट कर फिर नहीं आएगा।

लेकिन एक दिन 'वह' लौट आया। वह दफ्तर से लौट रहा था कि अचानक ही वह रास्ते में खड़ा दिखाई दे गया। छोटा–सा, झबरे–झबरे बाल, छोटी–छोटी मिचमिची

टिप्पणी

आँखें, जिनमें कहीं गहरी पहचान और उलाहने का भाव था। क्षण भर को वह रुक गया और उसे देखता रहा। फिर वह तेजी से मुड़ा और भीड़ में शामिल हो गया। नहीं वह 'उसे' बुला नहीं सकता था। वह 'उसे' पुचकार नहीं सकता था। वह उसके संग अपना थोड़ा–सा भी वक्त अकेले में गुजारने लायक नहीं रह गया था। सड़क के उस ओर बहुत बड़ा मैदान था... या कि रेगिस्तान। लोग कहते थे, धीरे–धीरे वह रेगिस्तान शहर के अंदर तक बढ़ता हुआ चला आ रहा है। अँधेरे में सफेद, किरकिरी रेत उड़ कर घरों, सड़कों, मकानों, चौरास्तों और आदमियों पर बिछ जाती है और सुबह वह हिस्सा बंजर के भीतर चला जाता है। उसने सोचा, वह उसी मरुभूमि में लोट गया होगा, जहाँ वह उसे छोड़ आया था। भीड़ के साथ–साथ आगे बढ़ते हुए भी वह बार–बार पीछे मुड़ कर उस ओर देखता रहा। उसे लुप्त होता हुआ देखता रहा। इसी मनःस्थिति में वह घर लौटा और चुपचाप जाकर अपने कमरे में लेट गया। वह क्यों आया था? अचानक ही, उस भीड़ भरी सड़क पर पहचान जताता हुआ, वह क्यों खड़ा था, इतने दिनों बाद शायद लोग, उसे इस तरह उजबक की तरह खड़े होकर उसकी ओर देखते हुए लक्ष्य कर रहे थे। क्या उनमें कोई परिचित भी था? उसे कुछ भी याद नहीं आया। वह इतना अधिक अभिभूत हो गया था... उसके इस तरह अप्रत्याशित रूप से प्रकट हो जाने पर... इतना अधिक डर गया था कि उसने और कुछ भी नहीं देखा। तभी उसे अहसास हुआ कि वह भीड़ में है और सड़क के नियम के खिलाफ पीछे मुड़कर दूसरी ओर देख रहा है।

दूसरे–तीसरे दिन भी उस खास जगह पर एक बार नजर दौड़ाना वह नहीं भूला। लेकिन वहाँ कुछ भी नहीं था। उस ओर बहुत दूर क्षितिज में रेत का उड़ता हुआ सफेद बवंडर दिखाई दे जाता था और सीमाहीन, मटियाला जलता आसमान। धीरे–धीरे उसे लगने लगा कि वह इंतजार–सा करने लगा है। वह उसकी आहट–सी ले रहा है। अचानक ही उसकी समझ में सब कुछ आ गया। पत्नी उसके जिस अभिनय की चर्चा किया करती थी वह सच साबित होने लगा था। सहवास के हर क्षण में उसे लगता कि वह ठीक कह रही है। वह सचमुच ही अभिनय कर रहा है। बगल में लेटते ही 'उसका' असहाय घेर लेता। पत्नी की उपस्थिति मात्रा, तुरंत 'उसका' मान करा देती। वह सोचने लगता, सोचने लगता, सोचने लगता। फिर सिर झटक कर इस खयाल को निकालना चाहता। अपने चेहरे, हाव–भाव, अपने व्यवहार, अपने लेटने, उठने–बैठने, बोलने या चुप रहने को वह पहले की–सी स्वाभाविकता प्रदान करने की कोशिश करता लेकिन इस प्रयत्न में वह अभिनय तुरंत दुगुने रूप में गहरा हो उठता। उसे लगता कि वह पहचान लिया गया है। वह हठ करता कि ऐसा नहीं है, लेकिन वह खुद से मात खा जाता। फिर उसे लगता कि वह लगातार 'उसी' के बारे में सोच रहा है। पहले सचमुच ही ऐसा नहीं था। पत्नी ने 'उसे' फिर से जीवित कर दिया था। या वह उसके वीरानेपन से सहसा ही 'उसे' वापस खींच लाई थी। सिर्फ उसके संसर्ग में जाने भर की देर होती कि वह 'उसमें' लीन हो जाता। पत्नी का व्यंग्य एक सच्चाई में परिणत होने लगा था। उसे यह तक महसूस होने लगा कि वह पत्नी के सहवास में सिर्फ 'उसी से' मिलने के लिए जाता है, सिर्फ 'उसे' पुर्नीजवित करने के लिए, सिर्फ 'उसे' ही बार–बार पाने के लिए... हवा की

टिप्पणी

दीवार के उस पार...। लेकिन उसकी समझ में यह नहीं आता कि पत्नी को कैसे समझाए। कि 'उसे' इस तरह बार–बार लौटाने में उसी का हाथ है कि वह असल में क्या कर रही है। कि वह किस तरह स्वयं ही अपने हाथों से उसे खो रही है, दूसरी शक्ल में गढ़ रही है। कि वह स्वयं ही उसे उठा कर दूर फेंक रही है।... दिनों के बीतने के साथ ही उसका शक और भी बढ़ता जा रहा था। वह उसे तरह–तरह से छेड़ती, 'टीज' करती और खोद–खोद कर प्राचीनतम, टूटी–फूटी धड़वाली, बदरूप मूर्तियाँ और छिपे शिलालेख बाहर निकालना चाहती। कुछ न मिला तो वह मिट्टी ही उठा लेती या टूटी ईंटें या कोई घिसा हुआ पत्थर। और उसी को पढ़ने का प्रयास करती। या अपने ढंग से उसकी व्याख्या करती और कहानियाँ गढ़ती या अपने निर्णयों से उसे लगातार टुकड़े–टुकड़े करती चलती। "...अगर मैंने जान लिया कि ऐसा कुछ भी तुमने किया था तो मैं तुम्हें दिखा दूँगी। तुम कल्पना भी नहीं कर सकते... हाँ। कि मैं क्या कर सकती हूँ। कि मैं क्या कर सकती हूँ। मैं एक क्षण में तुम्हारी यह सारी 'पवित्रता–पवित्रता की रट' को तोड़ दूँगी। मैं किसी बहुत फूहड़ नाकारा आदमी के साथ...। तुम जल कर राख हो जाओगे। मैं तुम्हारी मूर्ति... वह अंदर की मूर्ति पटक कर चूर–चूर कर दूँगी। देखूँगी, तुम कैसे जिंदा रहते हो, उसके बाद। ...कुछ नहीं, मैं समझ गई, तुम्हें क्या पसंद है...। भारी–भारी नितंब ...हुँह। कितने गंदे होते हो तुम लोग। हमेशा पीछे से ही पसंद करते हो। हाँ, चेहरा तो ठीक–ठाक है लेकिन पीछे से एकदम बेकार है। क्या पीछे से खाओगे। हाँ तुम लोग खाते ही हो। तो क्यों नहीं ढूँढ़ ली कोई विकट नितंबा? क्यों नहीं ढूँढ़ ली कोई लंबे चेहरे वाली। क्यों गोल चेहरे पर मरने आए। कौन थी, जरा मैं भी तो जानूँ।" वह बाँहों में कस लेती, जरूर थी। वह छोड़ देती और करवट बदल कर लेट जाती। "...पता चलने दो। तुम नहीं बताओगे तो क्या पता नहीं चलेगा। मैं इतनी कच्ची नहीं हूँ। मैं तुम्हारा चेहरा सूँघ कर बता दूँगी। वक्त आने दो।" वह उसे चूमने का प्रयत्न करता। उसके बाद उसके बोलने का लहजा बदल जाता, "क्या तुम्हें कभी इतना सुख मिला है? क्या तुम इस तरह किसी और के साथ... ठीक इस तरह...? छिः। ...हाँ–हाँ, मेरे तो छोटे–छोटे हैं...। उसके कितने बड़े थे। बीच में जगह थी या दोनों मिल गए थे। इसीलिए तुम यहाँ नहीं चूमते। दोनों हाथों में क्या एक ही आता था...? इसीलिए रेस्त्राँ में उस औरत को देख रहे थे। सारी छाती ढकी थी...। तुम क्या समझते हो बच्चू, तुम्हारी हर नजर मैं ताड़ लेती हूँ। क्यों, उसे देख कर किसी और की याद आ गई क्या? हाय, हाय कितना दुख है बेचारे को...च्च...च्च...च्च...।"

वह एकदम व्यर्थ और सर्द पड़ जाता। उसकी कोई इच्छा नहीं होती। चुपचाप बगल में लेट जाता और छत की ओर ताकने लगता। लेकिन किधर से भी निजात मिलनी कठिन थी। शुरू में जब उसने प्रतिवाद करने की कोशिश की वह कहती कि जरूर उसके मन में चोर है, तभी तो वह चिढ़ता है, सच, सब को बुरा लगता है...। लेकिन इस तरह चुप रहने का भी वह अर्थ निकाल लेती। "...अब क्यों होने लगा मन। यह मेरा अपमान है। मुझे इस तरह करके एकाएक हट जाना...। नहीं तो इस तरह एकाएक चुप हो जाने का मतलब...? कहीं बहुत गहरे चोट लगी है...। तो उसका बदला तुम मुझसे क्यों निकाल रहे हो? मेरे साथ 'करते' हो और मन में किसी और को बिठाए रखते हो। ...लेकिन ...ठीक है ...मैं तुम्हारी असलियत तुम्हारे सामने खोल के रख दूँगी...। तुम फिर घिघियाओगे... देखना...।"

टिप्पणी

"तुम्हारे पास इन बातों के लिए क्या सबूत है?"

"सबूत है। मेरा मन... मेरा दिल। मैं तुम्हारी छुवन पहचानती हूँ। तुम मेरे साथ नाटक करते हो। एक खूबसूरत नाटक। लेकिन मैं नाटक नहीं होने दूँगी। तुम्हारा यह अभिनय... तुम्हारा यह ग्रीन–रूम... मैं खोज निकालूँगी...।"

"तुम हीन–ग्रंथि की शिकार हो। तुम्हें अपने पर विश्वास नहीं है। काश! कि तुम्हें विश्वास दिलाया जा सकता।"

"बस करिए...। मैं इन चिकनी–चुपड़ी बातों से तुम्हारे चंगुल में नहीं आने की। तुम मुझे बहुत ठग चुके। मैं अब और अधिक धोखा नहीं खा सकती।"

"तो मुझे छोड़ दो।"

"छोड़ दूँगी। जरूर छोड़ दूँगी। तुम क्या समझते हो, मैं इतनी बेहया हूँ। तुम्हारे बिना मेरा काम नहीं चलेगा। मैं चली जाऊँगी...। पहले देख तो लूँ... देखूँ तो।"

"जब तुम कहती हो तो मान ही लो कि ऐसा है।"

इस पर वह क्षण भर को उसके चेहरे को उलट कर देखती। फिर कहती, "मैं तुम्हारे इस झूठ में नहीं आ सकती। समझे। मैं सच जान के रहूँगी। तुम मुझे चार सौ बीसी पढ़ाना चाहते हो। इसी तरह छुटकारा पाना चाहते हो... हाँ–हाँ क्यों नहीं! कहीं इंतजार जो हो रहा होगा। लेकिन मैं तुम्हें इस तरह छोड़ कर नहीं चली जाने की...।"

"तुम्हारा वह सच क्या है?"

"मुझे नहीं मालूम...। मुझे कैसे मालूम हो सकता है। मैं क्या कर सकती हूँ।" वह बाँहों में सिर गड़ा लेती और सिसकने लगती।

थोड़ी देर बाद वह शुरू कर देता। वह इस तरह मान जाती जैसे कुछ भी न हुआ हो। लेकिन वह हर क्षण दहशत से भरा हुआ रहता। न जाने कब... अगले किस क्षण वह टोक दे। उसकी उँगलियाँ काँपने लगतीं। वह संवादों की कल्पना करने लगता... । जैसे वह अभी पूछेगी, 'उसकी जाँघें कैसी थी। एकदम चिकनी। तभी तो...।' वह अपनी थरथराती हुई उँगलियाँ रोक लेता। लगता, उसकी जाँघों से हजारों सुनहले तीर अँखुवा रहे हैं...। लेकिन वह यंत्रवत् लगा रहता और खत्म करने के बाद नए सिरे से आहत होने की प्रतीक्षा करता।

उस दिन भीड़ में दिख जाने के बाद, एक बार तो उसने सोचा था कि 'वह' इत्तफाकन चला आया था और लौट गया होगा। लेकिन धीरे–धीरे उसका यह भ्रम दूर होने लगा। वह बहुत सजग हो गया। वह नहीं चाहता था कि उसके आने की आहट भी किसी को लगे। पत्नी के लाख छेड़ने पर वह केवल नकार जाता या चुप रहने लगा। वैसे उसके बाद कुछ दिनों तक वह नहीं दीख पड़ा। पत्नी उसे उसी तरह उलटती–पुलटती रहती और उसके हर व्यवहार में झाँकने की कोशिश करती। वहाँ कुछ नहीं मिलता। वह अंदर–ही–अदर 'उसकी' आहट लेता बैठा रहता। उसे, अब विश्वास हो गया था कि 'वह' कहीं भी मिल सकता है। 'वह' हमेशा के लिए लौट आया है और यहीं कहीं आस–पास ही छिपा हुआ है। या शहर के बाहर, नदी के किनारे या पुलों पर या खंडहरों में घूमा करता है। उसे हर क्षण का पता है कि 'वह' उसे कहाँ पकड़ लेगा।

टिप्पणी

वह अजीब ढंग से चौकन्ना रहने लगा। शाम होने के पहले ही वह घर लौट आता। रास्ता चलते हुए वह सीधे आगे की तरफ देखता। कभी–कभी पीछे आहट–सी लगती – झिप्–झिप्... झप्...झप्...धप्–धप्... बालों के हिलने या उसके छोटे–छोटे गद्दीदार पाँवों की थपथपाहट। वह पीछे मुड़ कर देखता। कहीं कुछ नहीं होता। सड़क के किनारे के नल से पानी की एक–एक बूँद टप–टप लगातार टपकती होती या दूसरी पटरी पर कोई खोजहा कुत्ता अपने पिछले पावों से नुची हुई, बदरंग गर्दन खुजलाता होता। ...लेकिन एक दिन सुबह, अभी वह सोया ही हुआ था कि पत्नी ने आ कर जगाया। बाहर कमरे की दीवारों पर अजीब–से बदशक्ल हाथों की छाप थी। ...कीचड़ की छाप। किवाड़ों और बरामदों के फर्श पर भी। उसने पत्नी से कह दिया कि कोई कुत्ता या जंगली जानवर आया होगा। पत्नी को विश्वास नहीं हुआ। वह काफी हद तक डर गई थी। उसका कहना था कि ये निशान किसी जानवर के हाथ–पैरों के नहीं हैं। वह तुरंत समझ गया था। ...तो वह वहाँ तक भी आया था...।

उसने दफ्तर से लंबी छुट्टी ले ली और चुपचाप घर में पड़ा रहने लगा। "क्या तुम बीमार हो? तुम इतने चुप क्यों रहते हो? क्या ऑफिस में कोई बात हो गई है?" पत्नी के ऐसा पूछने पर उसने कह दिया कि उसकी छुट्टियाँ बाकी हैं। नहीं लेगा तो बेकार चली जाएँगी। पिछले कुछ दिनों से वह काफी थकान महसूस कर रहा है। बाहर जाना उसे बिल्कुल अच्छा नहीं लगता। वह कहीं नहीं जाना चाहता। ...उसके इस तरह सजग और चुप हो जाने से पत्नी के मन पर एक दूसरे ही तरह का असर हुआ। उसने समझा वह हार गया है। वह सच कहता था। कहीं कुछ नहीं था। उसका शक बेकार था। ...धीरे–धीरे वह संतुष्ट नजर आने लगी। वह उसकी तरह–तरह से फिकर करने लगी। जैसे वह घर में कोई मेहमान हो। वह आ कर, उसके पास बैठ जाती और नए सिरे से स्नेहिल नजरों से उसे देखती रहती। उसे विश्वास हो रहा था कि उसका अभीप्सित उसे मिल रहा है। पति के रूप में जिस तरह के आदमी की कल्पना उसके दिमाग में थी, वह उसे बिल्कुल वैसा ही अब लगने लगा था। चुप, उसके एकदम पास निराश्रित–सा और उसका मुँह जोहता हुआ...। अपने अधिकार की इस वापसी से वह नए रूप में अपने को महसूस करने लगी और अप्रत्याशित रूप से नर्म पड़ गई। पत्नी के इस परिवर्तन से उसके भीतर का यह नया अपराध तेज छुरी की तरह घाव करने लगता। जब कुछ नहीं था तो वह किसी तरह तंग करती थी! अब? वह उसकी ओर देखता। वह उसे अत्यंत दयनीय और सीधी लगती। वह उसे फिर से प्यार करने को सोचता। लेकिन दूसरे ही क्षण यह भोंड़ा विचार उसे अत्यंत हास्यास्पद लगता और वह इंतजार करने लगता कि वह उठ कर चली जाय और उस लहू–प्यासे के साथ उसे अकेला ही छोड़ दे। वह उठ कर चली जाती तो वह अपने को परखने लगता। अपनी बाँहों को, टाँगों को, बिस्तर को, आरामकुर्सी को... अपनी आवाज को या अपनी चुप्पी को शीशे में अपने चेहरे को, आँखों को... होठों को... ललाट को। कुछ नहीं होता, केवल माथे पर तीन गहरी खरोंचे उगतीं और फिर बुझ जातीं। वह फिर बाहर देखने लगता...।

आधी रात से ज्यादा बीत गई थी, जब सहसा पत्नी ने उसे जगा कर बैठा दिया। वह लगातार खिड़की की ओर देखे जा रही थी। वह बेहद भयभीत थी।... "वह देखो, वह... वहाँ। वह क्या था? खिड़की की सलाखें पकड़े बैठा था। झूम रहा था और अपना

लंबूतरा–सा थूथन पर्दे के अंदर ढकेल रहा था। मुझे बदबू–सी लगी थी। पहले मैंने बिस्तर पर देखा। तुम्हें..., बच्चे को। फिर मेरी नजर खिड़की पर चली गई। मुझे देखते ही वह कूद गया...।" वह एक साँस में कह गई। वह समझ गया और चुपचाप बैठा रहा।

टिप्पणी

"तुम कुछ बोलते क्यों नहीं? यह कौन हमारे पीछे पड़ा है? तुम्हें मालूम है तो बताते क्यों नहीं? मैं इस तरह नहीं रह सकती। अभी उस दिन दीवारों पर नाखूनों की खरोंच दिखी थी...। यहाँ उसके लिए क्या है?"

उसने उठ कर बत्ती जला दी। खिड़की के पर्दे के बाहर कुछ भी नहीं था। केवल सामने केले का एक नया–नया फूटा हुआ पत्ता हवा के इशारे पर 'नहीं–नहीं' की मुद्रा में लगातार हिल रहा था और 'सट–सट' की हल्की आवाज आ रही थी। वह जान–बूझ कर हँस पड़ा, "वह देखो, बेकार ही डरती हो।"

पत्नी मानने को तैयार नहीं हुई। वह अपनी आँखों को धोखा नहीं दे सकती थी। लेकिन वहाँ कोई सबूत नहीं था। खिड़की के पर्दे के बाहर केले के पत्ते की लंबूतरी–सी छाया डोलती दिखती। वह सोने की कोशिश करती। वह बैठा रहता। वह बड़बड़ाने लगती, जैसे डर से छूटने के लिए ऐसा कर रही हो...। "तुम यह मकान छोड़ दो। मुझे शक होता है यहाँ कोई रहता है। मैं मकान मालकिन से पूछूँगी कल। लेकिन वह क्यों बताने लगी। अब मालूम हुआ, क्यों यहाँ लोग चार–छः महीने से ज्यादा नहीं टिकते, तुम्हारे न मानने से क्या होता है। यहाँ कोई छाया डोलती है। हाँ देखो जी, हँस कर मत उड़ाओ। तुम यह मकान छोड़ दो। दूसरा मकान 'सेफ' रहेगा? जगह बदलने से सारी बातें बदल जाती हैं। ...तुम आखिर क्यों नहीं मानते? ...मुझे दिन में भी कहीं निकलते डर लगता है। तुम्हारे कमरे की सफाई करने जाती हूँ तो अजीब–सा सन्नाटा लगता है। लगता है तहखाने वाली कुठरिया में कोई बंद है। उधर देखने का साहस नहीं होता। क्या तुम कभी उसे खोलते हो? ...तुम आरामकुर्सी बिलकुल कोने में क्यों रखते हो? जब भी जाओ खिड़कियाँ बंद मिलती हैं। खोल कर क्यों नहीं जाते? कितना गुम–सुम लगता है कमरा। बदबू आती रहती है...। उधर की गली भी तो कितनी गंदी है। कल कूड़े के ढेर पर दो–दो काले पिल्ले मरे पड़े थे। ...तुम शाम को जल्दी लौट आया करो जी। मुझे नींद नहीं आती। हर क्षण आहट–सी लगी रहती है। मैं यहाँ किसी से कह भी तो नहीं सकती...। मैं ...अब मुझे बहुत डर लगता है। तुम्हें कहीं कुछ हो गया तो? ...सच ...सुनो मैंने तुम्हें बहुत तकलीफ दी है न। जब कि कहीं कुछ नहीं था। नहीं था न? जानते हो मैं ऐसा क्यों करती थी? मैं तुम्हें बहुत। मुझे अभी भी... अभी भी मेरे मन से वो चीज निकल थोड़े ही गई है। यह मत समझना कि ऐसा कुछ भी करोगे तो मुझसे छिपा रहेगा। लेकिन अब मैं उस तरह नहीं कर सकती। क्या मुझमें कुछ है। ...तुमने मुझे... तुमने मेरा सब कुछ...। मैं जानती हूँ। अब मुझमें क्या आकर्षण होगा। एक ही चीज... हमेशा वही–वही...। लेकिन तुम लोग क्या सिर्फ नई–नई चीज के पीछे ही भागते–फिरते हो जी? ...स्त्री हमेशा अधिक नैतिक होती है। उसका अपना पुरुष उसे रोज ही नया लगता है। लेकिन तुम लोग। मैं जानती हूँ... अगर तुम अपने संस्कारों और संकोचों से विरत हो जाओ तो एक बार वह भंगिन भी तुम्हें मुझसे ज्यादा रुचेगी। लेकिन मैं...? मैं यह बर्दाश्त नहीं कर सकती कि तुम्हारी चीज मुझमें और उसके पहले किसी दूसरे में... या उसके बाद में भी...। तुम सोचते होगे, मैं कितनी गंदी

टिप्पणी

हूँ। कितनी गलीज बातें मुँह से निकालती हूँ। मैं तुमसे बताती हूँ, हर औरत ऐसे ही सोचती है। ...अगर उसे मालूम हो जाय कि वह जूठन उठा रही है तो वह तुम्हें कभी क्षमा नहीं करेगी। सचमुच कभी नहीं क्षमा करेगी। विवशता में क्या नहीं होता लेकिन मन से इसका अहसास नहीं जाता। ...नहीं हो जाता। कोई भी छिछड़ा क्यों पसंद करेगी। ...तुम कहोगे, इसके विपरीत बड़े–बड़े उदाहरण हैं...। तो तो वह केवल एक समझौता है। चाहे वह श्रद्धावश हो या स्वार्थवश...। ऐसी सारी औरतें आधुनिक बनने के नाम पर केवल अपने इस अहसास को छुपाती हैं... समझे। ...मैं यह सब ठंडे दिल से कह रही हूँ। मुझे क्रोध नहीं। ...समझे। ...मैं जूठन अपने अंदर नहीं ले सकती। .. .लेकिन अगर ऐसा है या हुआ तो ...मैं ...तो मैं... पता नहीं... ओफ...। तुमने मुझे कितना छोटा और अपाहिज कर दिया है।" वह उलट कर पत्नी को देखता है, उसकी एक आँख बाँहों के नीचे दबी हुई है। उसमें से एक लंबा आँसू निकल कर अपनी लकीर छोड़ता हुआ गाल के नीचे कहीं कानों की ओर गुम हो गया है।

छुट्टियों के बाद दफ्तर का वह पहला दिन था। वह बड़ा खुश–खुश बाहर से लौटा था। बसन्त की शुरुआत थी। हवा में एक खुनकी और त्वचा पर उसके स्पर्श की पहचान। जब कि अचानक महसूस होता है कि उसी शहर में है। और आँखें एक परिचय की खोज में उठ जाती हैं, झरती हुई पत्तियों वाले पेड़ों की ओर या धुमैले आसमान और सूखना शुरू होती चिड़ियों की ओर...। यही पहचान ले कर वह घर लौटा था। सोने के कमरे में कोई नहीं था। पत्नी शायद रसोई में थी। वह बीच वाले दरवाजे से ही अपने कमरे में चला आया। भीतर घना अँधेरा था और हवा लथपथ–सी। ...यह एकांत सच में एकांत है। यहाँ कोई छाया नहीं है। थोड़ी देर अपने से मिला जा सकता है, उसने सोचा। उसने बत्ती नहीं जलाई। न ही कपड़े बदले, चुपचाप कुर्सी में धँस गया। फिर धीरे–धीरे अंधकार के भीतर कमरे का एक–एक चीज, चीजों के करीने उगने लगे। ...तभी, हाँ, तभी उसका भान हुआ। पहले उसे विश्वास नहीं हुआ। उसने आँखों के पपोटे दो–एक बार मसले और फिर पूरी आँखें खोल दीं। हाँ, 'वही' था, एकदम। लगता था, जैसे मेज पर अँधेरा घनीभूत रूप में बैठा है। और हिल रहा है। उसने उठ कर बत्ती जला दी। 'वह' मेज पर उँकड़ूँ बैठा हुआ ऊँघ–सा रहा था। रोशनी होते ही उसने अपनी आँखें खोलीं और उसे घूरता रहा। फिर वह उछल कर नीचे उतर आया और उसकी टाँगें सूँघने लगा। उसने देखा, 'वह' पिछले दिनों की अपेक्षा काफी बड़ा हो गया था। तभी उसने जम्भाई ली। उसका जबड़ा, जो इस तरह देखने में काफी छोटा लगता था, एकाएक खुलने पर भयावह दिखने लगा। इतना कि उसका सिर 'वह' आसानी से उसमें पकड़ कर चबा सकता था। अंदर लाल–लाल खुरदरी जीभ दिख रही थी और नीचे के जबड़े में दोनों ओर दो लंबे, तेज, नुकीले पीले दाँत विचित्र ढंग से चमक रहे थे। जैसे 'वह' मुस्कुरा रहा हो और उसकी वह मुस्कुराहट उसके दाँतों में समा गई हो। ...सबसे पहले उसने बीच का दरवाजा बंद किया खिड़कियाँ बंद की, रोशनदान की रस्सी ढीली कर दी। फिर वह जाकर कुर्सी में धँस गया। अब क्या हो? उसे ऐसी ही आशा थी। वह शायद रोज ही यही सोचता था। अक्सर वह कमरे में आते ही बत्ती जला देता और चारों ओर देख लेता। लेकिन आज वह भूल गया था। गाफिल पड़ गया था। यह मौसम का असर था। वह मौसम उन दिनों की याद दिलाता था जब उसके पास

टिप्पणी

कुछ भी नहीं था। जब वह रिक्त था और खुला हुआ सपाट... और सचमुच अकेला। वह लगातार यही सोचता रहा था कि उस तरह 'छायाहीन' होना क्या था फिर संभव नहीं है? कहाँ संभव था! उसने देखा, 'वह' उसकी पीठ पर अपने दोनों अगले पाँव रखे गर्दन हिला रहा है। ...अचानक ही उसे जोर का गुस्सा आ गया। उसने 'उसे' पकड़ कर दोनों टाँगों के नीचे दबा लिया और घूँसों से पीटने लगा। इस तरह एकाएक ताबड़तोड़ पीटे जाने पर पहले तो 'वह' हतप्रभ रह गया। शायद 'उसे' विश्वास नहीं हो रहा था। शायद 'वह' समझता था कि वह 'उसे' आया हुआ देखकर खुश हो जाएगा और चुमकारेगा। वह इस प्रहार को सहने के लिए बिलकुल ही तैयार नहीं था। ...फिर उसने जोर की एक घुरघुराहट की आवाज निकाली और उछल कर उसकी पीठ पर चढ़ गया। उसने अपना जबड़ा खोला और उसकी गर्दन उसमें भर ली। लेकिन कुछ ही सेकेंडों में लिपट गया और जीभ से उसके पैर चाटने लगा।

वह भौंचक–सा 'उसे' देखता रह गया। वैसे ही कुर्सी में पड़ा हुआ... थका और निढाल–सा।

दिन बीतते जा रहे थे। वह इस इंतजार में था कि शायद 'वह' ऊब कर या हार कर खुद ही चला जाएगा। लेकिन वह कभी बाहर नहीं निकलता था। कमरा बंद होते ही वह और अधिक निश्चिंत हो जाता। अक्सर वह दिन भर आराम कुर्सी पर बैठा झूलता होता या वार्ड रोब में घुस कर बैठा रहता या रजाई तानकर खर्राटे भरता रहता। उसके लौटने पर हमेशा वह आँखें किचमिचाता हुआ स्वागत–सा करता मिलता। जब कभी उसने उसे बाहर खदेड़ने की कोशिश की, वह लड़ पड़ता और उसकी पीठ पर चढ़कर झूमने लगता या उसके दोनों हाथ अपने जबड़े में भर लेता और कटकटाने लगता। ...हार कर उसने उसे वहीं रहने दिया। ...यह सारा–का–सारा क्रम उसे एक दिवा–स्वप्न की तरह लगता। वह चाय पीता होता या दोस्तों के साथ बैठा होता या कहीं जरा भी अकेला पड़ता कि वह उसी दिवा–स्वप्न में खो जाता। उसे लगता कि 'वह' धूप में तपते चौराहों पर, दफ्तर के लंबे अँधेरे ठंडे गलियारों में, मसाले की दुकानों पर, सिनेमा हालों में, नदियों के किनारे, पिकनिक में, या चावखानों या विवाह–शादी के अवसरों पर, मेलों, बाजारों या सुनसान सड़कों या ठंडी दीवारों के आस–पास, हर जगह मौजूद है। वह बीच में से गिलास उठा लेता और 'सिप' करने लगता है। यह गलियारे में खड़ा–खड़ा आने–जाने वालों को घूरता है और उसे देखते ही पीछे लग जाता है। वह दफ्तर की मेज पर बैठ जाता है और ऊँघने लगता है। दफ्तर से वह 'उसे' ढोता हुआ अपने को घसीटता हुआ चला आ रहा है। कभी–कभी उसे लगता कि वह गहरी नींद में सोए हुए बच्चे की बगल में लेटा हुआ है या पत्नी की चारपाई के नीचे ऊँघ रहा है। वह कमरे में बैठा है और ऐसे दीख रहा है कि 'वह' काफी खिड़की के शीशों से, दरवाजे के काठ से, दीवारों की ईंट, चूने–गारे या सीमेंट से या छत की खपरैल से छनकर कमरे के अंदर चला आता है।

...सारे माहौल में एक सन्नाटा–सा बरसता होता। पत्नी एक छाया में बदल–सी गई थी। वह सिर्फ चलती या आँखें फाड़ के देखती या अजीब–से दयनीय ढंग से मुस्कुराती या बच्चे को उठा कर पेशाब कराने लगती... या नाक उठाकर हवा को सूँघती रहती। ...गनीमत यही थी कि अभी वह दुर्गंध नहीं दे रहा था।

टिप्पणी

लेकिन एक दिन यह भी हो गया... काफी दिनों बाद। शायद एक बरस या दो बरस... या कि पता नहीं... शायद जन्मांतरों के बाद... हाँ कुछ ऐसा ही लगता था। वह दो दिन तक कहीं नहीं गया। चुपचाप कमरे में पड़ा हुआ था। उसने पास जाकर देखा क्या वह बीमार है या वह इतना सभ्य हो गया है। नहीं ऐसा कुछ भी नहीं था। उसने पाया कि वह अजीब तरह से बदबू कर रहा है। ...शायद इस बदबू का पता उसे खुद भी हो गया था। अचानक वह बहुत डर गया। अब इसका पता लगना कठिन नहीं है। अब निश्चय ही यह रहस्योद्घाटन हो जाएगा...। एक दिन वह लौटा तो उसने पाया कि वह तहखाने में दरवाजे के पास बैठा है। उसने दरवाजा खोला तो वह तुरंत अंदर चला गया और बदबूदार हवा के भभके में विलीन हो गया। उसने दरवाजा बंद कर दिया और सिटकनी चढ़ा दी। फिर वह एकाध दिन तक इंतजार करता रहा। 'वह' बाहर नहीं आया। बल्कि ज्यों ही शाम को वह बाहर से लौटता, उसकी आहट पाते ही 'वह' तहखाने का दरवाजा खरोचने लगता था। वह दरवाजा खोल देता। वह सारे कमरे को अपनी बदबू से भर देता। फिर वह उसकी कमर पकड़ लेता या उछल कर पीठ पर चढ़ जाता और झूमने लगता। यदि वह जरा भी प्रतिरोध करता तो वह लड़ने पर उतारू हो आता और घुरघुराने लगता। ...फिर एक नियम बन गया। शाम को लौटते हुए वह अपने को इस लड़ाई के लिए तैयार करता आता। तहखाने का दरवाजा खोलते ही वह एक लंबी उछाल लेता और उसके ऊपर सवार हो जाता। एक दिन फिर उसने उसकी गर्दन अपने जबड़े में जकड़ ली। थोड़ी देर तो वह इंतजार करता रहा कि वह छोड़ देगा लेकिन दूसरे ही क्षण उसने उसके तेज दाँतों को गड़ते हुए महसूस किया। उसने एक जोर का झटका दिया तो वह दूर जाकर गिर पड़ा। लेकिन वह फिर उछला और गर्दन दबोचने की कोशिश करने लगा। यह असह्य था...। शायद वह कुछ और सोच रहा है, उसने गौर किया। फिर उसने पटक कर घूसों से मारते–मारते बेदम कर दिया और तहखाने में डालकर दरवाजा बंद कर दिया। उसके बाद उसने पाया कि वह खुद उसकी बदबू में सना हुआ है। ऐसी स्थिति में सोने के कमरे में जाना असंभव था। वह तख्त पर बैठ जाता और सुस्ताने लगता... या अपने को ब्रश करने लगता। ...दूसरे दिन बाजार से वह ताँबे का तार खरीद लाया और उसे पटक कर उसके जबड़े कसकर बाँध दिए। उसके बाद वह हमेशा बौखलाया हुआ और क्रोधांध दीख पड़ता। सिवा लड़ने के वह कुछ नहीं करता था। यह लड़ाई कभी–कभी घंटों चलती और जब वह थक जाता या हार जाता तो भाग कर तहखाने में घुस जाता...।

फिर दिन... हफ्ते... महीने... वर्ष...। अब उसकी आँखें और भी मिचमिची लगने लगी थीं। तहखाना खोलते ही दुर्गंध का एक भभका निकलता और कमरे की रग–रग में बिंध जाता। ऐसा लगता कि सिर्फ एक दुर्गंध ही रह गई है... खूँखार और रक्त–पिपासु दुर्गंध...। उसके काले चमकीले बाल झरने लगे थे और उसकी खाल जगह–जगह खुरच कर बदरंग पड़ गई थी। वह बिलकुल कंकाल हो गया था।

और थूथन पर कई छोटे–छोटे घाव उभर आए थे। लेकिन वह पहले से अधिक तीव्रता से आक्रमण करने लगा था और जल्दी परास्त नहीं होता था। कभी–कभी महसूस होता कि उसमें दुगुनी–चौगुनी शक्ति आ गई है और आज वह खत्म करके ही दम लेगा...।

टिप्पणी

ऐसे ही में उस दिन वह सोने के कमरे में चला गया था। उस खूँखार और रक्त–पिपासु दुर्गंध के साथ। और फिर वह लौट आया था। पत्नी ने दूसरे दिन सुबह कुछ उल्टे–सीधे सवाल भी किए थे। उसने हँस कर टाल दिया था। लेकिन शायद, उसका शक धीरे–धीरे वापस आ रहा था। वह चुपचाप लेटी रहती और घूरती रहती। या दूसरी ओर मुँह करके सिसकियाँ रोकने का प्रयत्न करती या बच्चे को पीट देती और स्तन छुड़ा लेती। उसे समझाना भी व्यर्थ लगता। वह करवट बदल लेता और धीरे–धीरे एक भूरी दीवार उसके सीने पर उगने लगती...।

("क्या बात है? तुम बार–बार घड़ी की ओर क्यों देख रहे हो? कोई नहीं आने का। क्या तुम डरते हो। घड़ी का मुँह दीवार की तरफ...। अब ठीक है? मुझे कोई डर नहीं है। आई फील सब्लाइम। क्या तुम जानते हो, उनके साथ मुझे कैसा लगता है... जैसे कोई रीछ मेरे ऊपर झूम रहा हो। अब कोई आने को होती है। तुम विश्वास नहीं करते। तुम्हारे साथ? तुम तो एक बच्चे की मानिंद लेट जाते हो। इतने साफ्ट... कोमल... केवल मैं जानती हूँ... माई चाइल्ड... मेरे शिशु..."), यह कौन बोलता है...? कौन? वह उधर कमरे की आहट लेता है।

"नींद नहीं आती?" पत्नी पूछती।

"जागना अच्छा लगता है।" वह कहता।

पत्नी मुस्कुराती है। उठती है और जाकर खिड़की के पर्दे खोल देती है। वह फिर स्पर्श करता है। आँखों में कुछ अलग–सी आँखें...। बाँहें... भरा हुआ गोश्त। आश्चर्यजनक। नितंबों की गोल–सुडौल रेखाएँ... भरा हुआ काँपता वक्ष। सहसा हाथ में पत्नी के नन्हें–नन्हें सूखे स्तन आ जाते हैं वह गड़ जाता है और हाथ हटा लेता है।

"क्या हुआ?" के भाव से पत्नी आँखों से ताड़ती है। चुप है। वह समझ जाता है और बचने के लिए उनकी घुंडियाँ जोर से मसल देता है। वह चीखती है, एक रस–भरी चीख। वह एक खोखली हँसी हँसकर करवट बदल लेता है। फिर घूमता है और दबोच लेता है।

("साँस बदबू करती है। ना, पायरिया नहीं है। पहले गोमती में दिन–दिन भर तैरा करते थे। हर वक्त जुकाम बना रहता है। पीला–पीला कफ निकलता है। बिलकुल मवाद की तरह। ...सिर्फ इसीलिए चलते हैं। हजरतगंज में कोई औरत देखी। पीछे–पीछे घूरते हुए दो–चार चक्कर लगाया। लौट कर दो–चार कपड़े लिए और स्टेशन भागे...। ग्यारह बजे उतरे और आते ही नोचना शुरू...। ...वह तस्वीर देखते हो? मेरे पिता की है। तुम मुझे बिलकुल उन्हीं की याद दिलाते हो...। यू आर माई फादर। ऐसे शांति नहीं मिलेगी... हाँ ऐसे... सो साफ्टली यू डू... अनइमेजिनेबिल...। माई फादर, ...अब तुम्हें नींद आ जाएगी...। ...तुम ...तुम्हें मैंने किडनैप कर लिया है...। मैं तुम्हें जाने नहीं दूँगी अगर चले भी गए तो मैं पीछा करूँगी...। मैं लगी रहूँगी। यह तुम्हारी साँस... यह तुम्हारा चंदन की तरह महकता बदन... मैं इसमें छा जाऊँगी। क्या तुम समझते हो... इसे अनइमेजिनेबिल? ...देखना...।")

वह इधर–उधर देखने लगता...। लगता है सारा कमरा एक दुर्गंध में डूबा हुआ है...। यह पत्नी की आवाज है। नहीं, शायद...। तभी पत्नी कहती है, "मुझे तो नींद नहीं

टिप्पणी

आती। प्लीज, मुझे माफ करो... तुम बसाते हो। ...कल गर्म पानी से नहा लो। ये बिस्तर पर बाल किस चीज के हैं...? इतने मोटे और काले–काले..." वह दो उँगलियों के बीच एक बाल को उठाकर मसलती है...। "ये तुम्हारे बाल हैं...। वह बदबू.. तुम्हारी साँस में, बदन में, काँख में... हथेलियों में... यह क्या है... अनइमेजिनेबिल...।"

वह उठता है और बाथरूम की ओर चला जाता है। उसका सारा मुँह एक कड़वे थूक से भर गया है। यही थूक वह सड़क पर भी थूकता रहता है। पीला–पीला थूक. ..। लेकिन थूकते रहने के बावजूद हर वक्त एक नमकीन स्वाद बना रहता है। क्या उसे पायरिया हो गया है? वह कभी–कभी सोचता है,उसके मसूड़े ऊबड़–खाबड़ हो गए हैं और काले पड़ गए हैं। उसके बीच वाली दंतपंक्ति में दाढ़ में दो नुकीला, लंबे दाँत उग आए हैं। और वे तालु में घाव कर रहे हैं। सुबह जब आईने में वह अपना चेहरा देखता है तो इस भ्रम को दूर कर नए विश्वास के साथ दिन शुरू करता है। लेकिन शाम होते–होते वही सिलसिला, कड़वा, नमकीन थूक उसके मुँह में इकट्ठा होने लगता है। बार–बार वह पूरे दिन को थूकता रहता है... सारे अतीत को थूकता रहता है... लेकिन वह चीज नहीं जाती। एक लुआबदार झाग–सी इकट्ठी होती रहती है अंदर–ही–अंदर. .. खून में मिली लिसलिसी–सी झाग...।

उस रात बाथरूम से लौटते हुए उसने निर्णय लिया था। अब बिल्कुल ही वक्त नहीं था। इस तरह सोचने–विचारने या एक अनाम मोह में फँसे रहकर वक्त जाया करने में कुछ भी हो सकता है। अब वह बहुत दुबला हो गया। उसकी छाती पर हड्डियों का एक जाल उभर आया था। आँखें गढ़ों में चली गई थी और नासूर की तरह जलता मवाद उगलती थीं। जब भी वह कमरे में आता, उसकी आहट पाते ही वह तहखाने के किवाड़ भयावने रूप से खरोचने और घुरघुराने लगता। वह उसकी छाती के अंदर फेफड़ों को लगातार खरोंच रहा है। अब उसकी आँखों से वह पहचान एकदम गायब हो गई थी। वहाँ जन्मांतरों पार से एक अजनबी क्रूरता झाँकती रहती। दरवाजा खुलते ही वह मल्ल–युद्ध शुरू कर देता।

इधर लगातार उसे लगता था कि उसके जबड़े को कसने वाले तार कुछ ढीले पड़ रहे हैं और उसका जबड़ा पहले से कुछ ज्यादा खुला रहने लगा है। उसने दुबारा तारों को कसना चाहा तो उसने पूरी शक्ति से इसका विरोध किया था और उसके हाथों को काट खाने लपका था। ...उसने तय किया, कल ही... अगले दिन ही...। अब और नहीं चलाया जा सकता।

उसका अनुमान ठीक था। वह तुला हुआ बैठा था। वह गुस्से में अंधा हो रहा था। पहली ही उछाल में वे गुत्थमगुत्था हो गए। वह भी तैयार था। ...वह उसके दाँव–पेंचों से वर्षों से परिचित हो चुका था। उसने पाया कि वह खूँखार कमजोर पड़ रहा है। वह बार–बार उछल कर उसकी गर्दन दबोचना चाहता। लेकिन अंततः 'उसे' पछाड़ दिया। और नीचे ले जा कर लगातार उसकी अँतड़ियों को घूँसों की मार से कूटने लगा। उसके जबड़े पर उगे हुए नासूर बहने लगे और कमरे की हवा में जैसे एक मादक जहर घुल गया। गुस्से में आ कर उसने और भी जोर–जोर से घूँसे लगाने शुरू किए।

टिप्पणी

थोड़ी देर बाद उसने महसूस किया कि 'उसकी' ओर से कोई प्रतिरोध नहीं हो रहा है। तो शायद वह...। तभी उसने लक्ष्य किया, 'वह' चुपचाप नीचे पड़ा हुआ उन्हीं खूनी निगाहों से उसे तक रहा था। जैसे 'उसे' कहीं भी चोट न आई। वह सर्वथा निर्विकार–सा, तटस्थ, चुप और शांत पड़ा था।

सहसा ही वह पस्त पड़ गया और जाकर तख्त पर ढह गया। उसके हटते ही वह उठा। एक बार उसने बड़े जोर की जम्हाई ली और फिर उछलकर उसके ऊपर सवार हो गया। उसे लगा, वह धीरे–धीरे डूब–सा रहा है। बेहोश हो रहा है... तिरोहित हो रहा है। उसने देखा कि वह दीवारों पर अँधेरे में अपनी छाप लगा रहा है। खिड़की की सलाखें पकड़ झूम रहा है। गलियों, मकानों, चौराहों, सड़कों के मोड़ों और भरे बाजारों में ऊँघता हुआ टहल रहा है। उसने देखा कि वह उसकी पत्नी के बगल में लेटा है...। तभी उसके जबड़े को कसने वाला तार, शायद टूट गया। उसे लगा कि 'उसने' उसका सिर बीच से दो टुकड़े कर दिया है। फिर उसे लगा कि 'वह' अपना थूथन, फिर पंजे और फिर धड़ उसके फटे हुए सिर के बीच घुसेड़ रहा है...। एक भयानक चिघाड़ उसे जैसे बहुत दूर से आती सुनाई दी...।

व्याख्या भाग

1. ''वह जैसा–का–तैसा स्तम्भित–सा खड़ा रह गया। ..... वह सहसा जैसे होश में आया।''

संदर्भ–प्रस्तुत अवतरण प्रख्यात कहानीकार दूधनाथ सिंह द्वारा लिखित 'रीछ' कहानी से उद्धृत है।

प्रसंग– प्रस्तुत कहानी में व्यक्ति के मन में बैठी कुंठा को व्यक्त किया गया है। मन में चलने वाले ऊहापोह से ग्रस्त व्यक्ति यह भूल जाता है कि थोड़ी देर पहले उसके मन में क्या विचार आ रहे थे फिर उसके अनुसार कार्य करने पर उसकी क्या स्थिति होगी।

व्याख्या–लेखक का विचार है कि पति मन में किसी विचार के अचानक आते ही सहमते हुए उठा तो पत्नी तपाक से उठकर बैठ गई। उसकी निगाहों में कुछ शक का भाव नजर आ रहा था। उसने एकदम पूछ लिया कि तुम इतने परेशान क्यों हो? उसकी बात सुनकर पति जैसे का तैसा स्तंभित रह गया। अचानक इस प्रश्न की उसे उम्मीद नहीं थी। यदि प्रतिदिन की तरह वह वैसा ही व्यवहार करती और बातचीत करती तो उसे कोई आश्चर्य न होता। किन्तु शंका से आशंकित होकर उठने से उसे यह विश्वास हो गया कि जो बात उसने उससे छिपाई थी वह पकड़ ली गई। हो सकता है उसे कोई दुर्गंध आ गई जिसके सहारे टटोल कर वह उस तक पहुँच जाएगी। वह एक दम उठकर बैठ गई। इतना होने के बाद उसे कुछ होश आया और उसने समझने का प्रयास किया।

विशेष

- भाषा, सरल और प्रवाहमयी है।
- व्यक्ति के मन में चलने वाले ऊहापोह को दर्शाया है।
- अभिधा और व्यंजना शब्द शक्ति का प्रयोग है।
- अचेतन मन की अव्यक्त शंकाओं को उभारने का प्रयास किया है।

2. ''वह अचकचा कर उसे देखता रह गया था। .... 'उसने पहले वाक्य' पर गुस्सा होने का अभिनय किया और दूसरे वाक्य पर भावुक होने लगा।

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण श्रेष्ठ कहानीकार स्वनाम धन्य दूधनाथ सिंह द्वारा रचित उनकी महत्वपूर्ण कहानी 'रीछ' से अवतरित है।

प्रसंग– इस कहानी में लेखक ने व्यक्ति के मन में उठने वाले आशंकित भावों को उभारने का प्रयास किया है। जब व्यक्ति अपनी कोई बात छिपाना चाहता है तो झूठ बोलता है। झूठ के पकड़े जाने पर उसे सच बताने के लिए सामने वाले से विपरीत प्रश्न करता है।

व्याख्या– प्रेम का भाव विवाह से पहले जिस गति से परवान चढ़ता है बाद में वह धीरे–धीरे न्यूनता की ओर बढ़ता चला जाता है। दाम्पत्य जीवन में बात–बात पर मन में आने वाली शंकाएँ उस प्रेम की घनिष्ठता को तोड़ने लगती हैं। कोई–न–कोई बात सामने वाले को भड़का देती है। लेखक अचकचा कर उसे देखता रहा किन्तु कोई बात कहकर उसे भड़काना उचित नहीं समझा क्योंकि इससे शंका की खाई और भी गहरी हो सकती थी। वह पत्नी को सच बताने में ही भलाई समझता था। उसने झूठ बोलने की बिल्कुल कोशिश नहीं की। इससे तो बात और भी बिगड़ जाती। बात टालने के लिए उसने गोल–मोल–सा जवाब दे दिया और उलटकर प्रश्न किया कि तुम बेकार के प्रश्न पूछकर क्या सिद्ध करना चाहती हो? वह सच्चाई बताने का प्रयत्न करता है परन्तु अंतर्मन के कारण रुक जाता है। उसे क्रोध तो आता है परन्तु फिर भावुक होकर उसे रोक लेता है।

विशेष

- भाषा सरल और प्रवाहमयी है।
- अभिधा एवं व्यंजना शब्द शक्ति का प्रयोग है।
- मनोवैज्ञानिक भावों को अभिव्यक्ति देने का प्रयास किया है।
- व्यक्ति की संवेदनशीलता को दर्शाया है।

3. ''अगर मैंने जान लिया कि ऐसा कुछ भी तुमने किया था तो मैं तुम्हें दिखा दूँगी। .... कुछ नहीं, मैं समझ गई, तुम्हें क्या पसंद है... ।''

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण नई कहानी के पुरोधा दूधनाथ सिंह द्वारा रचित उनकी कहानी 'रीछ' से अवतरित है।

प्रसंग– इस कहानी में पति–पत्नी में रिश्ते की डोर से बँधे बिंदुओं को उजागर करने का प्रयास है। अंतरंग क्षणों में उनमें किस भावनात्मक अभिनय की चर्चा होती है और उसका परिणाम क्या होता है, उसे उभारा गया है।

व्याख्या– पति अपनी पत्नी के पास सिर्फ अंतरंग क्षणों में मिलने के लिए आता है वह उसके संसर्ग में आते ही उसमें लीन हो जाता था। उसके मन न जाने कितने विचार चल रहे थे। कभी कभी वह वीराने की तरह अपने आपको महसूस करने लगता था। कभी–कभी वह पुराने रूपों को उठाते हुए टीज करने लगती। और उसकी अपने ढंग

टिप्पणी

से व्याख्या करती, उस पर अपनी कोई कहानी गढ़ लेती। वह अपने ही निर्णयों को टुकड़ों में देखती और कहती कि अगर उन्हें किसी भी प्रकार यह पता चल गया कि तुमने कुछ विपरीत करने का प्रयास किया तो वह उसका परिणाम दिखाकर रहेगी। अपनी बात पूरी करने के लिए वह किस सीमा तक जा सकती है? वह क्षणभर में यह सब दिखा सकती है। स्त्री यदि अपनी जिद पर आ जाती है तो वह ऐसा कुछ कर सकती है, जिसकी कल्पना नहीं की जा सकती। इसी त्रिया चरित्र की आड़ में वह क्या से क्या कर सकती है।

विशेष

- भाषा सरल और प्रवाहमयी है।
- स्त्री के अंतर्मन को खोलने का प्रयास किया गया है।
- अभिधा और व्यंजना शब्द शक्ति का प्रयोग है।

4. ''वह एकदम व्यर्थ और सर्द पड़ जाता। ..... लेकिन इस तरह चुप रहने का भी वह अर्थ निकाल लेती।

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण श्रेष्ठ कहानीकार दूधनाथ सिंह द्वारा लिखित 'रीछ' कहानी से अवतरित है।

प्रसंग– इसमें पति–पत्नी के मध्य के रिश्तों की सच्चाई को स्पष्ट किया है। मन और शरीर में तालमेल न होने के क्या परिणाम होते हैं, यह दिखाया गया है।

व्याख्या– पति–पत्नी के बीच जब कोई तीसरा आता है या पति पत्नी के अतिरिक्त किसी अन्य स्त्री में रुचि लेने लगता है तो यह बात पत्नी से छिप नहीं सकती। वह पति की हरकतों को देखकर जान लेती है कि उसका पति अब उसमें इतनी रुचि क्यों नहीं लेता। जब भी वे अंतरंग क्षणों में होते हैं वहाँ पति की नीरसता सब कुछ व्यक्त कर देती है। पत्नी जब पति को ताने देती है तो साथ लेटे रहने पर भी पति का जोश ठंडा पड़ जाता है। उसे लगता है कि उसकी पत्नी को सबकुछ जानकारी है तो उसकी बातों को सुनकर वह एकदम सर्द हो जाता था। उसके मन से सारा उत्साह और जोश ठंडा हो जाता और उसकी किसी प्रकार की इच्छा नहीं रहती। वह अपना ध्यान कहीं और लगाता और कभी छत की ओर ताकता रहता। वह बहुत कोशिश करता कि इस मानसिक उलझन से वह बाहर आए, परन्तु उसे कहीं से कोई रास्ता न मिलता। शुरू में जब उसने पत्नी की बातों का प्रतिवाद करने का प्रयास किया तो वह उलट उससे ही कहती कि तुम्हारे मन में चोर है तभी तो इस प्रकार की बात करते हैं। सच कड़वा होता है, सबको बुरा लगता है। ऐसी दशा में चुप रहना भी शक पैदा करता है। इससे बात और बिगड़ सकती है।

विशेष

- भाषा, सरल और भावानुकूल है।
- पति–पत्नी के मध्य उपजी शंकाओं को उभारा गया है।
- अभिधा और व्यंजना शब्द–शक्ति का प्रयोग है।
- स्त्री के मनोविज्ञान को समझाया गया है।

टिप्पणी

5. ''आधी रात से ज्यादा बीत गई थी, ... वह समझ गया और चुपचाप बैठा रहा।

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण श्रेष्ठ कहानीकार दूधनाथ सिंह द्वारा रचित कहानी 'रीछ' से अवतरित है।

प्रसंग– इसमें पति–पत्नी की संवेदनाओं को प्रस्तुत किया गया है। किसी अवांछित व्यक्ति के जीवन में आने और उसके भय से जो शक पैदा होता है, वह सारे जीवन को भयभीत करता रहता है। कहानी की प्रतीकात्मकता उसे और भी प्रभावी बना देती है।

व्याख्या– लेखक का कथन है कि पति–पत्नी के दिल में जब किसी एक बात को लेकर शक हो जाता है तो जीवन का सारा सुख चला जाता है। पति दफ्तर से छुट्टी लेकर जल्दी घर आ जाता है तो पत्नी पूछती है कि क्या कोई बात हो गई या बीमार हो गए। पत्नी के पूछने पर वह केवल इतना ही कहता है कि छुट्टियाँ पड़ी थीं सो ले ली। कुछ समय सामान्य रूप में बीतता रहा। एकदिन आधी रात बीत गई तब पत्नी ने उसे जगाकर बैठा दिया और कहा खिड़की की ओर देखो उधर कोई डरावना चेहरा दिखाई देता है। कोई खिड़की की सलाखें पकड़े बैठा है और अपना लम्बा थूथन जैसा चेहरा लिए हमें घूर रहा है। मुझे उसके चेहरे से बदबू–सी आ रही है। पति ने पहले बिस्तर पर देखा, फिर बच्चे को देखा। उसके बाद मेरी नज़र खिड़की की ओर चली गई। मुझे देखते ही वह कूद गया। पत्नी डर गई थी। उसने जो भी कहना था एक साँस में कह गई। तब पति चुपचाप बैठा रहा। खिड़की से देखने वाला कोई अवांछित व्यक्ति था, या फिर उनके जीवन में आने वाला और संबंधों को खराब करने वाला आदमी था।

विशेष

- भाषा सजीव, सरल और स्वाभाविक है।
- पति–पत्नी की संवदेनाओं को उजागर किया है।
- आधुनिक जीवन की विडम्बनाओं का चित्रण है।
- आज के यथार्थ का सहज चित्रांकन हुआ है।

6. ''सारे माहौल में एक सन्नाटा–सा बरसता होगा। ..... गनीमत यही थी कि अभी वह दुर्गंध नहीं दे रहा था।

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण आधुनिक कहानीकार दूधनाथ सिंह की प्रसिद्ध कहानी 'रीछ' से अवतरित है।

प्रसंग– इसके लेखक ने पति–पत्नी के बीच पैदा हुए शक के दायरे में उनकी यथार्थ स्थिति का चित्रण किया है।

व्याख्या– जब आपस में कोई वैचारिक शक पैदा होता है तो पति और पत्नी के व्यवहार में भी बदलाव आता है। भले ही वे ऊपर से कुछ न कहें, किन्तु मन–ही–मन एक दूसरे पर शक करते हैं। पत्नी कुछ कह नहीं पाती, परन्तु मन में घुटन अवश्य महसूस करती है। पति के घर आने पर भी वह उससे खुलकर बातचीत नहीं करती। अतः घर में एक सन्नाटा–सा छा गया। पत्नी अंदर–ही–अंदर सोच में पड़ी रहती। उसका जीवन भी

टिप्पणी

एकाकी–सा हो गया। वह पति की छाया मात्र बनकर रह गई। किसी अव्यक्त भय से उसका जीवन बोझिल हो गया। अपने अंदर के भय को छिपाने या अव्यक्त और भावी आशंका से बचने के लिए वह सिर्फ आँखे फाड़कर देखती थी या बड़े दयनीय ढंग से मुस्कराती थी या फिर बच्चे को गोद में उठाकर उसे पेशाब कराने का बहाना बनाती थी। बाहर खिड़की से आने वाली बदबू को सूंघने का बहाना करती थी। खिड़की की ओर से आने वाला वह व्यक्ति अब दुर्गन्ध नहीं छोड़ रहा था। वह कोई जानवर का रूप धारण किए व्यक्ति था, या उनके जीवन में जबरदस्ती घुसपैठ करने वाला, या इनके सुखद जीवन को खराब करने वाला कोई अमानुष।

विशेष

- भाषा सजीव, सरल और सुबोध है। आम बोलचाल की भाषा का प्रयोग हुआ है।
- पति–पत्नी की संवेदनाओं का चित्रण है।
- भावनात्मक शैली का प्रयोग है।
- भावपक्ष और कलापक्ष की दृष्टि से श्रेष्ठ रेखांकन है।

अपनी प्रगति जांचिए

17. लेखक किसे 'रीछ' समझता है?

    (क) खुद को (ख) अपनी पत्नी को

    (ग) अपनी कुंठा को (घ) अपने डर को

18. लेखक अपनी पत्नी के उठ जाने से क्यों स्तंभित हो गया?

    (क) अचानक उठा देखकर (ख) अपना भेद खुल जाने के डर से

    (ग) रीछ के आ जाने के कारण (घ) इनमें से कोई नहीं

1.11 ढाई बीघा जमीन (मृदुला सिन्हा) से व्याख्या

मूल पाठ

जमीन, जहाँ खेती होती है, वह तो साढ़े सात बीघा ही थी। एक–एक कोला की मेंड़ पर खड़े होकर देख आए थे राम बाबू। और हिसाब के शिक्षक को यह हिसाब लगाते देर नहीं लगी थी कि रामचरण सिंह के तीनों पुत्रों के बीच बँटवारे में ढाई–ढाई बीघा जमीन ही आएगी। मन–ही–मन हो रही उनकी गणना को उनके साथ चल रहे चूड़ामणि सिंह ने भी सुन लिया था। बोले, ''मास्टर साहब, आप अपनी बेटी को क्यों गड्ढे में धकेल रहे हैं? लड़के के सिर पर मात्र ढाई बीघा जमीन पड़ेगी। क्या खाएगा–खिलाएगा? कैसे परिवार पालेगा?''

रामबाबू असमंजस में पड़ गए थे। क्या बोलते? यह सच था कि वह लड़का उन्हें पसंद आ गया था। देखने–सुनने में सुंदर था। नौकरी करता था। रेलवे में किरानी हुआ तो क्या! सुविधाएँ–ही–सुविधाएँ होती हैं रेलवे की नौकरी में। यहाँ तक

टिप्पणी

कि बच्चों की भी नौकरी लग जाती है। रामबाबू को डर था तो चूड़ामणि सिंह के प्रचारक स्वभाव का। अपनी बेटी के लिए वर ढूँढने और घर–द्वार, जमीन–जत्था देखने तथा गाँव वालों से उस परिवार के सदस्यों का स्वभाव जानने–समझने के लिए उन्होंने उस गाँव में पाँच दिनों तक डेरा डाले रखा था। उनके साथ आए दो लोग तो लौट गए। एक की भैंस बिआने वाली थी। दूसरे के परिवार में कोई हादसा हो गया। बच गए सिर्फ चूड़ामणि। रामबाबू ने गाँववालों से भी अलग हट–हटकर बातें कीं। समवेत स्वर में अनुशंसा थी, ''लड़का हजारों में एक है।'' बात अटक गई थी तो सिर्फ उसके सिर पर की जमीन पर, वह भी चूड़ामणि के मन पर। क्योंकि वे ही सोते–उठते रामबाबू के निर्णय लेते मन पर लड़के के सिर ढाई बीघे जमीन का हथौड़ा मार देते। निर्णय का अंकुर चकनाचूर हो जाता।

रामबाबू ने कहा, ''चूड़ामणि, तुम समझने की कोशिश करो। लड़के के सिर पर जमीन की औकात तब देखी जाती थी, जब उसकी जीविका का साधन मात्र जमीन होती थी। अब तो लड़का नौकरी करता है। जमीन दो बीघा हो या सौ बीघा, क्या फर्क पड़ता है?''

चूड़ामणि कहाँ मानने वाले थे। बोले, ''मास्टर साहब, भगवान न करे, बिटिया के लिए कोई बुरा दिन आए। पर लड़के के साथ कुछ अनहोनी हो जाने पर जमीन ही रखवाला बन जाती है। यह भी तो लड़की के पिता को देखना पड़ता है।''

''हाँ–हाँ! नौकरी देने वाले भी ये सारी सावधानियाँ बरतते हैं। तुम चिंता मत करो।''

रामबाबू को डर था तो यह कि गाँव–जवार में चूड़ामणि बात फैला देगा, लड़का के सिर पर मात्र ढाई बीघा जमीन है। लड़के के दरवाजे पर दो बड़े–बड़े पुआल के टाल (ढेर), दो जोड़ी बैल, एक भैंस, एक गाय, एक टायर गाड़ी नहीं दिखी। इसे। पर व्यक्तिगत बातों में निर्णय के साथ भी इस समाज–भय को अपने मन से हटाना रामबाबू के लिए आसान नहीं था। पिछले साल अपने चचेरे भाई रामहुलास द्वारा बेटी का ब्याह तय करते समय स्वयं रामबाबू अड़ गए थे, 'कैसे तय करेगा विवाह! लड़के के सिर पर न जमीन है, न जायदाद। लड़की को पानी में फेंकना है क्या? हम नहीं होने देंगे यह रिश्ता।' दरअसल उस 'हम' (समाज) की अवहेलना नहीं कर सकता था कोई। तभी तो स्वयं रामबाबू समाज–भय से आतंकित थे। समाज की खरी–खोटी सुनने का भय त्याग आखिर उन्होंने हिम्मत जुटाई। अपनी बेटी के लिए वर और घर वही चुना।

बरात को दरवाजे लगाकर जनवासे लौट जाने पर रामबाबू ने कई स्त्री–पुरुषों से पूछा, ''लड़का पसंद आया?''

सबों के उत्तर का सारांश यही था, ''शक्ल–सूरत से लड़का तो ठीक है। पर इसके सिर पर तो ढाई बीघा जमीन ही है न!'' अर्थात् चूड़ामणि ने अपना काम कर दिया था।

विवाह के बाद बेटी–दामाद बाहर ही रहने लगे। दामाद किशोर का तबादला भी होता रहा। कभी–कभी रामबाबू भी चले जाते। बेटी–दामाद के साथ रहते। दोनों नातियों के जन्म होने पर तो उन्हें बेटी के साथ रहना और भी सुखद लगता। कभी बेटी

टिप्पणी

ने ढाई बीघा जमीन वाले घर में ब्याहने का उलाहना नहीं दिया। उसे फुरसत ही कहाँ थी! घर में पैसे की तंगी होती तो शायद अपने भाग्य और पिता के निर्णय को कोसती सुभद्रा। यदा–यदा किशोर के दिल में अवश्य अपने सिर पर की जमीन छूट जाने की आह उठती। वह कहता, ''गाँव में स्कूल टीचर होने का विशेष फायदा है। तनख्वाह के साथ आराम भी मिलता और खानदानी जमीन का भी फायदा हो जाता।''

सुभद्रा अपने पति के मन का काँटा व्यावहारिक बुद्धि की सूई से निकालती, ''जमीन जोतना क्या आसान है? उसमें भी लागत लगती है। वह भी तुम्हारे गाँव की जमीन! एक ही साल में दो–तीन बार बाढ़ आती है।''

''आखिर दोनों भाइयों के परिवार का गुजारा उसी जमीन से हो रहा है न!''

''गुजारा क्या हो रहा है! अभी बच्चे छोटे हैं, जैसे–तैसे पल जाएँगे। उनके बड़े होने पर पढ़ाई–लिखाई और विवाह के लिए बार–बार तुमसे ही पैसे की माँग होगी।''

किशोर पत्नी से विशेष नहीं उलझता था। उसकी व्यावहारिक बुद्धि के आगे हार मान बैठा था। जब तक माँ–बाबूजी थे, साल में एक बार दोनों गाँव जाते। सुभद्रा अपने गाँव भी जाती। उसके बाबूजी रामबाबू के मन का चोर बेटी के विवाह के पंद्रह–बीस वर्ष बाद भी घात लगाए बैठा था। उन्हें डर था–बेटी कहीं कह न दे, 'बाबूजी, आपने सिर पर ढाई बीघा जमीन वाले लड़के से मेरा ब्याह क्यों रचाया? और ऐसा किया भी तो मुझे क्यों नहीं बताया?'

दरअसल ब्याह के लिए लड़का तय करने के बाद रामबाबू उसकी नौकरी के गुण ही गाते रहते। अपने घर के अंदर ढाई बीघा जमीन की चर्चा ही नहीं की। उस बार जब सुभद्रा अपनी ससुराल गई, पड़ोस की एक सास व्याकुल आत्मा उससे कुछ बात करने के लिए कब से समय की तलाश में थी। सुभद्रा को अकेले में पाकर बोली, ''किशोर नौकरी क्या करने लगा, तुम लोगों को अपनी खानदानी जमीन की चिंता ही नहीं रही। किशोर के दोनों बड़े भाई ने मिलकर इसी वैशाख में एक बीघा जमीन बेच ली। तुम्हारे हिस्से के रुपए भी नहीं दिए। आखिर अभी जमीन का बँटवारा नहीं हुआ तो तीनों भाइयों का हिस्सा न?''

सुभद्रा के मन में भी पति के सिर पर के जमीन की लालच का अंकुर फूटा। उसकी पड़ोसन सास ने गरम लोहे पर हथौड़ा मारा, ''मैं तो कहती हूँ, बँटवारा करवा लो। अपने हिस्से की जमीन बटैया लगा दो या उन्हीं भाइयों को जोतने–कोड़ने के लिए दे दो। कम–से–कम जमीन बेचेंगे तो नहीं। न जाने कब काम आ जाए! नौकरी तो ताड़ पेड़ की छाया है। जमीन जमीन ही होती है, दुर्दिन में माँ बन जाती है। और अपने हिस्से को क्यों छोड़ना!''

सुभद्रा के मन के नवांकुर की सिंचाई हो गई थी। पड़ोस की सास भी अपना काम बन जाने के संतोष के साथ ही घर वापस गई। दूसरे तीर से उसने एक और घाव कर दिया था, ''जमीन ही कितनी है। किशोर के सिर मात्र ढाई बीघा पड़ेगी। उसके अलावे घरारी, बथान, फुलवारी भी है। भाई तीन हैं न! तुम्हारे ददिया ससुर और मेरे ससुरजी आधे के हिस्सेदार थे; पर मेरे पति उनके इकलौते बेटे। और हमारा भी एक। इसलिए मेरे बेटे के सिर पर तो दस बीघा है। दो पीढ़ियों में जमीन बँटी नहीं।''

टिप्पणी

सुभद्रा इस बार ससुराल जाने पर बहुत सी दुनियादारी की बातें सीख आई थी। उसने किशोर से कहा, ''एक काम करो, अपना तबादला सीतामढ़ी स्टेशन पर करवा लो। गाँव भी पास हो जाएगा, खेती भी करवा लिया करेंगे।''

दो बच्चों की पढ़ाई का बहाना बहुत बड़ा था। इसलिए भाइयों के आगे बँटवारे का प्रस्ताव रखने की हिम्मत की औकात की इज्जत भी रह गई। तब तक सुभद्रा के सिर से खेती करवाने के लिए नए शौक का भूत भी उतर गया था। पर विवाह के बीस वर्ष बाद एक और भूत सवार हुआ था, पिता से लड़ाई करने का भूत! आखिर उसके पिता ने वैसे लड़के से क्यों ब्याहा, जिसके सिर पर मात्र ढाई बीघा जमीन थी! पिता की बीमारी का समाचार पाकर उसे दुबारा गाँव जाना पड़ा। अपने पिता से शिकायत करने के लिए उसका मन लुसफुसाता था। परंतु मरण–शय्या पर पड़े थे रामबाबू! बेटी शिकायत करने की हिम्मत नहीं जुटा पाई। पिता ने ही एकांत पाकर कहा, ''सुभी, मेरे मन पर एक बोझ है। तुम्हारा विवाह तय करते समय मैंने बहुत सोचा। मैं भी ऐसे लड़के से तुम्हारा विवाह नहीं करना चाहता था, जिसके सिर पर...''

उन्हें खाँसी आ गई थी। पिता का कलेजा सहलाती सुभद्रा ने वाक्य–पूर्ति कर दी थी, ''मात्र ढाई बीघा जमीन थी।''

''हाँ–हाँ!'' बड़ी मुश्किल से बोल पाए रामबाबू। पर अपनी आँखों में उमड़े जल के रंगों द्वारा अपना छुपा दर्द प्रकट कर गए। बेटी ने आश्वासन दिलाया, ''बाबूजी, आपकी बेटी गाँव की अपनी उन हमउम्र बेटियों से ज्यादा सुखी है, जिनके पिता ने मात्र लड़के के सिर पर पचास या सौ बीघा जमीन देखकर विवाह किया। बस, आप मेरी चिंता नहीं करें।''

फिर तो मन हलका हो गया। आँखें ऐसी मूँदीं कि फिर खोली ही नहीं। शांतिपूर्ण मृत्यु के लिए पिता को सांत्वना देना और बात थी। पर सुभद्रा के मन पर ढाई बीघा जमीन कम नहीं रही थी। अचानक पति की मृत्यु हो जाने पर उसकी भी शहर में रहने की समस्या आ खड़ी हुई थी। बड़े बेटे की रेलवे में ही नौकरी लग जाने पर मकान की समस्या हल हो गई। साल भर बाद ही दोनों बेटों की ब्याहने की तैयारी करने लगी। छोटा कम्प्यूटर इंजीनियर था। दस लाख का पैकेज मिलता था। 'पैकेज' का अर्थ और व्यवहार समझने में सुभद्रा को कई महीने लगे। कई रिश्ते आए। दोनों कमाऊ पुत्तर थे। सभी लड़की वालों को सुभद्रा कहना नहीं भूलती, ''मेरे बेटे के सिर पर पुश्तैनी जमीन भी है।''

सबों का एक ही जवाब था, ''है तो क्या? आज कौन नौजवान खेती करने जाता है! नौकरी है न!''

एक लड़की वाले ने कहा, ''बहनजी, क्या आपको अपने पति के सिर पर की जमीन का फायदा हुआ? नहीं न! फिर इन बच्चों को क्या फायदा होगा? आपके बेटे की नौकरी बरकरार रहनी चाहिए, बस!''

और उन्होंने अपनी बेटी का रिश्ता पक्का कर दिया था। गाँव से दोनों बड़े ताऊ–ताई और उनके बच्चे भी आए थे। चूड़ा, चावल, दाल, घी और सब्जियाँ लेकर आए थे। बातों–बातों में उन्होंने ही दूसरे मेहमानों को बताया, ''अब हमारे गाँव की

टिप्पणी

जमीन की कीमत बहुत बढ़ गई। बाँध बँध गया है। बाढ़ भी नहीं आती। बार–बार आई बाढ़ ने हमारी जमीन उपजाऊ बना दी है। जमीन सोना उगलती है। हमारे बच्चे भी खुशहाल हैं। शहर की नौकरी तो ताड़ की छाँव है, आज है तो कल नहीं। पुश्तैनी जमीन तो माँ के बराबर होती है, जिसकी छाया सिर से कभी नहीं हटती। संतान के सुखी जीवन से माँ भले ही दूर हो जाए, दुर्दिन में संजीवनी बन खड़ी होती है।''

विवाहोत्सव के कार्यों में लगी सुभद्रा के कानों में ये बातें भी पड़कर अपना स्थान बनाती रहीं। विवाह का आयोजन समाप्त हुआ। दुलहन घर आई। ताइयों ने खूब सराहा बहू के लक्षण को, दान–दहेज की भी प्रशंसा की। बड़ी जेठानी गाँव जाते समय बोलीं, ''सुभद्रा, कभी–कभी गाँव आ जाया करो। बच्चों को पाल–पोस दिया, अब क्या? अब तो गाँव भी शहर जैसा है। और बहू से गृह–देवता की पूजा भी तो करवानी है।''

''आऊँगी दीदी, आऊँगी।''

सुभद्रा ने तो ऐसे ही कह दिया था। उसे कहाँ फुरसत थी! दोनों बेटों के दो घर–एक अलीगढ़ और एक गुड़गाँव। एक करोड़ का फ्लैट लिया था मनीष ने। छह लाख की गाड़ी भी थी। सब कर्जे पर। वह सबकुछ था, जितने को जुटाने में कइयों की उम्र गुजर जाती थी। स्वयं सुभद्रा और किशोर ने भी इतने सरंजाम नहीं सहेजे। मनीष के यहाँ तो अब बस घरवाली की कमी थी। कई रिश्ते आए। सुभद्रा उन दिनों गुड़गाँव के फ्लैट में ही रहती। सब सुख था। पर एक ही कमी दिन भर अकेले रहने का दुःख! सुबह 7 बजे निकलकर रात्रि के 8–9 बजे आता मनीष। सुभद्रा ने कहा, ''तुम अपनी कंपनी के बँधुआ मजदूर हो क्या? यदि ऐसी स्थिति रही तो कौन लड़की तुम्हारी पत्नी बनकर घर में रहेगी?''

मनीष मुस्कराया था। जिस लड़की से उसका विवाह निश्चित हुआ, उसे भी सात लाख का 'पैकेज' मिलता था। छह महीने बाद विवाह होना था। इस बीच ही मंदी की हवा बह गई। विश्व में मंदी। पैकेज वालों की धड़कनें तीव्र हो गईं, क्योंकि वे सबसे ऊँचाई पर थे। मंदी की बयार भी तो सबसे पहले ऊँचाई को ही प्रभावित करेगी। करोड़ टकिया फ्लैट, दस लाखी गाड़ियाँ, बीवियाँ सब बोझ लगने लगीं। पर वे जाएँ तो जाएँ कहाँ?

और एक दिन वही हुआ, जिसकी आशंका प्रकट की जा रही थी। मंदी का पहला प्रहार पैकेज पर ही हुआ। गुड़गाँव के अधिकतर फ्लैट के रंग बदरंग हो गए। मनीष चुपचाप रहने लगा था। सुभद्रा चिंतित थी। उसने एक दिन बेटे को डाँटा, ''बोलते क्यों नहीं? अब तो विवाह की तैयारी करो। शहनाई बजवाऊँगी मैं। उसका बयाना तो दे दो। शादी के और भी सरंजाम बुकिंग कराने हैं। अब दिन ही कितने बचे हैं!''

मनीष चुप रहा। उसी शाम नौकरी से बरखास्तगी की चिट्ठी आ गई थी और दूसरे ही दिन लड़की वाले ने दूरभाष पर विवाह का रिश्ता तोड़ने की सूचना दे दी।

मनीष ने चुप्पी भंग की, ''अब क्या होगा, माँ?''

माँ को सोचने में एक दिन लगा था। बहुत सोच–समझकर बोली, ''बेटा! मैं। क्या कह सकती हूँ। विशेष पढ़ी–लिखी भी नहीं। एक उपाय मन में आया है, गाँव लौटने का। चलो, वहाँ जमीन भी है और मेरे हिस्से की एक बड़ी कोठरी तथा आँगन

टिप्पणी

का कोना। तुम्हारे पापा के सिर ढाई बीघा जमीन होने का बड़ा शोर सुना था। हमने उसका उपयोग नहीं किया। नौकरी करते थे। उनकी नौकरी की अनुकंपा नौकरी बड़े बेटे को मिली। पुश्तैनी जमीन तुम ले सकते हो। यह किसी की अनुकंपा नहीं, तुम्हारा हक है।''

मनीष माँ के सुझाव पर आश्चर्य प्रकट कर गया।

''हाँ, मैं ठीक कहती हूँ।''

''क्या?'' वह अनमना–सा बोला।

''यही कि गाँव चलो। कम–से–कम जब तक मंदी रहे। देखना, फिर दिन बहुरेंगे तुम्हारे भी, पैकेज के भी। जिंदगी तो बितानी होती है, बेटा। पैकेज के सहारे या पुश्तैनी जमीन के सहारे, क्या फर्क पड़ता है।''

मनीष ने हामी तो नहीं भरी थी, पर रात को माँ–बेटे दोनों को अच्छी नींद आई थी। सुबह का अखबार हाथ में लेकर मनीष गाँव जाने की योजना बना रहा था। उसने एक मित्र द्वारा आत्महत्या करने की खबर फोटो के साथ छपी थी। वह भी पैकेज वाला नौजवान था, शादीशुदा।

माँ चाय ले आई थी। मनीष लिपट गया माँ से। बोला, ''माँ, चलो, अभी गाँव चलते हैं।''

सुभद्रा बुदबुदाई थी, 'कभी सुना था, जेवर संपत्ति का शृंगार और विपत्ति का आहार होता है। पर तुम्हारे लिए तो पुश्तैनी जमीन ही विपत्ति का आहार बन रही है। ढाई बीघा ही है तो क्या, तिनके का सहारा।'

मनीष माँ की ओर ऐसे देख रहा था, मानो जीवन में पहली बार आभार प्रकट करने का मन बन आया हो। रुक गया मनीष। उस भाव और चिंता को कृतज्ञता से निपटाया नहीं जा सकता था। उसने माँ की गोद में सिर छुपा लिया था, जहाँ मंदी का हलका झोंका भी कभी नहीं पहुँचता। वह सावन–भादों की नदियों समान भरी रहती हैं–छलकती भी है, सूखती नहीं।

व्याख्या भाग

1. "मैं तो कहती हूं बंटवारा करा लो।..... हिस्से को क्यों छोड़ना।"

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण हिन्दी महिला कहानीकार मृदुला सिन्हा द्वारा लिखित 'ढाई बीघा जमीन' कहानी से अवतरित है।

प्रसंग– इस कहानी में लेखिका ने गांव में रहने वाले किसान के लिए थोड़ी होते हुए भी जमीन की महत्ता पर प्रकाश डाला है और उनकी उपयोगिता दिखाई है।

व्याख्या– सुभद्रा जब ब्याह के अपने ससुराल आई तो उसकी एक पड़ोसन सास ने अपनी 'मंथरा चाल' चलते हुए समय पाकर सुभद्रा को सिखाने लगी कि गांव की पुश्तैनी जमीन का तीनों बेटों में बंटवारा कर दो। इसके बाद अपनी हिस्से की जमीन को बंटाई पर या भाइयों को जोतने के लिए दे दो। इससे जमीन को कोई बेचेगा नहीं। क्योंकि

जमीन ही ऐसी संपत्ति है जो विपत्ति के समय काम आती है और व्यक्ति अपना जीवनयापन सुचारू रूप से चला सकता है।

इसके विपरीत नौकरी का कोई भरोसा नहीं है। नौकरी तो उस ताड़ के पेड़ की छाया के समान है जो तने के पतले होने से छाया नहीं देती है। जमीन का अपना महत्व है। जमीन तो दुर्दिनों में व्यक्ति के लिए संकट–मोचक बन जाती है। जैसे मां बुरे दिनों में अपने आंचल में बच्चों की सुरक्षा करती है ओर अपने हिस्से का खाना भी बच्चों को सौंप देती है। इसी प्रकार अपने हिस्से की जमीन को भी नहीं छोड़ना चाहिए।

टिप्पणी

विशेष

- भाषा सहज, सरल और बोधगम्य है।
- देशज शब्दों का प्रयोग हुआ है।
- नौकरी की अपेक्षा जमीन का महत्व दर्शाया है।
- जमीन को मां के रूप में देखा गया है।
- अभिधा और व्यंजना शब्द शक्ति का प्रयोग है।

2. "अब हमारे गांव की ..... संजीवनी बन खड़ी होती है।"

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण हिन्दी की महिला कहानीकारों में अग्रगण्य स्वनामधन्य मृदुला सिन्हा द्वारा लिखित कहानी 'ढाई बीघा जमीन' से लिया गया है।

प्रसंग– इस कहानी में लेखिका ने गांव में रहने वाले निर्धन कृषक परिवार की मानसिक स्थिति का चित्रण किया है। वह जमीन के छोटे टुकड़े की अपेक्षा शहर में नौकरी कर जीवनयापन के लिए अपने बेटे को प्रोत्साहित करता है।

व्याख्या– गांव में किसान जब अपनी बेटी का रिश्ता लेकर कहीं जाता है तो वह देखता है कि उसका होने वाला दामाद कितना कमाता है, क्या नौकरी करता है, अथवा उसके पास अच्छी जमीन है जिसकी आमदनी से वह अपना घर परिवार ठीक चला सके और उसकी बेटी का लालन–पालन ठीक कर सके। गांव के प्रमुख व्यक्ति चूड़ामणी के विचार से ढाई बीघा जमीन कम होती है क्योंकि किसी भी प्रकार अनायास आई विपत्ति में कैसे जीवनयापन किया जा सकता है? वह जमीन को महत्व देता है। आज के युग में जमीन की कीमत बहुत बढ़ गई है। वहां बांध बंध गया है। इससे बाढ़ भी नहीं आती और फसल की हानि भी नहीं होती। बार–बार बाढ़ आने से जमीन में परिवर्तन हो गया है और वह उपजाऊ हो गई है। बच्चे भी प्रसन्न हैं जबकि शहर की नौकरी में क्या होता है? वह तो ताड़ की छांव के समान है जिसकी छांव न के बराबर होती है। पुश्तैनी जमीन मां के आंचल के बराबर होती है जो संकट में रक्षा करती है।

विशेष

- भाषा सहज, सरल और सुबोध है।
- जमीन के महत्व को स्पष्ट किया गया है।

टिप्पणी

- आम बोलचाल की भाषा का प्रयोग हुआ है।
- भाव पक्ष और कला पक्ष की दृष्टि से उत्तम शब्दांकन है।

3. "मनीष मुसकराया था। ..... पर वे जाएं तो जाएं कहां?

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण हिन्दी की प्रमुख महिला कहानीकार मृदुला सिन्हा द्वारा लिखित कहानी 'ढाई बीघा जमीन' से अवतरित है।

प्रसंग– इस कहानी में नौकरी पेशा व्यक्ति की आर्थिक स्थिति पर प्रकाश डाला गया है। भारतीय समाज में विवाह भी आर्थिक स्थिति को देखकर किया जाता है। मंदी के जमाने में तो नौकरी पर भी संकट आ जाता है भले ही कितना पैकेज मिलता हो। मंदी के जमाने में जीवनयापन करने के लिए तो बीवी भी बोझ लगने लगती है।

व्याख्या– आर्थिक मंदी के दौर में मनीष का विवाह जिस लड़की से होना तय था, उसे भी सात लाख का पैकेज मिला हुआ था। मनीष इस बात को जान कर मुस्कराया था कि होनेवाली बीवी भी अच्छा कमा रही है। विवाह में अभी छः महीने बाकी थे। किंतु दुर्भाग्य कि इसी बीच शादी से पहले मंदी की बयार बह निकली। इससे अच्छा पैकेज लेने वालों को भी चिंता हो गई। न जाने कब नौकरी से हटा दिए जाएं? जिन्हें अच्छा पैकेज मिलता था वे ही ऊंचाई पर थे और सबसे पहले उन्हीं पर असर होना था। ऐसे समय अधिक खर्च करना उन्हें भारी पड़ता है। बड़ी गाड़ियां, बड़ा फ्लैट यहां तक कि बीबी भी बोझ लगने लगती है क्योंकि उसका खर्च उठाना भी कठिन हो जाता है। फिर भी, ऐसी स्थिति में क्या किया जा सकता है? स्थिति तो चिंतनीय है ही।

विशेष

- भाषा सहज, सरल और सुबोध है।
- जीवनयापन के साधनों पर चिंता व्यक्त की गई है।
- भाव और भाषा तथा शैली का अनूठा संगम है।
- अभिधा शब्द शक्ति का प्रयोग हुआ है।

4. "सुभद्रा बुदबुदाई थी, ... ढाई बीघा ही है तो क्या, तिनके का सहारा।"

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण सुप्रसिद्ध कहानीकार मृदुला सिन्हा द्वारा लिखित कहानी 'ढाई बीघा जमीन' से अवतरित है।

प्रसंग– इस कहानी में लेखिका ने नौकरी की अपेक्षा पुश्तैनी जमीन पर भरोसा करते हुए उसे ही विपत्ति में सहारा बताया है?

व्याख्या– मनीष अपने माता–पिता के साथ शहर में रहकर नौकरी करता है। उसे अच्छा पैकेज मिला हुआ है। उसके गांव में उसकी पुश्तैनी ढाई बीघा जमीन है जो उनके लिए एक सहारा भी है। उसकी अच्छी कीमत है। इसी बीच देश में मंदी का दौर आ गया। अब जिन्हें नौकरी में अच्छा पैकेज मिला हुआ था वे भी चिंता में पड़ गए।

अब कैसे गुजर–बसर होगी। गांव की जमीन भले ही थोड़ी है फिर भी वह एक मुसीबत में सहारा बनती है।

मनीष की मां सुभद्रा बुदबुदाई और कहने लगी कि जब विपत्ति आती है तो मनुष्य के पास रखे जेवर और आभूषण उसकी जीविका में काम आते हैं। वह उन्हें बेचकर या साहूकार के पास रख कर अपने जीवन को चलाने के लिए सहायता के रूप में उपयोग करता है।

टिप्पणी

सुभद्रा कहती है कि जेवर (आभूषण) विपत्ति में दूर करने वाले और संपत्ति का शृंगार बनते हैं। किंतु मनीष तुम्हारे लिए तो वह पुश्तैनी जमीन ही विपत्ति का आहार बन रही है। अर्थात् वह मुसीबत के हल के रूप में सामने है। इससे किसी भी प्रकार जीवन की बड़ी समस्या हल नहीं हो रही है किंतु कुछ तो सहारा है जैसे डूबते को तिनके का सहारा होता है वैसे ही ढाई बीघे जमीन होते हुए भी एक सहारा है।

विशेष

- भाषा सरल, सुबोध और बोधगम्य है।
- भाव पक्ष और कला पक्ष अत्युत्तम है।
- देशज शब्दों का प्रयोग हुआ है।
- अभिधा और व्यंजना शब्द शक्ति का प्रयोग है।

5. "मनीष मां की ओर ऐसे देख रहा था, ... छलकती भी है, सूखती नहीं।

संदर्भ– प्रस्तुत अवतरण सुप्रसिद्ध कथाकार मृदुला सिन्हा की कहानी 'ढाई बीघा जमीन' से अवतरित है।

प्रसंग– प्रस्तुत कहानी में लेखिका ने आधुनिक समय में नौकरी पेशा लोगों की अपेक्षा पुश्तैनी जमीन को अपने जीवनयापन का आधार बनाए जाने पर बल दिया है। कहानी का पात्र मनीष अपनी मां के कहने पर गांव में रहकर कार्य करने और जमीन की देखभाल करने का विचार करता है।

व्याख्या– जब मां ने मनीष को समझाया कि जेवर आभूषण व्यक्ति के जीवन में संपन्नता में अच्छे लगते हैं किंतु वही आभूषण विपत्ति में बहुत काम आते हैं और जीवन को कष्टों से उबारते हैं। इसीलिए उन्हें विपत्ति का आहार कहा जाता है। वे जेवर विपत्ति दूर करने के साधन होते हैं। मनीष की मां उसे समझाती है कि तुम्हारी पुश्तैनी जमीन ही अब तुम्हारे लिए विपत्ति का आहार अर्थात तुम्हारी मुसीबत दूर करने का साधन बन गई है। इस पुश्तैनी जमीन की उपज से ही आपका जीवनयापन होता रहेगा।

मां के समझाने पर मनीष भाव–विभोर होकर उन्हें आभार प्रकट करने की सोच रहा था, किंतु अचानक रुक गया क्योंकि वह जानता है कि उस भाव और चिंता को कृतज्ञता से नहीं निपटाया जा सकता। इसी से उसने मां की गोद में सिर रख लिया। मां की गोद में भौतिक मंदी का कोई असर नहीं होता। मां की ममता ऐसी होती है जैसे सावन–भादो की जल से भरी नदी। जो जल से भरी रहती है, छलकती भी है किंतु

सूखती कभी नहीं।

विशेष

- भाषा सहज, सरल और भावानुकूल है।
- अभिधा, व्यंजना शब्द शक्ति का प्रयोग है।
- मां की ममता की महत्ता को बताया गया है।
- भाव पक्ष और कला पक्ष दोनों दृष्टि से उत्तम है।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

19. ढाई बीघा जमीन कहानी में मूल चिंता क्या दिखाई गई है?

(क) महंगाई (ख) जमीन

(ग) मंदी (घ) बाढ़

20. सुभद्रा किशोर की मृत्यु के बाद किसके साथ रहती थी?

(क) गांव में (ख) बड़े बेटे के साथ

(ग) मनीष के साथ (घ) अकेले

1.12 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (ग)
2. (ग)
3. (ग)
4. (घ)
5. (घ)
6. (ग)
7. (ख)
8. (घ)
9. (ग)
10. (ख)
11. (क)
12. (घ)
13. (क)
14. (ग)
15. (घ)
16. (ख)

टिप्पणी

17. (ग)
18. (ख)
19. (ख)
20. (ग)

1.13 सारांश

प्रेमचंद अपने उपन्यास 'गबन' में जालपा की स्थिति का चित्रांकन करते हुए कहते हैं कि स्त्रियों का आभूषण प्रेम स्वाभाविक है। ससुराल से गहने चढ़ाना बहू के प्रति उनके लाड–प्यार का प्रतीक माना जाता है। साथ ही गहने उनकी संपन्नता के भी परिचायक होते हैं। फिर जालपा के मायके में तो स्त्रियों के मध्य आभूषणों की ही चर्चा रहती थी। उसे बार–बार यह बताया जाता था कि उसका दूल्हा उसके लिए सुंदर–सुंदर गहने लेकर आयेगा। गहनों की ही चर्चा सुनते–सुनते जालपा का गहनों के प्रति अपार आकर्षण हो जाना स्वाभाविक ही था।

म्यूनिसिपैलिटी की नौकरी लगने पर जब रमानाथ उसके लिए चंद्रहार और शीशफूल लेकर आया तो उसके उल्लास की कोई सीमा न रही। जालपा की खुशी के लिए रमानाथ ये जेवर सामर्थ्य की कमी होते हुए भी उधारी पर ले आया था। कुछ दिनों बाद चरणदास नामक दलाल जालपा को कंगन और रिंग पसंद करा गया, जिनका मूल्य सात सौ रुपये रमानाथ की सामर्थ्य से बाहर था, लेकिन रमानाथ को तकाजे सहना, लज्जित होना, मुंह छिपाये फिरना, चिंता की आग में जलना, सब कुछ मंजूर था लेकिन ऐसा काम करना नामंजूर था, जिसमें जालपा का दिल टूट जाए या वह स्वयं को अभागिन समझने लगे।

नगरपालिका के कुछ सरकारी रुपये जमा न कर पाने पर रमानाथ जेल जाने के भय से कलकत्ता भाग जाता है। यहां एक रात पुलिस के चंगुल में फंस जाता है। पुलिस उसे एक झूठे मुकदमे में मुखबिर बनने को मजबूर कर देती है और अदालत में अपने अनुसार गवाही करा लेती है। जालपा प्रयाग से कलकत्ता आकर उसे गबन के भय से मुक्त कर देशभक्तों के विरुद्ध गवाही देने से मना करती है लेकिन पुलिस द्वारा झूठे मुकदमें में फंसाये जाने का डर और अच्छी नौकरी का प्रलोभन एक बार फिर उसे सच्चाई के पथ से विचलित कर देता है।

मन्नू भंडारी का 'आपका बंटी' उपन्यास एक दस वर्ष की आयु के बालक बंटी की कहानी है। बंटी के मम्मी–पापा शकुन और अजय का जीवन सुखद रूप में चल रहा था। कुछ समय पश्चात् उनमें विरोधाभास प्रतीत होने लगा। बात यहाँ तक बिगड़ी कि तलाक की स्थिति आ गई। बंटी के चाचा उन्हें समझाने क लिए आए हैं। वे कहते हैं कि जिंदगी केवल हमारे चाहने से ही हमारे अनुसार नहीं चलती। उसके लिए बहुत कुछ न्योछावर और त्याग करना पड़ता है। जब चाचा शकुन को समझाते हैं तब बंटी भी वहाँ हाजिर है। वे किसी बहाने से उसे वहाँ से भेजना चाहते हैं और उससे खेलने के विषय में पूछते हैं। बंटी उनकी सभी बातें समझता है। वह साफ कहता है कि सीधे से क्यों नहीं कहते कि यहाँ से चले जाओ। वह जानता है कि चाचा बीच–बीच में न

टिप्पणी

जाने किस–किस की बात कह कर मुख्य बात से फिर जाते हैं। जब कुछ समझ में नहीं आता तो बंटी अपनी मम्मी से पूछने की इच्छा करता है, क्योंकि किसी को कहे हुए विचार समझ नहीं आते। इस उपन्यास में बाल मनोविज्ञान का मार्मिक चित्रण हुआ है।

जयशंकर प्रसाद की 'गुण्डा' कहानी में नन्हकू एक पचास वर्ष से भी ऊपर का व्यक्ति है फिर भी अधिक बलवान है और वीरता ही इसका धर्म है। वह सताये हुए व्यक्ति एवं निर्बलों की सहायता करता है, हमेशा अपने प्राणों को हथेली पर लेकर घूमता है और सबकी रक्षा करता है। इसे ही लोग गुण्डा कहते हैं। विडंबना है कि वह खुद दुनिया की नजर में गलत होते हुए भी जरूरतमंदों की मदद के लिए अपनी जान हथेली पर लेकर चलता है।

प्रेमचंद जी की कहानी 'कफन' घीसू और माधव नाम के दो पात्रों पर केंद्रित है। प्रेमचंद के समय में निम्न समाज, जिसमें प्रेमचंद इस स्थल पर कृषक और खेतिहर मजदूर की बात कर रहे हैं– की स्थिति कुछ बहुत अच्छी नहीं थी, जबकि वे दिन–रात मेहनत करते थे। इसके विपरीत जो कुछ भी काम नहीं करते थे, केवल किसानों की दुर्बलताओं से लाभ उठाना जानते थे, कहीं अधिक संपन्न थे। प्रेमचंद जी की मान्यता है कि जब एक ओर कठोर परिश्रम करके कृषक भूखों मर रहा हो और निकम्मे व्यक्ति (कृषकों के शोषक) दूसरी ओर मौज मना रहे हों; शायद इसी विचार ने उन दोनों को ही निकम्मा बना दिया था। इस कहानी को पढ़कर लगता है कि पूंजीवादी व्यवस्था के बीच अभाव में रह रहे व्यक्तियों की संवेदना भी मर चुकी होती है।

'अपना–अपना भाग्य' जैनेन्द्र कुमार की कहानी है। लेखक अपने दोस्तों के साथ नैनीताल शहर घूमने गया है। नैनीताल जैसी स्वर्गिक जगह पर गरीब व्यक्ति का बालक अभावग्रस्त होकर इधर–उधर भटक रहा है। लेखक ने अपने मित्र के सहयोग से उसे सहायता पहुंचाने का प्रयास किया। किन्तु भाग्य में कुछ और ही था। बालक को सहायता के लिए अगले दिन होटल आने के लिए कहा लेकिन नियति में कुछ और ही था। लेखक अपने मित्र के साथ नैनीताल की यात्रा समाप्त कर लौट रहा है। उन्हें मोटर में सवार होते ही एक पहाड़ी बालक की सड़क के किनारे मृत्यु का समाचार मिला, जो ठंड से ठिठुर कर मर गया था। जिस बालक के प्रति लेखक की सहानुभूति थी वह दस बरस की उम्र में काले चिथड़ों की कमीज पहने हुए इस दुनिया को छोड़ गया। यह मनुष्य की निष्ठुरता का रूप है कि एक बालक को अभाव का सामना करना पड़ा। प्रत्यक्षदर्शियों ने बताया कि उस गरीब के मुंह, छाती, पैरों पर बर्फ की हल्की–सी चादर चिपक गई थी। मानो दुनिया की बेहयाई ढकने के लिए प्रकृति ने शव के लिए सफेद और ठंडे कफन का इंतजाम किया था। यही भाग्य की विडम्बना है। इस कहानी में आर्थिक स्थिति से कमजोर व्यक्ति के जीवन की विडंबना को इंगित किया है।

'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम' रेणु की ग्राम्यांचल की कहानी है। एक गाड़ीवान हिरामन और कम्पनी की सवारी हीराबाई के बीच की कहानी है। हिरामन उलटकर देखता है कि उसकी गाड़ी में न तो बोरे हैं और न बांस है, कम्पनी के जानवर बाघ भी नहीं हैं। कम्पनी की परी, देवी, हीरादेवी, महुआ घटवारिन कोई नहीं है। उसने अपने जीवन के कटु अनुभव के आधार पर दो कसमें खाई थीं कि चोरबाजारी का माल

टिप्पणी

नहीं लादेगा और बांस नहीं लादेगा। अब वह तीसरी कसम खा रहा है कि कंपनी की औरत की लदनी नहीं करेगा। क्योंकि जिस कंपनी की औरत के लिए उसके दिल में जगह बनी और जिसे वह अधिक चाहने लगा था अब वह भी उसे छोड़कर जा रही है। मन में ऐसा ख्याल आते ही उसने अपने बैलों को झिड़की देते हुए आगे बढ़ने के लिए दुआली मारी। बैलों ने कदम खोलकर चाल पकड़ी। वह गुनगुनाने लगा–''अजी हाँ, मारे गए गुलफाम...?'' इस कहानी में ग्रामीण समाज के निश्छल परिवेश को चित्रित किया गया है।

भीष्म सहनी की 'चीफ की दावत' कहानी में बरामदे का दृश्य देखकर मिस्टर शामनाथ की टांगें लड़खड़ा गईं। उनका सारा नशा छू–मन्तर हो गया। मां ठीक कोठरी के सामने कुर्सी पर बैठी थीं। उनके दोनों पांव कुर्सी पर थे। सिर दाएं से बाएं और बाएं से दाएं घूमे जा रहा था। खर्राटों की आवाजें आ रही थीं। सिर रुकते ही खर्राटे और ज्यादा आने लगते। शोर करने लगते। क्षण भर बाद सिर झटके से फिर हिलना शुरू कर देता। ये ही होते–होते बूढ़ी मां का आंचल सिर से खिसक गया। ऐसा हो गया तो मां के झरे हुए बालों के कारण उनका गंजा सिर और उस पर हल्के अस्त–व्यस्त खिचडी बाल दिखायी देने लगे। ये सब दृश्य देखकर मिस्टर शामनाथ का क्रोध आसमान को छूने लगा। इस कहानी में पाश्चात्य समझने दिखावे के रंग में रंगे बूढ़े माता–पिता को बोझ समझने वाले तथाकथित सभ्य संतानों का चित्रण बड़ी ही सजीवता से प्रस्तुत किया गया है।

दूधनाथ सिंह की कहानी 'रीछ' व्यक्ति के अंतर्द्वन्द्वों की लड़ाई की प्रतीकात्मक कहानी है। जब आपस में कोई वैचारिक शक पैदा होता है तो पति और पत्नी के व्यवहार में भी बदलाव आता है। भले ही वे ऊपर से कुछ न कहें, किन्तु मन–ही–मन एक दूसरे पर शक करते हैं। पत्नी कुछ कह नहीं पाती, परन्तु मन में घुटन अवश्य महसूस करती है। पति के घर आने पर भी वह उससे खुलकर बातचीत नहीं करती। अतः घर में एक सन्नाटा–सा छा गया। पत्नी अंदर–ही–अंदर सोच में पड़ी रहती। उसका जीवन भी एकाकी–सा हो गया। वह पति की छाया मात्र बनकर रह गई। किसी अव्यक्त भय से उसका जीवन बोझिल हो गया। अपने अंदर के भय को छिपाने या अव्यक्त और भावी आशंका से बचने के लिए वह सिर्फ आँखे फाड़कर देखती थी या बड़े दयनीय ढंग से मुस्कराती थी या फिर बच्चे को गोद में उठाकर उसे पेशाब कराने का बहाना बनाती थी। बाहर खिड़की से आने वाली बदबू को सूंघने का बहाना करती थी। खिड़की की ओर से आने वाला वह व्यक्ति अब दुर्गन्ध नहीं छोड़ रहा था। वह कोई जानवर का रूप धारण किए व्यक्ति था, या उनके जीवन में जबरदस्ती घुसपैठ करने वाला, या इनके सुखद जीवन को खराब करने वाला कोई अमानुष। इस कहानी में पति–पत्नी के बीच दुराव–छिपाव से उपजे मानसिक तनाव की व्यंजना की गई है।

'ढाई बीघा जमीन' खेत या पुश्तैनी जमीन की महत्ता स्थापित करती मृदुला सिन्हा की एक बहुत प्रसिद्ध कहानी है। कहानी में जब मां ने मनीष को समझाया कि जेवर आभूषण व्यक्ति के जीवन में संपन्नता में अच्छे लगते हैं किंतु वही आभूषण विपत्ति में बहुत काम आते हैं और जीवन को कष्टों से उबारते हैं। इसीलिए उन्हें विपत्ति का

आहार कहा जाता है। वे जेवर विपत्ति दूर करने के साधन होते हैं। मनीष की मां उसे समझाती है कि तुम्हारी पुश्तैनी जमीन ही अब तुम्हारे लिए विपत्ति का आहार अर्थात तुम्हारी मुसीबत दूर करने का साधन बन गई है। इस पुश्तैनी जमीन की उपज से ही आपका जीवनयापन होता रहेगा। इस कहानी में पुश्तैनी जमीन का महत्व प्रतिपादित करते हुए गांव की ओर लौट चलने की भावना अभिव्यक्त की गई है।

1.14 मुख्य शब्दावली

- **खब्त** : गड्ढा, जाल, माया।
- **फजीहत** : बेइज्जती, अपमान।
- **कामलिप्सा** : काम (भोग) में लिप्त रहने की प्रवृत्ति।
- **दाम्पत्य** : वैवाहिक, दंपत्ति सम्बंधी।
- **बलिष्ठ** : बलशाली।
- **तसकीन** : इत्मिनान, संतोष।

1.15 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. जयशंकर प्रसाद ने 'गुण्डा' कहानी में गुण्डा की धज (वेश–भूषा) क्या बताई है?
2. 'कफन' कहानी में घीसू और माधव में से कोई भी बुधिया का हाल जानने अंदर क्यों नहीं जा रहा था?
3. 'अपना–अपना भाग्य' कहानी में लेखक और उसके मित्र ने लड़के को पैसे क्यों नहीं दिए थे?
4. 'तीसरी कसम' में हिरामन ने बांस की लदनी न करने की कसम क्यों खाई थी?
5. 'चीफ की दावत' में मिस्टर शामनाथ दावत की तैयारियों के दौरान किस बात को लेकर चिंतित हो गए थे?
6. 'दोपहर का भोजन' कहानी में मुंशी जी ने रोटी खाते–खाते ऊब जाने की बात क्यों कही?
7. 'रीछ' कहानी में लेखक अपनी पत्नी से किस बात को लेकर डरता रहता था?
8. 'ढाई बीघा जमीन' कहानी में मनीष की नौकरी छूट जाने पर सुभद्रा उसे क्या समझाकर दिलासा देती है?

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. 'गबन' उपन्यास का सार अपने शब्दों में लिखिए।
2. 'आपका बंटी' उपन्यास की केंद्रीय समस्या पर प्रकाश डालिए।
3. 'कफन' कहानी की यथार्थता का विश्लेषण कीजिए।

टिप्पणी

4. 'नैनीताल–स्वर्ग के किसी काले गुलाम पशु के दुलारे का वह बेटा', 'अपना–अपना भाग्य' कहानी में लेखक के इस कथन को व्याख्यायित कीजिए।
5. हिरामन के 'तीसरी कसम' खाने के पीछे किन स्थितियों का योगदान रहा? सविस्तार समझाइए।

1.16 सहायक पाठ्य सामग्री

1. इन्द्रनाथ मदान, 'प्रेमचन्द चिन्तन और कला', सरस्वती प्रेस, वाराणसी।
2. रामविलास शर्मा, 'प्रेमचन्द और उनका युग', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. लालचन्द गुप्त, 'हिन्दी कहानी का इतिहास' संजीव प्रकाशन, कुरुक्षेत्र।
4. नामवर सिंह, 'कहानी नयी कहानी', लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2009।
5. रामदरश मिश्र, 'हिन्दी उपन्यास : एक अन्तर्यात्रा', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016।
6. राजेन्द्र यादव ,'एक दुनिया समानान्तर', राधाकृष्णन प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003।

टिप्पणी

इकाई 2 हिन्दी उपन्यास एवं कहानी का उद्‌भव, विकास एवं प्रवृत्तियां

संरचना

2.0 परिचय
2.1 उद्देश्य
2.2 हिन्दी उपन्यास का उद्‌भव, विकास एवं प्रवृत्तियां
  2.2.1 पूर्व प्रेमचंद युग
  2.2.2 प्रेमचंद युग
  2.2.3 उत्तर प्रेमचंद युग
  2.2.4 स्वातंत्र्योत्तर युग
2.3 हिन्दी कहानी का उद्‌भव, विकास एवं प्रवृत्तियां
  2.3.1 हिंदी कहानी का उद्‌भव
  2.3.2 हिंदी कहानी का विकास
  2.3.3 नयी कहानी
  2.3.4 ग्रामांचल की कहानियां
  2.3.5 परवर्ती कहानी का बदलता स्वरूप
  2.3.6 प्रमुख कथाकार
2.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
2.5 सारांश
2.6 मुख्य शब्दावली
2.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
2.8 सहायक पाठ्य सामग्री

2.0 परिचय

हिन्दी साहित्य में उपन्यासों का प्रादुर्भाव भारतेंदु–युग से ही होता है। इस युग में श्रीनिवास दास द्वारा लिखित उपन्यास 'परीक्षा गुरु' को हिन्दी का पहला मौलिक उपन्यास माना जाता है। इस युग में ज्यादातर उपन्यास या तो बांग्ला और अंग्रेजी भाषा से अनूदित थे या उनमें उपन्यास के तत्वों का अभाव था। हालांकि इस काल के कई उपन्यास बहुत प्रसिद्ध हुए। देवकीनन्दन खत्री द्वारा रचित 'चन्द्रकांता संतति' को पढ़ने के लिए कहा जाता है कि लोगों ने विशेष रूप से हिन्दी सीखी। किंतु इस युग में लिखित उपन्यास या तो उपदेशपरक थे या तिलस्मी, ऐयारी, जासूसी चमत्कारों वाले किस्से मात्र थे।

उपन्यास लेखन में पहला युगान्तकारी परिवर्तन प्रेमचंद के उदय के साथ आया। प्रेमचंद ने उपन्यास को तिलस्म की दुनिया से निकालकर समाज में स्थापित किया। प्रेमचंद की उपादेयता इसी बात से सिद्ध होती है कि आलोचक जब भी उपन्यास यात्रा का वर्गीकरण करते हैं, प्रेमचंद ही केंद्र में होते हैं।

प्रेमचंद के पश्चात उपन्यास सामाजिक–राजनीतिक परिदृश्य के साथ–साथ मनुष्य के वैयक्तिक स्तर पर उतरकर मनोवैज्ञानिक परिदृश्य को भी समेट लिया।

टिप्पणी

साथ ही साथ आंचलिक, शहरी एवं ग्रामीण जीवन की झलक भी उपन्यासों में प्रधानता पाने लगी।

हिन्दी कहानी भी उपन्यास की ही भांति पश्चिम से प्रेरित होकर आधुनिक रूप में उतरी। हिन्दी कहानी साहित्य का वर्गीकरण भी प्रेमचंद को केंद्र में रख क्रमशः पूर्व–प्रेमचंद युग, प्रेमचंद–प्रसाद युग, उत्तर–प्रेमचंद युग, स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी के रूप में किया गया है।

इस इकाई में हिन्दी उपन्यास एवं कहानी के उद्भव एवं विकास की यात्रा पर प्रकाश डालते हुए इनकी प्रवृत्तियों को समझाया गया है।

2.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- हिन्दी उपन्यास के उद्भव एवं उसकी विकास–यात्रा से परिचित हो पाएंगे;
- हिन्दी उपन्यास की प्रवृत्तियों की विवेचना कर पाएंगे;
- हिन्दी कहानी के उद्भव एवं विकास–यात्रा को समझ पाएंगे;
- हिन्दी कहानी की मूल प्रवृत्तियों एवं प्रमुख कथाकारों के विषय में जान पाएंगे।

2.2 हिन्दी उपन्यास का उद्भव, विकास एवं प्रवृत्तियां

उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में ही भारत में अंग्रेजी राज्य स्थापित हो चुका था। उनकी शिक्षा नीति से प्रभावित होकर जो प्रदेश सबसे पहले अंग्रेजी साहित्य के संपर्क में आए उनमें उपन्यासों का प्रचलन अपेक्षाकृत पहले हुआ। यही कारण है कि हिंदी की अपेक्षा बांग्ला साहित्य में उपन्यासों की रचना पहले हुई और आगे चलकर हिंदी उपन्यास पर उनका पर्याप्त प्रभाव पड़ा। इतना ही नहीं प्रारंभिक काल में कितने ही बांग्ला उपन्यासों का हिंदी में अनुवाद भी किया गया।

अब विचारणीय प्रश्न यह है कि हिंदी का सर्वप्रथम उपन्यास किसे माना जाए। हिंदी गद्य का विकसित रूप सामने आते ही उपन्यासों की रचना होने लगी। सन् 1877 में श्रद्धाराम ने 'भाग्यवती' उपन्यास लिखा और उसके बाद सन् 1882 में लाला श्री निवासदास ने 'परीक्षा गुरु'। 'भाग्यवती' में नारी शिक्षा और उपदेश से अधिक कुछ नहीं है जबकि 'परीक्षा गुरु' में उपदेशात्मकता के साथ–साथ समस्त औपन्यासिक तत्वों का समावेश भी है। इसलिए 'परीक्षा गुरु' को ही हिंदी साहित्य का प्रथम उपन्यास माना जाता है।

हिंदी उपन्यास का विकास

हिंदी उपन्यास की विकास यात्रा पर एक विहंगम दृष्टि डालें तो पता चलेगा कि हिंदी उपन्यासों का जन्म सुधारवादी भावनाओं की क्रीड़ा में हुआ। इस समय देश में समाज के नैतिक उत्थान और सांस्कृतिक परंपराओं की रक्षा के लिए कई आंदोलन चल रहे थे। इसीलिए प्रारंभिक उपन्यासों में दो प्रकार की रचनाएं सामने आती हैं– उपदेशात्मक

टिप्पणी

तथा मनोरंजन प्रधान। इसके साथ ही एक दूसरी धारा अनूदित उपन्यासों की रही जिसमें अंग्रेजी, उर्दू, बांग्ला आदि भाषाओं में लिखे उपन्यासों के अनुवाद प्रस्तुत किए गए।

भारतेंदु से लेकर अब तक के उपन्यासकारों में प्रेमचंद का नाम सर्वोपरि है। अतः हम प्रेमचंद को ही उपन्यास की विकास यात्रा का केंद्र बिंदु मानकर संपूर्ण विकास क्रम को समझने का प्रयत्न करेंगे। अध्ययन की सुविधा के लिए हम हिंदी उपन्यास के विकास क्रम को चार युगों में विभाजित कर सकते हैं–

1. पूर्व–प्रेमचंद युग
2. प्रेमचंद युग
3. उत्तर–प्रेमचंद युग
4. स्वातंत्र्योत्तर युग।

2.2.1 पूर्व–प्रेमचंद युग

आधुनिक युग का जनक हम भारतेंदु को ही मानते हैं। अपने जीवन काल में उन्होंने 'कुछ आप बीती, कुछ जग बीती' नाम से एक उपन्यास भी लिखना शुरू किया था किंतु वह अधूरा ही रह गया। इसके अतिरिक्त भारतेंदु ने एक मराठी उपन्यास 'पूर्ण प्रकाश' और 'चंद्र प्रभा' का अनुवाद भी किया था। इसके बाद उपन्यासों की एक लंबी कड़ी दृष्टिगत होती है जिसमें कई प्रकार के मौलिक और अनूदित उपन्यासों की रचना हुई।

भारतेंदु के समय में ही श्रीनिवास दास ने 'परीक्षा गुरु' नाम का एक शिक्षाप्रद उपन्यास लिखा था। इसमें पहली बार औपन्यासिक तत्वों का कुछ समावेश किया गया था इसीलिए इसे हिंदी का पहला उपन्यास स्वीकार किया जाता है। इस रचना में दिल्ली के एक सेठ पुत्र की कहानी है जो कुसंगति में पड़ जाता है। अंत में एक सज्जन मित्र द्वारा उसका उद्धार होता है। इस उपन्यास में उपदेशात्मक प्रवृत्ति प्रधान है। अतः हम इसे एक सुधारवादी उपन्यास कह सकते हैं। इसके बाद भी कुछ छुट–पुट प्रयत्न होते रहे। ठाकुर जगमोहन सिंह का 'श्यामा स्वप्न', रत्नचंद प्लीडर का 'नूतनचरित', बालकृष्ण भट्‌ट का 'नूतन ब्रह्मचारी' और 'सौ अजान एक सुजान', राधाकृष्ण दास का 'निस्सहाय हिंदू', बालमुकुंद गुप्त का 'कामिनी' आदि उपन्यास इसी समय के लिखे गए। ये सभी उपन्यास सामाजिक कहे जा सकते हैं।

इसके बाद उपन्यास सर्जना का यह क्रम निरंतर चलता रहा। सामाजिक, पौराणिक, ऐतिहासिक, तिलस्मी, ऐयारी, जासूसी सब प्रकार के उपन्यास रचे जाने लगे। यदि ऐसा कहा जाए कि उपन्यासों की एक बाढ़–सी आ गई तो अत्युक्ति न होगी किंतु प्रमुख नाम केवल तीन हैं– किशोरी लाल गोस्वामी, देवकीनंदन खत्री और गोपालराम गहमरी।

किशोरी लाल गोस्वामी ने अकेले ही 65 उपन्यासों की रचना की। देवकीनंदन खत्री हिंदी के पहले मौलिक उपन्यास लेखक थे जिनके तिलस्मी उपन्यासों की सर्वसाधारण में धूम मच गई। 'चंद्रकांता संतति' उनका प्रसिद्ध उपन्यास है। कहते हैं

टिप्पणी

इस उपन्यास को पढ़ने के लिए बहुत से लोगों ने हिंदी सीखी। इन उपन्यासों में घटनाओं के साथ कल्पनाशीलता की प्रधानता थी। इससे जनता का मनोरंजन तो खूब हुआ किंतु कलात्मक तुष्टि नहीं। इसी समय अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध ने 'अधखिला फूल' और 'ठेठ हिंदी का ठाठ' नामक उपन्यास लिखे जिनका महत्व केवल भाषायी स्तर का है। लज्जा राम मेहता ने कुछ आदर्शवादी उपन्यासों की रचना की।

इन मौलिक उपन्यासों के साथ–साथ विभिन्न भाषाओं यथा अंग्रेजी, उर्दू, बांग्ला, मराठी आदि से उपन्यासों के अनुवाद किए जाने की परंपरा भी चलती रही। इन उपन्यासों का हिंदी के औपन्यासिक रचना–विधान पर विशेष प्रभाव पड़ा।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि उपन्यास साहित्य का आरंभ भले ही सामान्य स्तर का रहा किंतु इसका उत्तरोत्तर विकास बड़े ही उत्साहजनक वातावरण में हुआ। आलोचकों का कथन है कि हिंदी में जितने उपन्यास इस युग में रचे गए, परवर्ती किसी युग में नहीं।

2.2.2 प्रेमचंद युग

प्रेमचंद का हिंदी उपन्यास साहित्य के विकास की परंपरा में एक महत्वपूर्ण योगदान है। उन्होंने हिंदी उपन्यास को काल्पनिक तथा तिलस्मी, ऐयारी, जासूसी के इंद्रजाल से निकालकर मानव जीवन की यथार्थ समस्याओं से संबद्ध किया। इस समय देश में कांग्रेस की स्थापना हो चुकी थी। गांधी जी राजनीतिक क्षेत्र में जो कार्य कर रहे थे प्रेमचंद ने वही कार्य साहित्यिक क्षेत्र में किया। उनके उपन्यासों में सर्वत्र गांधीवादी नीतियों का प्रतिपादन किया गया है। उन्होंने हमेशा शोषण के विरुद्ध आवाज उठाई। समाज में दृष्टिगत अनेक समस्याओं यथा विधवा विवाह, वेश्या समस्या, अनमेल विवाह, दहेज प्रथा, अवैध प्रेम, जाति–भेद आदि को वाणी दी। वे समाज का परिसंस्कार करना चाहते थे इसलिए उनका दृष्टिकोण प्रायः आदर्शोन्मुख यथार्थवादी रहा।

प्रेमचंद ने दो प्रकार के उपन्यास लिखे– राजनीतिक और सामाजिक। 'प्रेमा' और 'वरदान' उन दिनों के उपन्यास हैं जब वे नवाबराय के नाम से उर्दू में लिखा करते थे। 'सेवासदन' कलात्मक दृष्टि से प्रथम प्रौढ़ उपन्यास है जिसमें मध्यमवर्ग की विडंबना को दिखलाकर वेश्या समस्या का समाधान प्रस्तुत किया गया है। 'प्रेमाश्रम' में ग्रामीण जीवन की समस्याओं का चित्रण करते हुए किसानों की दुर्दशा का चित्र खींचा गया है। 'रंगभूमि' में शासक वर्ग के अत्याचार का चित्रण है। 'कर्मभूमि' एक राजनीतिक–सामाजिक उपन्यास है जिसमें जनता की साम्राज्य विरोधी भावना व्यक्त हुई है। 'प्रतिज्ञा' की समस्या विधवा–विवाह से जुड़ी है। 'गबन' में आभूषणों की लालसा के दुष्परिणाम को चित्रित किया गया है। 'कायाकल्प' पुनर्जन्मवाद से संबद्ध है। 'निर्मला' में अनमेल विवाह के दुष्परिणामों को बतलाते हुए विमाता की समस्या को अंकित किया गया है। 'गोदान' में किसान और मजदूर के शोषण की करुण कथा कही गई है। यह उपन्यास मुंशी प्रेमचंद का सर्वश्रेष्ठ उपन्यास है। इसमें समस्या को उठाकर गांधीवादी ढंग से उसका कोई समाधान नहीं किया गया। यह उपन्यास सर्वथा एक यथार्थवादी उपन्यास है। प्रेमचंद ने सर्वथा आदर्शवाद और यथार्थवाद में एक अद्भुत संतुलन

बनाकर रखा। उन्होंने वर्ग–वैषम्य, आर्थिक शोषण, सामाजिक असमानता, पूंजीवादी संस्कृति और बुर्जुवा मनोवृत्ति के विरुद्ध अपने उपन्यासों के माध्यम से एक ऐसा जनमत तैयार किया जिससे देश में प्रगतिशील समाज की स्थापना हो सके। इस प्रकार प्रेमचंद ने उपन्यास साहित्य को प्रौढ़ता ही नहीं दी अपितु अपने समकालीन रचनाकारों का मार्ग दर्शन भी किया।

प्रेमचंद के समकालीन उपन्यासकारों में बहुत से नाम उल्लेखनीय हैं यथा जयशंकर प्रसाद, चतुरसेन शास्त्री, विशवंभरनाथ शर्मा 'कौशिक', भगवतीचरण वर्मा, पांडेय बेचन शर्मा उग्र, वृंदावनलाल वर्मा, जैनेंद्र, इलाचंद्र जोशी आदि।

जयशंकर प्रसाद ने केवल तीन उपन्यास लिखे। 'कंकाल', 'तितली' एवं 'इरावती'। 'इरावती' उनका अधूरा उपन्यास है। 'कंकाल' में उन्होंने स्त्री–पुरुष की प्रेम–समस्या पर व्यक्तिवादी दृष्टिकोण से विचार किया। 'तितली' में अंतर्जातीय विवाह का समर्थन किया गया है। इस प्रकार प्रसाद का दृष्टिकोण प्रेमचंद से नितांत भिन्न था। प्रेमचंद ने अपने उपन्यासों में समाज और सामाजिक समस्याओं को प्रमुखता दी किंतु प्रसाद ने व्यक्ति और उसकी वैयक्तिक समस्याओं को विभिन्न सामाजिक समस्याओं के संदर्भ में देखा है। आगे चलकर जैनेंद्र और इलाचंद्र जोशी ने मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास लिखे। मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में जैनेंद्र के उपन्यास 'परख', 'सुनीता' और 'कल्याणी' तथा इलाचंद्र जोशी के मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासों में 'संन्यासी' को विशेष प्रसिद्धि प्राप्त हुई।

चतुरसेन शास्त्री ने सामाजिक और ऐतिहासिक दोनों प्रकार के उपन्यास लिखे। किंतु वृंदावनलाल वर्मा ने केवल ऐतिहासिक उपन्यासों के आधार पर ख्याति अर्जित की। 'झांसी की रानी' इनका प्रसिद्ध उपन्यास है। इसी समय भगवतीचरण वर्मा का उपन्यास 'चित्रलेखा' भी विशेष रूप से चर्चित हुआ।

इस काल में उपन्यास नामक विधा ने पहले से कहीं अधिक विकास किया। इस युग में अधिकांशतः मौलिक उपन्यासों की रचना हुई तथा उपन्यासकारों में पहले से कहीं अधिक कलात्मक संयम दिखाई दिया। इस युग के वर्ण्य विषयों में भी विविधता है। सामाजिक, ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक और मनोविश्लेषणात्मक सभी प्रकार के उपन्यास लिखे गए। समाज में जैसे–जैसे परिवर्तन आता रहा वैसे– वैसे उपन्यासकारों की चिंतनधारा अपने युग के यथार्थ से प्रभावित होती रही। यद्यपि प्रेमचंद गांधीवादी धारा से प्रभावित रहे वहीं ऐतिहासिक उपन्यासकार प्राचीन सांस्कृतिक गौरव की रक्षा में लगे रहे एवं मनोवैज्ञानिक व मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासकार पाश्चात्य चिंतकों– फ्रायड, एडलर आदि के सिद्धांतों से प्रभावित होकर अपनी रचनाओं में व्यक्ति की कुंठाओं का चित्रण करते रहे।

2.2.3 उत्तर–प्रेमचंद युग

प्रेमचंद ने हिंदी उपन्यास को जो ठोस आधारभूमि दी उससे इस विधा के विकास की चौमुखी राहें खुल गईं। इस समय द्वितीय महायुद्ध समाप्त हो चुका था और पाश्चात्य साहित्य में दो प्रभावशाली विचारधाराएं प्रचलित हो रही थीं– पहली फ्रायडवादी सिद्धांतों से प्रभावित मनोवैज्ञानिक या मनोविश्लेषणवादी और दूसरी मार्क्सवाद के

टिप्पणी

सिद्धांतों से प्रभावित प्रगतिवादी उपन्यास धारा। इनका समानांतर विकास प्रेमचंद के समय में ही हो गया था। प्रेमचंद का 'गोदान' तथा जैनेंद्र और इलाचंद्र जोशी के उपन्यास इस कथन की पुष्टि करते हैं। प्रेमचंद अपने उपन्यासों द्वारा एक प्रगतिशील समाज की स्थापना अवश्य करना चाहते थे किंतु उन्होंने इसके लिए न तो कोई मार्क्सवादी झंडा ही गाड़ा और न ही नारेबाजी की जैसा कि आगे चलकर यशपाल ने किया। हिंदी में यशपाल को मार्क्स के सिद्धांतों से प्रभावित प्रगतिवादी औपन्यासिक धारा का प्रवर्तक माना जाता है। इनके उपन्यासों में से 'दादा कामरेड', 'देशद्रोही', 'मनुष्य के रूप' इसी कोटि के उपन्यास हैं। इनमें इनकी साम्यवादी विचारधारा स्पष्ट परिलक्षित होती है। 'दिव्या' यशपाल का एक ऐतिहासिक उपन्यास है किंतु इसमें भी इनकी चिंतन पद्धति समाजवादी ही है। इसी धारा में आगे चलकर रांगेय राघव ने 'घरौंदे' तथा 'हुजूर' उपन्यासों की रचना की। इनका दृष्टिकोण प्रगतिवादी था। इन उपन्यासों में इन्होंने आर्थिक वैषम्य और शोषण आदि विभिन्न समसामयिक विकृतियों पर चोट की। राहुल सांकृत्यायन ने 'जीने के लिए', 'जय यौधेय और सिंह सेनापति' लिखे। इसके अतिरिक्त रामेश्वर शुक्ल अंचल व नागार्जुन ने कई उपन्यास लिखे जिनमें पूंजीवादी संस्कृति के प्रति आक्रोश प्रकट किया गया है।

फ्रायड के सिद्धांतों से प्रभावित होकर जैनेंद्र 'परख', 'सुनीता' और 'त्यागपत्र' उपन्यास पहले ही लिख चुके थे। इस युग में प्रकाशित उनके उपन्यास– 'कल्याणी', 'सुखदा', 'विकास', 'व्यतीत', 'जयवर्धन' आदि में यह प्रवृत्ति मनोविज्ञान, दार्शनिकता आदि माध्यम से विविध रूप में उभरी। उनके नारी पात्र यदि एक ओर समाज की मर्यादाओं को बनाए रखना चाहते हैं, तो दूसरी ओर अपने अस्तित्व की पहचान भी कराना चाहते हैं। ऐसी स्थिति में आत्म–पीड़न के अतिरिक्त उनके पास कोई राह शेष नहीं रहती। यही कारण है कि उनके पात्र समाज को न तोड़कर स्वयं टूटते हैं।

इसी कड़ी में आगे चलकर अज्ञेय ने 'शेखर एक जीवनी' लिखकर हिंदी उपन्यास में एक नया मोड़ उपस्थित किया। कथ्य, शिल्प और भाषा के स्तर पर यह एक नवीन प्रयोग था। इस उपन्यास का मूल मंतव्य शेखर के व्यक्तित्व की खोज और शेखर के 'व्यक्ति' का साक्षात्कार है।

इसी समय पूर्व प्रेमचंद युग से चली आ रही ऐतिहासिक उपन्यासों की परंपरा को वृंदावनलाल वर्मा ने आगे बढ़ाया। भले ही इन्होंने प्रेमचंद युग में लिखना आरंभ कर दिया था किंतु इनकी लेखनी अबाध गति से चलती रही। इन्होंने 'कचनार', 'मुसाहिबजू', 'कुंडली–चक्र', 'प्रत्यागत', 'माधव जी सिंधिया' और 'मृगनयनी' आदि कई उपन्यास लिखे। 'मृगनयनी' इनका सर्व प्रसिद्ध उपन्यास है। राहुल सांकृत्यायन, रांगेय राघव, निराला, चतुरसेन शास्त्री तथा हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी इसी परंपरा को आगे बढ़ाया। राहुल के 'वोल्गा से गंगा', चतुरसेन शास्त्री के 'वैशाली की नगरवधू' और आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के 'बाणभट्ट की आत्मकथा' ने विशेष ख्याति अर्जित की।

सामाजिक समस्याओं पर लिखने वाले उपन्यासकारों में उग्र, भगवतीचरण वर्मा, सियारामशरण गुप्त, भगवती प्रसाद वाजपेयी, विष्णु प्रभाकर आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। इसी समय उपेंद्रनाथ ने अपने उपन्यासों में नगरों में वास कर रहे मध्यमवर्गीय

टिप्पणी

सामाजिक जीवन की अनेक कुंठाओं का सशक्त ढंग से चित्रण किया। 'गिरती दीवारें' इनका प्रसिद्ध उपन्यास है। यथार्थवादी परंपरा के उपन्यासों में यह उपन्यास अपना विशिष्ट स्थान रखता है।

इस प्रकार औपन्यासिक दृष्टि से यह युग अत्यंत महत्वपूर्ण रहा। प्रेमचंद के पश्चात समाजवादी यथार्थवाद को चित्रित करने वाले उपन्यासकारों में यशपाल, मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों में अज्ञेय, ऐतिहासिक उपन्यासकारों में वृंदावनलाल वर्मा, सामाजिक उपन्यासकारों में भगवतीचरण वर्मा और यथार्थवादी उपन्यासकारों में उपेंद्रनाथ अश्क ने अपनी विशिष्ट पहचान बनाई।

इस युग के उपन्यासों में विषय–वैविध्य है। भाषा और शिल्प के धरातल पर भी कई नवीन प्रयोग मिलते हैं।

2.2.4 स्वातंत्र्योत्तर युग

स्वाधीनता के पश्चात भारतवासियों को एक साथ कई समस्याओं का सामना करना पड़ा। सत्ता का बदला जाना, आर्थिक विपन्नता, हिंदू–मुस्लिम वैमनस्य के भयंकर हिंसक परिणाम, विभाजन की विभीषिका– इन सबसे साधारण जनता त्रस्त हो उठी। ऐसी स्थिति में जबकि चारों ओर अंधकार था, रचनाकारों में एक नया भावबोध उत्पन्न हुआ जो घोर सामाजिक और अपूर्व जिजीविषा का भाव लिए हुए था। अतः इस समय हिंदी उपन्यास कई मोड़ों से गुजरता हुआ दिखाई देता है।

अध्ययन की सुविधा के लिए इन्हें प्रवृत्यात्मक वर्गों में विभाजित किया जा रहा है– यथा सामाजिक, समाजवादी यथार्थवादी, ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक, आंचलिक, प्रयोगशील, आधुनिकता–बोध आदि।

(क) सामाजिक उपन्यास

सामाजिक समस्याओं पर लिखने वाले उपन्यासकारों में आप बहुत से लेखकों और उनकी रचनाओं का परिचय पहले प्राप्त कर चुके हैं जैसे– पांडेय बेचन शर्मा उग्र, भगवतीचरण वर्मा, भगवती प्रसाद वाजपेयी, उदयशंकर भट्‌ट, सियारामशरण गुप्त, विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक, विष्णु प्रभाकर, उपेंद्रनाथ अश्क। आगे चलकर अमृतलाल नागर भी इसी कड़ी में जुड़ गए और उपन्यास के क्षेत्र में अपना विशिष्ट स्थान बनाया।

यहां केवल प्रमुख उपन्यासकारों को ही ले रहे हैं जो निरंतर उपन्यास लिखने में प्रवृत्त रहे जैसे– भगवतीचरण वर्मा, उपेंद्रनाथ अश्क और अमृतलाल नागर।

भगवतीचरण वर्मा ने इस काल में कई उपन्यास लिखे– चित्रलेखा, टेढ़े–मेढ़े रास्ते, आखिरी दांव, भूले बिसरे चित्र, रेखा, सीधी सच्ची बातें और सबहिं नचावत राम गोसाईं। 'चित्रलेखा' के पश्चात 'भूले बिसरे चित्र' इनकी सर्वाधिक सशक्त रचना है।

उपेंद्रनाथ अश्क अपने लेखन को सशक्त बनाने में सतत् प्रयत्नशील हैं। उनके उपन्यासों में 'गिरती दीवारें' सर्वोत्तम है, जो मध्यमवर्गीय नैतिक वर्जनाओं को तोड़ने की प्रेरणा देता है। 'शहर में घूमता आईना' और 'एक नन्हीं कंदील' इस उपन्यास के अगले खंड हैं और अपने आप में पूर्ण हैं।

टिप्पणी

इसके अतिरिक्त 'गरम राख', 'बड़ी–बड़ी आंखें', 'पत्थर–पत्थर', बांधो न नाव इस ठांव' इनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं।

इस युग के सामाजिक उपन्यासकारों में अमृतलाल नागर का विशेष स्थान है। 'प्रेमचंद' के बाद उन्हें यथार्थवादी चेतना का प्रमुख उपन्यासकार कहा जा सकता है। 'नवाबी मसनद', 'सेठ बांकेमल', 'महाकाल', बूंद और समुद्र', अमृत और विष', 'मानस का हंस', 'शतरंज के मोहरे', 'नाच्यो बहुत गोपाल', 'खंजन नयन', 'सुहाग के नूपुर', 'करवट और पीढ़ियां' इनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं। इन उपन्यासों में इतिहास, पुरातत्व और आधुनिकता का सुंदर समावेश मिलता है। 'बूंद और समुद्र' इनका सफल एवं बहुचर्चित उपन्यास है। 'बूंद और समुद्र' क्रमशः व्यक्ति और समाज के प्रतीक हैं। इसमें भारतीय समाज के विभिन्न रूपों, रीति–नीतियों, आचार–विचारों, जीवन– दृष्टियों, मर्यादाओं, टूटती और निर्मित होती व्यवस्थाओं के अनगिनत चित्र हैं। इस उफनते हुए समुद्र में व्यक्ति अर्थात बूंद की क्या स्थिति है यही इस उपन्यास का प्रतिपाद्य है। व्यक्ति और समाज के पारस्परिक संबंधों का चित्रण इस उपन्यास में जिस रोचक शैली में किया गया है, उसने इसे एक विशिष्ट औपन्यासिक कृति बना दिया है। 'मानस का हंस' में गोस्वामी तुलसीदास, और 'खंजन नयन' में सूरदास के जीवन–वृत्तांत को जिस प्रकार उन्होंने एक सफल औपन्यासिक व्यक्तित्व प्रदान किया है वह निश्चय ही अपूर्व है।

(ख) समाजवादी यथार्थवाद के उपन्यास

स्वातंत्र्योत्तर काल में अश्क और नागर के साथ–साथ यशपाल ने अपनी विशिष्ट मार्क्सवादी विचारधारा के कारण अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व स्थापित किया। 'अमिता' और 'दिव्या' को छोड़कर उनके शेष उपन्यास समाजवादी यथार्थवाद का चित्र प्रस्तुत करते हैं। प्रारंभिक उपन्यासों के नाम 'दादा कामरेड', 'देशद्रोही', 'पार्टी कामरेड' आदि इस बात की पुष्टि करते हैं कि वे क्रांतिकारी दल से संबंधित थे और मार्क्सवादी विचारधारा का उन पर गहरा प्रभाव था। 'झूठा सच' उनका सबसे प्रसिद्ध उपन्यास है। यह उपन्यास दो भागों में लिखा गया– 'वतन और देश' तथा 'देश का भविष्य'। इस उपन्यास में उन्होंने जीवन के विविध रूपों, समस्याओं और जटिलताओं को विस्तार से चित्रित किया है। पहला भाग देश के विघटन को प्रस्तुत करता है, इसलिए अपेक्षाकृत अधिक प्रामाणिक, यथार्थ और मार्मिक बन पड़ा है। डॉ. नगेन्द्र 'झूठा सच' को हिंदी का महाकाव्यात्मक उपन्यास मानते हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने 'मनुष्य का रूप', 'बारह घंटे' और 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास लिखे। 'मनुष्य के रूप' में परिवर्तनशील मानवीय रूप के मूल में आर्थिक समस्या की भूमिका स्वीकार की गई है और 'मेरी तेरी उसकी बात' में भारत के स्वतंत्रतापूर्व और स्वातंत्र्योत्तर काल के सामाजिक–राजनीतिक जीवन का चित्रण किया गया है।

यशपाल की परंपरा के उपन्यासकारों में राहुल सांकृत्यायन के 'सिंह सेनापति' और 'वोल्गा से गंगा', नागार्जुन के 'रतिनाथ की चाची', 'बलचनमा', 'बाबा बटेसरनाथ', 'वरुण के बेटे', 'दुख मोचन', रांगेय राघव के 'घरौंदा', 'सीधा सादा रास्ता', 'कब तक पुकारूं', और 'मुर्दों का टीला', भैरवप्रसाद गुप्त के 'मशाल', 'गंगा मैया', और 'सती मैया का चौरा', अमृतराय के उपन्यास 'बीज', 'नागफनी का देश', और 'हाथी के दांत', विशेष उल्लेखनीय हैं। प्रायः इन सभी उपन्यासों में वर्ग वैषम्य और आर्थिक शोषण का चित्रण किसी न किसी रूप में प्रभावशाली ढंग से किया गया है।

टिप्पणी

(ग) ऐतिहासिक उपन्यास

यद्यपि हिंदी में यह धारा बहुत प्रखर नहीं है फिर भी पूर्व प्रेमचंद युग से चली आ रही है। पहले के उपन्यास ऐतिहासिक न होकर केवल इतिहास नामधारी थे। इस क्षेत्र को प्रतिष्ठित करने वाले हैं– वृंदावनलाल वर्मा, राहुल सांकृत्यायन, हजारी प्रसाद द्विवेदी और आचार्य चतुरसेन शास्त्री। इनमें से वृंदावनलाल वर्मा और चतुरसेन शास्त्री प्रेमचंद युग में ही अपने नाम को प्रतिष्ठित कर चुके थे। वृंदावनलाल वर्मा की 'झांसी की रानी' और 'मृगनयनी', चतुरसेन शास्त्री की 'वैशाली की नगरवधू' अत्यंत सुगठित रचनाएं हैं। हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'बाणभट्‌ट की आत्मकथा' के अतिरिक्त 'चारुचंद्र लेख', 'पुनर्नवा' और 'अनामदास का पोथा' की रचना की। यशपाल का 'दिव्या' और 'अमिता', भगवतीचरण वर्मा का 'चित्रलेखा' भी ऐतिहासिक उपन्यास है जिनके विषय में पहले चर्चा की जा चुकी है।

(घ) आंचलिक उपन्यास

स्वातंत्र्योत्तर काल में एक नई धारा सामने आई। कुछ उपन्यासों में केवल प्रदेश विशेष की संस्कृति को उसके सजीव वातावरण में प्रस्तुत किया गया। इस दिशा में फणीश्वरनाथ रेणु का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। 'मैला आंचल' और 'परती परिकथा' इनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं। इनमें बिहार प्रदेश की संस्कृति का सजीव चित्रण किया गया है। उदयशंकर भट्‌ट का 'सागर लहरें' और 'मनुष्य', रांगेय राघव का 'कब तक पुकारूं', नागार्जुन का 'बलचनमा' तथा 'वरुण के बेटे', देवेन्द्र सत्यार्थी का 'रथ के पहिये', रामदरश मिश्र का 'पानी के प्राचीर', शैलेश मटियानी का 'होल्दार', शिवप्रसाद मिश्र का 'बहती गंगा', 'टूटता हुआ', विवेकी राय का 'सोना माटी', 'समर शेष है', महत्वपूर्ण उपन्यास हैं।

आजकल हिंदी में नगर और ग्रामीण अंचल से संबंधित अनेक उपन्यास लिखे जा रहे हैं। इन उपन्यासों की सर्वप्रमुख विशेषता है प्रादेशिक तथा स्थानीय रंग।

(ङ) मनोवैज्ञानिक उपन्यास

मनोवैज्ञानिक–मनोविश्लेषणवादी उपन्यासों में बाह्य संघर्ष की अपेक्षा व्यक्ति के अंतःसंघर्ष का चित्रण किया जाने लगा। उपन्यासकार व्यक्ति के अवचेतन, तथा उपचेतन की परतें खोलने लगा। आपने पहले पढ़ा कि इस दिशा में पश्चिम के विचारकों– फ्रायड, युंग, एडलर आदि ने जैनेंद्र, इलाचंद्र जोशी और अज्ञेय के चिंतन को प्रभावित किया।

फलस्वरूप इलाचंद्र जोशी ने बाद के उपन्यासों– 'जिप्सी', 'जहाज का पंछी', आदि में भी व्यक्ति की दमित वासनाओं, कुंठाओं आदि का चित्रण किया और जैनेंद्र ने 'परख', 'सुनीता', 'त्यागपत्र', 'कल्याणी' आदि में नारी–पुरुष के प्रेम की समस्या का मनावैज्ञानिक धरातल पर चित्रण किया। अज्ञेय पर फ्रायड, टी. एस. इलियट और डी. एच. लारेंस का भी प्रभाव रहा। अज्ञेय ने 'शेखर एक जीवनी' के बाद स्वातंत्र्योत्तर युग में 'नदी के द्वीप' और 'अपने–अपने अजनबी' लिखा। 'शेखर एक जीवनी' उपन्यास में मनोविज्ञान और अस्तित्ववाद का सुंदर समन्वय है। या यों कहा जाए कि इसमें अस्तित्ववादी दर्शन सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया में उभारा गया है। भाषा शिल्प और रूप–विन्यास के धरातल पर इस उपन्यास की बहुत चर्चा हुई। 'अपने–अपने' अज्ञेय का तीसरा उपन्यास है। इसमें समस्या स्वतंत्रता के वरण की है जो संत्रास, अकेलेपन,

टिप्पणी

मृत्यु–बोध, अजनबीपन आदि से सहज ही जुड़ जाती है। अज्ञेय ने इसमें अस्तित्ववादी स्वतंत्रता के मूल अर्थ को ही बदल दिया है। शेखर में व्यक्ति का अपने से साक्षात्कार मुख्य था। उसकी खोज स्वातंत्र्य की खोज के साथ–साथ एक व्यक्तित्व की खोज भी थी। 'नदी के द्वीप' एक व्यक्तित्व की खोज न होकर चार व्यक्तियों की खोज है, इनकी अलग–अलग भूमिकाएं हैं किंतु इनका आपस में टकराव इन्हें एक–दूसरे के साथ जोड़ता है।

इसी धारा में आगे चलकर डॉ. देवराज ने अपने उपन्यासों 'पथ की खोज', 'बाहर भीतर', 'रोड़े और पत्थर', 'अजय की डायरी' आदि में शिक्षित मध्यमवर्ग के करुण यथार्थ का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया।

(च) प्रयोगशील उपन्यास

कविता में नये प्रयोग के साथ–साथ कहानी और उपन्यास आदि में भी नये प्रयोग किए जा रहे हैं। पूर्ववर्ती लेखकों ने अपने प्रयोगों में कहानी और चरित्र का पूरा ध्यान रखा था। इस दौर में कहानी का महत्व नहीं रहा। परिणामस्वरूप क्रिया–कलाप के प्रति सचेत एवं तराशे हुए पात्र भी नहीं रहे। इन उपन्यासों में जिंदगी पूरी तरह विश्लेषित न होकर चेतन प्रवाह के साथ जुड़ गई। अतः प्रतीकों के माध्यम से बात की जाने लगी। यही कारण है कि शिल्प के धरातल पर भी कई नये प्रयोग किए जाने लगे हैं। धर्मवीर भारती, प्रभाकर माचवे, गिरिधर गोपाल, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के उपन्यास इसी श्रेणी के हैं।

धर्मवीर भारती के 'सूरज का सातवां घोड़ा' में अलग–अलग कहानियां किस्सागो के व्यक्तित्व से जुड़कर बन जाती हैं। इसकी रचना आर्थिक–सामाजिक पृष्ठभूमि में हुई है। प्रभाकर माचवे के 'परंतु', 'सांचा' आदि उपन्यासों में न तो कोई व्यवस्थित कथानक है और न चरित्र निर्माण। लेखक ने चेतना प्रवाह शैली में पुराने नैतिक मूल्यों पर प्रहार करके नवीन मूल्यों की तलाश की है। रूद्र की 'बहती गंगा' में काशी नगरी के पिछले दो सौ वर्षों के जीवन–प्रवाह को सत्रह तरंगों (कहानियों) में अंकित किया गया है। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के 'सोया हुआ जल' में एक यात्री–निवास में ठहरे हुए यात्रियों की राज की जिंदगी का वर्णन है। यह उपन्यास चेतना प्रवाह शैली और सिनेरियो टेकनीक में लिखा गया प्रतीकात्मक उपन्यास है। नरेश मेहता का 'डूबते मस्तूल' और ख्वाजा बदी उज्जमां का 'एक चूहे की मौत' भी अनेक प्रकार की विसंगतियों का चित्रण करने वाले प्रयोगशील उपन्यास हैं।

(छ) आधुनिकता–बोध के उपन्यास

औद्योगीकरण, बौद्धिकता के अतिरेक, यंत्रीकरण, दो महायुद्ध तथा अस्तित्ववादी चिंतन के फलस्वरूप जो स्थिति उत्पन्न हुई है उसका प्रतिबिंब सभी साहित्यिक विधाओं में देखा जा सकता है। आज का उपन्यासकार व्यक्ति की खोज में संलग्न है। उसके लिए आदमी और उसका अस्तित्व महत्वपूर्ण है। इसकी झलक तो हमें इससे पहले लिखे गए कुछ उपन्यासों में भी मिल जाती है किंतु उनमें अभिव्यक्ति का स्तर वैसा नहीं रहा जैसा कि मोहन राकेश के 'अंधेरे बंद कमरे में' और 'न आने वाला कल' तथा अंतराल में नजर आता है। 'अंधेरे बंद कमरे' में आस्थाविहीन समाज और अनिश्चय की स्थिति में लटके

टिप्पणी

हुए इन्सान का चित्रण है। 'न आने वाला कल' का नायक सब कुछ को अस्वीकार कर एक निषेधात्मक स्थिति में जा पहुंचा है। पर यह अस्वीकार उसे कहीं भी ले जाने में असमर्थ है। अंत में जड़ जीवन जीने की सड़ांध ही उसकी नियति हो जाती है।

निर्मल वर्मा का 'वे दिन' आधुनिक संवेदना से संपन्न उपन्यास है। यह द्वितीय महायुद्ध के बाद की मानव–नियति को खोजता है। 'लाल टीन की छत' भी इनका एक और उपन्यास है जहां व्यक्ति के 'होने', और 'जीने' में एक बड़ा भारी द्वंद्व है। 'वे दिन' के सभी पात्र इसी द्वंद्व में जीते हैं। निर्मल वर्मा ने उन्हें निकट से पहचानने की चेष्टा की है। राजकमल चौधरी का 'मछली मरी हुई' समलैंगिक यौनाचार में लिप्त स्त्रियों की कहानी है। श्रीकांत वर्मा का 'दूसरी बार' महेंद्र भल्ला का 'एक पति के नोट्स', कृष्ण बलदेव वैद का 'उसका बचपन', कमलेश्वर का 'डाक बंगला', 'काली आंधी', 'एक सड़क सत्तावन गलियां' आधुनिकता बोध के उपन्यास हैं। गिरिराज किशोर का 'लोग' श्रीलाल शुक्ल का 'राग दरबारी' भीष्म साहनी का 'झरोखे', 'कड़ियां', 'तमस', 'वासंती', 'भैय्यादास की माड़ी' सामाजिक व्यंग्य के स्तर पर लिखे गए आधुनिकता बोध के उपन्यास हैं। मन्नू भंडारी के 'आपका बंटी' और 'महाभोज' प्रसिद्ध उपन्यास हैं। कृष्णा सोबती ने 'मित्रो मरजानी', 'डार से बिछुड़ी' और 'जिंदगीनामा' लिखकर महानगरीय जीवन यथार्थ की पहचान करवाई।

इन उपन्यासकारों के अतिरिक्त भी बहुत से ऐसे उपन्यासकार हैं जो निरंतर उपन्यास लेखन में जुटे हैं जिनमें से प्रमुख हैं गोविंद मिश्र, रवीन्द्र कालिया, नरेंद्र कोहली, राजेश शर्मा, मृदुला गर्ग, मणि मधुकर, ममता कालिया, निरूपम सेवती, पंकज बिष्ट, अब्दुल बिस्मिल्लाह, श्रवण कुमार गोस्वामी, संजीव आदि। इस प्रकार उपन्यास विधा सतत् विकासमान रही है तथा इसका भविष्य उज्ज्वल है।

अपनी प्रगति जांचिए

1. हिन्दी का प्रथम उपन्यास कौन–सा है?
   (क) भाग्यवती (ख) परीक्षा गुरु
   (ग) रानी केतकी की कहानी (घ) नूतनचरित
2. 'अधखिला फूल' किसका उपन्यास है?
   (क) लाला श्रीनिवास दास (ख) बालकृष्ण भट्‌ट
   (ग) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (घ) अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'
3. 'त्यागपत्र' किस प्रकार का उपन्यास है?
   (क) ऐतिहासिक (ख) सामाजिक
   (ग) मनोवैज्ञानिक (घ) आंचलिक
4. शेखर एक जीवनी मनोविज्ञान और ..... का सुंदर समन्वय है।
   (क) अस्तित्ववाद (ख) मार्क्सवाद
   (ग) यथार्थवाद (घ) अति–यथार्थवाद

टिप्पणी

2.3 हिन्दी कहानी का उद्‌भव, विकास एवं प्रवृत्तियां

कथा कहने और सुनने की प्रवृत्ति आदिम काल से चली आ रही है। आपने भी न जाने कितनी कथाएं कही और सुनी होंगी। किंतु आज आप जिस 'कहानी' नामक विधा के विषय में पढ़ने जा रहे हैं उसका उद्‌भव बीसवीं शताब्दी की देन है। भले ही कहानी का स्रोत खोजने वाले कभी इसे पंचतंत्र, हितोपदेश, जातक–कथा की महान कहानियों से जोड़ने का प्रयास करते हैं तो कभी ऋग्वेद के संचार सूक्तों, उपनिषदों की रूपक–कथाओं, रामायण और महाभारत के उपाख्यानों से। इतना ही नहीं, वे इसका संबंध बेताल पच्चीसी, सिंहासन बत्तीसी से जोड़कर मध्य देशों की अरबी–फारसी में लिखी अलिफ–लैला, हजार दास्तान, गुलिस्ता–बोस्तां से जोड़ते हुए प्रसिद्ध लोक–कथाओं शीरीं–फरहाद, लैला–मजनू तक पहुंच जाते हैं। इन कथाओं में विलक्षण कल्पना, घटना–जाल, चमत्कार, प्रश्नोत्तर, जिज्ञासा, संघर्ष, जय–विजय आदि का अद्‌भुत चित्रण मिलता है। सारांश यह है कि कहानियों के आरंभ की परंपरा अति प्राचीन है। कालक्रम एवं परिस्थितियों के अनुसार इसका स्वरूप बदलता रहा। कहानी को समय–समय पर विभिन्न नामों से पुकारा जाता रहा– कथा, आख्यान, गल्प आदि।

2.3.1 हिंदी कहानी का उद्‌भव

आज जिस रूप में कहानी लिखी जा रही है वह परंपरागत कदापि नहीं है। उसका स्वरूप नितांत भिन्न है। जिस प्रकार आधुनिक युग में पाश्चात्य साहित्य के प्रभाव से हिंदी साहित्य की अन्य विधाओं यथा नाटक, उपन्यास, निबंध, समालोचना आदि का सूत्रपात हुआ उसी प्रकार से कहानी का जन्म अंग्रेजी की 'शार्ट स्टोरी' से हुआ।

अब प्रश्न यह उठता है कि हिंदी की पहली कहानी किसे माना जाए। अन्य आधुनिक गद्य–विधाओं के समान आधुनिक कहानी का प्रवर्तन भारतेंदु युग में ही हुआ। कुछ विचारक इंशा अल्ला खां की 'रानी केतकी की कहानी' को हिंदी की प्रथम कहानी मानते हैं। इसमें किस्सागोई के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। इसके बाद राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद की 'राजा भोज का स्वप्न' और भारतेंदु की 'एक अद्‌भुत अपूर्व स्वप्न' नामक कहानियां सामने आईं। इनमें कहानी नाम का कोई तत्व उपलब्ध नहीं होता। इन्हें कथात्मक शैली के निबंध कहा जा सकता है। इसी समय पाश्चात्य साहित्य के प्रभाव से बांग्ला, मराठी और गुजराती में भी इन कहानियों के अनुवाद होने लगे। इन अनुवादों ने ही हिंदी साहित्यकारों को कहानी लेखन के लिए प्रेरणा दी। यहीं से हिंदी की मौलिक कहानी ने स्वरूप लिया।

महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' नामक पत्रिका का संपादन किया था। 'सरस्वती' के प्रथम वर्ष में ही किशोरी लाल गोस्वामी की 'इंदुमती' नामक कहानी छपी और इसके बाद बंग महिला की 'दुलाई वाली' रामचंद्र शुक्ल की 'ग्यारह वर्ष का समय' प्रकाशित हुई। इन कहानियों को हम प्रयोगशील कहानियां कह सकते हैं जिनमें कहानीकारों ने विदेशी या बांग्ला साहित्य के प्रभाव में आकर हिंदी में कहानी लिखने का प्रयास किया। अब माधवराव सप्रे की कहानी 'एक टोकरी भर मिट्‌टी' को हिंदी की पहली कहानी माना जाता है, जो 1901 में प्रकाशित हुई थी।

टिप्पणी

2.3.2 हिंदी कहानी का विकास

1900 से लेकर आज तक कहानी लेखन का क्रम उत्तरोत्तर विकास के पथ पर अग्रसर है। अध्ययन की सुविधा के लिए हम इसे चार भागों में विभाजित करते हैं–

1. पूर्व–प्रेमचंद युग
2. प्रेमचंद–प्रसाद युग
3. उत्तर–प्रेमचंद युग
4. स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कहानी।

(1) पूर्व–प्रेमचंद युग

इस काल को हिंदी कहानी का शैशव काल कहा जा सकता है। इस काल की आरंभिक कहानियां हैं– किशोरी लाल गोस्वामी की 'इंदुमती', रामचंद्र शुक्ल की 'ग्यारह वर्ष का समय', बंग महिला की 'दुलाई वाली' और माधवराव सप्रे की 'एक टोकरी भर मिट्‌टी'।

इसी समय कुछ और कहानियां भी प्रकाश में आईं– किशोरी लाल गोस्वामी की 'गुलबहार', मास्टर भगवान दास की 'प्लेग की चुड़ैल', वृंदावनलाल वर्मा की 'राखी बंध भाई' आदि। इनमें किसी प्रकार की प्रौढ़ता दिखाई नहीं देती।

(2) प्रेमचंद–प्रसाद युग

पुरानी कथा कहानियां घटना वैचित्र्य के द्वारा मनोरंजन तो कर देती थीं किंतु शिक्षित जनता को प्रभावित नहीं कर पातीं थीं। पाश्चात्य कहानी कला से परिचित होते ही हिंदी में कलापूर्ण कहानियों की सृष्टि होने लगी। सौभाग्य की बात है कि अपने प्रारंभिक काल में ही कहानी को प्रेमचंद और प्रसाद जैसी दो ऐसी रचना शक्तियां मिलीं जिन्होंने हिंदी कहानी में एक युगांतकारी परिवर्तन किया। इन दोनों रचना–शक्तियों का क्षेत्र अलग था। एक कहानी को समाज के व्यापक संदर्भों से जोड़ रही थी और दूसरी व्यक्ति की प्रतिष्ठा को रेखांकित कर रही थी।

प्रेमचंद की कुछ कहानियां पहले उर्दू की 'जमाना' पत्रिका में (1907) प्रकाशित हुईं। इसके साथ ही 'सरस्वती' में उन्होंने हिंदी में कहानियां लिखनी आरंभ कीं। 'सौत', 'पंच परमेश्वर', 'बूढ़ी काकी', 'ईश्वरीय न्याय', 'दुर्गा का मंदिर' उसी समय की कहानियां हैं। कहानी साहित्य में प्रेमचंद का प्रवेश सर्वथा युगांतकारी सिद्ध हुआ। उन्होंने साहित्यिक जगत में आते ही कल्पना को यथार्थवाद की ओर उन्मुख कर दिया। वह जनता के सुख–दुख में भाग लेने वाले कलाकार थे। इसलिए उनकी कहानियों में समस्त भारतीय समाज मुखरित हो उठा। स्वाधीनता की लड़ाई, संयुक्त परिवार में विघटन, जातीय एकता, किसानों की समस्याएं, अछूतोद्धार, विधवा समस्या, औद्योगीकरण, सांप्रदायिक द्वेष, सामाजिक रूढ़ियां, धर्म, जाति और परंपरा से संबंधित अनेक विषय उनकी कहानियों में आकार लेने लगे। उन्होंने लगभग 300 कहानियां लिखीं जिनमें से प्रमुख कहानियां मानसरोवर के आठ भागों में संकलित हैं। 'बड़े घर की बेटी', 'शतरंज के खिलाड़ी', 'पूस की रात', 'ठाकुर का कुआं' और 'कफन' उनकी प्रसिद्ध कहानियां हैं।

टिप्पणी

सन् 1911 में जयशंकर प्रसाद की 'ग्रंथि' कहानी 'इंदु' नामक पत्रिका में प्रकाशित हुई। इससे हिंदी कहानी में एक महत्वपूर्ण मोड़ आया। प्रसाद मूलतः कवि थे अतः उनकी कहानियों में छायावाद की मूल प्रवृत्ति 'वैयक्तिकता' की सूक्ष्म प्रतिच्छाया दिखाई देती है। अधिकांश कहानियों में वैयक्तिक सुख–दुःख वैयक्तिक द्वंद्व का चित्रण मिलता है। 'आकाशदीप', 'पुरस्कार', 'मछुआ', 'ममता' आदि इसी प्रकार की कहानियां हैं। 'छाया', 'प्रतिध्वनि', 'आकाशदीप', 'आंधी', 'इंद्रजाल' प्रसाद की कहानियों के संकलन हैं।

इस काल के अन्य कहानी लेखकों में प्रमुख हैं– चंद्रधर शर्मा गुलेरी। इन्होंने तीन कहानियां लिखीं– 'सुखमय जीवन', 'बुद्धू का कांटा' और 'उसने कहा था'। इनका नाम केवल एक कहानी 'उसने कहा था' से ही हिंदी साहित्य के इतिहास में अमर रहेगा।

विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक और सुदर्शन प्रेमचंद परंपरा के कहानीकार हैं। इन्होंने प्रेमचंद की भांति ही अपने आस–पास से कहानियों के विषय चुने। कौशिक की 'ताई' और सुदर्शन की 'हार की जीत' प्रसिद्ध कहानियां हैं।

इसी काल में राधाकृष्ण दास और विनोद शंकर व्यास ने प्रसाद की तरह भाव प्रधान कहानियां लिखीं। चतुरसेन शास्त्री ने विभिन्न युगों के ऐतिहासिक प्रसंगों पर आधारित अनेक मार्मिक कहानियों की रचना की। 'उग्र' ने परंपरा से हटकर विद्रोह का स्वर मुखरित किया। वृंदावनलाल वर्मा ने प्रमुखतः ऐतिहासिक कहानियां लिखीं।

इस युग के अन्य प्रमुख कहानीकार हैं– भगवती प्रसाद वाजपेयी, राहुल सांकृत्यायन, सुभद्रा कुमारी चौहान, उषा देवी मित्रा आदि।

हिंदी कहानी के विकास की दृष्टि से यह युग अत्यंत महत्वपूर्ण रहा। प्रसाद और प्रेमचंद की रचना प्रक्रिया ने हिंदी कथा साहित्य में दो निश्चित धाराओं को स्वरूप दिया– व्यक्ति और समाज। आगे चलकर प्रसाद की इस व्यक्तिवादी चिंतनधारा को जैनेंद्र, इलाचंद्र जोशी तथा अज्ञेय ने और प्रेमचंद की समाजवादी चिंतनधारा को यशपाल, भीष्म साहनी, ज्ञानरंजन और अमरकांत ने आगे बढ़ाया।

(3) उत्तर–प्रेमचंद युग

इस युग में दो प्रमुख प्रवृत्तियों ने संपूर्ण साहित्य को प्रभावित किया– मनोवैज्ञानिक और समाजवादी यथार्थवाद। इनके प्रेरक थे फ्रायड एवं कार्ल मार्क्स। हिंदी कहानी पर भी इन दोनों चिंतकों का विशेष प्रभाव दिखाई देता है।

प्रेमचंद और प्रसाद के बाद हिंदी कहानी को नया आयाम देने वालों में जैनेंद्र का नाम प्रमुख है। उन्होंने कथावस्तु को सामाजिक धरातल से ऊपर उठाकर व्यक्तिगत और मनोवैज्ञानिक भूमिका पर प्रतिष्ठित किया। 'खेल', 'अपना–अपना भाग्य', 'नीलम देश की राजकन्या', 'पाजेब' आदि में जैनेंद्र ने व्यक्ति मन की शंकाओं, प्रश्नों तथा आंतरिक गुत्थियों को अंकित किया है। इसके अतिरिक्त अधिकांश कहानियों का मुख्य विषय नारी है। यह नारी पातिव्रत्य की चहारदीवारी से बाहर निकलकर मुक्ति की सांस लेना चाहती है। 'जाह्नवी', 'रत्नप्रभा', 'दो सहेलियां', 'प्रमिला', 'मानरक्षा' आदि की गणना इसी संदर्भ में रेखांकित की जा सकती है।

टिप्पणी

इलाचंद्र जोशी ने कथा–साहित्य में व्यक्तिवाद को प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया। उनका चिंतन जैनेंद्र से भिन्न है। वह मानव मन की गहराइयों में झांककर व्यक्ति–मन के भीतर दमित वासनाओं तथा कुंठाओं का विश्लेषण करते हैं। उनकी कहानियों के अधिकांश पात्र चोर, जुआरी, लंपट, मद्यप और हत्यारे हैं। ये सभी पात्र किसी न किसी हीन–भावना के शिकार होते हैं। 'आहुति', 'डायरी के नीरस पृष्ठ', 'दुष्कर्मी' आदि इसी प्रकार की कहानियां हैं।

अज्ञेय, प्रेमचंद परवर्ती कथा–साहित्य के प्रमुख कहानीकार हैं। उन्होंने अपनी कहानियों में व्यक्ति–चरित्र को प्रधानता दी है। उनकी यह धारणा है कि व्यक्ति को नैतिक निर्णय की क्षमता से संपन्न करके ही समाज का नैतिक धरातल ऊंचा किया जा सकता है। अतः व्यक्ति–स्वातंत्र्य आवश्यक है। वह समाज का अध्ययन व्यक्ति के माध्यम से करते हैं और समाज की गली–सड़ी, खोखली मान्यताओं के बदले व्यक्ति के भीतर स्थित दृढ़तर मान्यताओं को प्रतिष्ठित करने की चेष्टा करते हैं। इनके चिंतन पर देशी और विदेशी चिंतकों का प्रभाव है। यदि केवल उनके कहानी संबंधी चिंतन पर दृष्टि केंद्रित की जाए तो वह पश्चिमी दार्शनिक ज्यां पाल सार्त्र के अस्तित्ववादी चिंतन से प्रभावित दिखायी देते हैं। अज्ञेय का प्रथम कहानी संग्रह 'विपथगा' 1931 में प्रकाशित हुआ था। 'रोज' उनकी प्रसिद्ध कहानी है।

इस व्यक्तिवादी धारा के साथ ही इस समय यशपाल ने अपने कथा साहित्य के माध्यम से समाज में फैली सब प्रकार की कुरूपताओं का पर्दाफाश किया। उनके कथ्य का क्षेत्र इतना व्यापक रहा कि समाज की कोई भी विकृति उनकी आंखों से ओझल नहीं हुई। उनकी दृष्टि मार्क्सवादी थी अतः उनका लक्ष्य एक ही रहा– सामाजिक वैषम्य का उद्‌घाटन करना। इनके कहानी संग्रहों– 'पिंजड़े', 'वो दुनिया', 'ज्ञानदान', 'तर्क का तूफान', 'भस्मावृत', 'चिंगारी', 'अभिशप्त', 'फूलो का कुरता', 'उत्तमी की मां', 'सच बोलने की भूल' और 'तुमने क्यों कहा था मैं सुंदर हूं' आदि उल्लेखनीय हैं। 'मक्रील', 'वो दुनिया', 'गंडेरी', 'पराया सुख', 'करवा का व्रत', उनकी प्रसिद्ध कहानियां हैं। इनमें समस्या कोई भी हो नारी के शोषण की या पुरुष के शासन की, वर्ग वैषम्य की आर्थिक विषमता की, धर्म संबंधी मिथ्या विश्वासों की या समाज में फैले भ्रष्टाचार की पात्र उनकी विचारधारा के अनुरूप स्वरूप लेते रहे। इस प्रकार प्रत्येक कहानी में उनका समाजवादी चिंतन ही प्रमुख रहा है।

इस समाजवादी परंपरा पर आगे चलकर राहुल, रांगेय राघव, नागार्जुन ने सशक्त कहानियां लिखी। विष्णु प्रभाकर और उपेंद्रनाथ अश्क ने भी इसी समय कहानी के क्षेत्र में अपना नाम स्थापित किया। इनके पात्र मध्यवर्ग और निम्नवर्ग से संबंधित हैं। विष्णु प्रभाकर की 'धरती अब भी घूम रही है' और उपेंद्रनाथ अश्क की 'डाची' दोनों कहानियां हिंदी कथा–साहित्य की चर्चित कहानियां हैं। इनकी कहानियों में व्यक्ति एवं समाज दोनों ही प्रमुख रहे। सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन को प्रश्रय देने वाले कहानीकारों में चंद्रगुप्त विद्यालंकार, भगवतीप्रसाद वाजपेयी, भगवतीचरण वर्मा के नाम महत्वपूर्ण हैं। ऐतिहासिक परंपरा की कहानियों में वृंदावनलाल वर्मा प्रमुख हैं।

इस प्रकार इस युग में हिंदी कहानी अपने विकास की प्रारंभिक अवस्थाओं को पार करती हुई वहां पहुंच गई जहां से इसके श्रेष्ठ रूप के दर्शन होने लगते हैं।

टिप्पणी

(4) स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कहानी

यह वह समय था जब देश स्वतंत्र हो चुका था। सत्ता कांग्रेस के हाथ में थी। संविधान निर्मित हो चुका था। गणतंत्र के आलोक में संवेदनशील कथाकार सत्ता के स्थानांतरण को पहचान रहे थे। विभाजन के साथ जुड़े हुए संहार, ध्वंस और सामूहिक हत्याओं ने मानवीय मूल्यों का जो विघटन किया उसे यशपाल, चंद्रगुप्त विद्यालंकार, उपेंद्रनाथ अश्क, विष्णु प्रभाकर, जैनेंद्र और बाद में मोहन राकेश तथा भीष्म साहनी ने चित्रित किया। इन्हीं दिनों अज्ञेय का 'शरणार्थी' नामक संग्रह प्रकाशित हुआ। इन सब–में उस काल के निम्न मध्यवर्गीय और मध्यवर्गीय जीवन के वास्तव में बाह्य पक्ष का चित्रण था। इसके भीतर जो मानसिक ध्वंस गांवों, कस्बों, नगरों, महानगरों आदि में झेला जा रहा था, उसकी स्थिति ही दूसरी थी। इसी समय एक विशेष प्रकार का बोध कहानी में उभर रहा था जिसे आंचलिक बोध का नाम दिया गया। इसी के समानांतर शहरीकरण की कठिनाइयों से उत्पन्न हुआ एक दूसरा बोध था– नगर तथा महानगरीय बोध।

इस प्रकार कहानी के क्षेत्र में एक साथ कई मोड़ आ रहे थे। अधिकांश कहानीकार जीवन से जुड़ने की चेष्टा कर रहे थे। किंतु कुछ नवीन प्रयोग भी हो रहे थे। कहानी के वस्तु विधान और शिल्प–विधान दोनों में इस बदलाव को स्पष्ट देखा जा सकता है।

सन् 1950 के बाद कहानियों में व्यक्तिवादी स्वर प्रमुख होने लगा। मार्क्स और फ्रायड के प्रभावों से आगे बढ़कर अस्तित्ववादी दर्शन ने जीवन के बुनियादी सवालों की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया। स्वतंत्रता से प्राप्त होने वाले सुख की कल्पना शीघ्र ही विच्छिन्न हो गई। व्यक्ति एक तरह का कटाव और अलगाव महसूस करने लगा। मानवीय मूल्यों का सर्वथा ह्रास होने लगा किंतु फिर भी जीवन के प्रति आस्था बाकी थी।

अज्ञेय ने मुख्यतः व्यक्ति के आत्मसंघर्ष तथा व्यक्ति और परिवेश के संघर्ष का चित्रण किया। 'रोज', 'पहाड़ का धीरज', 'हीली बोन की बत्तखें' कहानियां नये यथार्थ पर आधारित हैं। उन्होंने बिंबों, प्रतीकों और नाटकीय स्थितियों के चित्रण द्वारा कहानियों को अर्थ के विभिन्न स्तर दिए 'विपथगा', 'परंपरा', 'कोठरी की बात', 'शरणार्थी', 'जयदोल', 'अमर वल्लरी', 'ये तेरे प्रतिरूप' इनके प्रसिद्ध कहानी संग्रह हैं। आगे चलकर निर्मल वर्मा, रामकुमार, उषा प्रियंवदा की कहानियों ने इस अस्तित्ववादी चिंतन को एक नया मोड़ दिया।

यशपाल ने भी इस बदलाव की स्थिति को बड़ी गहराई से महसूस किया। उनकी अधिकांश कहानियां सामाजिक चेतना से अनुप्राणित हैं। उन्होंने अपनी कहानियों के माध्यम से आर्थिक, नैतिक, धार्मिक, सेक्स–विषयक समस्याओं का चित्रण करके सामाजिक वैषम्य पर प्रबल प्रहार करने की चेष्टा की। स्त्री को पुरुष के समान अधिकार दिलाना चाहते थे इसलिए स्त्री की आत्म–निर्भरता में विश्वास रखते थे। इस विषय में उन्होंने बहुत सी कहानियां लिखीं जिनमें 'करवा का व्रत' कहानी उल्लेखनीय है।

यशपाल के बाद भीष्म साहनी, अमरकांत, ज्ञानरंजन, बदी उज्जमा, काशीनाथ सिंह ने इस विचारधारा को बल दिया।

टिप्पणी

विष्णु प्रभाकर ने भी अपनी चिंतन धारा को बदला। कहानी के क्षेत्र में उनका विकास अप्रत्याशित है। 'धरती अब भी घूम रही है', उनकी सबसे अधिक चर्चित कहानी है। जून 1987 की सारिका में छपी कहानी 'एक आसमान के नीचे' विष्णु प्रभाकर की कथा–यात्रा में एक मील का पत्थर है। इसमें सुंदर कलात्मक कसाव है जो देश और विदेश के परिवेश को समेटे हुए है। उनके कई संकलन 'आदि और अंत', 'रहमान का बेटा', 'जिंदगी के थपेड़े', 'संघर्ष के बाद', 'द्वंद्व', 'मेरा वतन', 'धरती अब भी घूम रही है', 'खिलौने', 'पुल के टूटने से पहले', 'मेरी प्रिय कहानियां' आदि प्रकाशित हो चुकी हैं।

उपेंद्रनाथ अश्क की कहानियों में अत्यधिक विविधता है। उनकी कहानियों में भी प्रेमचंद की भांति सभी वर्गों के पात्र हैं किंतु अधिकांशतः मध्यमवर्गीय एवं निम्नवर्गीय पात्रों का यथार्थ चित्रण मिलता है। 'डाची' उनकी प्रसिद्ध कहानी है। इसमें मानवीय करुणा की जो सहज अविरल धारा प्रवाहित होती है वह बेजोड़ है। 'सत्तर श्रेष्ठ कहानियां' उनकी चुनिंदा कहानियों का संकलन है। अश्क जी ने प्रायः सभी कथा–धाराओं में योगदान दिया। इन्होंने अपनी कहानियों में व्यक्ति और समाज दोनों को ही प्रमुखता दी।

इसी समय कहानी में एक दूसरी विचारधारा भी पनप रही थी जहां हिंदी कथाकार कहानी के पुराने कलेवर से मुक्ति पाने के लिए और नये अनुभव संसार से स्वयं को जोड़ने के लिए एक नयी चेतना तलाश रहा था।

2.3.3 नयी कहानी

सन् 1955 में 'कहानी' पत्रिका का प्रकाशन हुआ। नवीन चेतना की खोज करने वाले कहानीकारों को इस दौर को आगे बढ़ाने का अवसर मिला। उन्होंने 1956–57 में इसका नाम 'नयी कहानी' रख दिया। अब कहानी में नये संदर्भों की खोज होने लगी। उलझनपूर्ण मोड़ और चमत्कारपूर्ण चरम सीमाओं की अपेक्षा आंतरिक अन्विति पर बल दिया जाने लगा। जीवन की पहचान कहानीकार के लिए महत्वपूर्ण हो गई। अब वह अपनी अनुभूति की सघनता के लिए नये–नये बिंबों और प्रतीकों का प्रयोग करने लगा।

नयी कहानी के प्रवर्तकों में से प्रमुख नाम हैं– मोहन राकेश, कमलेश्वर, राजेंद्र यादव, मन्नू भंडारी, निर्मल वर्मा, उषा प्रियंवदा। इनकी कहानियों के कथ्य में विविधता है। अधिकांश कहानियां कथाकारों के अपने जीवनानुभव से प्रेरित हैं। गांव का ठहरा हुआ जीवन हो या नगर–महानगर की भागमभाग अथवा पहाड़ की शांत निःस्तब्धता, वहां रहने वाले पात्र स्थितियों के अनुरूप स्वतः रूप लेते चले जाते हैं। 'मलबे का मालिक', 'मिस पाल', 'खाली', 'आखिरी सामान', 'आर्द्रा', 'एक और जिंदगी', 'उसकी रोटी', राकेश की चर्चित कहानियां हैं। अधिकांश कहानियां निम्न मध्यवर्ग व मध्यवर्ग से संबंधित हैं। इनके मूल्यों के विघटन, अकेलेपन, संत्रास और व्यक्ति की अपनी अस्मिता के प्रश्न को भी रेखांकित किया गया है। इन सभी में गहरी मानवीय संवेदना है। कमलेश्वर की 'देवा की मां', 'तलाश', 'राजा निरबंसिया', 'जो लिखा नहीं जाता', 'दुखभरी दुनिया', 'खोयी हुई दिशाएं' आदि कहानियां आम आदमी की टूटन, घुटन, बिखराव, यातना व मजबूरी का चित्रण करती हैं। राजेंद्र यादव ने सामान्य व्यक्तिगत अनुभवों को नये–नये सामाजिक संदर्भों में ढालकर बहुत सी कहानियां लिखीं। इनमें 'खुशबू', 'टूटना', 'भविष्य' प्रमुख हैं। मन्नू भंडारी और उषा प्रियंवदा ने अपनी कहानियों

टिप्पणी

में जीवन की जटिल और गहरी सच्चाइयों का साक्षात्कार करने की चेष्टा की। भले ही दोनों का दृष्टिकोण भिन्न है। मन्नू भंडारी सामाजिकता को महत्व देती हैं तो उषा प्रियंवदा वैचारिकता को। किंतु दोनों अपने जीवनानुभवों को एक ऐसी प्रामाणिक सच्चाई के साथ सामने रखती हैं कि रचना प्राणवान हो जाती है। मन्नू की 'यही सच है', 'ऊचांई' और उषा प्रियवंदा की 'कितना बड़ा झूठ', 'मछलियां' इसी प्रकार की कहानियां हैं। वातावरण को उसकी संपूर्ण संवेदना के साथ उभारने में शिवानी को विशेष सफलता मिली है। आगे चलकर कृष्णा सोबती, ममता कालिया, मालती जोशी, सुधा अरोड़ा, मृदुला गर्ग, मृणाल पांडे आदि अन्य कई कहानी लेखिकाओं ने विकास की परंपरा में विशेष सहयोग दिया।

निर्मल वर्मा एक लंबे अरसे तक यूरोप में रहे। पाश्चात्य साहित्य से जुड़कर इनकी कहानी ने सर्वथा अलग स्वरूप ले लिया। अधिकांश कहानियां व्यक्ति–सत्य की हैं इनमें अस्तित्व की खोज व तलाश है। 'लंदन की एक रात', 'पिक्चर पोस्टकार्ड', 'परिंदे' इनकी श्रेष्ठ कहानियां हैं। रामकुमार, महेंद्र भल्ला, कृष्ण बलदेव वैद, प्रयाग शुक्ल इसी कोटि के कहानीकार हैं।

2.3.4 ग्रामांचल की कहानियां

इन कहानीकारों में शिवप्रसाद सिंह, मार्कण्डेय और फणीश्वरनाथ रेणु, शेखर जोशी और विवेकी राय के नाम मुख्य हैं। इनकी कहानियों में जो गांव की मिट्टी की सोंधी महक और गांव के लोगों का जीवन देखने को मिलता है, वह अपूर्व है। रेणु की 'तीसरी कसम' और शेखर जोशी की 'कोसी का घटवार' अत्यंत प्रभावपूर्ण कहानियां हैं। रांगेय राघव, शैलेश मटियानी, मधुकर गंगाधर, शानी आदि कहानीकारों ने इसी परंपरा को आगे बढ़ाया। इस प्रकार कहानी को कितने ही मोड़ों से गुजरना पड़ा इसीलिए समय–समय पर उसे नये नामों से भी संबोधित किया जाता रहा यथा– नयी कहानी, समानांतर कहानी, अकहानी, सचेतन कहानी, अचेतन कहानी, सक्रिय कहानी आदि। आज कहानी के क्षेत्र में रूप विषयक पुरानी धाराणाएं टूट चुकी हैं। केवल जीवन यथार्थ की अभिव्यक्ति ही महत्वपूर्ण है। कहानी अब बिंबों और प्रतीकों से भी मुक्त हो चुकी हैं। कहानी के समुचित विकास में पत्र–पत्रिकाओं का योगदान भी महत्वपूर्ण है।

2.3.5 परवर्ती कहानी का बदलता स्वरूप

सन् 60–65 के बाद की लिखी कहानियों में अधिक उग्रता और निर्ममता है। ये कहानियां प्रायः उन लेखकों की हैं जिन्होंने स्वतंत्र भारत का क्रूर यथार्थ अपनी आंखों से देखा। इनमें से उल्लेखनीय हैं– दूधनाथ सिंह, महीप सिंह, ज्ञानरंजन, गिरिराज किशोर, काशीनाथ सिंह, रमेश उपाध्याय और गोविंद मिश्र।

स्त्री के स्वतंत्र व्यक्तित्व को चित्रित करने वाली कहानियां ममता कालिया, सुधा अरोड़ा, निरूपमा सेवती, अनिता औलक, दीप्ति खंडेलवाल, राजी सेठ, मृणाल पांडे आदि ने लिखीं।

इस दौर में उभरने वाले विद्रोह और आक्रोश ने कहानी को एक सपाटबयानी दी। कहानी का रूपबंध बदल गया। उसमें तत्वों की कोई प्रधानता नहीं रही। वह बिंबों और प्रतीकों से भी मुक्त हो गई। अब निबंध, रेखाचित्र, रिपोर्ताज, संस्मरण, डायरी आदि

विधाएं भी कहानी में सम्मिलित हो गईं। परिणामस्वरूप कहानियों में जीवन यथार्थ को निसंग रूप से अभिव्यक्त करने की क्षमता आई।

2.3.6 प्रमुख कथाकार

टिप्पणी

हिन्दी के प्रमुख कथाकार निम्नांकित हैं–

1. **प्रेमचंद (1880–1936)**– प्रेमचंद का जन्म उत्तर प्रदेश के प्रसिद्ध नगर वाराणसी से लगभग छह किलोमीटर दूर लमही नामक ग्राम में 31 जुलाई 1880 ई. को हुआ। उनका पहला नाम धनपतराय था। बाल्यावस्था से ही उनकी उपन्यास और कहानियां आदि पढ़ने में विशेष रुचि थी। उनकी पहली कहानी 'संसार का सबसे अनमोल रत्न' अपने समय की प्रसिद्ध उर्दू पत्रिका 'जमाना' में सन् 1907 में छपी थी। बाद में उन्होंने हिंदी में प्रेमचंद के नाम से लिखना शुरू किया।

   उन्होंने अपने जीवन काल में लगभग 300 कहानियां और 13 उपन्यासों की रचना की। इसके अतिरिक्त उन्होंने नाटक, निबंध, जीवनी, सामयिक विषयों पर लेख आदि भी लिखे। किंतु उनकी ख्याति का मूलाधार कथा साहित्य ही है। उन्हें हिंदी कथा–साहित्य का सम्राट कहा जाता है।

   प्रेमचंद के आगमन से पूर्व भारतेंदु युग में कथा–साहित्य का आरंभ हो चुका था। इस समय केवल घटना–प्रधान तिलस्मी, जासूसी एवं ऐयारी उपन्यासों की ही रचना की जाती थी। प्रेमचंद ने कहानी और उपन्यास को कोरी कल्पनाओं के क्षितिज से उतारकर जीवन यथार्थ के साथ जोड़ दिया। उन्होंने घटना के स्थान पर चरित्र को महत्व दिया और जीवन की वास्तविक समस्याओं को केंद्र में रखा। प्रायः उनके उपन्यासों का लक्ष्य समाज–सुधार था। उनके अधिकांश उपन्यासों और कहानियों में सामाजिक विकृतियों पर चोट की गई है। स्वाधीनता की लड़ाई, संयुक्त परिवार में विघटन, जातीय एकता, किसानों की समस्याएं, अछूतोद्धार, विधवा समस्या, देशी रियासतों की समस्याएं, औद्योगीकरण, सांप्रदायिक द्वेष, समाज के रूढ़िग्रस्त रिवाज, जाति–धर्म और परंपरा अनेक ऐसे कोण हैं जिन्हें प्रेमचंद की लेखनी ने अपना विषय बनाया। इससे यह ज्ञात होता है कि वे अपने समसामयिक क्रूर और निर्मम समाज के साथ निरंतर एक साहित्यिक लड़ाई लड़ते रहे।

   प्रेमचंद के उपन्यासों में 'सेवासदन', 'प्रेमाश्रम', 'रंगभूमि', 'कायाकल्प', 'निर्मला', 'गबन', 'कर्मभूमि', 'गोदान' प्रमुख हैं। 'मंगलसूत्र' इनका अधूरा उपन्यास है। इन सभी रचनाओं में निम्न, निम्नमध्य एवं मध्यवर्ग की चेतना को अभिव्यक्ति दी गई है। इनका दृष्टिकोण आदर्शोन्मुख यथार्थवादी रहा।

   उपन्यासकार के समान प्रेमचंद एक सघन एवं सशक्त कहानीकार भी हैं। वे ग्रामीण जीवन से संबद्ध थे अतः अधिकांश गांव की जिंदगी की उपज हैं। किंतु उनके आसपास का परिवेश भी स्वतः मूर्त हो उठा है। उनकी अधिकांश कहानियों में सामाजिक कुरीतियों के प्रति सुधार का आग्रह, पराजय–पतन के प्रति आदर्श की प्रतिष्ठा और दुःखी पीड़ित मानवता के प्रति अथाह संवेदना का प्राधान्य मिलता

है। 'पंच परमेश्वर', 'शतरंज के खिलाड़ी', 'ईदगाह', 'बूढ़ी काकी', 'कफन', 'पूस की रात' और 'ठाकुर का कुआं' इनकी प्रसिद्ध कहानियां हैं। प्रेमपचीसी, सप्त सरोज, प्रेम पूर्णिमा, प्रेम द्वादशी, प्रेम पीयूष, प्रेम–प्रतिमा, प्रेम प्रसून, सप्त सुमन, प्रेम प्रमोद, प्रेम चतुर्थी इनकी कहानियों के संकलन हैं। उनकी प्रतिनिधि कहानियां मानसरोवर के आठ भागों में संकलित हैं। इन कहानियों को पढ़कर प्रेमचंद के समसामयिक युग की धड़कन को महसूस किया जा सकता है।

प्रेमचंद सच्चे अर्थों में विकासोन्मुख सामाजिक जीवन के चितेरे थे। निश्चय ही उन्हें हिंदी साहित्य का मूर्धन्य लेखक स्वीकार किया जा सकता है।

2. **जयशंकर प्रसाद (1889–1937)**– जयशंकर प्रसाद का जन्म वाराणसी के प्रसिद्ध धनी परिवार में सन् 1889 में हुआ। इनके पिता देवी प्रसाद साहित्य में रुचि रखते थे। साहित्यकारों का जमघट उनके घर में लगा ही रहता था। अतः बाल्यावस्था से ही इन पर वही संस्कार पड़ने लगे। छोटी आयु में ही यह कविता करने लगे। प्रसाद का संपूर्ण साहित्य उनके गंभीर, अध्ययन, चिंतन और मनन का प्रतिफलन है।

   प्रसाद मूलतः कवि थे किंतु उनकी प्रतिभा बहुमुखी थी। उन्होंने नाटक, उपन्यास, कहानियां और निबंध भी लिखे। वे अपने समय के सर्वश्रेष्ठ कवि व प्रमुख नाटककार माने जाते थे। कहानीकार के रूप में उन्हें विशेष ख्याति मिली।

   उन्होंने केवल तीन उपन्यास लिखे। कंकाल, तितली और इरावती। इरावती उनका अधूरा उपन्यास है। वे भारत की सांस्कृतिक परंपरा एवं गौरवशाली मर्यादा के पोषक थे किंतु विभिन्न सामाजिक समस्याओं के प्रति उनका दृष्टिकोण व्यक्तिवादी था। 'कंकाल' में प्रसाद ने समाज के पीड़ित–शोषित वर्गों, यौन दुर्बलताओं, जाति–भेद एवं धार्मिक पाखंडों आदि का यथार्थ एवं मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया है। 'कंकाल' के माध्यम से वे एक ऐसे समाज का निर्माण करना चाहते थे जिसमें सभी व्यक्ति स्वतंत्र हों और अपने दायित्व का वहन स्वयं करें। 'तितली' उपन्यास में अंतर्जातीय विवाह का समर्थन किया गया है। इसमें प्रेम के उच्च आदर्श की स्थापना की गई है।

   उपन्यास की अपेक्षा प्रसाद को कहानी के क्षेत्र में अधिक सफलता प्राप्त हुई। इन्होंने कुल मिलाकर 69 कहानियां रचीं। 'छाया', 'प्रतिध्वनि', 'आकाशदीप', 'आंधी' और 'इंद्रजाल' इनके प्रकाशित कहानी संग्रह हैं।

   हिंदी कहानी की विकास यात्रा में प्रेमचंद की भांति जयशंकर प्रसाद की एक निश्चित भूमिका है। उनकी कहानियों में व्यक्ति–मन के भावजगत में निहित प्रेम, करुणा, सहानुभूति, ईर्ष्या आदि वृत्तियों को चित्रित किया गया है। साथ ही व्यक्ति मन के भीतरी द्वंद्व को भी उभारने की चेष्टा की गई है। उनके पात्र प्रेम और सौंदर्य की चेतना लेकर अवतरित होते हैं। नारी पात्रों की सृष्टि में प्रसाद अद्वितीय हैं। इनके नारी पात्र निश्छल प्रेम, त्याग और बलिदान से पाठकों के मन पर अमिट प्रभाव छोड़ जाते हैं। 'आकाशदीप' की 'चंपा', 'पुरस्कार' की 'मधूलिका' ऐसे ही नारी पात्र हैं। इस प्रकार प्रसाद का कथा–साहित्य मूलतः व्यक्ति मन के मंथन का परिणाम कहा जा सकता है।

3. **यशपाल (1903–1976)**– हिंदी साहित्य में रूसो, वाल्टेयर और कार्ल मार्क्स के चिंतन से प्रभावित जो समाजवादी यथार्थवादी उपन्यासों की धारा चली, यशपाल उस धारा के प्रवर्तक माने जाते हैं। इनका मूल उद्देश्य सामाजिक वैषम्य का उद्‌घाटन करना है। अतः वे अपनी रचनाओं द्वारा इस विषमता के और पहलुओं (यथा धार्मिक, आर्थिक, नैतिक एवं सामाजिक) पर प्रहार करते चले जाते हैं।

   उपन्यासकार के रूप में उन्होंने सामाजिक चेतना को अपने चिंतन का विषय बनाया। इसमें मानव–विकास के चिंतन और चेतना की ऐतिहासिकता विद्यमान है। इसी आधार पर उन्होंने मानव मात्र के धर्म, भाग्य एवं ईश्वर संबंधी विश्वासों पर प्रश्न–चिह्न लगाया और इन्हें पूंजीवादी सत्ता की देन मानकर इनका खंडन किया।

   'दादा कामरेड', 'देशद्रोही', 'पार्टी कामरेड', 'मनुष्य के रूप' इनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं जिनमें यशपाल ने गांधीवादी, पूंजीवादी और उग्रवादी विचारों का विरोध करके समाजवादी चिंतन का समर्थन किया है। 'दिव्या', अमिता इनके ऐतिहासिक उपन्यास हैं। झूठा सच (दो भाग) देश के विभाजन की समस्या पर लिखा एक बृहद् उपन्यास है। इस उपन्यास को यशपाल का कीर्ति–स्तम्भ माना जा सकता है। 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास भारत के स्वतंत्रता पूर्व और स्वातंत्र्योत्तर काल के सामाजिक, राजनीतिक जीवन पर आधारित है। 'बारह घंटे' इनका एक भिन्न प्रकार का उपन्यास है।

   यशपाल का कहानीकार अपने संपूर्ण परिवेश के प्रति सजग है। वे प्रगतिवादी विचारधारा के प्रतिनिधि कहानीकार हैं। वह कहानी के माध्यम से मानव समाज की विकृतियों पर चोट करके, समाज में फैली कुत्सित घृणित प्रवृत्तियों को उभार कर उनके प्रति घृणा का भाव पैदा करके स्वस्थ सामाजिक मूल्यों की स्थापना करना चाहते हैं।

   'पिंजड़े की उड़ान', 'वो दुनिया', 'अभिशप्त', 'तर्क का तूफान', 'भस्मावृत्त चिंगारी', 'फूलो का कुर्ता', 'उत्तमी की मां', 'सच बोलने की भूल', 'तुमने क्यों कहा था कि मैं सुंदर हूं' आदि यशपाल के प्रसिद्ध कहानी संग्रह हैं।

4. **वृंदावनलाल वर्मा (1889–1969)**– वृंदावनलाल वर्मा ने प्रेमचंद–युग से उपन्यास लिखना प्रारंभ किया था। हिंदी में शुद्ध ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना–परंपरा को आरंभ करने का श्रेय भी इन्हीं को प्राप्त है। उनके सामाजिक उपन्यासों में मानव–मनोविज्ञान और मानवीय संवेदनाओं को समझने एवं अभिव्यक्त करने का प्रयास दिखाई देता है। 'संगम', 'लगन', 'प्रत्यागत' और 'कुंडली चक्र' इनके सामाजिक उपन्यास हैं। 'गढ़ कुंडार', 'विराटा की पद्‌मिनी', 'झांसी की रानी', 'कचनार', 'मृगनयनी', 'अहल्याबाई', 'माधोजी सिंधिया', 'भुवन विक्रम' आदि ऐतिहासिक उपन्यास हैं। अधिकांश उपन्यासों में बुंदेलखंड के अतीत गौरव को चित्रित किया गया है।

   उपन्यासों के समान वर्मा जी की कहानियों को भी पर्याप्त लोकप्रियता प्राप्त हुई है। कहानियों का परिवेश अधिकतर ऐतिहासिक है।

5. जैनेंद्र (1905–1989)– जैनेंद्र मूलतः व्यष्टि–बोध के साहित्यकार हैं। उन्होंने प्रेमचंद की सामाजिक दुनिया से हटकर व्यक्ति–मन की भीतरी गहराइयों में झांका। उनका संपूर्ण कथा–साहित्य व्यक्ति की व्यथा व व्यक्ति के आत्म–पीड़न से पूरित है क्योंकि वे यह स्वीकार करते हैं कि व्यक्ति ही वह आधार बिंदु है जिस पर समस्त जीवन की भित्ति स्थापित है। उन्होंने प्रेमचंद–युग में ही हिंदी उपन्यास को नई दिशा देने का सफल प्रयास किया। उन्होंने व्यापक सामाजिक जीवन को अपने उपन्यासों का विषय न बनाकर व्यक्ति– मन की शंकाओं, उलझनों और गुत्थियों का चित्रण किया है। इस प्रकार उन्होंने हिंदी उपन्यास को सामाजिक यथार्थ ही नहीं मनोवैज्ञानिक यथार्थ के क्षेत्र में भी प्रवेश करने की राह दिखाई। परख, सुनीता, त्यागपत्र, कल्याणी, जयवर्धन, व्यतीत, विवर्त, सुखदा, मुक्तिबोध, दशार्क, अनाम स्वामी, अनंतर आदि इनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं।

जैनेंद्र के आगमन से हिंदी कहानी–क्षेत्र में भी एक नवीन युग का उदय हुआ। उनकी अधिकांश कहानियां मनोविश्लेषणात्मक हैं। हिंदी कहानी को उन्होंने एक नई अंतर्दृष्टि, संवेदनशीलता और दार्शनिक गहराई प्रदान की। 'फांसी', 'स्पर्द्धा', 'एक रात', 'वातायन', 'पाजेब', 'जयसंधि', 'दो चिड़िया', 'उद्‌भ्रांत' आदि इनके प्रसिद्ध कहानी संकलन हैं। इनकी समस्त कहानियां 'जैनेंद्र की कहानियां' में क्रमशः सात और दस भागों में प्रकाशित हो चुकी हैं।

जैनेंद्र की कहानियां सामाजिक परिवेश से संबंध रखते हुए भी सामाजिक यथार्थ की कहानियां न होकर व्यक्ति के अंतर्मन और व्यक्ति के भीतरी यथार्थ की कहानियां हैं। अतः व्यष्टि–बोध के संदर्भ में जैनेंद्र के कथा संसार को निश्चय ही एक विशिष्ट और अलग कथा–संसार की शुरुआत माना जा सकता है।

6. अज्ञेय (1911–1987)– इनका जन्म सन् 1911 में कसया (देवरिया) में हुआ था। बी.एससी. तक शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात इन्होंने अंग्रेजी तथा हिंदी साहित्य का अध्ययन किया। संस्कृत साहित्य में भी इनकी विशेष रुचि थी। उनका जीवन यायावरी और क्रांतिकारी रहा। यही कारण है कि वे किसी एक व्यवस्था से जुड़कर नहीं रह सके। हिंदी साहित्य में वह कवि, उपन्यासकार, कहानीकार, निबंधकार तथा आलोचक के रूप में प्रख्यात हैं।

अज्ञेय, प्रेमचंद परवर्ती साहित्य के प्रतिनिधि कथाकार हैं। इनका जीवन–दर्शन पाश्चात्य सिद्धांतों विशेषतः फ्रायड और अस्तित्ववाद से प्रभावित है। ये प्रभाव उनके उपन्यासों में प्रत्यक्ष दिखाई देता है। 'शेखर एक जीवनी' के प्रकाशन के साथ हिंदी उपन्यास में एक नया मोड़ आया कथ्य, शिल्प और भाषा की दृष्टि से। यह परंपरा से हटकर एक नवीन प्रयोग था। इसका मूल उद्देश्य था मुख्य पात्र शेखर की स्वतंत्रता की खोज, व्यक्तित्व की खोज। 'नदी के द्वीप', 'अपने–अपने अजनबी' इनके अन्य उपन्यास हैं। 'नदी के द्वीप' में एक व्यक्ति का अपने से साक्षात्कार मुख्य नहीं अपितु अलग–अलग पात्रों के व्यक्तित्व की खोज प्रमुख है। 'अपने–अपने अजनबी' में दर्शन, मनोविज्ञान और अस्तित्ववाद का सुंदर समन्वय है। इनके कहानी–सृजन में युग की प्रायः समस्त प्रवृत्तियां

टिप्पणी

अपनी संपूर्ण विशिष्टताओं के साथ प्रतिबिंबित हुई हैं। भारतीय समाज की रूढ़िवादिता, शोषण, वर्तमान विश्व में व्याप्त संघर्ष सभी को लेकर उन्होंने अनेक मार्मिक कहानियां लिखीं। उनका प्रथम कहानी संग्रह 'विपथगा' 1937 में छपा था। इनका चिंतन बौद्धिक एवं दार्शनिक है और दृष्टि व्यक्तिपरक। इसलिए क्रांतिकारी और विभाजन की कहानियों को छोड़कर शेष रचनाओं में उनकी दृष्टि व्यक्तिवादी तथा आत्मकेंद्रित है। अज्ञेय अपने अनुभूत सत्य की व्याख्या बिंबों व प्रतीकों के माध्यम से करते हैं। कथा–विधान की पटुता, स्थिति की पहचान और व्यक्ति–जीवन के क्षण की अनुभूति का जो कौशल अज्ञेय में है, वह निश्चय ही अपूर्व है। कई बार कोई ऐसा ही अनुभूत क्षण कहानी का रूप धारण कर लेता है जो पाठक के मन में अनायास ही एक गहरा प्रभाव छोड़ देता है। 'रोज' कहानी इसका श्रेष्ठ उदाहरण है। 'कोठरी की बात', 'जयदोल', 'परंपरा', 'विपथगा', 'अमर वल्लरी', 'शरणार्थी', 'ये तेरे प्रतिरूप' आदि उनके प्रसिद्ध कहानी संग्रह हैं।

7. **उपेंद्रनाथ अश्क (1910–1996)**– उपेंद्रनाथ अश्क प्रेमचंद के समय से लिखते थे। बाद में सन् 1933 से हिंदी में लिखना शुरू किया। गत पचास वर्षों में हिंदी साहित्य ने जो प्रगति की है उसके विकास की रेखा अश्क जी के साहित्य में स्पष्ट दिखाई देती है। उनकी प्रतिभा बहुमुखी है। उन्होंने उपन्यास, कहानी, नाटक, एकांकी, कविता, संस्मरण, निबंध सभी विधाओं में लिखकर ख्याति प्राप्त की है।

   हिंदी उपन्यास में निम्नमध्य और मध्यवर्गीय परिवारों के संस्कारों का जैसा यथार्थ चित्रण उपेंद्रनाथ अश्क ने किया है, वह बेजोड़ है। 'गिरती दीवारें' उनका प्रसिद्ध उपन्यास है। यह उपन्यास मध्यवर्ग की विवशता का चित्रण करते हुए कई प्रकार की मध्यवर्गीय नैतिक वर्जनाओं को तोड़ने की प्रेरणा देता है। 'शहर में घूमता आईना', 'एक नन्हीं कंदील' तथा 'बांधो न नाव इस ठांव', इसी कड़ी में लिखे गए उपन्यास हैं जिन्हें 'गिरती दीवारें' के अगले खंड कहा जा सकता है। सितारों के खेल, गर्म राख, बड़ी–बड़ी आंखें, पत्थर–अल–पत्थर इनके अन्य उपन्यास हैं।

   कहानी के क्षेत्र में भी अश्क का योगदान महत्वपूर्ण है। इनकी कहानियों में सब प्रकार के विषय हैं और पात्रों में भी वैविध्य है। कथ्य में यथार्थ का विश्लेषण है। कुछ कहानियों में संवेदना इतनी गहरी है कि पाठक के मन पर चिरकाल तक इसका प्रभाव रहता है। 'डाची' इनकी सर्वश्रेष्ठ कहानी स्वीकार की जाती है। 'काले साहब', 'जुदाई की शाम का गीत', 'बैंगन का पौधा', 'दो धारा', 'पिंजरा', 'पाषाण', 'निशानियां', 'अंकुर', 'चरवाहे', 'पलंग', 'आकाशचारी', 'कहानी लेखिका और जेलम के सात पुल', इनके कहानी संग्रह हैं। इनकी श्रेष्ठ कहानियों का एक संकलन 'सत्तर श्रेष्ठ कहानियां' भी प्रकाशित हो चुका है।

8. **विष्णु प्रभाकर (1912–2009)**– विष्णु प्रभाकर विशिष्ट प्रतिभा संपन्न कलाकार थे। यद्यपि इन्होंने हिंदी साहित्य में नाटक, एकांकी आदि लिखकर विशेष ख्याति अर्जित की तथापि वे स्वयं को मूलतः कथाकार ही मानते थे।

टिप्पणी

विष्णु प्रभाकर का अपने उपन्यासों में व्यक्त दृष्टिकोण स्वस्थ मानवतावादी एवं सृजनात्मक है। जीवन के स्वस्थ भाव–जगत से कथा–सूत्रों को चुनकर उन्होंने स्वस्थ व्यवहार दृष्टि से ही उसको विकसित किया है। 'तट के बंधन', 'निशिकांत', 'ढलती रात', 'स्वप्नमी' आदि इनके उपन्यास हैं। 'आवारा मसीहा' नामक रचना में इन्होंने औपन्यासिक शैली में बांग्ला कथाकार शरतचंद्र के जीवन पर प्रामाणिक प्रकाश डाला है। इस रचना के कारण उन्हें हिंदी जगत में विशेष ख्याति मिली।

विष्णु प्रभाकर ने तीन सौ से भी ऊपर कहानियां लिखी हैं। कहानी के क्षेत्र में उनका विकास अप्रत्याशित है। यही कारण है कि वे पुरानी और नयी दोनों पीढ़ियों में समान रूप से लोकप्रिय हैं। 'आदि और अंत', 'रहमान का बेटा', 'जिंदगी के थपेड़े', 'संघर्ष के बाद', 'द्वंद्व', 'मेरा वतन', 'धरती अब भी घूम रही है', 'खिलौने', 'पुल टूटने से पहले', 'मेरी प्रिय कहानियां' आदि उनके कहानी संकलन हैं। 'धरती अब भी घूम रही है' उनकी सबसे अधिक चर्चित कहानी मानी जाती है। 'एक आसमान के नीचे' कहानी विष्णु प्रभाकर की कथा–यात्रा में एक मील का पत्थर है।

9. **भीष्म साहनी (1915–2003)**– भीष्म साहनी प्रेमचंद की परंपरा के कथाकार हैं। वे सामाजिक सोद्देश्यता और प्रयोजन के साहित्य में विश्वास रखते हैं किंतु उनका दृष्टिकोण प्रगतिशील है। उनकी प्रतिभा बहुमुखी है। उपन्यास और कहानी के अतिरिक्त उन्हें नाटक लेखन में भी विशेष सफलता मिली है। 'झरोखे', 'कड़ियां', 'तमस', 'बासंती' और 'मैय्यादास की माड़ी' इनके उपन्यास हैं। उपन्यासों में उनकी कला में निरंतर निखार आया है।

   भीष्म साहनी की कहानियों में मूलतः मध्यवर्ग की विभिन्न समस्याओं का यथार्थ चित्रण मिलता है। प्रायः वे किसी न किसी सामाजिक विडंबना पर प्रहार करते हैं। व्यंग्य और करुणा इनकी कहानियों के प्रमुख गुण हैं। बिंबों और प्रतीकों के बिना सीधे–सादे सरल ढंग से पाठक के हृदय को द्रवित कर देते हैं। 'भटकती राख', 'भाग्य रेखा', 'पहला पाठ', 'पटरियां' और 'वाङ्चू' इनके प्रमुख कहानी संग्रह हैं।

10. **अमृतलाल नागर (1916–1990)**– स्वतंत्रता के पश्चात नवीन युग के उपन्यासकारों में नागर जी का नाम उल्लेखनीय है। इन्हें यथार्थवादी चेतना का प्रमुख उपन्यासकार कहा जाता है। वे व्यक्ति और समाज दोनों को साथ लेकर चलते हैं। इनके उपन्यासों में इतिहास, पुरातत्व और आधुनिकता का सुंदर समावेश मिलता है। 'महाकाल' बंगाल में पड़ने वाले अकाल की पृष्ठभूमि पर आधारित इनका सर्वप्रथम उपन्यास है। 'नवाबी मसनद' और 'सुहाग के नूपुर' इनके दो ऐतिहासिक उपन्यास हैं। 'सेठ बांकेमल' सामाजिक व्यंग्य है। 'ये कोठेवालियां' वेश्या जीवन पर आधारित है। इसके अतिरिक्त 'बूंद और समुद्र', 'अमृत और विष', 'शतरंज के मोहरे', 'एकदा नैमिषारण्ये', 'मानस का हंस', 'खंजन नयन' और 'सात घूंघट वाला मुखड़ा, 'अग्नि गर्भा', 'करवट', 'पीढ़ियां' आदि इनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं।

टिप्पणी

अमृतलाल नागर यथार्थवादी लेखक हैं इसलिए कहानियों में मध्यवर्गीय संस्कारों और मनोवृत्तियों का उद्‌घाटन बड़े सहज रूप में कर लेते हैं।

11. **फणीश्वरनाथ रेणु (1921–1977)**– फणीश्वरनाथ रेणु स्वातंत्र्योत्तर काल के सशक्त कथाकार हैं। इन्होंने हिंदी में सही अर्थों में आंचलिक उपन्यास लिखे। 'मैला आंचल' और 'परती परिकथा' में ग्रामांचलों के विशद चित्र देखने को मिलते हैं। 'दीर्घ तपा', 'कितने चौराहे' और 'जुलूस' बाद के उपन्यास हैं।

    रेणु की सामाजिक चेतना नए–नए अंचलों की खोज में संलग्न रही। उनकी अधिकांश कहानियों में बिहार के गांवों का चित्रण मिलता है। ग्राम्य जीवन में जो नवीन मूल्य आ रहे हैं और प्रगतिशीलता के जो चिह्न छिपे पड़े हैं उन्हें उभारने का रेणु ने विशेष प्रयत्न किया है। उनकी शैली में अपूर्व प्रवाह और एक मादक संगीत है। 'तीसरी कसम' कहानी इसका श्रेष्ठ उदाहरण है। 'ठुमरी' और 'एक श्रावणी दोपहर की धूप' इनके कहानी संग्रह हैं।

12. **नागार्जुन (1910–1998)**– नागार्जुन हिंदी साहित्य के सशक्त कथाकार और कवि हैं। उनका असली नाम वैद्यनाथ मिश्र था। उनका जन्म तरौनी (जिला दरभंगा, बिहार) में 1910 में हुआ था। प्रारंभ में ये मैथिली में 'यात्री' उपनाम से लिखा करते थे। फिर श्रीलंका में बौद्ध धर्म में दीक्षित होने के बाद इनका नाम 'नागार्जुन' पड़ा। इसी नाम के साथ उन्होंने हिन्दी भाषा में अपना रचनाकर्म किया। ये प्रगतिवादी विचारधारा के लेखक और कवि थे। उनके उपन्यासों में प्रमुख हैंः रतिनाथ की चाची, बलचनमा, नयी पौध, बाबा बटेसर नाथ, दुखमोचन और वरुण के बेटे। इन औपन्यासिक रचनाओं में नागार्जुन सामाजिक समस्याओं से जूझते दीख पड़ते हैं। जनपदीय संस्कृति और लोक–जीवन उनकी कथा–सृष्टि का चौड़ा फलक हैं। उन्होंने कहीं तो आंचलिक परिवेश में किसी ग्रामीण परिवार के सुख–दुःख की कहानी कही है, कहीं मार्क्सवादी सिद्धांतों की झलक देते हुए सामाजिक आंदोलनों का समर्थन किया है।

13. **मोहन राकेश (1925–1972)**– मोहन राकेश स्वातंत्र्योत्तर युग के सजग कलाकारों में प्रमुख हैं। नाटक के क्षेत्र में इन्हें विशेष ख्याति मिली। किंतु इसके साथ ही वे एक सफल उपन्यासकार व कहानीकार भी माने जाते हैं। इन्होंने अपने युग की धड़कन को पहचाना और उसे अपने साहित्य में स्वीकार किया। उनकी रचना दृष्टि का सीधा संबंध आसपास जिए जा रहे जीवन के साथ तथा इस जीवन की विडंबनाओं को झेलते हुए व्यक्ति के साथ रहा। किंतु इस व्यक्ति को उन्होंने एक कटी हुई इकाई के रूप में कभी नहीं देखा क्योंकि वह व्यक्ति अपने समाज का एक अविभाज्य अंग है। 'अंधेरे बंद कमरे', 'न आने वाला कल' और 'अंतराल' इनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं। इन सभी उपन्यासों का शिल्प एवं कथ्य के धरातल पर अलग–अलग महत्व है।

    मोहन राकेश को नई कहानी का प्रवर्तक माना जाता है। इनकी पहली कहानी 'दोराहा' सन् 1947 में सरिता में छपी थी। इसके पश्चात उन्होंने बहुत सी कहानियां लिखीं और निरंतर नये संदर्भों की खोज की। इनकी कहानियों में कथ्य के नये–नये कोण उभरकर आते हैं और शिल्प के साथ गुंफित होकर

टिप्पणी

संवेदना के स्तर पर बहुत बड़ी बात कह जाते हैं। 'इनसान के खंडर', 'नये बादल', 'जानवर और जानवर', 'एक और जिंदगी', 'फौलाद का आकाश' इनके प्रकाशित कहानी संग्रह हैं।

14. मन्नू भंडारी (1931)– आज की महिला लेखिकाओं में मन्नू भंडारी का नाम उल्लेखनीय है। उन्होंने अपने कथा साहित्य में जीवन की जटिल और गहरी सच्चाइयों का साक्षात्कार करने की चेष्टा की। 'आपका बंटी' और 'महाभोज', इनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं। 'एक इंच मुस्कान' नामक उपन्यास की रचना इन्होंने अपने पति राजेन्द्र यादव के साथ मिलकर की।

मन्नू भंडारी ने अपनी कहानियों में नारी के इर्द–गिर्द बुने नैतिकता के जाल और प्रतिष्ठित सामाजिक मान्यताओं को तोड़ने की चेष्टा की। उन्होंने नारी के मौलिक व्यक्तित्व का अन्वेषण कर उसे यथार्थ के धरातल पर चित्रित किया। इसके अतिरिक्त उन्होंने अपनी कहानियों में पुराने प्रेम–त्रिकोण को भी एक नयी दृष्टि दी। 'यही सच है' और 'ऊंचाई' नामक कहानियां इसका श्रेष्ठ उदाहरण हैं। 'यही सच है', 'एक प्लेट सैलाब', 'तीन निगाहों की एक तस्वीर' प्रसिद्ध कहानियां हैं। कहानी विधा दिन प्रतिदिन और अधिक लोकप्रिय हो रही है।

अपनी प्रगति जांचिए

5. निम्न में से माधवराव सप्रे की रचित कहानी कौन–सी है?

   (क) इंदुमती (ख) रानी केतकी की कहानी

   (ग) दुलाई वाली (घ) एक टोकरी भर मिट्टी

6. 'डाची' कहानी का लेखक कौन है?

   (क) उपेन्द्रनाथ 'अश्क' (ख) रांगेय राघव

   (ग) नागार्जुन (घ) अज्ञेय

7. प्रसाद की कहानियों में छायावाद की किस प्रवृत्ति की छाया पड़ती है?

   (क) एकाकीपन (ख) रुदन

   (ग) वैयक्तिकता (ग) सांकेतिकता

8. विश्वम्भर नाथ शर्मा 'कौशिक' किस युग के कथाकार हैं?

   (क) पूर्व–प्रेमचंद युग (ख) प्रेमचंद–प्रसाद युग

   (ग) उत्तर–प्रेमचंद युग (घ) स्वातंत्र्योत्तर युग

2.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (ख)
2. (घ)
3. (ग)

4. (क)
5. (घ)
6. (क)
7. (ग)
8. (ख)

2.5 सारांश

हिंदी गद्य का विकसित रूप सामने आते ही उपन्यासों की रचना होने लगी। सन् 1877 में श्रद्धाराम ने 'भाग्यवती' उपन्यास लिखा और उसके बाद सन् 1882 में लाला श्री निवासदास ने 'परीक्षा गुरु'। 'भाग्यवती' में नारी शिक्षा और उपदेश से अधिक कुछ नहीं है जबकि 'परीक्षा गुरु' में उपदेशात्मकता के साथ–साथ समस्त औपन्यासिक तत्वों का समावेश भी है। इसलिए 'परीक्षा गुरु' को ही हिंदी साहित्य का प्रथम उपन्यास माना जाता है।

इसके बाद उपन्यास सर्जना का यह क्रम निरंतर चलता रहा। सामाजिक, पौराणिक, ऐतिहासिक, तिलस्मी, ऐयारी, जासूसी सब प्रकार के उपन्यास रचे जाने लगे। यदि ऐसा कहा जाए कि उपन्यासों की एक बाढ़ सी आ गई तो अत्युक्ति न होगी किंतु प्रमुख नाम केवल तीन हैं– किशोरी लाल गोस्वामी, देवकीनंदन खत्री और गोपालराम गहमरी।

उपन्यास साहित्य का आरंभ भले ही सामान्य स्तर का रहा किंतु इसका उत्तरोत्तर विकास बड़े ही उत्साहजनक वातावरण में हुआ। आलोचकों का कथन है कि हिंदी में जितने उपन्यास इस युग में रचे गए, परवर्ती किसी युग में नहीं।

प्रेमचंद का हिंदी उपन्यास साहित्य के विकास की परंपरा में एक महत्वपूर्ण योगदान है। उन्होंने हिंदी उपन्यास को काल्पनिक तथा तिलस्मी, ऐयारी, जासूसी के इंद्रजाल से निकालकर मानव जीवन की यथार्थ समस्याओं से संबद्ध किया। इस समय देश में कांग्रेस की स्थापना हो चुकी थी। गांधी जी राजनीतिक क्षेत्र में जो कार्य कर रहे थे प्रेमचंद ने वही कार्य साहित्यिक क्षेत्र में किया। उनके उपन्यासों में सर्वत्र गांधीवादी नीतियों का प्रतिपादन किया गया है। उन्होंने हमेशा शोषण के विरुद्ध आवाज उठाई। समाज में दृष्टिगत अनेक समस्याओं यथा विधवा विवाह, वेश्या समस्या, अनमेल विवाह, दहेज प्रथा, अवैध प्रेम, जाति–भेद आदि को वाणी दी। वे समाज का परिसंस्कार करना चाहते थे इसलिए उनका दृष्टिकोण प्रायः आदर्शोन्मुख यथार्थवादी रहा।

प्रसाद का दृष्टिकोण प्रेमचंद से नितांत भिन्न था। प्रेमचंद ने अपने उपन्यासों में समाज और सामाजिक समस्याओं को प्रमुखता दी किंतु प्रसाद ने व्यक्ति और उसकी वैयक्तिक समस्याओं को विभिन्न सामाजिक समस्याओं के संदर्भ में देखा है। आगे चलकर जैनेंद्र और इलाचंद्र जोशी ने मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास लिखे। मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में जैनेंद्र के उपन्यास 'परख', 'सुनीता' और 'कल्याणी' तथा इलाचंद्र जोशी के मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासों में 'संन्यासी' को विशेष प्रसिद्धि प्राप्त हुई।

टिप्पणी

हिंदी में यशपाल को मार्क्स के सिद्धांतों से प्रभावित प्रगतिवादी औपन्यासिक धारा का प्रवर्तक माना जाता है। इनके उपन्यासों में से 'दादा कामरेड', 'देशद्रोही', 'मनुष्य के रूप' इसी कोटि के उपन्यास हैं। इनमें इनकी साम्यवादी विचारधारा स्पष्ट परिलक्षित होती है। 'दिव्या' यशपाल का एक ऐतिहासिक उपन्यास है किंतु इसमें भी इनकी चिंतन पद्धति समाजवादी ही है। इसी धारा में आगे चलकर रांगेय राघव ने 'घरौंदे' तथा 'हुजूर' उपन्यासों की रचना की। इनका दृष्टिकोण प्रगतिवादी था। इन उपन्यासों में इन्होंने आर्थिक वैषम्य और शोषण आदि विभिन्न समसामयिक विकृतियों पर चोट की। राहुल सांकृत्यायन ने 'जीने के लिए', 'जय यौधेय' और 'सिंह सेनापति' लिखे। इसके अतिरिक्त रामेश्वर शुक्ल अंचल व नागार्जुन ने कई उपन्यास लिखे जिनमें पूंजीवादी संस्कृति के प्रति आक्रोश प्रकट किया गया है।

सामाजिक उपन्यासकारों में अमृतलाल नागर का विशेष स्थान है। 'प्रेमचंद' के बाद उन्हें यथार्थवादी चेतना का प्रमुख उपन्यासकार कहा जा सकता है। 'नवाबी मसनद', 'सेठ बांकेमल', 'महाकाल', बूंद और समुद्र', अमृत और विष', 'मानस का हंस', 'शतरंज के मोहरे', 'नाच्यो बहुत गोपाल', 'खंजन नयन', 'सुहाग के नूपुर', 'करवट और पीढ़ियां' इनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं। इन उपन्यासों में इतिहास, पुरातत्व और आधुनिकता का सुंदर समावेश मिलता है। 'बूंद और समुद्र' इनका सफल एवं बहुचर्चित उपन्यास है। 'बूंद और समुद्र' क्रमशः व्यक्ति और समाज के प्रतीक हैं। इसमें भारतीय समाज के विभिन्न रूपों, रीति–नीतियों, आचार–विचारों, जीवन– दृष्टियों, मर्यादाओं, टूटती और निर्मित होती व्यवस्थाओं के अनगिनत चित्र हैं। इस उफनते हुए समुद्र में व्यक्ति अर्थात बूंद की क्या स्थिति है यही इस उपन्यास का प्रतिपाद्य है।

स्वातंत्र्योत्तर काल में एक नई धारा सामने आई। कुछ उपन्यासों में केवल प्रदेश विशेष की संस्कृति को उसके सजीव वातावरण में प्रस्तुत किया गया। इस दिशा में फणीश्वरनाथ रेणु का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। 'मैला आंचल' और 'परती परिकथा' इनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं।

मनोवैज्ञानिक–मनोविश्लेषणवादी उपन्यासों में बाह्य संघर्ष की अपेक्षा व्यक्ति के अंतःसंघर्ष का चित्रण किया जाने लगा। उपन्यासकार व्यक्ति के अवचेतन, तथा उपचेतन की परतें खोलने लगा। आपने पहले पढ़ा कि इस दिशा में पश्चिम के विचारकों– फ्रायड, युंग, एडलर आदि ने जैनेंद्र, इलाचंद्र जोशी और अज्ञेय के चिंतन को प्रभावित किया।

अन्य आधुनिक गद्य–विधाओं के समान आधुनिक कहानी का प्रवर्तन भारतेंदु युग में ही हुआ। कुछ विचारक इंशा अल्ला खां की 'रानी केतकी की कहानी' को हिंदी की प्रथम कहानी मानते हैं। इसमें किस्सागोई के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। इसके बाद राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद की 'राजा भोज का स्वप्न' और भारतेंदु की 'एक अद्‌भुत अपूर्व स्वप्न' नामक कहानियां सामने आईं। इनमें कहानी नाम का कोई तत्व उपलब्ध नहीं होता। इन्हें कथात्मक शैली के निबंध कहा जा सकता है। इसी समय पाश्चात्य साहित्य के प्रभाव से बांग्ला, मराठी और गुजराती में भी इन कहानियों के अनुवाद होने लगे। इन अनुवादों ने ही हिंदी साहित्यकारों को कहानी लेखन के लिए प्रेरणा दी। यहीं से हिंदी की मौलिक कहानी ने स्वरूप लिया। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' नामक पत्रिका का संपादन किया था। 'सरस्वती' के प्रथम वर्ष में ही किशोरी लाल

गोस्वामी की 'इंदुमती' नामक कहानी छपी और इसके बाद बंग महिला की 'दुलाई वाली' रामचंद्र शुक्ल की 'ग्यारह वर्ष का समय' प्रकाशित हुई। इन कहानियों को हम प्रयोगशील कहानियां कह सकते हैं जिनमें कहानीकारों ने विदेशी या बांग्ला साहित्य के प्रभाव में आकर हिंदी में कहानी लिखने का प्रयास किया। अब माधवराव सप्रे की कहानी 'एक टोकरी भर मिट्‌टी' को हिंदी की पहली कहानी माना जाता है, जो 1901 में प्रकाशित हुई थी।

सन् 60–65 के बाद की लिखी कहानियों में अधिक उग्रता और निर्ममता है। ये कहानियां प्रायः उन लेखकों की हैं जिन्होंने स्वतंत्र भारत का क्रूर यथार्थ अपनी आंखों से देखा। इनमें से उल्लेखनीय हैं– दूधनाथ सिंह, महीप सिंह, ज्ञानरंजन, गिरिराज किशोर, काशीनाथ सिंह, रमेश उपाध्याय और गोविंद मिश्र।

स्त्री के स्वतंत्र व्यक्तित्व को चित्रित करने वाली कहानियां ममता कालिया, सुधा अरोड़ा, निरूपमा सेवती, अनिता औलक, दीप्ति खंडेलवाल, राजी सेठ, मृणाल पांडे आदि ने लिखीं।

2.6 मुख्य शब्दावली

- **उपदेशात्मक** : उपदेश देने के भाव युक्त।
- **स्वातंत्र्योत्तर** : स्वतंत्रता के बाद।
- **जिप्सी** : खानाबदोश, बंजारा।
- **द्वंद्व** : टकराव।
- **ग्रामांचल** : ग्रामीण क्षेत्र।
- **अविभाज्य** : जिसे बांटा या विभाजित न किया जा सके।

2.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. भारतेंदु युग में लिखे गए उपन्यासों में प्रमुख उपन्यास व उनके लेखकों का नामोल्लेख कीजिए।
2. उत्तर–प्रेमचंद युग के उपन्यासों की प्रवृत्तियों का वर्णन कीजिए।
3. हिन्दी कहानी के विकास–क्रम का वर्गीकरण किस प्रकार किया गया है?
4. साठोत्तरी कहानियों के स्वरूप को निर्दिष्ट कीजिए।
5. यशपाल के उपन्यासों एवं कहानियों का परिचय दीजिए।

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. हिन्दी उपन्यास के उद्‌भव एवं विकास–क्रम का सविस्तार वर्णन कीजिए।
2. पूर्व–प्रेमचंद युग व प्रेमचंद युग के उपन्यास प्रवृत्तियों की चर्चा करते हुए उत्तरोत्तर आए परिवर्तन की गवेषणा कीजिए।

3. स्वातंत्र्योत्तर युग के उपन्यासों की प्रवृत्यात्मक विवेचना कीजिए।
4. हिन्दी कहानी का विकास–क्रम की विशेषताओं का विश्लेषण कीजिए।
5. नयी कहानी के आरंभ व विकास की चर्चा करते हुए परवर्ती कहानियों में आए परिवर्तन का विवेचन कीजिए।

2.8 सहायक पाठ्य सामग्री

1. इन्द्रनाथ मदान, 'प्रेमचन्द चिन्तन और कला', सरस्वती प्रेस, वाराणसी।
2. रामविलास शर्मा, 'प्रेमचन्द और उनका युग', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. लालचन्द गुप्त, 'हिन्दी कहानी का इतिहास' संजीव प्रकाशन, कुरुक्षेत्र।
4. नामवर सिंह, 'कहानी नयी कहानी', लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2009।
5. रामदरश मिश्र, 'हिन्दी उपन्यास : एक अन्तर्यात्रा', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016।
6. राजेन्द्र यादव ,'एक दुनिया समानान्तर', राधाकृष्णन प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003।

इकाई 3 गबन/आपका बंटी का समीक्षात्मक अध्ययन

टिप्पणी

संरचना

3.0 परिचय
3.1 उद्देश्य
3.2 'गबन' का समीक्षात्मक अध्ययन
  3.2.1 'गबन' की विषयवस्तु
  3.2.2 'गबन' की कथावुस्त का विश्लेषण
  3.2.3 'गबन' की केन्द्रीय समस्या
  3.2.4 औपन्यासिक तत्वों के आधार पर 'गबन' की समीक्षा
3.3 'आपका बंटी' का समीक्षात्मक अध्ययन
  3.3.1 'आपका बंटी' की विषयवस्तु
  3.3.2 'आपका बंटी' की केन्द्रीय समस्या
  3.3.3 औपन्यासिक तत्वों के आधार पर 'आपका बंटी' की समीक्षा
3.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
3.5 सारांश
3.6 मुख्य शब्दावली
3.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
3.8 सहायक पाठ्य सामग्री

3.0 परिचय

प्रेमचंद का साहित्य भारतीय समाज का दर्पण है। उस साहित्य से परिचित होने का मतलब है, भारत के सामंती अवशेषों और उज्ज्वल भविष्य से परिचित होना। प्रेमचंद की यथार्थवादी कला की सबसे बड़ी विशेषता है सजीव चरित्र–चित्रण। उनके पात्र एकदम जीवंत हैं और हमें गहराई तक प्रभावित करते हैं। प्रेमचंद अपने उपन्यासों में कथानक का रूप उस सामाजिक समस्या से ग्रहण करते थे, जिस पर उन्हें लिखना होता था।

प्रेमचंद के यथार्थवाद का स्रोत उनकी देशभक्ति, जनता के लिए उनकी गहरी सहानुभूति है। उनके उपन्यासों में विदेशी शासकों के प्रति तीव्र घृणा है। वे साम्राज्यवाद से समझौताविहीन संघर्ष की प्रेरणा देते हैं। 'गबन' उनका एक ऐसा उपन्यास है जिसके माध्यम से वे भारतीय मध्यवर्ग के अनेक पहलुओं को उजागर करते हैं। उसकी कमियों और दुर्बलताओं को रेखांकित करते हैं। स्त्रियों की आभूषणप्रियता को आधार बना कर जिस कथाभूमि का उन्होंने निर्माण किया है, उस पर चल कर हम इस निष्कर्ष तक पहुंचते हैं कि जीवन के मूल तत्व को भुला कर दिखावे की जिन्दगी जीना मूर्खता है।

हिन्दी कथा साहित्य में महिला हस्ताक्षरों का नाम लेने पर मन्नू भण्डारी का नाम सर्वप्रमुख आता है। अपनी कहानियों और उपन्यासों में मन्नू भण्डारी ने जीवन की जटिल और गहरी सच्चाइयों से जूझने की चेष्टा की है। मन्नू भण्डारी का कथा–साहित्य नारी केंद्रित रहा है। नारी के मौलिक व्यक्तित्व का अन्वेषण कर उसे यथार्थ के धरातल

टिप्पणी

पर उतारना मन्नू भण्डारी के लेखन की विशेषता है। नारी व बाल–मन का मनोविश्लेषणात्मक चित्रण मन्नू भण्डारी ने अपने सर्वप्रसिद्ध उपन्यास 'आपका बंटी' में किया है।

'आपका बंटी' आधुनिक कथा–साहित्य के सबसे बेहतरीन उपन्यासों में से है। दाम्पत्य जीवन में उपजे तनाव के फलस्वरूप पति–पत्नी में अलगाव और जिसके कारण मासूम में बच्चे बंटी की दुनिया एक त्रासदी से ज्यादा और कुछ नहीं बचती। स्त्री की आत्मनिर्भरता का संघर्ष व बच्चे की चेतना में बड़ों की इस दुनिया के द्वंद्व को मन्नू भण्डारी ने पहली बार पहचाना था।

इस इकाई में प्रेमचंद के उपन्यास 'गबन' तथा मन्नू भण्डारी के उपन्यास 'आपका बंटी' की विषय–वस्तु का अवलोकन करते हुए औपन्यासिक तत्वों के आधार पर इन उपन्यासों का समीक्षात्मक अध्ययन किया गया है।

3.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- 'गबन' उपन्यास की विषय वस्तु से परिचित हो पाएंगे;
- 'गबन' की कथा वस्तु की समीक्षा कर सकेंगे;
- 'आपका बंटी' उपन्यास के प्रतिपाद्य से अवगत हो जाएंगे;
- औपन्यासिक तत्वों के आधार पर 'आपका बंटी' की समीक्षा कर सकेंगे।

3.2 'गबन' का समीक्षात्मक अध्ययन

गबन के समीक्षात्मक अध्ययन से पूर्व इसकी विषय–वस्तु एवं कथावस्तु पर दृष्टिपात समीचीन होगा।

3.2.1 'गबन' की विषयवस्तु

सुप्रसिद्ध अंग्रेजी आलोचक एडविन म्योर की दृष्टि में उपन्यास कला में प्रयुक्त होने वाले साधनों में कथानक ही सर्वमान्य और अधिक स्पष्ट होता है। अतः किसी भी उपन्यास की कथावस्तु का अध्ययन करते समय देखने की बात यह होती है कि उपन्यास पढ़ते समय पाठक को ऐसा एहसास नहीं होना चाहिए कि कोई बात छूट रही है या अपूर्ण रह गयी है। असम्बद्ध या अनावश्यक प्रकरण भी उसमें जुड़े हुए नहीं होने चाहिए जिससे यह प्रतीत हो कि ऐसे प्रकरण जोड़ कर कथा विस्तार का प्रयास किया गया है। कथावस्तु की विशेषता यह है कि प्रत्येक घटना परस्पर सम्बद्ध, स्वाभाविक तथा सुसंगठित हो। यदि साथ में दो कथाएं चलें तो उनमें भी परस्पर सम्बद्धता होनी चाहिए। कथावस्तु के संगठन के साथ–साथ कथानक का अकृत्रिम भी होना आवश्यक है। कोई भी कथानक तभी प्रभावोत्पादक हो सकता है, जब वह पाठकों की रुचि के अनुकूल तथा वास्तविक जीवन से सम्बद्ध हो।

घटना–चक्र की एकता एवं संगठन का विवेचन करते हुए भगवत शरण उपाध्याय ने लिखा है कि ''कहानी के इस विस्तार में कला की दृष्टि से रस का संचारण और

टिप्पणी

परिपाक होता है। घटनाचक्र की एकता या बहुमुखी जीवन धारा का स्वस्थ विलयन ही उसका पाक है। घटना–चक्र की एकता वस्तु गठन के रूप में उपन्यास के रस को कलात्मक रूप प्रदान करती है।'' इस दृष्टि से यदि गबन की कथावस्तु को देखा जाये तो ज्ञात होता है कि उसमें कथा तत्व का निर्वाह समग्रता से तथा अत्यन्त सफलतापूर्वक हुआ है। गबन का कथन सुगठित है। इसकी कथावस्तु दो भागों में विभक्त की जा सकती है क्योंकि उपन्यास की कथा दो स्थानों में घटती है–प्रयाग और कलकत्ता में। कथा का प्रथम अंश प्रयाग के आंचल में घटित होता है, और दूसरा अंश कलकत्ता में घटित होता है।

इस उपन्यास के मुख्य पात्र हैं रमानाथ और जालपा। ये दोनों पति–पत्नी हैं। रमानाथ पत्नी को बहुत प्रेम करता है और उसके मोह में वह गबन करता है पत्नी की आभूषण–प्रियता की तुष्टि के लिए और फिर पकड़े जाने के भय से पत्नी या किसी अन्य मित्र–रिश्तेदार को बिना बताए ही ट्रेन पर सवार हो जाता है। यह कथानक का पूर्वाद्ध भाग है। इसके आगे की कथा उत्तरार्द्ध कही जा सकती है क्योंकि यहां से देवीदीन के साथ कथा एक नया मोड़ लेती है और उसके आगे विकसित होती है। अब कथा एक वैयक्तिक जीवन से निकल कर विस्तृत सामाजिक क्षेत्र में चली जाती है।

कथानक में तनाव, उलझाव तब और बढ़ जाता है जब रतन, जालपा आदि कलकत्ता पहुंच जाते हैं और वहीं से कथा उपसंहार की ओर उन्मुख हो जाती है। इस उपन्यास के मुख्य पात्र रमानाथ और जालपा ही हैं। प्रेमचन्द ने कथानक की पूर्णता के लिए इसके अतिरिक्त अनेक प्रासंगिक कथाओं की योजना की है, जिनमें रतन, इन्दुभूषण की कथा, देवीदीन–जग्गो की कथा, जोहरा की कथा, दिनेश की माता की कथा, रमेश की कथा आदि उल्लेखनीय हैं। इन कथाओं की विशेषता यह है कि ये कथाएं मूल कथा के विकास की दृष्टि से ही महत्वपूर्ण नहीं हैं, अपितु उनका निजी महत्व भी है, सबका विकास स्वयं में पूर्ण भी है। रतन की कथा एक ओर जालपा तथा रमानाथ की कथा के विकास में सहायक है–उदाहरणार्थ–रतन द्वारा गहने बनवाने को दिए गये रुपये ही अप्रत्यक्ष रूप से गबन करने के कारण हैं। बाद में वह अपनी संवेदना से दोनों की सहानुभूति भी प्राप्त करती है तथा कथानक को नया मोड़ भी प्रदान करती है जिसके परिणामस्वरूप न केवल कथा तीव्रतर होती है बल्कि बाद में वह स्वयं भी उन दोनों के आश्रय में अपना जीवन व्यतीत करने को विवश हो जाती है।

यद्यपि कथानक के प्रारम्भ में घटनाएं अलग–अलग प्रतीत होती हैं परन्तु अन्त में सभी का एक साथ सामंजस्य हो जाता है। रतन की कथा तो पूर्णरूपेण जुड़ ही जाती है, देवीदीन, जग्गो तथा जोहरा की भी कथा अन्त में मुख्य कथा से जुड़ जाती है। देवीदीन भी वहीं खेती कर लेता है और रमानाथ वैद्य बन जाता है। कथानक के अन्त में रतन तथा जोहरा की मृत्यु दिखाकर उपन्यासकार ने कथा को फिर वहीं लाकर छोड़ दिया है, जहां से कथा को प्रारम्भ किया था। अन्त में कथा के मुख्य दो पात्र ही शेष बचते हैं और सहायक कथाओं का अवसान हो जाता है। ऐसा उपन्यासकार के आदर्शवादी दृष्टिकोण के कारण हुआ है। उनको यह स्वीकार्य नहीं था कि जालपा के मार्ग में कोई अन्य अवरोध बनकर उभरे। उन्हें नारी स्वभाव के अनुसार भय था कि जालपा के मन में रतन तथा जोहरा के जीवित रहते यह भ्रम हो सकता था कि कहीं रमानाथ इनके प्रेम में न फंस जाए। इस दुश्चिंता से बचने के लिए ही इन दोनों पात्रों का इतनी कुशलता से संयोगजन्य निधन दिखा दिया जिससे पाठक के मन में उनके

टिप्पणी

प्रति अपार सहानुभूति और श्रद्धा का भाव भी उदित हो जाता है और कथानक के अन्त में मुख्य पात्रों के बीच सुखद वातावरण की जो सृष्टि उपस्थित है वह बरकरार रहती है। नायक–नायिका का जीवन सुखी रहता है। इस उपन्यास की कथावस्तु इस प्रकार है–

कथावस्तु– दीनदयाल जमींदार के मुख्तार होने के कारण गांव में उनकी बड़ी साख और दबदबा था। यद्यपि वे बहुत धनी तो नहीं थे, किन्तु उनके समक्ष धनाभाव की समस्या भी न थी। उनके एक ही पुत्री थी जो तीन सन्तानों की मृत्यु के बाद पैदा हुई थी। पुत्री का नाम उन्होंने जालपा रखा था। तीन पुत्रों के खोने के बाद प्राप्त होने वाली जालपा का पालन–पोषण बहुत लाड़–प्यार से हुआ। वे जब भी प्रयाग जाते, उसके लिए कोई न कोई आभूषण अवश्य लाते। इससे जालपा के मन में बचपन से ही आभूषण के प्रति लगाव उत्पन्न हो गया था। वह अपनी सहेलियों को चन्द्रहार पहने देखकर उसकी भी इच्छा चन्द्रहार पहनने की थी परन्तु मां ने कह कर टाल दिया कि विवाह के समय चन्द्रहार उसकी ससुराल से आएगा और उस बाल मन पर विवाह के समय चन्द्रहार मिलने की इच्छा दिनों दिन बलवती होती गयी।

समय आने पर जालपा का विवाह दयानाथ के पुत्र रमानाथ से होता है। दयानाथ से दीनदयाल की मुलाकात प्रयाग में हुई थी। दयानाथ बहुत ही सज्जन और सहृदय व्यक्ति थे और कचहरी में 50 रु. वेतन पर सरकारी नौकर थे। दीनदयाल का कचहरी में आना–जाना बहुत था। वहीं उनकी मुलाकात दीनदयाल से हुई। दयानाथ जिस पद पर काम करते थे, चाहते तो हजारों की कमाई कर लेते परन्तु वे एक ईमानदार व्यक्ति थे इसलिए कभी भी किसी के एक पैसे के कर्जदार नहीं हुए थे। उनका यह व्यवहार केवल दीनदयाल के साथ ही नहीं था। यह उनका स्वभाव था। इस कारण वे सदैव आर्थिक समस्याओं से घिरे रहते थे। इन्हीं आर्थिक अभावों के कारण उनके पुत्र रमानाथ की पढ़ाई भी अधिक नहीं हो सकी जिसके फलस्वरूप उसमें निकम्मापन आता जा रहा था। वह अपना कीमती समय शतरंज खेलकर बिताता। मुंशी दयानाथ पुत्र के विवाह के पक्ष में नहीं थे किन्तु पत्नी के हठ करने पर कि विवाह के बाद वह सही रास्ते पर आ जाएगा, उसका विवाह दीनदयाल की पुत्री जालपा से कर देते हैं क्योंकि दीनदयाल पहले से ही दयानाथ की सज्जनता और ईमानदारी के कायल थे।

दयानाथ तो विवाह सीधे–सादे ढंग से करना चाहते थे, पर जब टीके के नकद हजार रुपये देखे तो उन्होंने भी विवाह धूमधाम से किया। एक हजार रुपये तो बाजे–गाजे, तमाशे और खाने पीने में खत्म हो गए, तीन हजार के जो आभूषण बनवाए थे, वह सभी उधार थे। उन्हें उम्मीद थी कि विवाह में दीनदयाल के यहां से इतने तो मिल ही जाएंगे सो विवाह के बाद लौटा दिया जाएगा। यहां दयानाथ को निराशा हाथ लगी और सबसे बड़ा झटका जालपा के मन को लगा कि ससुराल से उसे चन्द्रहार न आया था। यद्यपि गहने बहुत आए थे। वह चन्द्रहार न पाकर बहुत दुखी हुई। जालपा की सहेली ने उसकी अपरिपक्व बुद्धि में यह बात बैठा दी की पति से चन्द्रहार पाने के लिए उसे मान करना, रूठना चाहिए। रमानाथ ने भी जालपा से अपनी वास्तविक परिस्थिति न बता कर अपने धनवान होने की लम्बी–चौड़ी डींगे हांकी जिसके फलस्वरूप चन्द्रहार के लिए जालपा का हठ बढ़ता गया।

इधर तीन महीने बीतने पर जब सर्राफ के न पैसे पहुंचे न सूद तो वह रुपये मांगते घर आ गया और यह वादा लेकर कि रुपये परसों घर पहुंच जाएंगे, वापस चला

टिप्पणी

गया। सर्राफ तो चला गया, पर रमानाथ चिंतित हो उठा। सर्राफ को रुपये देने आवश्यक थे। जब कोई उपाय न सूझा, तो उसने कूल करके जालपा के गहने का डिब्बा चुरा लिया और 'चोर–चोर' का शोर मचा दिया। घर में चोरों द्वारा आभूषण चुराए जाने का हंगामा मच जाता है। इधर रमानाथ जेवर वापस कर कर्ज से छुटकारा पा लेता है किन्तु जालपा को आभूषण प्राणों से प्रिय थे जिनके चोरी हो जाने पर वह खोयी–खोयी रहने लगती है। रमानाथ अपने मित्र रमेश के प्रयत्न से म्युनिसिपैलिटी की चुंगी में 30 रु. महीने पर नौकरी कर लेता है। उसे इन तंगी के दिनों में यह नौकरी वरदान सी लगती है क्योंकि यहां कुछ ऊपर की आय हो जाती है। पति की नौकरी लग जाने पर जालपा का स्वाभिमान भी सजग हो जाता है और उसे आभूषण मोह पुनः जागृत हो जाता है। इसी बीच उसकी मां बेटी के लिए चन्द्रहार भेजती है जिसे जालपा स्वाभिमान वश लौटा देती है। यह कहकर कि वह चन्द्रहार पहनेगी तो पति की ही कमाई से।

रमानाथ की आय इतनी नहीं थी कि वह जालपा के लिए आभूषण बनवा सके लेकिन पत्नी द्वारा सहेली को लिखे गए पत्र द्वारा यह जानकर कि वह आभूषण के लिए कितनी विकल है, रमानाथ उधार पैसा लेकर जालपा के लिए गहने बनवाने का निश्चय करता है। वह गंगू सर्राफ से उधार गहने ले आया। जालपा को इस विषय में यह ज्ञात न हो सका कि गहने उधार लाए हैं। रमानाथ उधार के इस बोझ से दिन–रात चिंतित रहने लगा और इधर जालपा अपना आभूषण अपनी सहेलियों में दिखा अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाने में लगी थी। अपनी खुशी में मग्न जालपा पति की चिंता को न समझ सकी जिसके परिणामस्वरूप रमानाथ का खर्च बढ़ता गया। अभ्यागतों के सत्कार के अतिरिक्त जालपा के साथ सिनेमा आदि पर पैसा खर्च करता जिससे तनख्वाह के पैसे पूरे के पूरे खर्च हो जाते।

इसी बीच रमानाथ का परिचय हाईकोर्ट के एक वकील की पत्नी रतन से होता है। वह जालपा के कंगन देखकर वैसे ही कंगन बनवाने के लिए 600 रुपये रमानाथ को देती है। रमानाथ जब कंगन खरीदने के लिए गंगू सर्राफ के यहां जाता है तो वह रतन द्वारा दिए गये पैसे को उसके पुराने हिसाब में जमा कर लेता है और नये कंगन देने से मना कर देता है। रमानाथ सर्राफ के व्यवहार से क्षुब्ध तो होता है पर उसमें इतना साहस नहीं होता कि वह यह बात जालपा या रतन से बता देता। वह बात छिपाता रहता है और रतन जब भी रुपयों के लिए कहती, वह कोई न कोई बहाना बना देता। अन्त में एक दिन रतन ने रुपये वापस लौटाने को कहा। रमानाथ जब अपने मित्रों से उधार पैसे मांगे तो किसी ने भी एक पैसा तक उधार नहीं दिया। अंततः वह चुंगी के आठ सौ रुपये घर लाने की सोचने लगा। एक दिन वह चुंगी पर वसूले गए पैसे खजांची के यहां जमा न करवा कर देर तक काम पर लगा रहा और खजांची के घर चले जाने पर रुपये घर लेकर चला आया। घर आकर उसने जालपा से बताया कि ये रुपये रतन के हैं और वह घूमने चला जाता है। जब वह घूम कर वापस आता है तो पता चलता है कि रतन उसके घर आकर वह रुपये ले गयी तो वह दौड़ा–दौड़ा उसके घर पहुंचता है पर रतन उसके दो सौ रुपये मात्र दे देती है बाकी अपने रुपये रख लेती है। रमानाथ बड़ी चिन्ता में पड़ जाता है कि अब क्या करे? जब जालपा को पता चलता है कि ये रुपये म्युनिसिपैलिटी के थे तो वह दो सौ रुपये अपने पास से देती है, जो

टिप्पणी

उसने बचाकर जमा कर रखे थे। 100/– रमा के पास थे। इस तरह 500 रुपये का प्रबन्ध हो गया, तीन सौ का प्रबन्ध और बाकी रहा। रमानाथ ने दफ्तर में रुपये खो जाने का बहाना बनाया। दफ्तर से उसे एक दिन का अवकाश दिया गया अन्यथा हथकड़ी लगाकर गबन के आरोप में उसे जेल में डाल देने की धमकी दी गयी। वह रुपए की व्यवस्था के लिए एक बार फिर रतन के पास गया कि तीन सौ रुपये उसी से मांग ले किन्तु रतन ने उसी से 400/– की मांग कर दी अपने लिए हार खरीदने के लिए। अतः उसने एक पत्र में सारी वस्तुस्थिति लिखकर जालपा से एक आभूषण गिरवी रखने के लिए मांग की।

जब वह उस पत्र को देने जालपा के कमरे में पहुंचा तो देखा कि वह पूर्ण श्रृंगार करके कहीं जाने की तैयारी कर रही है। रमानाथ के भावुक मन में विचार उठा कि इस प्रकार प्रसन्न वदना पत्नी से आभूषण की मांग करना, चहकती हुई चिड़िया की गरदन पर छुरी चलाने के समान होगा। अतः वह पत्र उसे न दे सका। संयोगवश जालपा ने उसकी जेब में से रुपये निकालने की इच्छा से हाथ डाला तो वह पत्र उसके हाथ लग गया। रमानाथ द्वारा प्रतिरोध करने पर भी वह उस पत्र को पढ़ने लगी। उसके संभावित परिणाम के विषय में सोचने पर रमानाथ के मन में भाव उठा कि जालपा की सिसकियां, पिता की झिड़कियां और पड़ोसियों की कनफुसकियां सुनने के स्थान पर तो मर जाना ही अच्छा है, अतः वह घर से भाग खड़ा हुआ और स्टेशन जा पहुंचा। जेब में रुपये न होने पर उसने कुलियों के जमादार को अपनी अंगूठी दे दी कि वह उसे रुपये लाकर दे दे किन्तु जमादार अंगूठी लेकर चलते बना तो वह बिना टिकट ही कलकत्ता की ओर जाने वाली ट्रेन पर पर सवार हो गया। मार्ग से टिकट चेकर के आ जाने से उस पर संकट आ गया। किन्तु एक वृद्ध व्यक्ति जिसका नाम देवीदीन था, ने दस रुपये देकर उसे संकट से उबार लिया। यह व्यक्ति जाति से खटिक था और संभवतः तीर्थाटन के उद्देश्य से प्रयाग आया था और कलकत्ता अपने घर वापस जा रहा था। यह जानकर कि कलकत्ता में कोई जान पहचान नहीं है, उसे अपने ही मकान रहने के लिए जगह दे देने का उत्तरदायित्व भी ले लिया।

उधर जालपा को रमानाथ का पत्र पढ़कर बहुत क्रोध आया कि वे मुझसे सच्चाई क्यों छिपाते रहे, किन्तु शीघ्र ही उसका क्रोध भय में परिणत होने लगा। वह शीघ्रता से रमा के कमरे में पहुंची, परंतु रमा को वहां न पाकर उसके दफ्तर पहुंच गई। जब उसने रमानाथ को वहां भी न पाया तो अपने हार को 400 रुपये बेचकर दफ्तर में 300 रुपये जमा करा दिए और सोचने लगी की सम्भवतः वे शाम तक लौट आएंगे किन्तु रमानाथ तो कलकत्ता पहुंच गया था, वह कैसे लौट कर आता। उसके माता–पिता को शंका थी कि वह आत्महत्या कर लिया हो, अतः जालपा को भला–बुरा सुनाते रहते थे। चरकादास और गंगू सर्राफ भी अपने रुपयों के लिए दयानाथ को परेशान करना आरम्भ कर दिया था। जालपा ने अपने आभूषण बेचकर उनके भी रुपए अदा करने की चेष्टा की साथ ही दयानाथ से अखबारों में विज्ञापन निकलवाया कि रमानाथ जहां कहीं भी हों, वहां से घर लौट आएं। जालपा के मां–बाप उसे अपने घर ले जाना चाहते थे, किन्तु वह नहीं गई। वह अपनी सारी श्रृंगार की सामग्री भी गंगा में प्रवाहित कर आई क्योंकि अब वह सोचने लगी थी कि, इन्हीं वस्तुओं के कारण उसे रमानाथ के बिछोह का दंश

टिप्पणी

झेलना पड़ रहा है। रमानाथ के घर लौट आने और उस पर किसी का भी कोई ऋण न होने का विज्ञापन भी जालपा ने अखबार में छपवाया, जिसे पढ़ कर रमानाथ के हृदय में घर लौट चलने का विचार उठा भी, किन्तु यह सोचकर की कहीं यह पुलिस की चाल न हो, वह घर नहीं लौटा। उसे एक बार वाचनालय में रतन भी दिखाई दी जो अपने बीमार पति का इलाज कराने कलकत्ता आई थी और चलते समय जालपा से वायदा करके आई थी कि वह रमानाथ को कलकत्ते में खोजने का हरसम्भव प्रयत्न करेगी किन्तु रमानाथ उसे देखकर छिप गया और संकोचवश उससे घर का हाल–चाल भी न पूछ सका।

जालपा ने रमानाथ को खोजने की एक अन्य विधि निकाली। उसने 'प्रजा–मित्र' पत्र में उसके सम्पादक की ओर से शतरंज के उस नक्शे को छपवाकर जिसे रमानाथ पहले हल कर चुका था–उसके हल करने वाले को 50 रुपये के पुरस्कार की घोषणा करवाई। ये रुपये रतन ने अपनी ओर से दिए थे क्योंकि जालपा तो पुरस्कार की राशि मात्र 10/– रखना चाहती थी। रमानाथ पुस्तकालय से लौटते समय कुछ युवकों को उस नक्शे के विषय में चर्चा करते पाया, तो वह भी उसकी नकल कर लाया और उसे हल करके देवीदीन के हाथों प्रजा मित्र के सम्पादक के पास पहुंचवा दिया। सम्पादक ने पुरस्कार विजेता के हस्ताक्षरों वाली रसीद जब जालपा के पास भेजी तो वह जान गई कि रमानाथ कलकत्ता में है। इसी बीच रतन के वृद्ध पति की मृत्यु हो चुकी थी, और वह हर प्रकार से जालपा के कार्यों में हाथ बंटाने में लगी थी। वकील साहब (रतन के पति) की सम्पत्ति पर उनके भतीजे ने अधिकार कर लिया, तो वह एक प्रकार से मुंशी दयानाथ के परिवार का अंश बन गयी।

रमानाथ को पुरस्कार के 50 रुपये मिल गये। उसने ये रुपये देवीदीन की पत्नी को देने चाहे, उसने मातृतुल्य स्नेह दिखाते हुए उसे कुछ रुपये अपनी ओर से देकर चाय की दुकान खुलवा दी। उस पर प्रायः देवीदीन ही बैठता था क्योंकि रमानाथ को भय था कि पुलिस का कोई सिपाही उसे पहचान न ले। स्थानीय मनोरमा थियेटर में राधेश्याम के किसी नाटक का प्रदर्शन होने वाला था जिसके टिकटों की बिक्री बड़ी धूमधाम से हो रही थी। रमानाथ भी उसे देखने को आतुर हो उठा और पुलिस द्वारा पकड़े जाने का भय उसके मन से निकल गया। नाटक देखने के लिए वह आज पहली बार घर से निकला था। उसने सिर पर पगड़ी बांध ली जिससे पहचान में न आ सके। शंकालु रमानाथ को सामने की ओर से तीन सिपाही आते दिखाई दिए। उसने सड़क छोड़ दी और पटरी पर चलने लगा। संयोग से सिपाही भी उसी पटरी पर आने लगे।

अब उसे प्रतीत हुआ कि वे तीनों उसी की ओर देखते हुए उसका हुलिया मिला रहे हैं, और उसी के विषय में कुछ बातें करते आ रहे हैं। इस कल्पना से वह इतना भयभीत हुआ कि जब वे सिपाही उसके समीप आए तो उसका मुंह घबराहट में फक पड़ गया, आंखों में विस्मय छा गया और वह स्वयं को उनसे छिपाने की चेष्टा करने लगा। उसके इस सन्देहास्पद आचरण को देख सिपाहियों को उस पर शक हो गया और शक का होना सुरक्षा की दृष्टि से स्वाभाविक भी था, अतः उन्होंने उसे रोककर उसका नाम, गांव आदि का पता पूछने लगे। अपनी कमजोरी को छिपाने के लिए रमानाथ ने ऐसे ऊल–जलूल तरीके से उत्तर देते हुए अपने को चोर न होने की ऐसी सफाई देने लगे कि उनका सन्देह विश्वास में बदल गया कि ये जरूर कोई अपराधी है। वे उसे पकड़ कर थाने में ले जाने लगे। दुर्भाग्यवश रास्ते में देवीदीन मिल गया

टिप्पणी

और उसे निरपराध बताकर सिपाहियों से छुड़ाने की कोशिश की। परन्तु बात और उलझ गई। कारण यह था कि रमानाथ ने सिपाहियों से अपना नाम हीरालाल बताते हुए अपने को शाहजहाँपुर का रहने वाला बताया था, जबकि देवीदीन ने दोनों बातें सच सच बता दीं। थाने में डी.एस.पी. इंस्पेक्टर, दारोगा और नायब दारोगा एक क्रान्तिकारियों से सम्बन्धित मुकदमे के लिए किसी एप्रूवर की तलाश में बहुत चिंतित थे क्योंकि उनके खिलाफ गवाही देने के लिए कोई तैयार नहीं था। वे दारोगा से कहकर चले गए कि यदि आप किसी एप्रूवर न बना सके तो सरकार और पुलिस की बड़ी बदनामी होगी। तभी दारोगा को सिपाही ने सूचना दी एक संदिग्ध व्यक्ति को पकड़ कर लाए हैं, जिसने अपना नाम–पता पूछने पर गलत बताया। दारोगा ने रमानाथ से वैसे ही तुक्का भिड़ाते हुए पूछा–इलाहाबाद के रमानाथ तुम खूब मिले। तुम्हारे लिए हम छह महीने से परेशान रहे थे। सिपाही द्वारा सच–सच कह देने की प्रेरणा देने पर रमानाथ ने म्युनिसिपैलिटी से रुपयों के गबन करने सम्बन्धी घटना सुना दी और इस प्रकार वह पुलिस के हाथों स्वयं फंस गया।

देवीदीन ने दारोगा को रिश्वत देकर छुड़ा लेने का बहुत प्रयास किया, किन्तु दारोगा के लिए रिश्वत के स्थान पर पदोन्नति की लालच उससे बढ़ कर थी अतः उसने सोचा कि यदि इस व्यक्ति को ह्यूवर (मुखबिर) क्यों न बना लिया जाए। वह रमानाथ को यह प्रलोभन देकर कि उसके एप्रूवर बनने पर वह उसे गबन के आरोप से मुक्त कराने के साथ–साथ अच्छी नौकरी भी दिला देगा। डी.एस.पी. के पास ले गया। उसने प्रयाग के म्युनिसिपैलिटी के दफ्तर से ट्रंक काल करके पता लगवाया तो ज्ञात हुआ कि न तो रमानाथ ने गबन किया है और न उस पर इससे संबंधित कोई मुकदमा दर्ज है। किन्तु दारोगा पूरा घाघ था, उसने कहा कि हम ये बातें रमानाथ को बताएंगे ही नहीं और ऐसी सावधानी रखेंगे, जिससे प्रयाग का कोई व्यक्ति उससे मिलने ही न जाए।

देवीदीन ने रमानाथ को पुलिस के चंगुल से बचाने की चेष्टा करते हुए उसे किसी अज्ञात मुकदमे में मुखबिर न बनने को कहा, किन्तु रमानाथ तो पुलिस के कहने के अनुसार अपने सुनहरे भविष्य के सपने देखने लगा था, अतः उसने देवीदीन की बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया। उसकी अदालत में तीन दिन तक पेशी होती रही जिसके आधार पर मुकद्दमे में पांच–छह अभियुक्तों को फांसी तथा आठ–दस को लम्बा कारावास मिलने की संभावना होने लगी।

जालपा अपनी बीमार श्वसुर की तीमारदारी का भार रतन पर डाल कर कलकत्ता आई और प्रजामित्र पत्र के सम्पादक से रमानाथ का पता पूछकर देवीदीन के घर जा पहुंची। किन्तु रमानाथ तो पन्द्रह दिन पहले ही पुलिस के चंगुल में फंस चुका था। जब देवीदीन ने उसे बताया कि रमानाथ एक मुकदमे में मुखबिर बन गये हैं और उनके बयान से अनेक लोगों के फंसने की उम्मीद है तो, जालपा को बड़ा मानसिक आघात पहुंचा। इस इच्छा से कि उन्हें यदि प्रयाग की वास्तविक घटनाएं विदित हो जाएंगी तो शायद वे अपना बयान बदल देंगे। जालपा ने एक पत्र फेंक कर पुलिस के पहरे में रहने वाले रमानाथ को उस पर गबन आदि का कोई आरोप न होने की सूचना दी। रमानाथ उसी रात किसी प्रकार जालपा से मिलने के लिए देवीदीन के घर पहुंचा। जालपा ने इस बात पर बल दिया कि मुझे भूखों मरना स्वीकार है, किन्तु वह नहीं चाहती कि आप बेगुनाहों को फंसाकर ऊंचा पद पाएं। रमानाथ उसे वचन दे गया कि मैं अपना बयान बदल दूंगा।

टिप्पणी

प्रातःकाल जब उसने दारोगा से अपना बयान बदल देने का इरादा बताया तो सभी पुलिस अधिकारी परेशान हो गए। डी.एस.पी. उसे डराने धमकाने लगा और बोला कि यदि वह बयान बदलने की गलती करेगा तो उस पर राजद्रोह का मुकद्दमा चलेगा और सात साल की सजा हो जाएगी। रमानाथ यह सुनकर सकपका गया। देखकर डी. एस.पी. ने कारावास की भयंकर यातनाओं को भी बताया। रमानाथ डी.एस.पी. की धमकी से डर गया और अपना बयान बदलने का साहस न कर सका। उसकी झूठी गवाही से दिनेश नामक क्रान्तिकारी को फांसी, उसके पांच साथियों को दस–दस वर्ष की कैद तथा आठ साथियों को पांच–पांच वर्ष की सजा सुनाई गयी। जालपा भी उस मुकदमे की कार्यवाही देखने गई थी। रमानाथ की गवाही सुनकर उसे मर्मान्तक पीड़ा हो रही थी, जबकि दर्शक दीर्घा में बैठी हुई स्त्रियों की रमानाथ के लिए कसी जाने वाली फब्तियों को सुन–सुन कर जालपा लज्जा से जमीन में गड़ी जा रही थी। उसने निश्चय किया कि अपने पति को पापों का प्रायश्चित वह स्वयं करेगी अतः वह फांसी की सजा पाए हुए दिनेश के परिवार की सेवा–सुश्रूषा करने लगी।

सजा सुनाने वाले दिन पुलिस की ओर से रमानाथ को सोने की चार चूड़ियां और जड़ाऊ हार देकर अपनी पत्नी को प्रसन्न करने के लिए भेजा गया। उसने वह चूड़ियां जब जग्गो को देनी चाही तो उसने तिरस्कारपूर्वक फेंक दिया। जालपा ने उसे ऐसी खरी–खोटी बातें कही कि उसका यह साहस ही नहीं हुआ कि उस हार के विषय में जालपा से कुछ कहता। हां वहां से लौटते हुए उसे जज को सब बातें सच–सच बता देने की धुन सवार हुई, किन्तु अपने संकोचशील स्वभाव के कारण यह सोचकर कि न जाने जज उससे क्या कहे, उसके बंगले तक जाकर भी लौट आया। दूसरे दिन पुलिस अफसरों के सामने उसने तेवर बदल दिए किन्तु जब पुलिस वालों ने उसे ही नहीं, जालपा और देवीदीन को भी किसी मुकदमे में फंसा देने की धमकी दी तो वह पुनः अपनी पूर्ववत मनःस्थिति में आकर पुलिस के इशारों पर नाचने में ही अपनी भलाई समझने लगा।

पुलिस ने क्रान्तिकारियों सम्बन्धी फाइल को हाईकोर्ट में तसदीक होने की अवधि तक रमानाथ को पूर्णतः वश में एवं पत्नी के प्रति उदासीन रखने के लिए जोहरा नामक वेश्या रमानाथ को रिझाने व प्रसन्न रखने के लिए कर दी। धीरे–धीरे रमानाथ का जोहरा के प्रति आकर्षण बढ़ने लगा और जोहरा को विश्वास की देवी समझने लगा। दोनों ओर का यह प्रेमाभिनय यहां तक बढ़ा कि आपस में विवाह कर लेने की भी बात होने लगी। एक दिन जब रमानाथ डी.एस.पी. के साथ मोटर में बैठकर सैर कर रहा था, मार्ग में उसने देखा कि मलिन वस्त्र जालपा किसी वृद्धा अनाथिनी की दशा में गंगा से पानी भरकर ले जा रही थी। यह देखकर रमानाथ का अन्तर्मन रो उठा। कुछ देर बाद जोहरा के आने पर उसने उससे विनय की वह उसे जालपा के विषय में सूचना लाकर दे कि वह ऐसी स्थिति में क्यों रह रही है। जोहरा मन में भी रमानाथ की प्रेमलीला में बाधक सिद्ध नहीं हो सकती, अतः वह अपने प्रेमी की प्रसन्नता के लिए जालपा की जानकारी लेकर बताने के लिए सहर्ष तैयार हो गई। उसने एक सप्ताह बाद आकर बताया कि मैं ब्रह्मसमाजी स्त्री के रूप में दिनेश के घर जाकर जालपा से मिली। उनकी बातों से मुझे स्पष्ट हो जाता है कि वे न तो आपके द्वारा पुलिस का मुखबिर बनकर निरपराध देशभक्तों को फंसा देने के आपके कृत्य को

टिप्पणी

क्षमा कर पा रही हैं और न अदालत को सच्ची बात बता कर आपको कष्टों में फंसाना चाहती हैं।

जालपा के इस असीम त्याग और अपने लिए अगाध प्रेम को सुनकर वह पुनः भावनाओं के ज्वार से उत्प्लावित हो उठा। वह दारोगा से बहाना करके कि मैं जालपा को समझाने जा रहा हूं, देवीदीन के घर जा पहुंचा किन्तु जालपा उससे बातें करने को भी तैयार नहीं हुई। पश्चाताप भरे ह्रदय से रमानाथ ने देवीदीन को अपने विगत जीवन के सभी कपटाचरण कह सुनाए। उसने बता दिया कि उसने जालपा के आभूषणों के संदूक मैंने ही चुराया था तथा मैं ब्राह्मण नहीं हूं, जैसा कि मैंने आपको बता रखा था। मैं आपसे यही निवेदन करने आया हूं कि आप मेरे अपराधों को क्षमा करना। अब मुझे दो–चार वर्ष तक जेल भोगने का रंचमात्र भी भय नहीं रहा है। उसके पश्चात् यदि जीवित रहा तो आप से फिर भेंट होगी।

रमानाथ साहस करके जज के यहां सारा कच्चा चिट्ठा खोल दिया, जिसके प्रकाश में जज ने मुकद्दमे की पुनः सुनवाई का निश्चय किया। दो पत्रों ने जालपा और जोहरा के बयान छापकर पुलिस का भंडाफोड़ कर दिया कि उसने किस प्रकार रमानाथ को भय और प्रलोभनों में फंसाकर मुखबिर बनने के लिए गुमराह किया। परिणाम यह निकला कि सभी क्रान्तिकारी तो निर्दोष सिद्ध होने के कारण छोड़ दिये गये और दारोगा की पदावनति हो गई। क्रान्तिकारियों के स्वागत में अपार जनसमूह उमड़ पड़ा था जो जालपा देवी की जय–जयकार कर रहा था। हां, रमानाथ की परीक्षा अभी समाप्त नहीं हुई थी क्योंकि उस पर दरांगबयानी के अभियोग में मुकद्दमा चलाने का निश्चय किया गया था। वादी और प्रतिवादी पक्ष में लम्बी बहसें हुईं, किन्तु जज की रमानाथ के प्रति सहानुभूति हो गई थी, अतः उसे इस अभियोग से बरी कर दिया गया।

रमानाथ कलकत्ता से लौट कर प्रयाग के समीप एक गांव में रहता हुआ वैधकी करने लगा। उसके साथ देवीदीन–जग्गो, रतन, जोहरा भी वहीं आ गये थे। दयानाथ भी वहीं आकर खेती–बाड़ी करने लगे क्योंकि बीमारी का सिविल सर्जन द्वारा प्रमाणपत्र न पेश कर पाने के कारण उनकी नौकरी छूट गयी थी। सिविल सर्जन बीमारी का प्रमाण पत्र देने के लिए 15 रुपये रिश्वत मांग रहा था। जालपा की सहेली रतन भी विधवा हो जाने पर वकील साहब के भतीजे मणिभूषण द्वारा सारी सम्पत्ति हड़प लेने पर इन्हीं के साथ रहती है। जोहरा और रतन साथ–साथ सुखपूर्वक रहती थीं परन्तु तीन वर्ष बाद रतन की मृत्यु हो गयी। जालपा के एक पुत्र है। उस वर्ष वर्षा बहुत अधिक हुई थी जिससे नदियों में बाढ़ आई थी।

एक दिन जोहरा, जालपा और रमानाथ गंगा के किनारे खड़े थे कि उनके समीप एक नौका उलट जाने से उसके सभी यात्री गंगा में डूब गये। उनमें से एक स्त्री जिसकी गोद में बच्चा भी प्रतीत होता था, बह कर उनकी ओर आ गयी जिसको बचाने के लिए रमानाथ को नदी में छलांग लगाने का साहस नहीं हो सका। बहते देख जोहरा नदी में घुस गई और स्वयं भी गंगा जी के भयंकर प्रवाह में बह कर गंगा लाभ किया। रमानाथ को अपनी कायरता पर ग्लानि हुई, किन्तु अब क्या हो सकता था। जालपा और रमानाथ, दोनों पहले रतन और बाद में जोहरा की अप्रत्याशित मृत्यु से बहुत उदास रहने लगे। उनकी स्मृति बार–बार मन पर जाकर पीड़ा का एहसास करा जाती।

टिप्पणी

3.2.2 'गबन' की कथावुस्त का विश्लेषण

किसी भी उपन्यास की कथावस्तु के कलात्मकता के विषय पर खरा उतरने के लिए आवश्यक है कि उसमें संयोजित अधिकारिक एवं प्रासंगिक कथाओं की नियोजना सुसम्बद्ध हो, उसमें मौलिकता, रोचकता, विश्वसनीयता, कार्यकरण शृंखला में सुसम्बद्धता तथा बाह्य अथवा आन्तरिक संघर्ष की सम्यक् योजना की गयी हो। इनमें से प्रथम दृष्टि से गबन की कथावस्तु पर विचार करने से स्पष्ट हो जाता है कि उसकी कथावस्तु की धुरी जालपा और रमानाथ सम्बन्धी कथानक है, जिससे रतन, देवीदीन, जोहरा और क्रांतिकारियों सम्बन्धी उपकथाओं का नियोजन मूल कथानक की दृष्टि से अधिक प्रयोजनीय बन पड़ा है जबकि रतन और जोहरा सम्बन्धी प्रसंगों को यदि लेखक छोड़ना चाहता तो भी कथानक की प्रभाविष्णुता को क्षति न पहुंचती। रतन सम्बन्धी उपकथा की उपयोगिता मात्र इतनी है कि रतन द्वारा कंगनों के लिए दिए गये छह सौ रुपयों को रमानाथ गंगू सर्राफ को इस आशा से देता है कि वह उन्हें उसके उधार खाते में जमा करके कंगन बना देगा, किन्तु उसकी योजनानुकूल कार्य न होने पर दफ्तर के 800/– को रतन को दिखाने मात्र के लिए घर ले आता है और रतन द्वारा उन रुपयों को वास्तव में ले जाने पर गृह त्याग को विवश होता है।

इस प्रकार 'रतन' गबन का मूल कारण प्रतीत होती है, किन्तु यदि लेखक चाहता तो रमानाथ जैसे प्रदर्शन प्रिय और मुक्त हस्त से व्ययशील युवक को किसी अन्य विधि से भी दफ्तर के रुपये लाने और जमा न कर पाने की स्थिति में डाल कर गृहत्याग के लिए विवश चित्रित कर सकता था। साथ ही यदि रतन की कथा प्रकरी के रूप में रमानाथ के गृहत्याग का निमित्त बनकर ही रह जाती, तब भी उसे उचित माना जा सकता था, किन्तु उपन्यासकार तो उसके माध्यम से विधवाओं की सिद्ध परिवार में दयनीय स्थिति का समाज के कर्णधारों को बोध कराना चाहता था, अतः उसमें रतन और उसके पति की मृत्यु तथा भतीजे द्वारा सम्पत्ति सम्बन्धी प्रसंग को अनावश्यक ही विस्तार दिया है। उससे मूल कथानक के विकास में या प्रमुख पात्रों के चरित्र–चित्रण में सहायता नहीं मिलती। हां, लेखक ने कहीं रतन द्वारा जालपा के कंगन खरीदवाकर, कभी उसे मुंशी दयानाथ की सेवा में रत दिखाकर, कभी जालपा को उससे शतरंज की पहेली के लिए 50 रुपये इनाम दिलवाकर, कहीं स्वपति की चिकित्सा कराने के साथ रहते हुए मृत्यु दिखाकर उस मुख्य कथानक से जोड़ने का प्रयास अवश्य किया है फिर भी वह उसमें पूर्णतः कृत–कृत्य नहीं हो सका। उसके पति वकील साहब की मृत्यु और मणिभूषण द्वारा उसकी जायदाद पर आधिपत्य करना, मुख्य कथानक से सर्वथा ही स्वतन्त्र घटनाएं हैं।

यह इनके मुख्य कथानक से विच्छिन्न होने का ही प्रमाण है कि गबन का सारांश प्रस्तुत करते हुए प्रयत्न करने पर ही रतन सम्बन्धी प्रसंग की एक–दो वाक्यों में सूचना देनी पड़ी है इसके पक्ष में मात्र एक तर्क प्रस्तुत किया जा सकता है– वह यह कि गद्य के क्षेत्र में उपन्यास और काव्य क्षेत्र में महाकाव्य प्रतिनिधित्व करता है अतः यदि महाकाव्यकार को मुख्य कथा के साथ अनेक अवान्तर कथाएं देने की छूट रही है, तो उपन्यासकार को भी यह क्यों न दी जाए? वैसे मुख्य कथा से असम्बद्ध कथाएं महाकाव्यों के दोषों में ही परिगणित की जाती है, अतः गबन के कथानक का भी यह दोष ही है।

टिप्पणी

जोहरा का प्रसंग भी कुछ आलोचकों को अनावश्यक प्रतीत हुआ है किन्तु हम उनसे सहमत नहीं हैं। हमारी दृष्टि में जोहरा को कथानक का प्रसंग बनाने के दो कारण रहे हैं। एक तो इसके माध्यम से उपन्यासकार सामाजिक दृष्टि से हेय और गर्हित समझी जाने वाली वेश्याओं का चरित्रोत्कर्ष दिखाना चाहता है, जिसे मूल कथानक से असम्बद्ध कहा जा सकता है किन्तु उसका द्वितीय प्रयोजन जालपा और रमानाथ के चरित्रों पर प्रकाश डालना रहा है। रमानाथ का पतनोन्मुख चरित्र जोहरा के सहवास से और अधिक पतित हो जाता है, जबकि जोहरा से वार्तालाप में जालपा का मानसिक द्वन्द्व तथा देश–प्रेम और कष्ट सहिष्णुता की भावनाएं जालपा के चरित्र की उदात्तता की ओर ले जाती हैं। बाढ़ में डूबी हुई स्त्री को बचाने के प्रयास में उसका रमानाथ की उपस्थिति में आत्म बलिदान करना रमानाथ की भीरुता एवं कायरता को और भी भास्वर कर जाता है।

देवीदीन, क्रान्तिकारियों और रमानाथ के कलकत्ता प्रवास सम्बन्धी प्रसंगों का कुछ 'आलोचकों' द्वारा अप्रयोजनीय बताते हुए यह तर्क प्रस्तुत करना कि इनकी योजना मात्र इसलिए की गयी है कि कथानक शीघ्र समाप्त हो रहा था–किसी भी दृष्टि से समीचीन नहीं है। कारण यह है कि प्रथम में तो यह कि इनसे रमानाथ और जालपा के चरित्रों के विभिन्न पक्षों पर प्रकाश पड़ता है। परिस्थितियों की ठोकर खाते हुए वे उत्कर्ष और अपकर्ष की ओर उन्मुख होते हैं, साथ ही क्या ऐसी स्थिति की कल्पना की जा सकती है, जिसमें रमानाथ समाज से सर्वथा पराङ्मुख होकर किसी भी व्यक्ति के संसर्ग में नहीं आता? अतः उपन्यासकार के समक्ष दो ही विकल्प थे–या तो वह रमानाथ को रेल के नीचे कटकर या नदी में डूबकर आत्महत्या करते चित्रित कर देता, अथवा उसे जीवित रखकर भावी परिस्थिति के चक्र में ग्रस्त और उनसे संघर्ष करता चित्रित करता। इसमें से निश्चित ही दूसरी स्थिति को अपनाना वांछनीय था, जिसे लेखक ने अपनाया भी है। रमानाथ देवीदीन न सही, किसी न किसी के संसर्ग में तो आता ही, अतः उसका देशप्रेमी देवीदीन के सम्पर्क में आना, और उनकी ही सहायता से जालपा द्वारा रमानाथ को पुलिस के चंगुल से बचाने सम्बन्धी प्रसंग को अनावश्यक नहीं कहा जा सकता।

इसी प्रकार सन् 1931 में प्रकाशित गबन में, जबकि 31 मार्च, 1931 को स्वतंत्रता की बलिवेदी का सहर्ष आलिंगन करने वाले अमर शहीद भगत सिंह, राजगुरु और सुखदेव पर अंग्रेज शासकों ने राजद्रोह का मुकद्दमा चलाकर उन्हें फांसी की सजा दी थी–क्रान्तिकारियों सम्बन्धी कोई उल्लेख न मिलना ही हमारी दृष्टि में दोष था। इस प्रसंग का नियोजन इस दृष्टि से भी समीचीन है कि लेखक ने इसके साथ रमानाथ और जालपा के चारित्रिक पतन और उत्कर्ष को अटूट रूप से सम्बद्ध कर दिया है। अतः कलकत्ता सम्बन्धी कथानक को अनावश्यक अथवा अप्रयोजनीय बताना हमारी दृष्टि में कुछ उसी प्रकार का निरर्थक तर्क रह जाता है, जैसे यह कहना कि इस कथावस्तु के आधार पर उपन्यास क्यों लिखा है। छोटी–सी कहानी ही क्यों नहीं लिख दी।

कथावस्तु की मौलिकता से अभिप्राय है कि वह किसी अन्य लेखक की कृति का पात्रों और स्थानों के नाम–रूप बदलकर लिखी गई कथा न हो अन्यथा उसके पठन में पाठकों की अभिरुचि ही नहीं होगी। इस दृष्टि से गबन का कथानक सफल

है, क्योंकि उस पर किसी आलोचक ने किसी कृति का छायानुवाद अथवा भाषानुवाद होने का आरोप नहीं लगाया है। यद्यपि कथानक की मौलिकता भी उसकी रोचकता में योगदान करती है तथापि रोचकता मूलतः उसमें किसी घटना द्वारा कौतूहल को प्रबुद्ध करने, और उसे आद्यन्त बनाए रखने से अधिक सम्बद्ध रहती है। गबन का कथानक इस दृष्टि से रोचक होते हुए भी अंशतः सफल है। यह सत्य है कि जालपा को आरम्भ में विसाती तथा बाद में माता द्वारा श्वसुरालय में चन्द्रहार आने का आश्वासन देने के कारण पाठक इस ओर जिज्ञासु हो उठते हैं कि देखें वह आता है या नहीं, तथा शहजादी द्वारा चन्द्रहार न बनवाने तक पति गृह में रूठे रहने की शिक्षा से यह जिज्ञासा और बढ़ जाती है कि देखें इसका क्या परिणाम निकलेगा? इसी प्रकार एक के बाद एक उधार आभूषण लाने वाले रमानाथ के विषय में हमारा पहले से ही आशंकित मन उसे रतन के लिए भी बिना रुपये लिए ही कंगन बनवाने का आश्वासन देता देखकर विचारमग्न हो उठता है कि देखें– इसका वह क्या मार्ग निकालेगा? रतन के पति की वृद्धावस्था, शारीरिक क्षीणता, स्नायु दौर्बल्य, एवं सतत् बीमार रहने तथा सांवली, सुगठित रानी जैसी दिखने वाली युवा रतन की स्वच्छंदता के लम्बे विवरण पढ़ कर उनकी रमानाथ से उत्तरोत्तर बढ़ती हुई निकटता देखकर पाठक इस विभ्रम में पड़ने लगते हैं कि कदाचित् यह प्रसंग कुछ नये गुल खिलायेगा। किन्तु मुंशी प्रेमचन्द की मर्यादावादी कलम हमारी इस दुर्भावना का शीघ्र ही अन्त कर देती है।

कथा के उत्तरार्द्ध में भी लेखक ने रमानाथ को मुखबिर के रूप में बयान बदलने अथवा न बदलने के द्वन्द्व में डालकर पाठकों को जिज्ञासा वृत्ति कथानक में उलझाये रखने में सफलता प्राप्त की है। यह सब होने पर भी प्रेमचन्द के अधिकांश उपन्यासों की भांति ही गबन का कथानक भी रोचकता की दृष्टि से अंशतः ही सफल है। इसका मुख्य कारण है कि उनका साहित्य को जीवन का दर्पण न मानकर दीपक मानना। हमारी मूल मनोवृत्तियों को संतुष्ट करने के स्थान पर उनके परिष्कार को अपना मूलोद्देश्य समझना, साहित्य को स्त्रीजनोचित करुण, अश्रुमयी भावनाओं से समृद्ध करने के स्थान पर उसमें पुरुषोचित काठिन्य और कर्मठता के समावेश करने का पक्षपाती होना। फलतः उनके उपन्यासों में यौन कुंठाओं से उत्पन्न होने वाले संयोग वियोग के अत्यधिक भावुकतामय एवं करुण प्रसंगों का अपेक्षतया अभाव है।

विश्वसनीयता तथा कार्य–कारण सम्बद्धता की दृष्टि से गबन की कथावस्तु हमारी दृष्टि में पूर्णतया सफल है। हमें अपने घर–बाहर चतुर्दिक अनेक जालपाओं के अब भी दर्शन होते ही रहते हैं जिनकी आभूषण प्रियता गृहकलह का निमित्त बनती है। रमानाथ की प्रदर्शनप्रियता और डींग मारने की गप्पी प्रवृत्ति का अवलोकन उस वर्ग के किसी भी नवयुवक बाबू में आज भी ज्यों का त्यों किया जा सकता है। इन मनोवृत्तियों का परिणाम निकलता है–दफ्तरों के रुपये घर लाना और अकस्मात खर्च हो जाने पर गबन के रूप में परिणत हो जाना। चाहे यह कार्य दिखावे के लिए ही किया गया हो। इसी प्रकार उपन्यास के उत्तरार्द्ध में भी घटित घटनाएं विश्वसनीय हैं।

रमानाथ की अति शंकालु मनोवृत्ति का उसे स्वतः ही पुलिस के चंगुल में फंसा देना, भय और प्रलोभन में पड़कर उसका मुखबिर हो जाना, अपने अनिष्ट के साथ–साथ प्राणाधिक प्रिय जालपा तथा पितृतुल्य स्नेह करने वाले देवीदीन पर आपत्तियों की

टिप्पणी

संभावना से उसका बयान बदलने को तत्पर न होना, रूपसी कोमलांगी जालपा को दीन–हीन कृशांगी एवं मलिनावस्था देखकर रमानाथ की प्रसुप्त चेतना का जागृत होकर जज को सच्ची बात बता देना, सभी घटनाओं को लेखक कार्य–करण की अनूठी शृंखला में नियोजित करने में सफल रहा है। जालपा का आकस्मिक चरित्रोत्कर्ष स्वाभाविक नहीं प्रतीत होता। कीचड़ में कमल उत्पन्न होते हैं, यह सत्य होते हुए भी रिश्वतखोर पिता के आश्रय में पलते–पलते एवं ऐसे ही पति की ऊपरी आमदनी पर गुलछर्रे उड़ाने वाली जालपा के स्वभाव में अचानक ही जो अमिट उत्कर्ष आ जाता है, उन पर हमारा सहजतया विश्वास नहीं हो पाता।

क्रांतिकारियों सम्बन्धी मुकद्दमे की पुनः सुनवाई की संभावना पर श्री हंसराज रहबर और मन्मथनाथ गुप्त आदि आलोचकों ने प्रश्नचिन्ह लगाया है, जो उचित नहीं प्रतीत होता।

आन्तरिक द्वन्द्व एवं परिस्थितियों से संघर्ष की भी गबन में सम्यक नियोजना हुई है। रमानाथ, जालपा, दयानाथ व रतन बाह्य परिस्थितियों से संघर्ष करते चित्रित किए गये हैं। रमानाथ आरम्भ में उनके समक्ष घुटने टेक देता है और पुलिस का मुखबिर बनना स्वीकार कर लेता है। जालपा पति रमानाथ के पलायन कर जाने, सास–ससुर द्वारा जली–कटी सुनाने, पति द्वारा निरपराध देशभक्तों को फंसवा देने की बाह्य परिस्थितियों का धैर्यपूर्वक सामना करती है। परिस्थिति के शिकार दयानाथ रिश्वत लेना पाप समझने के साथ देना भी पाप समझते हैं जिस कारण अपनी नौकरी से हाथ धो बैठते हैं, जबकि विधवा रतन परिस्थिति की मारी अपने धन को लोलुप भतीजे के संरक्षण में जीवन–यापन करने की अपेक्षा स्वावलम्बन द्वारा जीवन–निर्वाह करने का संकल्प लेती चित्रित की गयी है। मानसिक द्वन्द्व की दृष्टि से हम विशेषतः रमानाथ को कई प्रसंगों में–ऐसा करूं या ना करूं की स्थिति में पाते हैं। आरम्भ में ही वह परिस्थिति का सामना करता है कि पत्नी को घर की वस्तु स्थिति समझा कर उसके आभूषण मांग ले अथवा चुराकर स्वपिता को सौंप दे। मुखबिर के रूप में दिए गए बयान को बदलने–न बदलने के विषय में भी उसका बड़े धर्मसंकट में होना चित्रित किया गया है।

इस प्रकार गबन की कथावस्तु पर ध्यानपूर्वक विचार करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि वह अधिकारिक एवं प्रासंगिक कथाओं की सम्यक् नियोजना की दृष्टि से अंशतः कमजोर है किन्तु मौलिकता, रोचकता, विश्वसनीयता, कर्म–कारण शृंखला से सुसम्बद्धता एवं अन्तर्द्वन्द्व के निष्कर्षों पर खरी उतरती है।

3.2.3 'गबन' की केन्द्रीय समस्या

उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचन्द्र का साहित्य सम्बन्धी दृष्टिकोण–'कला, कला के लिए' के सिद्धान्त पर आधारित नहीं था। उनके मत से साहित्य समाज का दर्पण है। समाज में व्याप्त विषमता, कुरीतियों, अनीतियों और पाखंड के चक्र में संत्रस्त मानवों की दलित–शोषित करुण दशा का चित्र प्रस्तुत करते हुए दीपक के रूप में उनसे परित्राण का मार्ग प्रशस्त करना ही प्रेमचंद के अनुसार साहित्य का उद्देश्य है। उनके प्रायः सभी उपन्यास और कहानियां इसी उद्देश्य से अनुप्राणित हैं। 'गबन' भी इसका अपवाद नहीं है। गबन में उन्होंने अनेक सामाजिक समस्याएं अनुस्यूत की हैं–जैसे–मध्यम वर्ग के लोगों की प्रदर्शनप्रियता तथा स्त्रियों के आभूषण प्रेम का दुष्परिणाम, विधवाओं का

टिप्पणी

सम्मिलित (संयुक्त) परिवार में पति की सम्पत्ति पर अधिकार न होने के कारण उनकी दुरावस्था, स्वराज्य सेनानियों एवं क्रान्तिकारियों के दमन में सरकार और पुलिस के अनुचित हथकंडे, राजनीतिक नेताओं की कथनी–करनी में अन्तर, पूंजीपतियों का धार्मिक पाखंड आदि। यद्यपि उपन्यासकार पाठकों का ध्यान इन सभी समस्याओं की ओर आकर्षित करना चाहता है, अतः 'गबन' की रचना की केन्द्रीय समस्या वास्तव में क्या है, हमें यह निर्धारित करना है जिससे अन्य समस्याएं स्वभावतः या आनुषंगिक रह जाएं।

'गबन' की केन्द्रीय समस्या क्या है, इसका निर्धारण करना कुछ कठिन है, किन्तु मूल समस्या जिसके आधार पर कथानक आगे बढ़ता है तथा जिसके कारण उपन्यास का प्रमुख कार्य 'गबन' सम्पन्न होता है, उसके दो प्रबल कारण हैं। दोनों में मुख्य कौन कारण है, यह निर्धारण करना कठिन कार्य है। पहला कारण है– रमानाथ (उपन्यास का मुख्य पात्र) की मिथ्या प्रदर्शन की भावना और गपोड़ी मनोवृत्ति, जबकि दूसरा कारण है– जालपा (मुख्य स्त्री पात्र) की उत्कट आभूषण प्रियता। जालपा के आभूषण प्रेम को निर्भ्रान्त रूप से 'गबन' का मूल कारण इसलिए नहीं माना जा सकता कि यदि रमानाथ ने आभूषण चुराने से लेकर गबन करके पलायन करने तक कभी भी जालपा को अपनी वस्तुस्थिति बता दी होती तो संभवतः गबन की स्थिति ही न उत्पन्न होती। इसके विरुद्ध यह भी कहा जा सकता है कि रमानाथ कितना भी डींग हांकने वाला गपोड़ी हो, यदि जालपा आभूषणों के प्रति अनावश्यक मोह न प्रदर्शित करती, तो गबन करने की स्थिति आती ही नहीं। इसी कारण गबन की केन्द्रीय समस्या के विषय में आलोचकों में भी मतैक्य नहीं है।

डॉ. राम रतन भटनागर इसे आभूषण की ट्रेजेडी मानते हैं। डॉ. रामविलास शर्मा भी कहते हैं कि गबन उपन्यास में मूल समस्या गहनों को लेकर खड़ी हुई है। कन्हैयालाल सहल 'गबन' को गलतफहमी की दुर्घटना मानते हैं और कहते हैं कि ''यह दुर्घटना आभूषण–प्रेम के कारण हुई।" मन्मथनाथ गुप्त कहते हैं– "यह ट्रेजेडी आभूषण के कारण नहीं बल्कि पुरुष प्रधान समाज की ट्रेजेडी है। यह समस्या गहने की नहीं बल्कि उससे कहीं गहरी है, उसका रूप दोहरा है, एक तो यह कि इस समाज में नारी पुरुष की आश्रिता है, दूसरा यह, पुरुष की वैयक्तिक सम्पत्ति की प्रधानता मूलक समाज है।"

मन्मथनाथ गुप्त ने जिसे गबन की केन्द्रीय समस्या बताया है, वह ठीक नहीं प्रतीत होता। उन्होंने 'गबन' की मूल समस्या के निदान में तात्त्विक दृष्टि का परिचय देते हुए भी, इसे सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र में नर और नारी के समानाधिकार का प्रतिपादन करने वाले शब्द जाल में उलझा दिया है। यद्यपि मुंशी प्रेमचन्द नारी वर्ग में शिक्षा–प्रचार तथा उन्हें पति की सम्पत्ति में अधिकार आदि के तो समर्थक रहे हैं, किन्तु उस स्तर तक नहीं जहां तक श्री गुप्त अपनी धारणाओं का उन पर अध्यारोप करके खींचना चाहते हैं। हमारी दृष्टि में मध्यवित्त–वर्ग के नर और नारी दोनों को ही मिथ्या प्रदर्शन की मनोवृत्ति के दुष्परिणाम दिखाना रहा है–उसकी मूल समस्या मध्य–वर्ग के स्त्री–पुरुषों के झूठे दिखावे की प्रवृत्ति के कुफल दिखाना ही है। रमानाथ जहां इस भावना से स्वपत्नी, पिता और मित्र आदि सभी से अपनी वस्तु स्थिति छिपाता है, वहीं जालपा के आभूषण–प्रेम के मूल में भी मिथ्या–प्रदर्शन की ही मनोवृत्ति है–वह आभूषणों एवं शृंगार–प्रसाधनों के माध्यम से अपने वर्ग की नारियों और सहेलियों में समादृत होना

चाहती है, जबकि उनके माध्यम से उच्च वर्ग की महिलाओं से सम्पर्क का सौभाग्य प्राप्त करना चाहती है। पति और पत्नी दोनों ही स्वयं को अपनी स्थिति से उच्च स्थिति के प्रदर्शन करने को आतुर हैं, और उसके भयावह परिणाम हैं।

टिप्पणी

ऐसी विषम स्थिति न तो समाज के उच्च–वर्ग में उत्पन्न होती है, जिसके नर–नारी अपने पैसे के बलबूते इच्छित आभूषण और शृंगार प्रसाधन जुटाने में समर्थ होते हैं और न निम्न वर्ग में ही, क्योंकि उस वर्ग की नारी भी पुरुषों के कन्धे से कन्धा मिलाकर कार्य करके धनार्जन करती हैं, और प्रायः सस्ती धातुओं के आभूषणों से मंडित होकर ही अपना सौभाग्य समझती हैं। एक मध्य वर्ग ही ऐसा है जो वित्त की दृष्टि से त्रिशंकु की भांति अधर में लटके मध्यम वर्ग के नर–नारी अपने मिथ्या स्वाभिमान वश निम्न वर्ग की भांति जीवन–यापन में अपनी हेठी समझते हैं, जबकि उच्च वर्ग के समान जीवन–यापन की चेष्टा करने में अपने विनाश का बीज बो लेते हैं।

दो पाटों के बीच पिसने वाले अन्न की भांति मध्यम वर्ग के भाग्य की परिणति बड़ी विडम्बनापूर्ण ही होती है। हां उपन्यासकार ने मध्यमवर्ग की इस दुरावस्था का जो चित्रांकन किया है, उसमें स्त्रियों की आभूषण–प्रियता पर प्रहार करना ही उसका मूलोद्देश्य सिद्ध होता है, जबकि मध्यम वर्ग के पुरुषों की प्रदर्शनप्रियता कोढ़ में खाज की तरह इस रोग को बढ़ावा देते प्रदर्शित की गयी है। इस संदर्भ में यह तथ्य भी ध्यातव्य है कि उपन्यासकार की आलोचना का लक्ष्य कोई नारी विशेष अर्थात् जालपा नहीं है, अपितु वह समाज–व्यवस्था है, जो नारियों में आभूषणों के प्रति अनावश्यक मोह जागृत करती है।

उपन्यासकार ने यह दिखाया है कि भारत में लड़कियों को आभूषण–प्रेम घुट्टी में ही पिला दिया जाता है। बच्ची पालने में से निकलने नहीं पाती कि उसे उसकी दादी, मां और पड़ोस में विवाह के अवसर पर नाना प्रकार के आभूषण आने का गीत सुनाने लगती हैं– ''जालपा को गहनों से जितना प्रेम था, उतना कदाचित् संसार की और किसी वस्तु से न था; और उसमें आश्चर्य की कौन सी बात थी? जब वह तीन वर्ष की अबोध बालिका थी, उस वक्त उसके लिए सोने की चूड़े बनवाए गये थे। दादी जब गोद में खिलाने लगती, गहनों की ही चर्चा करती। तेरा दुलहा तेरे लिए बड़े सुन्दर गहने लाएगा। ठुमुक–ठुमुक कर चलेगी। जालपा पूछती–चांदी के होंगे की सोने के?

दादी कहती– सोने के होंगे बेटी, चांदी के क्यों लावेगा? चांदी के लावे तो तुम उसके मुंह पर पटक देना।''

गुड़ियों के साथ खेलते समय भी उसने यही खेल सीखा था कि किसी गहने की मांग पर गुड़िया बिदक गई है और गुड्डा उसे कोई आभूषण देकर प्रसन्न कर रहा है। वह यदा–कदा बूढ़ियों का वार्तालाप सुनती कि वे यही चर्चा कर रही हैं कि किसने कौन–कौन आभूषण बनवाए हैं, कितने दाम लगे हैं, ठोस हैं या पोले, किस लड़की के विवाह में कितने गहने आए हैं आदि।

लड़कियों से चाहे उनकी माताएं हों या नकली आभूषण बेचने वाले बिसाती, यही कहते हैं कि कुछ दिनों में उनके ससुराल से अच्छे–से–अच्छे आभूषण आएंगे। विवाहिताएं वार्तालाप करती हैं, तो यही कि उनके लिए कौन–कौन से आभूषण बनवाए गये हैं। ''तुम भी तो ससुराल से साल भर बाद आयी हो, कौन–कौन सी नयी चीजें लाई?'' ऐसे समाज

टिप्पणी

में पली–बड़ी हुई कौन सी बालिका को आभूषण के प्रति उत्कट प्रेम न उत्पन्न होगा? जालपा भी उसका अपवाद नहीं है। दुर्भाग्यवश उसे अपनी सहेली द्वारा यह गुरुमंत्र और बता दिया जाता है कि ससुराल में सीधी ऊंगलियों से घी नहीं निकलता। अतः वे तुम्हारा उचित चन्द्रहार बनवा कर देंगे, जब तुम उनकी नाक में दम करोगी।

पति द्वारा इन गप्पों को सुनकर कि हमें जमींदारी की आय के साथ–साथ बैंक में जमा पचासों हजार रुपयों का पर्याप्त ब्याज भी मिलता है, जालपा की चन्द्रहार विषयक इच्छा दुराग्रह में बदल जाती है। ऐसे तथाकथित धनाढ्य सास–ससुर द्वारा उसके समस्त आभूषण चोरी चले जाने पर भी उनके द्वारा कोई आभूषण न बनवाना, उसके स्वभाव में सास–ससुर के प्रति उद्दंडता का बीज वपन कर देता है, और पति के प्रति उपेक्षा और अविनयशीलता का। उसके मानस में यह धारणा बद्धमूल हो जाती है कि निराभरण होकर मुहल्ले की स्त्रियों के साथ कजली खेलना अथवा जन्माष्टमी का उत्सव देखने जाना परिवार के सुख पर कालिख पोतने के समान है। उसे इस बात से ऐसा मानसिक आघात लगता है कि वह सोचने लगती है कि वह इस तरह घुट–घुट कर मर जाएगी। यही कारण है कि जब उसका पति उसे चन्द्रहार और सीसफूल लाकर देता है तो उसकी पति–भक्ति और सेवा में अपार वृद्धि होती है। उसे अपने दफ्तर जाने के वस्त्र, नहाने का समान आदि सभी वस्तुएं यथास्थान रखी मिलती है तथा प्रत्येक समय वह उसके मुंह जोहती रहती है।

जालपा के वस्त्राभरण ही काशी के प्रख्यात वकील इन्द्रभूषण की पत्नी से सम्पर्क में आने का सौभाग्य प्रदान करते हैं–जो उनके अभाव में लेखक के शब्दों में असम्भव था। इस प्रकार लेखक प्रच्छन्न रूप से उस भारतीय समाज–व्यवस्था पर व्यंग्य करता है, जो स्त्रियों को आभूषणों पर जालपा के समान मर–मिटने के लिए प्रेरित करती है–जिसमें ऐसी धारणा बद्धमूल हो गयी है कि आभूषणों के अभाव में न तो स्त्री अपनी सखी–सहेलियों और पड़ोस की तरुणियों में समादर पा सकती है और न अपने से उच्च श्रेणी की महिलाओं से सम्पर्क ही स्थापित कर सकती है। (आज के इस आधुनिक परिवेश में भी जहां स्त्रियां समाज के प्रत्येक क्षेत्र–शिक्षा, सेवा, नेतृत्व आदि में पुरुष की बराबरी कर रही हैं, फिर भी बड़ी संख्या में आभूषण को लेकर वैसी ही धारणा से ग्रस्त हैं।)

उपन्यासकार ने नारियों के आभूषण–प्रेम की विविध पात्रों से किन शब्दों में भर्त्सना कराई है, इस पर प्रकाश डालने से पूर्व समाज के उच्च और निम्न वर्ग की नारियों में भी आभूषण लालसा किस प्रकार व्यापक दिखाई है इसका दृष्टान्त देखिए– रतन सम्पन्न घराने की महिला है इसलिए आभूषणों की प्राप्ति उसके लिए दुष्कर नहीं है। हां, आभूषणों के लिए उसके हृदय में भी जालपा के समान दुर्बलता है। उसके कंगनों को देखते हुए ही वैसे ही कंगन प्राप्त करने को अधीर हो उठती है। जालपा का यह प्रस्ताव सुनकर कि न हो तो तुम मेरे कंगन ले लो, वह बहुत प्रसन्न हो जाती है। फेरी वाले से वह हार खरीदने को इतनी उग्र हो जाती है कि उसके शरीर का रोम–रोम बयाना बन जाता है, उसके हृदय की सारी ममता, ममता का सारा अनुराग, अनुराग की सारी अधीरता, उत्कंठा और चेष्टा उस हार पर केन्द्रित हो जाती है, ऐसा प्रतीत होने लगता है कि मानो उसके प्राण हार के दानों में जा छिपे हैं और जौहरी को सन्दूक बन्द करते देख वह जलविहीन मछली की तरह तड़पने लगती है। हां उसकी यह अधीरता और तड़प उसके पति के घर आ जाने की अवधि तक ही स्थायी रहती

टिप्पणी

है क्योंकि वे आकर उसे 1150/– के मूल्य का हार ही नहीं खरीद देते अपितु आग्रह करते हैं कि वह सिर के लिए भी कोई अच्छा सा आभूषण पसन्द कर ले।

निम्न वर्ग की जग्गो भी आभूषण–प्रेम में जालपा या रतन से कम नहीं है। वह अपनी कमाई के रुपयों से आभूषण बनवाती है, फिर भी उसकी अपने पति से प्रायः इसी तथ्य पर चख–चख होती रहती है–''और जो कुछ कमाती हूं वह नसे में बरबाद कर देता है। सात कोठरी में छिपा के रखूं पर इसकी निगाह पहुंच जाती है। निकाल लेता है। कभी एकाध चीज वस्त्र बनवा लेती हूं, तो वह आंखों में गड़ने लगती है। तानों से छेदने लगता है।'' देवीदीन के शब्दों में वह अब भी गहने पहनती है। सोने की बालियां और सोने की हंसुली पहने दुकान पर बैठी रहती है।... अब भी एक न एक गहना बनवाती रहती है। न जाने कब उसका पेट भरेगा।'' इस प्रकार निम्न वर्ग की नारियों में भी आभूषणप्रियता उच्च और मध्य वर्ग की स्त्रियों के समान है। हां आर्थिक अर्जन में स्वयं भी मददगार होने के कारण वे अन्य की अपेक्षा अधिक स्वतन्त्र रहती हैं और पहले से उच्च वर्गों की नारियों की भांति पति की मुखापेक्षी नहीं रहतीं।

इस प्रकार समाज के उच्च, मध्य, निम्न वर्ग की नारियों में आभूषण के प्रति एक जैसी ही आसक्ति दिखाकर उपन्यासकार ने रमेश बाबू और देवीदीन के मुख से उसकी तीव्र भर्त्सना कराते हुए उसे भारतीयों के समस्त प्रकार के पतन का मूल कारण सिद्ध किया है। रमेश बाबू के शब्दों में–''गहनों का मरज न जाने इस दरिद्र देशों में कैसे फैल गया। जिन लोगों का भोजन का ठिकाना नहीं है वे भी गहनों के पीछे प्राण देते हैं। हर साल अरबों, खरबों सोना–चांदी खरीदने में व्यय हो जाते हैं। संसार के किसी भी देश में इन धातुओं की इतनी खपत नहीं। तो बात क्या है, उन्नत देशों में धन व्यापार में लगता है, जिससे लोगों की परवरिश होती है और धन बढ़ता है। यहां धन शृंगार में खर्च होता है, उससे उन्नति और उपकार की जो महान शक्तियां हैं, उन दोनों का अन्त हो जाता है।''

वह आगे फिर कहते हैं–''बुरा मरज है, बहुत बुरा। वह धन जो भोजन में खर्च होना चाहिए, बाल–बच्चों का पेट काटकर गहनों की भेंट कर दिया जाता है। बच्चों को दूध न मिले न सही, घी की गंध उनके नाक में न पहुंचे, न सही। मेवों और फलों के दर्शन उन्हें न हों, न सही, पर देवी जी गहने जरूर पहनेंगी और स्वामी जी जरूर बनवाएंगे। दस–दस, बीस–बीस रुपये पाने वाले क्लर्कों को देखता हूं जो सड़ी हुई कोठरियों में पशुओं के समान जीवन काटते हैं, जिन्हें सवेरे का जालपान तक मयस्सर नहीं होता, उन पर भी गहनों की सनक सवार रहती है। इस प्रथा से हमारा सर्वनाश होता जा रहा है।''

रमेशबाबू की भांति देवीदीन की भी आत्मा में प्रवेश कर मुंशी प्रेमचन्द कहते हैं–''सब घरों का यही हाल है। जहां देखो–हाय गहने! हाय गहने! गहने के पीछे जान दे दें, घर के आदमियों को भूखों मारें, घर की चीजें बेचें। और कहां तक कहूं, अपनी आबरू तक बेच दें। छोटे–बड़े, गरीब–अमीर सबको यही रोग लगा हुआ है।'' सरकारी रकम के 'गबन' का मूल कारण प्रेमचन्द की दृष्टि में स्त्रियों का आभूषण प्रेम ही था। उन्होंने रमानाथ को तो स्वपत्नी की आभूषण लालसा की तृप्ति के लिए दफ्तर के रुपयों का गबन करके पलायन करते चित्रित किया ही है, देवीदीन द्वारा भी स्वपत्नी के लिए झुमके बनवाने के चक्कर में मनीऑर्डर फॉर्म पर जाली हस्ताक्षर करके रुपयों

टिप्पणी

का गबन करने के अभियोग में तीन वर्ष का कारावास काटने का उल्लेख किया है। उन्होंने देवीदीन के रूप में अपना मत इस प्रकार व्यक्त किया है–''गबन के हजारों मुकद्दमें हर साल होते हैं। तहकीकात की जाये तो सबका कारण एक ही होगा–गहना। दस–बीस वारदात तो मैं आंखों से देख चुका हूं।...यहीं एक डाक बाबू रहते थे, छुरी से अपना गला काट लिया। एक दूसरे मियां साहब को जानता हूं जिनको पांच साल की सजा हो गई, जेल में मर गए। एक पंडित जी को जानता हूं जिसने अफीम खाकर जान दे दी।"

इस प्रकार उपन्यास के सभी पात्र स्त्रियों के आभूषण प्रेम से किसी न किसी प्रकार सम्बद्ध हैं। उसकी सभी स्त्रियां मानकी, जागेश्वरी, जालपा, रतन और जग्गो के मन में उनके प्रति उत्कट लालसा है, जबकि प्रायः सभी पुरुष पात्र वकील साहब को छोड़कर या तो उसके दुष्परिणाम भोगते हैं, अथवा उसकी आलोचना करते हैं। पुलिस भी रमानाथ को अपनी पत्नी को वश में रखने की सलाह देती है। उपन्यास के नायक रमानाथ को स्वपत्नी के आभूषण–प्रेम की बेदी पर अपना स्वर्णिम भविष्य न्योछावर करके गबन करना पड़ता है, देवीदीन को कारावास भोगने के साथ–साथ अपना घर त्याग कर पलायन करना पड़ता है। दयानाथ को अपनी पत्नी की जली–भुनी बातें सुननी पड़ती हैं जबकि रमेशबाबू उसके तीव्र आलोचक हैं। उपन्यास में वर्णित अन्य किसी भी समस्या से उसके विविध पात्र इस प्रकार सम्बद्ध नहीं हैं। अतः इस तथ्य में अब संदेह नहीं रहता कि गबन की रचना की मूल समस्या आभूषण प्रेम का दुष्परिणाम दिखाकर नारियों के मन में उनके प्रति उपेक्षा भाव जाग्रत करना ही है अथवा उनमें ऐसा विवेक व बुद्धि जाग्रत करना है कि वे जालपा के समान यह निश्चय कर लें कि हम अपने पतियों की पाप की कमाई के रुपयों से आभूषण बनवाने के स्थान पर निराभरण रहना उत्तम समझेंगी।

3.2.4 औपन्यासिक तत्वों के आधार पर 'गबन' की समीक्षा

'गबन' प्रेमचंद का एक श्रेष्ठ उपन्यास है। इसमें सामाजिक यथार्थ के विविध पक्षों का समावेश इतनी कुशलता से किया गया है कि कथा फलक के व्यापक होने पर भी उसमें किसी प्रकार की जटिलता नहीं आने पाई है। घटनाओं के संयोजन में रोचकता और क्रमबद्धता के साथ–साथ लेखकीय दृष्टिकोण की छाप भी सर्वत्र विद्यमान है। वस्तु और उद्देश्य की यह अन्योन्याश्रितता शिल्प–कौशल की दृष्टि से 'गबन' की एक अन्यतम विशेषता है। प्रेमचंद ने जैसा देखा, भोगा और अनुभव किया उसके सरल व सुबोध रूप को कथा में अभिव्यक्त कर पाठकों के हृदय तक पहुंचने का सफल प्रयास किया है। 'गबन' पुराने सामंती समाज में मध्यम वर्ग की स्थिति का लेखा–जोखा है।

1. **कथानक**– कथानक में मूलतः तीन गुण अपेक्षित होते हैं– रोचकता, संभाव्यता और मौलिकता। रोचकता का अर्थ मनोरंजन नहीं है, बल्कि कथानक में कौतूहलता पैदा करना है। संभाव्यता का अर्थ है कि उपन्यास में असंभव, अलौकिक या अमानवीयता का चित्रण न हो। मौलिकता का अर्थ है कि जिन बातों से हम परिचित हैं वे पुनः न कहीं जाए, बल्कि कथावस्तु अभिनव ढंग से निरूपित हो। प्रेमचंद उच्च कोटि के उपन्यासकार थे। वे कथावस्तु के इन सभी गुणों से परिचित थे। उन्होंने 'गबन' में कथानक को इतना कौतूहलपूर्ण, स्वाभाविक व मौलिक बनाया है कि वह उपन्यास कला का सुंदर नमूना है।

'गबन' के कथानक को यदि ध्यान से देखा जाए तो यह केवल आभूषणों के इधर–उधर घूमने वाली लगती है। कथा की नायिका को आभूषण अधिक प्रिय होते हैं और वे ही उससे छिन जाते है इसलिए सारी कथा उसी के इधर–उधर घूमती है?

टिप्पणी

समाज में होते परिवर्तन और पश्चिमीकरण को मध्य में रख प्रेमचंद ने 'गबन' की रचना की तथा रमानाथ का चित्र खड़ा किया है।

आधुनिक परिवेश में मध्यवर्ग की विधाग्रस्त, आडम्बरप्रधान मानसिकता का उद्‌घाटन करना रमानाथ की प्रधान कथा का लक्ष्य है। इस लक्ष्य को दृष्टि में रखकर प्रेमचंद ने रमानाथ के माध्यम से संपूर्ण मध्यवर्ग, विशेषकर पढ़े–लिखे बाबू वर्ग की मानसिकता का बड़ा ही युक्तिसंगत विश्लेषण किया है। अतः मनोवैज्ञानिक स्थितियों के चित्रण की दृष्टि से प्रेमचंद के उपन्यासों में 'गबन' का एक विशिष्ट स्थान है।

मध्यवर्ग की कथा रमानाथ के माध्यम से उपन्यास में कही गई है। उसकी सामाजिक स्थिति बड़ी विचित्र है। नायक रमानाथ के पश्चिमी रंग ढंग का परिचय कई प्रसंगों में मिलता है, यथा– वकील साहब का अपने घर में अंग्रेजी तरीके से खातिरदारी करना। अंग्रेजी तरीके से ड्राइंग रूम सजाने का प्रयास करना, किन्तु भारतीय संस्कारों का अनायास उस प्रयास में आईने के प्रसंग को लेकर शामिल होना। ऐसे में परंपरागत दृष्टिकोण के संरक्षक दयानाथ को मिलावटी संस्कृति को देख क्रोध आता है। रमानाथ के पिता का आक्रोश सांस्कृतिक पतन को लेकर ही नहीं अपितु गुलाम राजनीति से पैदा हुई शिक्षा और अर्थव्यवस्था के विकास पर गहराते संकट को लेकर भी है।

रमानाथ का विवाह धूमधाम से जालपा से होता है। हैसियत से अधिक खर्च किया जाता है। गहने चढाए जाते हैं, किन्तु जालपा का मन फिर भी चन्द्रहार के लिए बेचैन है। रमानाथ का बड़बोलापन जालपा के आगे वास्तविकता से परे का चित्र खेंचता है। उसकी बातों से जालपा को अधिक पीड़ा होती है। क्योंकि बिना आभूषणों के स्त्री का समाज में कोई आदर सत्कार नहीं है। प्रेमचंद ने भारतीय औरतों को आभूषणप्रियता के माध्यम से यह संकेत भी दिया है कि सामंती रीतियों से जकड़ी होने के कारण उनमें आभूषण की इतनी ललक होती है कि अपने बुनियादी अधिकारों से अनभिज्ञ होकर वे स्वयं भी एक आभूषण, एक सम्पत्ति बन जाती हैं। वे पुरुष वर्ग की विलास सामग्री में ढल जाती हैं। प्रेमचंद ने आभूषणों को नारी सौंदर्य की वस्तु न बताकर गुलामी की बेड़ियाँ बताया है।

सामंती समाज में स्त्री की इस दशा के साथ–साथ ब्रिटिश नौकरशाही का भी उपन्यास में वर्णन हुआ है। रमनाथ का नगरपालिका में नौकरी लगना। उसका घूस लेना। चुंगी चोरी करना और पूर्व में किए अनाप–शनाप खर्च को पूरा करने के लिए गबन करना इस कहानी का मूल है। एक मध्यमवर्गीय परिवार का इन सब समस्याओं से लड़कर जीना मुश्किल हो गया है। रमानाथ का घर छोड़कर भाग जाना। जालपा का अपने गहने बेचकर उसे जुर्म से बचाना। उसे ढूंढ़ने कलकत्ता जाना। ये सब मध्यवर्गीय परिवार की विडम्बना है। प्रेमचंद जिस दौर में यह उपन्यास लिख रहे थे, उस दौर में स्त्रियां अपने गिरे हुए पतियों को उठा रही थीं। उन्हें सही मार्ग पर लाने का प्रयास कर रही थी।

जालपा समाज का, व्यवस्था का, प्राचीन कमजोर परंपराओं का विरोध करती है, वह केवल सत्य के लिए ही संघर्ष करती है।

टिप्पणी

'गबन' में प्रेमचंद ने मध्यम वर्ग की बुरी हालत का चित्र खींचा है, इस वर्ग की अनैतिकता और स्वार्थपरता की ओर संकेत किया है। उनका उद्देश्य इस वर्ग के जीवन में परिवर्तन की संभावनाओं का पता लगाना था। इस वर्ग की नारियों की स्थिति सबसे गई गुजरी है। उपन्यास में विधवा रतन मणिभूषण के आगे कितनी लाचार है। प्रेमचंद ने मध्यम वर्ग की नारी की विडम्बनापूर्ण स्थिति के चित्रण में जालपा के चरित्र को प्रस्तुत किया है। 'गबन' की मुख्य कथा रमा–जालपा की दाम्पत्य प्रेमगाथा है जो प्रयाग तक सीमित रहती है।

प्रासंगिक कथाओं के समायोजन में भी प्रेमचंद सिद्धहस्त दिखाई देते हैं। उन्होंने रतन तथा देवीदीन की दो उपकथाओं को भी उपन्यास में समान महत्व दिया है।

2. **चरित्र–चित्रण (पात्र–योजना)**– चरित्र–चित्रण की दृष्टि से 'गबन' परिस्थितिजन्य वातावरण के अधिक अनुकूल बन पड़ा है और इस दृष्टि से अन्य उपन्यासों की अपेक्षा अधिक स्वाभाविक और प्रभावशाली है। व्यक्तिपरक प्रकृति होने के कारण 'गबन' में स्थायी महत्व रखने वाले दो ही पात्र हैं– रमानाथ और जालपा। 'गबन' इन्हीं की प्रेमकथा है जो केंद्र में रहकर गतिशील होती है। इनके अतिरिक्त जो भी पात्र हैं वे उनके सहायक होकर आए हैं। अनावश्यक पात्रों की योजना इस उपन्यास में कहीं नजर नहीं आती है। सभी प्रधान पात्र भी दोहरे व्यक्तित्व से मुक्त नजर आते हैं। रमानाथ इस उपन्यास का नायक है। इसकी शत–प्रतिशत वैयक्तिकता संदिग्ध है। क्योंकि इसमें कुछ वर्गगत चारित्रिक दुर्बलताएँ विद्यमान हैं जो भारतीय मध्यम वर्गीय युवक की यथार्थ स्थिति का पर्दाफाश कर रही हैं। मिथ्याभाषण और बाह्य प्रदर्शन इनके चरित्र की ही नहीं भारतीय मध्यवर्गीय युवक के चरित्र की जानी पहचानी विशेषताएं हैं।

जालपा उपन्यास की दूसरी मुख्य पात्र है। इसका चरित्र रमा से अधिक गतिमय तथा उज्ज्वल बन पड़ा है। प्रयाग के एक गाँव में लाड़–प्यार में पली आभूषण–प्रिय युवती के रूप में हमारे सामने आती है और फिर वही अग्नि से तप्त होकर समस्त भोग–विलास से ऊपर उठकर कुंदन सदृश हो जाती है। अपने प्रिय हार को चार सौ रुपये में बेचकर वह पति का ऋण उतारती है। उपन्यासकार ने मध्यमवर्गीय स्त्री की शाश्वत मानसिकता को इसमें प्रस्तुत किया है जिसके लिए किसी भी परिस्थिति में पति ही परमेश्वर होता है।

इसके अतिरिक्त 'जोहरा' एक और पात्र है जो क्षणिक होते हुए भी महत्वपूर्ण है। देवीदीन, रतन, रमेश, जग्गो अन्य पात्र हैं; जो उपन्यास में समय–समय पर उभरकर लीन हो जाते हैं।

3. **संवाद (कथोपकथन)**– कथोपकथन उपन्यास में रोचकता, स्वाभाविकता तथा यथार्थता प्रस्तुत करता है। संवाद या कथोपकथन की सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि वह सजीव और सार्थक हो तथा कथानक से इतना अभिन्न हो कि जोड़ा हुआ–सा प्रतीत न हो। 'गबन' उपन्यास के संवाद स्वाभाविक और जीवंत प्रतीत होते हैं जो कथा में जान डाल देते हैं। जैसे– जब रमानाथ अपने हाथ में एक पोटली लिए हुए घर आता है और चारपाई पर बैठता है तो जालपा ने उठकर पूछा– पोटली में क्या है?

टिप्पणी

रमानाथ– बूझ जाओ तो जानूँ।

जालपा– हँसी का गोलगप्पा है (यह कहकर हँसने लगी)

रमानाथ– गलत

जालपा– नींद की गठरी होगी

रमानाथ– गलत

जालपा– तो प्रेम की पिटारी होगी।

रमानाथ– ठीक! आज मैं तुम्हें फूलों की देवी बनाऊंगा।

इस प्रकार पात्र आवश्यकतानुकूल ही बोलते हैं, अनावश्यक नहीं। पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को स्पष्ट करने के लिए एक विधि संवाद–योजना भी है। इसे चरित्र–चित्रण की नाटकीय शैली कह सकते हैं। कला की दृष्टि से इसे टीका–टिप्पणी प्रधान विश्लेषणात्मक शैली की अपेक्षा अधिक महत्व प्रदान किया जाता है। क्योंकि इस विधि में स्वाभाविकता का पुट विद्यमान रहता है। वह लेखक द्वारा स्वयं पात्रों की आलोचना करने से नहीं आता है। इस विधि की वरीयता का प्रतिपादन करते हुए प्रेमचंद ने स्वयं कहा है– "उपन्यास में वार्तालाप (संवाद) जितना अधिक हो और लेखक की कलम से जितना ही कम लिखा जाए, उतना ही उपन्यास सुंदर होगा। वार्तालाप केवल रस्मी नहीं होना चाहिए। बातचीत का पूर्ण रूप से स्वाभाविक परिस्थितियों के अनुकूल सरल और सूक्ष्म होना जरूरी है।" प्रेमचंद ने अपने उपन्यास 'गबन' में आयोजित पात्रों के वार्तालाप द्वारा इस कथन को पूरी तरह चरितार्थ किया है। वैसे प्रेमचंद ने टीका–टिप्पणी और वार्तालाप दोनों ही विधियों को अपनाया है, फिर भी वार्तालाप शैली की अपेक्षाकृत अधिक महत्व दिया है। श्रेष्ठ संवाद–योजना के लिए अपेक्षित सभी आवश्यक गुण उनके संवादों में बड़े ही विकसित रूप में विद्यमान है।

प्रेमचंद ने अपने उपन्यास में अनेकत्र शब्द–चित्रों की योजना करने में अपूर्व कुशलता का परिचय दिया है। उनके शब्द–चित्र की सबसे बड़ी विशेषता इस बात में है कि पात्रों का बाह्य रूपाकार उनकी अंतःप्रकृति का परिचायक बन जाता है। 'गबन' के वकील इन्द्रभूषण का चित्र दर्शनीय है– "वकील साहब की उम्र साठ से नीचे न थी। चिकनी चाँद आसपास के सफेद बालों के बीच वार्निश की हुई लकड़ी की भांति चमक रही थी। मूंछे साफ थी, पर माथे की शिकन और गालों की झुर्रियां बतला रही थीं कि यात्री संसार–यात्रा से थक गया है। आराम कुर्सी पर लेटे हुए वह ऐसे मालूम होते थे कि बरसों के मरीज हों। हाँ, रंग गोरा था, जो साठ–साल की गर्मी–सर्दी खाने पर भी उड़ न सकता था। ऊंची नाक थी, ऊंचा माथा और बड़ी–बड़ी आँखें जिनमें अभिमान भरा था।" ऐसे शब्द–चित्रों की एक ही झलक पाठकों के मन में पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं के अनुरूप पृष्ठभूमि का निर्माण कर देती है। इस पृष्ठभूमि में उनका क्रियाकलाप बड़ा ही स्वाभाविक प्रतीत होने लगता है।

4. **देशकाल–वातावरण**– देशकाल एवं परिस्थिति के अनुरूप ही उपन्यासों में वातावरण अपेक्षित है। इससे अपने युग का पूर्ण सजीव चित्र पाठक के मानसपटल पर अंकित हो जाता है। प्रेमचंद इस प्रकार से वातावरण को अपने उपन्यासों के अंकित करने में सिद्धहस्त थे।

टिप्पणी

पुराने सामंती समाज में मध्यवर्ग सीमित था। व्यक्ति समुदाय पर निर्भर था। उसके जीवन में अधिक हलचल नहीं थी। वह जहां पैदा होता था, वहीं उसकी मृत्यु होती थी। शहरों और उद्योग–धंधों के विकास, ब्रिटिश नौकरशाही के विस्तार तथा शिक्षा के प्रसार के परिणामस्वरूप समाज में मध्यवर्ग का आकार बड़ा हुआ। इसने रूढ़िवाद को छोड़कर बौद्धिक–जनतांत्रिक धारणाओं को अंगीकार करना शुरू किया। ब्रिटिश शासन व्यवस्था ने नई तकनीक, नए सामाजिक संगठन तथा नए विचारों की नींव स्थापित कर दी थी। इसलिए पुराने पेशे टूटने और नए पेशे बनने लगे। प्रारंभिक अवस्था से ही उपनिवेशवादी शासन को सस्ते कर्मचारियों, छोटे बणिकों, आधुनिक शिक्षकों तथा अन्य बुद्धिजीवियों की जरूरत थी। इसलिए भारतीय मध्यवर्ग के विकास में तीव्रता आई। नए पेशे, नई तकनीक, नई जीवन–दृष्टि और नई जीवन–पद्धति लेकर जो मध्यवर्ग अपने व्यापक अस्तित्व में आया, उसका संपूर्ण जीवन अंतर्विरोधों और विडंबनाओं से भरा था, क्योंकि एक तरफ वह आधुनिकता की ओर बढ़ रहा था, दूसरी तरफ वह रूढ़िवाद से मुक्त नहीं हुआ था। वह संपन्नता की ओर लालायित होकर बढ़ना चाहता था, लेकिन उसका आर्थिक आधार कमजोर और खोखला था। उसकी परिणति त्रासदी में होती थी।

प्रेमचंद ने इस मध्यवर्ग को निकट से जाना एवं उसकी लालसाओं को बहुत बारीकी से पहचाना था। वह समझते थे कि औपनिवेशिक सामंती शोषण की छाया में विकसित भारतीय मध्य वर्ग संभावनाओं से भरा होकर भी भीतर से कितना पोला है। खासकर पश्चिमी सभ्यता के असर में जैसे–जैसे वह अपनी जड़ों से कटता जा रहा है, अधिक पोला होता जा रहा है। चूंकि भारतीय मध्यवर्ग को एक महान बदलाव का नेतृत्व करना थ। इसलिए प्रेमचंद उनकी विडम्बनापूर्ण दशा से चिंतित थे। वह चाहते थे कि मध्यवर्ग अपने अंतर्विरोधों से यथासंभव उबरे तथा अपनी ऐतिहासिक भूमिका को पहचाने। इसी उद्देश्य से प्रेमचंद ने 'गबन' की रचना की तथा रमानाथ का चरित्र खड़ा किया।

'गबन' के वातावरण की दृष्टि अत्यंत विशुद्ध है। उदाहरणार्थ– 'बरसात के दिन हैं, सावन का महीना। आकाश में सुनहरी घटाएं छाई हुई हैं। रह–रहकर रिमझिम वर्षा होने लगती है। अभी तीसरा पहर है, पर ऐसा मालूम होता है, शाम हो गई। आमों के बाग में झूला पड़ा है। लड़कियां झूल रही हैं और उनकी माताएँ भी। दो–चार झुला रही हैं। कोई कजली गाने लगती है, कोई बारहमासा। इस ऋतु में महिलाओं की बाल स्मृतियां भी जाग उठती है। ये फुहारें मानों चिंताओं को हृदय से धो डालती हैं। मानों मुरझाए हुए मन को भी हरा कर देती हैं। सबके दिल उमंगों से भरे हैं। धानी साड़ियों में प्रवृति की हरियाली से नाता जोड़ा है।' वह प्रकृति का जीता–जागता चित्र है। इसी प्रकार के अनेक चित्र 'गबन' उपन्यास में यत्र–तत्र मिल जाते हैं।

5. **भाषा–शैली**– भाषा और संवादों की दृष्टि से 'गबन' उपन्यास अलग विशेषता लिए हुए है। प्रेमचंद कहीं भी अनावश्यक बोलते नजर नहीं आते। कभी–कभी वे अपनी आदत के अनुसार टिप्पणियां अवश्य करते हैं। ऐसे ही उनके पात्र भी अवसरानुकूल ही बोलते हैं। भाषा की यह सरलता प्रेमचंद की विशेषता है। 'गबन' की भाषा इतनी रोचक है कि पाठक शीघ्रातिशीघ्र उपन्यास को पढ़कर इसका आनन्द लेना चाहता है। भाषा के अनेक रूप उपन्यास में अंकित है क्योंकि भाषा ही किसी भी कृति की सफलता–असफलता में महत्वपूर्ण भूमिका

टिप्पणी

निभाती है। उदाहरणार्थ– ''नाटक उस वक्त 'पास' होता है, जब रसिक–समाज उसे पसंद कर लेता है। बरात का नाटक उस वक्त पास होता है, जब राह चलते आदमी उसे पसंद कर लेते हैं। नाटक की परीक्षा चार–पांच घंटे तक होती रहती है, बरात की परीक्षा के लिए केवल इतने ही मिनटों का समय होता है। सारी सजावट, सारी दौड़–धूप और तैयारी का निबटारा पांच मिनटों में हो जाता है। अगर सबके मुंह से 'वाह–वाह' निकल गया, तो तमाशा पास नहीं फेल! रुपया, मेहनत, फिक्र सब अकारथ। दयानाथ का तमाशा पास हो गया। शहर में वह तीसरे दर्जे में आता, गांव में अव्वल दर्जे में आया।"

प्रेमचंद की भाषा रोचक होते हुए भी कहीं–कहीं व्यंग्य और चित्रात्मकता से पूर्ण है। हम क्षणिक मोह और संकोच में पड़कर अपने जीवन के सुख और शांति का कैसे होम कर देते हैं! अगर जालपा मोह के इस झोंके में अपने को स्थिर रख सकती, अगर रमा संकोच के आगे सिर न झुका देता, दोनों के हृदय में प्रेम का सच्चा प्रकाश होता, तो वे पथ–भ्रष्ट होकर सर्वनाश की ओर न जाते।"

'गबन' में सामान्य बोलचाल के शब्दों, तत्सम, तद्भव एवं अंग्रेजी शब्दों का भी प्रयोग किया गया है। भाषा की यही विशेषता उपन्यास में प्राण डाल देती है।

6. **उद्देश्य**– प्रत्येक रचना का कोई न कोई उद्देश्य अवश्य होता है। बिना उद्देश्य के तो किसी रचना की कल्पना भी नहीं की जा सकती। निश्चय ही प्रेमचंद सच्चे साहित्यकार और उपन्यास सम्राट थे।

प्रेमचंद उपन्यास के माध्यम से निजी अनुभूति को अभिव्यक्ति प्रदान करने वाले कलाकार थे। 'गबन' सोद्देश्य उपन्यास है जिसमें अनेक संदेश निहित है। उपन्यास का नायक रमानाथ पश्चिमी रंग–ढंग में ढला हुआ है। किन्तु वह आधुनिकता की मार पड़ने पर रूढ़िवाद की शरण लेता है; रूढ़िवाद द्वारा सताए जाने पर वह आधुनिकता की ओर भागता है– वह दोनों के बीच सीमा पर रहकर देखता है कि सुविधा किधर है।

प्रेमचंद ने आभूषणों का समाजशास्त्र समझ लिया था। वह इन्हें नारी की गुलामी की जड़ मानते थे। 'गबन' में सिर्फ आभूषण की ही समस्या नहीं है। ऊपर से यही दिखता है कि जालपा के आभूषण–प्रेम के परिणामस्वरूप पूरा परिवार तबाह हो गया। जब वह आभूषण–प्रेम का मोह त्याग देती है तो बिखरा संसार फिर बस जाता है। 'गबन' की औपन्यासिक भूमि इससे व्यापक है। इसमें मूल रूप से नारी–मुक्ति की समस्या है जो आगे चलकर मध्यवर्ग की राजनैतिक आर्थिक मुक्ति की समस्याओं से जुड़ जाती है।

प्रेमचंद गरीब जनता का पक्ष लेने वाले लेखक थे। वह जीवन–संग्राम में तटस्थ रहने वाले लेखक नहीं थे, वरन् अंग्रेजों और उनके दलालों के खिलाफ कलम को अचूक अस्त्र की तरह इस्तेमाल करते थे। 'गरीबों को लूटकर विलायत का घर भरना' इस एक टुकड़े में प्रेमचंद ने अपने जमाने और आज के हिन्दुस्तान की कथा कह दी है।

प्रेमचंद ने इस उपन्यास में देवीदीन के मुँह से पहले–पहल मजदूरों की सच्ची हालत का वर्णन कराया है। ये मजदूर जूट के मिलों में काम करते हैं। वे सभी एक ही गाँव–देश के रहने वाले और एक ही भाषा बोलने वाले नहीं है। किन्तु उन सबकी जिंदगी एक–सी है। उन सबके साथ एक–सा ही जानवरों जैसा बर्ताव किया जाता है।

टिप्पणी

देवीदीन सोचता है कि अपना राज आने पर मेरा पहला सवाल यह होगा कि विलायती चीजों पर दुगुना महसूल लगाया जाए और मोटरों पर चौगुना।"

प्रेमचंद ने देवीदीन की यह इच्छा एक विरासत की तरह हिन्दुस्तान की नई पीढ़ी के लिए छोड़ दी है। वह प्रेमचंद की ही विरासत है जो उन्होंने अपने पीछे आने वालों के लिए छोड़ी है। जिस देश में जालपा जैसी वीर नारी हो, देवीदीन जैसा सदा जवान रहने वाला देशभक्त हो, वहाँ गरीबों को लूटकर विलायत का घर भरने का काम ज्यादा दिन नहीं चल सकता।

'गबन' हिंदी साहित्य के यथार्थवाद में एक और आगे बढ़ा हुआ कदम है। वह जीवन की असलियत की छानबीन और गहराई से करता है; भ्रम के पर्दे उठाता है, नए रास्ते ढूंढने के लिए वह जनता को नई प्रेरणा देता है।

प्रेमचंद ने 'गबन' में मध्यवर्गीय जीवन की बुरी दशा का चित्र खीचा है। इस वर्ग की अनैतिकता और स्वार्थपरता की ओर संकेत किया है। लेकिन उनका मूल उद्देश्य इस वर्ग के जीवन में परिवर्तन की संभावनाओं का पता लगाना था। मध्यवर्ग अपने हितों को सर्वोपरि महत्व देता है। परन्तु इसमें एक ऐसी प्रेरणा शक्ति भी है जो उसे समायोजक परिवर्तन में हिस्सेदार बनाती है। इस वर्ग की नारियों की स्थिति सबसे अधिक दीनहीन है। उपन्यास में विधवा रतन मणिभूषण के आगे कितनी लाचार है, स्पष्ट है। निम्नवर्ग की नारियां मेहनतकश होती हैं, इसलिए वे इतनी लाचार नहीं होती हैं। देवीदीन की पत्नी सब्जी बेचती है, उसकी आवाज देवीहीन जितनी ही ऊँची है। कथाकार ने मध्यवर्गीय नारियों की विडम्बनापूर्ण स्थिति के संदर्भ में जालपा का एक नया उदाहरण रखा है और दिखाया है कि मध्यवर्ग में अनंत संभावनाएं हैं। जिस तरह जालपा ने अपने स्वत्व को पहचाना, रमानाथ का मध्यवर्गीय भटकाव दूर किया तथा राष्ट्रीय आंदोलन में हिस्सा लिया, विडंबनाओं और अंतर्विरोधों से घिरे मध्यवर्ग के दूसरे लोग भी अपना सही स्वत्व पहचान सकते हैं, भटकाव से मुक्त हो सकते हैं तथा राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन में अपने महान दायित्व का संपादन कर सकते हैं। सामाजिक जीवन और कथा–साहित्य के लिए यह एक नई दिशा की तरफ संकेत था।

इस प्रकार 'गबन' में प्रेमचंद का विचार प्रतिपादन अधिक व्यवस्थित, अधिक संयत और व्यंजनमय हो गया है। इसमें उन्होंने नारी की विवशता और मर्यादा तथा सीमाओं के साथ–साथ मध्यवर्ग की दशा को तोलकर रख दिया है।

अपनी प्रगति जांचिए

1. किस आलोचक ने 'गबन' को पुरुष–प्रधान समाज की ट्रेजडी कहा है?
   (क) डॉ. रामरतन भटनागर (ख) कन्हैयालाल सहल
   (ग) रामस्वरूप चतुर्वेदी (घ) मन्मथनाथ गुप्त
2. 'गबन' के लेखन में मुंशी प्रेमचन्द जी ने किस लेखन शैली को प्रमुखता दी है?
   (क) टीका–टिप्पणी या विश्लेषणात्मक (ख) वार्तालाप या नाटकीय
   (ग) शब्द–चित्र (घ) रेखा–चित्र

टिप्पणी

3.3 'आपका बंटी' का समीक्षात्मक अध्ययन

'आपका बंटी' के समीक्षात्मक विश्लेषण के पूर्व इसकी विषय–वस्तु से अवगत हो लेना समीचीन होगा।

3.3.1 'आपका बंटी' की विषयवस्तु

आपका बंटी एक लघु उपन्यास है जिसमें पारिवारिक विसंगति के शिकार पति–पत्नी के एक मात्र पुत्र बंटी को केन्द्र बनाकर उसके समूचे मानसिक संसार का मनोवैज्ञानिक और यथार्थवादी चित्रण किया गया है। 'आपका बंटी' उपन्यास में जो मनोवैज्ञानिक और सामाजिक तथ्य उभरकर सामने आये हैं, वे एक घर की पारिवारिक समस्या में सिमटकर भी आधुनिक जीवन की त्रासदी बन गये हैं। मन्नू भंडारी जी के शब्दों में– ''इन संबंधों के लिए सबसे कम जिम्मेदार और सब ओर से बेगुनाह बंटी ही इस ट्रेजेडी के त्रास को सबसे अधिक भोगता है। शकुन अजय के आपसी संबंधों में बंटी चाहे कितनी ही फालतू और अवांछनीय हो गया हो परंतु मेरी दृष्टि को सबसे अधिक उसी ने आकर्षित किया और अपने में बांधा। बंटी की यह यात्रा चाहे परिवार की एक संश्लिष्ट इकाई से टूटकर क्रमशः अकेले जड़हीन फालतू और अनचाहे होते जाने की रही हो लेकिन मेरे लिए यह यात्रा भावुकता, करुणा से गुजर कर, मानसिक यन्त्रणा और सामाजिक प्रश्नाकुलता की रही है।"

मन्नू भंडारी जी ने अपने इस उपन्यास में पारिवारिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक स्तर पर व्यक्ति के जीवन के विविध पहलुओं पर प्रकाश डाला है। आधुनिक युग के शिक्षित परिवारों की मनस्थिति उनके आचरण, पति–पत्नी के संबंधों में आयी दरार के कारण उनके बच्चों पर पड़ने वाले मानसिक त्रासदी को सूक्ष्म एवं बड़े मार्मिक ढंग से चित्रित किया है।

'आपका बंटी' उपन्यास में छह–सात साल के छोटे बच्चे बंटी को चित्रित किया गया है। वह शकुन और अजय की एक मात्र सन्तान है। विवाह के दस वर्ष बीत जाने के उपरांत भी उनका वैवाहिक जीवन आनन्दमयी नहीं है, वे अलग–अलग रहते हैं। पुत्र बंटी इन दोनों के बीच सेतु का कार्य करता है। बंटी अपनी मम्मी के साथ रहता है, और हमेशा मन ही मन अपने पापा को याद करते रहता है। अन्य बच्चों के समान उसे भी अपने मम्मी–पापा से गहरा लगाव है। वह चाहता है कि दोनों साथ–साथ रहें। शकुन का हर प्रयत्न अजय को नीचा दिखाने का है, वह विभागाध्यक्ष से प्रिंसिपल भी इसी उद्देश्य से बनती है। वह बंटी के माध्यम से अजय को तड़पाना चाहती है।

मन्नू भंडारी जी ने अधिकार भावना के थोपे अधिकारवाद में पीड़ित मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी नारी–पुरुषों के संबंधों के खोखलेपन को व्यक्त करने का प्रयास किया है। पति–पत्नी के भीतर ही चलने वाली एक अजीब सी अहंवाद की लड़ाई के कारण दोनों में संबंध विच्छेद हो जाता है। पुत्र बंटी की मानसिकता पर इसका गहरा प्रभाव पड़ता है। परिस्थितियों से विवश बंटी का व्यवहार विक्षिप्त सा हो जाता है। मम्मी–पापा के झगड़ों को लेकर जब उसके मित्र उसका मजाक उड़ाते हैं तो उसके मन में हीनभावना ग्रसित हो उठती है। उसे वे बच्चे अपने से अधिक भाग्यशाली लगने लगते हैं जो अपने माता–पिता के साथ रहते हैं। मित्र टीटू द्वारा पूछे जाने पर, ''क्यों रे बंटी तेरा मन नहीं होता कि पापा तेरे साथ रहें? जब यहां आते है तो तू कहता क्यों नहीं? पर अब वह

शायद साथ रह नहीं सकते, तेरे मम्मी पापा में तलाक जो हो गया है।'' बंटी यह सुन भीतर–भीतर अपने को अपमानित महसूस करता है और अपनी हीनभावना को दबाने के लिए हवा में ही बंदूक चलना शुरू कर देता है।

टिप्पणी

पुत्र बंटी जो अजय और शकुन के बीच सेतु था, तलाक हो जाने के बाद ऐसा भार हो गया है कि जिसे न शकुन उठाने के लिए तैयार है और न अजय। यह बालक बंटी की विकट ट्रेजडी है जो अनजाने ही अपने मम्मी–पापा के लिए ना चाहते हुए भी समस्या बन जाता है। पर इसमें बालक बंटी का क्या कसूर।

मीरा के साथ अजय की नयी जिन्दगी की शुरुआत को सुन शकुन की मानसिकता पर गहरा प्रभाव पड़ा है। उसे दुःख है कि वह उसे पराजित नहीं कर सकी। यहाँ संबंध विच्छेद की घटना मुख्य नहीं है बल्कि आधुनिक जीवन के अहम्वादी दृष्टिकोण की निरर्थकता का ही एक मनोवैज्ञानिक आयाम है। शकुन डॉक्टर जोशी से प्रेम संबंध, प्रेम की भावना से नहीं बल्कि इस भावना से आगे बढ़ाती है कि अजय नयी जिन्दगी शुरू कर सकता है तो वह क्यों नहीं कर सकती? शकुन द्वारा डॉ. जोशी से विवाह कर लेने पर बंटी के सारे स्वप्न बिखर जाते हैं और आँखों में आँसू बहने लगते हैं वह पापा के रूप में किसी अन्य व्यक्ति को स्वीकार नहीं कर पाता। परिस्थितियों के दबाव से बंटी भीतर ही भीतर बिखरता और टूटता चला जाता है। बंटी अनेक प्रकार की मानसिक यातनाओं के बीच परिवार नियोजन का बड़ा सा बोर्ड लगा हुआ कई बार देखता है और उसे लगता है वही वह तीसरा बच्चा है और इसीलिए फालतू है। वही स्कूल बस में जाता है, अमी और जोत गाड़ी में जाते है। मम्मी के बदले स्वभाव को देख उसे यह एहसास होने लगता है कि उसकी मम्मी अब उसकी ही नहीं। शकुन को बार–बार जस्टिफिकेशन की जरूरत पड़ने लगती है। बंटी, डॉ. जोशी के घर में आरामदायक महसूस नहीं कर पाता और घर के सभी सदस्यों से कट जाता है। शकुन अपने और डॉ. जोशी के बीच बंटी की दरार बना देख तथा पिता को लिखे उसके खतों को देख अजय के पास इसीलिए भेजने पर राजी हो जाती है कि वह कैसे आराम से रह सकता है। माँ बाप की लड़ाई में बंटी उपन्यास के अंत तक पिसता हुआ दिखाई देता है।

बंटी अपने पिता अजय के साथ कलकत्ता आ जाता है यहां पर भी उसे उन्हीं परिस्थितियों का सामना करना पड़ा है और वह अपने आपको अकेला महसूस करता है। मम्मी के रूप में किसी उच्च महिला को स्वीकार कर पाना उसके लिए संभव नहीं हो पाता। अजय द्वारा उसे होस्टल में छोड़ आने पर वह सिहर उठता है और पूरी तरह से बिखर जाता है। मन्नू भंडारी जी ने अपने इस उपन्यास 'आपका बंटी' में बंटी, शकुन और अजय तीनों की मानसिकता को चित्रित करते हुए बंटी के जीवन की अनिश्चितता और उसकी ट्रेजेडी के अहसास को बड़े मार्मिक ढंग से चित्रित किया है।

3.3.2 'आपका बंटी' की केन्द्रीय समस्या

'आपका बंटी' मन्नू भंडारी का एक ऐसा उपन्यास है, जिसकी कथा पूर्ण रूप से मौलिक एवं संगठित है। इसकी संपूर्ण कथा–वस्तु एक सूत्र में बंधी हुई है। इसमें आदि से अंत तक कुतुहल बना रहता है। इस उपन्यास का कथानक आधुनिक जीवन के अति यथार्थ को प्रस्तुत करता है। घटनाओं की अन्विति के कारण कहीं पर भी शिथिलता देखने को

टिप्पणी

नहीं मिलती। बंटी प्रस्तुत उपन्यास का प्राण तत्व है। वह प्रमुख पात्र होने के साथ ही उपन्यास की प्रमुख समस्या भी है, जो सामाजिक और मानसिक यन्त्रणाओं से भरे आज के इस समाज में अनेक टूटते परिवारों में विद्यमान है। संपूर्ण उपन्यास में मनोवैज्ञानिक चिन्तन एवं अन्तर्द्वन्द्व के चित्रण को ही दी गयी है। इसी कारण इसका कथा–साहित्य अधिक विस्तृत नहीं है।

बंटी का नाम अरुप बत्रा है, किन्तु पूरे उपन्यास में बंटी के नाम से ही वह व्याप्त है। नौ साल का बंटी चौथी कक्षा का छात्र है। बंटी के माता–पिता अर्थात् शकुन और अजय का प्रेम–विवाह हुआ था। किन्तु जीवन की नीरसता से खिन्न होकर दोनों अलग हो जाते हैं। बंटी अपनी माँ के साथ रहता है और अपनी माँ के प्रेम का एक मात्र अधिकारी है। शकुन घर में माँ है– त्याग, सेवा एवं स्नेह की देवी, किन्तु कॉलेज में प्रिंसिपल है– कर्तव्य एवं नौकरी के प्रति समर्पित निष्ठा की प्रतिमूर्ति। इसी कारण बंटी को अपनी माँ में सदैव दुहरा व्यक्तित्व आभासित होता है। वह सोचता है– "मम्मी के पास जरूर एक और चेहरा है। चेहरा ही नहीं आवाज भी कैसी सख्त होती जा रही है। बोलती है तो लगता है जैसे डाँट रही हो।"

बंटी के पापा अजय कभी–कभी चार–छह महीने में कलकत्ता से उसे मिलने आते हैं तो सरकिट हाउस में ठहरते हैं और वहीं उसको मिलने के लिए बुलाते हैं। बंटी सारा दिन अपने पापा के पास रहता है, यत्र–तत्र घूमने जाता है, तरह–तरह के खिलौने खरीदकर और अपनी पसंद के व्यंजन खाकर रात में माँ के पास लौट आता है। शकुन बंटी से सारे दिन में पापा से हुई संपूर्ण बातों का ब्योरा बुनकर अपने नीरस और अभावग्रस्त जीवन के तनावों से मुक्ति के समाधान खोजने का प्रयत्न करती है। शकुन और अजय की तलाक से संबद्ध कार्यवाही के संपादन में अजय के समीपस्थ एवं कलकत्ता में ही वकालत कर रहे वकील चाचा मध्यस्थता कर रहे हैं। वकील चाचा जब भी कलकत्ता से आते हैं तब बंटी के लिए अजय द्वारा भेजे गये विभिन्न प्रकार के खिलौने आदि लाते हैं। अतः बंटी के वकील चाचा शकुन को परामर्श देते हैं कि बंटी के व्यक्तित्व समुचित विकास के लिए उसे होस्टल में रखे अन्यथा उसे सदैव छाती से चिपकाये रखने का दुष्परिणाम यह होगा कि लड़कियों जैसी आदतों के साथ बड़ा होता हुआ बंटी भविष्य में आत्मनिर्भर नहीं बनेगा।

शकुन के घर की व्यवस्था उसकी सेविका फूफी संभालती है। फूफी बंटी से बहुत प्रेम करती है। बंटी की प्रत्येक सुख–सुविधा का ध्यान भी वही रखती है। बंटी फूफी से कहानियां सुनता है और फिर काल्पनिक लोक में विचरण करता है।

अजय से वैवाहिक बंधन से मुक्त हो जाने के बाद शकुन का परिचय डॉ. जोशी से होता है। एक बार बंटी के अत्यंत अस्वस्थ हो जाने पर डॉ. जोशी द्वारा बंटी की चिकित्सा इतनी अच्छी तरह की गई कि शकुन उसकी तरफ आकर्षित हो गई। डॉ. जोशी नगर के शीर्षस्थ डॉक्टर हैं और विधुर है। उनके दो बच्चे भी हैं। डॉ. जोशी के प्रस्ताव को स्वीकार कर शकुन उनके साथ शादी के बंधन में बंध जाती है। विवाहोपरान्त शकुन कॉलेज का आवास छोड़कर डॉ. जोशी के घर रहने जाती है। वहीं से बंटी के आत्मसंघर्ष का प्रारंभ होता है। बंटी ने अपने पुराने घर में जो वाटिका बनाई थी वह छूट जाती है। फूफी भी हरिद्वार चली जाती है। डॉ. जोशी के घर में शकुन और बंटी का भव्य स्वागत होता है, फिर भी बंटी स्वयं को उपेक्षित महसूस करता है। इस घर में बंटी

टिप्पणी

का समय काटे नहीं कटता। डॉ. जोशी के बच्चों में जोत बंटी को अच्छी लगती है, किन्तु अभी उसे जरा भी पसंद नहीं। वह बहुत शैतान है। कई बार उसकी बंटी से मारपीट हुई। जोत, अभी और मम्मी कॉर्ट से स्कूल जाते हैं, किंतु बंटी बस से ही आता जाता है। बंटी का एकाकीपन इतना बढ़ जाता है कि उसने अपने पापा को कई अधूरे खत लिख डाले। बंटी का जीवन धीरे–धीरे कुण्ठाग्रस्त होने के कारण उसका स्वभाव भी चिड़चिड़ा होने लगता है।

परिणामस्वरूप आए दिन कोई न कोई समस्या उत्पन्न होती रहती है। डॉ. जोशी उसे सहज बनाने हेतु लॉन्ग ड्राइव पर ले जाने का प्रॉमिस करते हैं किंतु समय पर आ नहीं सकते अतः बंटी अन्यमनस्क हो जाता है। अब स्कूल की पढ़ाई में बंटी का मन नहीं लगता, गणित, इतिहास, भूगोल सब कुछ मिलकर जैसे गड्ड–मड्ड हो गया है। उसने गुस्से में आकर रंग की शीशियां भी तोड़ डाली हैं, अतः ड्राइंग भी नहीं बना पाता। बंटी महसूस करता है कि अब तो उसकी मम्मी पर से भी उसका अधिकार जाता रहा, क्योंकि वह डॉ. जोशी के साथ ही अधिक रहती है। बंटी को डॉ. जोशी उसके और मम्मी के प्रेम के बीच बाधक लगते हैं। अतः न तो वह उन्हें पापा के रूप में स्वीकार करता है। न ही महत्व दे पाता है।

आखिरकार बंटी अपने पापा अजय के पास कलकत्ता जाने की जिद करता है और शकुन भी समझती है कि इतने तनाव में रहने से अच्छा है कि बंटी उसके पापा के साथ ही रहे। अजय बंटी को लेने आता है। बंटी अपनी माँ को अत्यंत चाहता है, किन्तु वह चाहता है कि उसकी माँ उसे मनुहार करें, रोक लें, किन्तु ऐसा नहीं होता। अपने इस मान के कारण ही मम्मी द्वारा दिये गये उपहारों और खिलौनों को वह नहीं ले जाता, माँ को पत्र लिखने से भी मना कर देता है।

कलकत्ता पहुंचने पर बंटी का परिचय अजय की पत्नी, अपनी नयी माँ व उसके शिशु, चिनु से होता है। कलकत्ता में स्कूल की प्रवेश परीक्षा में अनुत्तीर्ण हो जाने पर उसके पापा उसे अन्यत्र स्कूल में प्रवेश दिलाकर होस्टल में रखने का निर्णय लेते है। बंटी को न चाहते हुए भी पापा की इस इच्छा के समक्ष समर्पण करना पड़ता है। सम्पूर्ण उपन्यास की कथा–वस्तु का सृजन बंटी को केंद्र में रखकर किया गया है। समग्र कथानक का प्रधान कर्ता एवं भोक्ता बंटी ही है। बंटी मात्र 9 वर्ष का बालक है। बाल मनोविज्ञान के आधार पर ही लेखिका बंटी पर काफी चिन्तनशील है। उपन्यास के समग्र कथा तन्तुओं का विकास बंटी के इर्द–गिर्द ही होता है। विदुषी लेखिका ने बंटी के चरित्र का विकास आत्मचिन्तन जनित विचारों के आलोक में ही कराया है। बंटी के चरित्र का सूक्ष्मातिसूक्ष्म अध्ययन किया गया है। मम्मी–पापा के बीच होने जा रहे तलाक से उत्पन्न तनावों के विषय में वह कुछ नहीं जानता। मम्मी का सहज प्रेम उसे प्राप्त है। उसकी माँ उसे ऐसे राजकुमारों की कहानियां सुनाती है जो अपनी माँ से बहुत प्रेम करते हैं। और वह भी अपनी माँ से कहता है– "धत्! मम्मी को कभी नहीं छोडूगा।"

बंटी जब पापा से मिलने जाता है तो मन ही मन अपनी पसंद की चीजों की सूची तैयार करता है। उसे अपने मित्र टीटू से यह सूचना प्राप्त होती है कि उसके मम्मी और पापा के बीच तलाक होने जा रहा है। तलाक का अर्थ लड़ाई होता है यह बात उसे टीटू से ही पता चलती है। बंटी का बालमन मम्मी और पापा के बीच दोस्ती करा देने की कल्पना करता है। अजय उसे कलकत्ता चलने के लिए कहता है तब वह भी कहता

टिप्पणी

है– "मम्मी चलेगी तो चलूंगा।" बंटी जब सरकिट हाउस से लौटता है तब भी मम्मी को रोया हुआ समझकर उसके मन में अपराध भावना उत्पन्न होती है।

बंटी को माता–पिता दोनों का प्रेम तो मिलता है पर दोनों साथ नहीं रह रहे इसलिए बंटी का जीवन एकाकी है। बंटी के शौक हैं– ताश खेलना, लूडो और कैरम खेलना, पेन्टिंग करना आदि। उसके पापा उसे लड़कियों के खेल कहते हैं। और उसे क्रिकेट, हॉकी, कबड्डी आदि खेलने हेतु व पेड़ पर चढ़ने, तैरने एवं साइकिल चलाने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। एकाकी जीवन जीने के कारण बंटी में बालसुलभ भय व असुरक्षा की भावना पनप रही है। फूफी तथा मम्मी से स्वप्नलोक की कहानियां सुनने के कारण वह कल्पनालोक में विचरण करता रहता है।

अपनी उम्र से बंटी कुछ आगे है। पापा–मम्मी के तलाक ने उसे समय से पहले ही समझदार बना दिया है। वह ऐसा कोई काम करना नहीं चाहता जिससे मम्मी को दुख पहुंचे, इसी कारण वह दीवार पर लगी हुई पापा की एक मात्र तस्वीर को भी उतार कर अलमारी में बंद कर देता है। और यह जताता है कि पापा को याद करना भी अब उसे अच्छा नहीं लगता।

बंटी अपनी मम्मी से इतना जुड़ा हुआ है कि वह पापा को भूलने के लिए तो तैयार है किन्तु कोई और व्यक्ति उसके पापा बनकर आए यह उसे स्वीकार नहीं है। इसी कारण मम्मी के जीवन में डॉ. जोशी के प्रवेश को स्वीकार नहीं कर पाता। डॉ. जोशी उसे बाधक के रूप में ही नजर आते हैं। सारे उपन्यास में बंटी के मन में जोत के प्रति स्थित प्रेम का स्फुरण लक्षित होता है। मम्मी के प्रेम पर बंटी अपना संपूर्ण अधिकार चाहता है। अभी के प्रति मम्मी का प्रेम प्रदर्शन बंटी को मन में ईर्ष्या एवं प्रतिहिंसा के भाव को जन्म देता है।

आधुनिक अभिजात्य समाज में अतियथार्थ की विरुपता के कारण तलाक जैसी मजबूरियां सामने आती है। ऐसे समय में बच्चों की स्थिति बड़ी दयनीय एवं डांवाडोल हो जाती है। कभी–कभी उनका संपूर्ण भविष्य ही दांव पर लग जाता है। बंटी ऐसे बच्चों का प्रतिनिधित्व करता है, जिनकी स्थिति तलाक के उपरांत अपना नया विवाहित जीवन प्रारंभ करते हुए माता–पिता के मध्य त्रिशंकु जैसी हो जाती है। प्रायः ऐसे बच्चों का जीवन निरर्थक हो जाता है। समग्र उपन्यास में बंटी का अर्न्तद्वन्द्व एवं वैचारिक संघर्ष आदि का यथार्थ चित्रण पाठक को सोचने के लिए विवश कर देता है।

सम्पूर्ण उपन्यास में बाल मनोविज्ञान का चित्रण इतना सहज रूप से हुआ है कि कहीं पर भी आरोपित सा नहीं लगता। अति यथार्थपरक मानवीय रिश्तों और सामाजिक उलझनों के बीच उलझे मानस का चित्रांकन ही लेखिका का अभिप्रेत है। मन्नू जी की सबसे बड़ी उपलब्धि यही है कि वे बालमनोविज्ञान की पारखी हैं।

अपनी उम्र से आगे सोचने वाला बंटी, फूफी को विज्ञान की बातें समझाने वाला बंटी स्कूल की प्रवेश परीक्षा में उत्तीर्ण नहीं हो पाता है। माता–पिता के अलगाव के परिणामस्वरूप मानसिक तनाव से एक स्वस्थ बच्चे की हालत कैसी हो जाती है इसका यथार्थ चित्रण बंटी के चरित्र में पाया जाता है। इस उपन्यास की विषयवस्तु का सृजन करते समय लेखिका ने अपने विलक्षण ज्ञान एवं बाल मनोविज्ञान की सफल ज्ञाता होने का परिचय दिया है। बच्चों में हीनता की वृत्ति का जन्म, असंतोषी एवं विद्रोही बनकर

टूटते–बिखरते परिवार से अलग हो जाना आदि प्रश्नों को मन्नू जी ने गहन चिन्तन के साथ प्रस्तुत किया है।

3.3.3 औपन्यासिक तत्वों के आधार पर 'आपका बंटी' की समीक्षा

टिप्पणी

साहित्य की वर्तमान विधाओं में उपन्यास ही एक ऐसी विधा है जो आधुनिक जीवन की समस्याओं, संघर्षों एवं वस्तु स्थितियों की धड़कनों से सबसे अधिक स्पंदित हुई है। वस्तुतः अन्य विधाओं की अपेक्षा उपन्यास पर ही युग–वास्तव के अंकन का दायित्व आ पड़ा है। मन्नू भंडारी कृत 'आपका बंटी' इस दृष्टि से बहुचर्चित उपन्यास है। इस उपन्यास के कथा–विश्व से गुजरते हुए दो तरह की संवेदनाओं का आभास होता है, जिसमें से एक का संबंध शकुन जैसी सुशिक्षित एवं आधुनिक नारी के प्रचण्ड अहं से आक्रान्त व्यक्तित्व से है और दूसरी का संबंध तलाकशुदा माता–पिता की संतान बंटी की जटिल से जटिलतर होती जा रही मानसिकता से है। इन दोनों ही चरित्रों के मनोकारों का चित्रण कथा–लेखिका ने बड़ी सूझ–बूझ और सहजता से किया है। उपन्यास कला की दृष्टि से इस उपन्यास में अग्रलिखित विशेषताएं हैं–

1. **कथानक**– कथानक या कथावस्तु उपन्यास का मेरुदण्ड है। विभिन्न महत्वपूर्ण घटनाओं का क्रमबद्ध कलात्मक व किसी निश्चित उद्देश्य की पूर्ति हेतु किया गया 'संयोजन' कथानक कहलाता है। प्रत्येक उपन्यास की कथा ठोस एवं शृंखलाबद्ध होनी चाहिए।

'आपका बंटी' उपन्यास में सबसे पहले बंटी की मम्मी शकुन की कथा एक आधुनिक नारी के जीवन संघर्ष एवं मनोद्वंद्व की कथा के रूप में आती है। शकुन की जीवन–यात्रा के एक छोर पर अजय और दूसरे छोर पर डॉ. जोशी हैं। आधुनिकता का अभिशाप शकुन को दुहरे स्तर पर दुहरे व्यक्तित्व के साथ जीने को बाध्य करता है। बंटी को अपने मानस पटल पर मम्मी के दो अलग–अलग व्यक्तित्व साफ–साफ दिखाई देते हैं। वह अनुभव करता है कि 'घरवाली मम्मी' और 'प्रिंसिपल वाली मम्मी' दो अलग–अलग चेहरे हैं, दो अलग–अलग व्यक्तित्व हैं। घरवाली मम्मी उसे अच्छी लगती हैं, क्योंकि वह सुंदर, कोमल और स्नेहमयी हैं, जबकि प्रिंसिपल वाली मम्मी उसे बिलकुल भी नहीं सुहाती, क्योंकि वह सख्त एवं कठोर है। बंटी को लगता है कि ड्रेसिंग टेबल की रंग–बिरंगी शीशियाँ उसका बाह्य रूप ही नहीं अपितु अंतरंग भी बदल देती हैं। अपने पद या पोजिशन तथा 'स्व–सम्मान' के प्रति अतिरिक्त सजगता ऐसा अभीष्ट है जो व्यक्ति के अहं का जितना पोषण करता है उतना दूसरों का सम्मान करने या शह पाने का भाव परिपुष्ट नहीं करता।

एक लंबे समय तक दाम्पत्य जीवन जीने के बाद भी शकुन और अजय के बीच समझौता नहीं हो पाया। इसका कारण था दोनों का प्रचंड अहं। दोनों में समझौते का प्रयत्न भी होता है तो दोनों के बीच समझदारी पैदा करने के लिए नहीं होता, अपितु, एक दूसरे को नीचा दिखाने या पराजित करने की भावना से होता है। शकुन के प्रिंसिपल बनने के पीछे भी अजय को नीचा दिखाने की कुत्सित भावना ही काम कर रही थी। वैवाहिक जीवन के सात वर्षों में शकुन ने जो कुछ भी किया, अजय को झुकाने के लिए ही किया। बंटी पर अपना अधिकार जताने और उसे प्यार करने के तौर–तरीके भी मानो अजय को पीड़ा पहुंचाने के साधन हैं।

टिप्पणी

उधर डॉ. जोशी से विवाह करने का मुख्य कारण अजय को नीचा दिखाना था। और दूसरा आकर्षण दैहिक था। शकुन यह अनुभव करती है कि 36 वर्ष पार करने पर भी उसके मन में यौवन वाली उमंगें हैं। एकांत में डॉक्टर का साथ पाते ही उसकी इच्छाएँ जाग उठती हैं। लेकिन सबसे बड़ी बात यह थी कि डॉ. जोशी या किसी अन्य का चुनाव अपने लिए नहीं अपितु अजय को नीचा दिखाने के लिए ही करना है। इस प्रकार शकुन का अहं और दूसरों को झुकाने की भावना उसकी सबसे बड़ी विडम्बना है।

अजय से तलाक हो जाने के बाद शकुन और अधिक अकेली हो जाती है। तलाक किसी भी स्त्री के लिए कितना पीड़ादायक होता है, इसका प्रत्यक्ष अनुभव शकुन को भीतर तक हिलाकर रख देता है। लगभग सात वर्षों तक भोगी हुई अकेलेपन की पीड़ा, दुनियादारी की समझ, बंटी को अपने से मुक्त करने की आकांक्षा आदि चीजों के साथ तलाक की यातना का जुड़ जाना शकुन को भीतर तक झकझोर देता है और इसी के परिणामस्वरूप उसके अहं का अस्वस्थ रूप द्रवित होने लगता है। तब उसे एक नया अनुभव होता है कि– "छोटा होकर जीना उसके अहं को बर्दाश्त नहीं और बड़ा होकर जीने लायक उसके पास कोई पूंजी नहीं।"

स्पष्टतः अपने अहं के कारण शकुन अजय में जो न पा सकी उससे मुक्त हो वह डॉ. जोशी में पा लेती है। 'स्वस्थ जीवन' का यह सार्थक सत्य शकुन के जीवन–अनुभवों से मथकर निकला है। लेखिका ने बड़े विश्वसनीय और प्रभावी ढंग से शकुन में आए इस सहज बदलाव को रेखांकित किया है। डॉ. जोशी के साथ जीवन का एक नया अनुभव शकुन को यह सोचने को प्रेरित करता है कि– "औरत कहीं की कहीं पहुंच जाए फिर भी पुरुष का साथ उसके लिए कितना जरूरी है। पर साथ हो सही अर्थों में।"

यह शकुन के चरित्र में एक विश्वसनीय गतिशीलता है। कथानक में यह प्रक्रिया सहज रूप से निरूपित है, आरोपित नहीं।

कथानक का दूसरा बिन्दु है बंटी, जिसके माध्यम से दाम्पत्य संबंधों की विफलता का, भोग बने एक बेकसूर बालक की जटिल मानसिकता का यथार्थ चित्रण इस उपन्यास में हुआ है। उपन्यास में बंटी सिर्फ एक चरित्र ही नहीं, एक समस्या है। एक अर्थ में वह जन्मजात समस्या बालक है। उसकी जन्मजात मनोविकृति को माता–पिता के तनावपूर्ण रिश्तों ने और अधिक उलझा दिया है। माता–पिता का स्वभाव और संस्कार बच्चे में किस तरह सहज ही उतर जाते हैं, इसका जीता–जागता उदाहरण है बंटी। निश्चय ही बंटी में अजय और शकुन का प्रचण्ड 'अहं' एवं 'एकाधिकार भाव' ही संक्रान्त हुआ है।

एकाकीपन बंटी की दूसरी महत्वपूर्ण विडंबना है। उसका कोई दूसरा भाई या बहन नहीं है। पापा साथ नहीं रहते हैं। एक मात्र मम्मी पर निर्भर बंटी अपनी मम्मी के हर क्रियाकलाप को बारीकी से देखता समझता है।

धीरे–धीरे बंटी एक मनोवैज्ञानिक केस बन जाता है। मम्मी–पापा का तलाक हो जाने के बाद वह अधिक संवेदनशील हो जाता है। उसका व्यथित मन विद्रोह के लिए बेचैन हो उठता है। वह पापा के साथ नहीं जाना चाहता, परंतु बेमन से भेज दिया जाता है। वह एडजस्ट नहीं हो पाता और होस्टल भेज दिया जाता है। बंटी रूपी इस मनोवैज्ञानिक समस्या का कोई हल है भी या नहीं। इस प्रश्न को अनुत्तरित छोड़कर

टिप्पणी

लेखिका ने अपनी गहरी कला दृष्टि का परिचय दिया है। उपन्यास का अंत पाठक को सोचने के लिए विवश कर देता है।

2. **पात्र, चरित्र–चित्रण**– जिन व्यक्तियों के जीवन की घटना को लेकर उपन्यास में कथा का आयोजन किया जाता है वे पात्र कहलाते हैं। जैसे 'आपका बंटी' में बंटी, शकुन, अजय और डॉ. जोशी। इनके आधार पर 'आपका बंटी' उपन्यास की विषय वस्तु का विकास किया गया। अतः बंटी इस उपन्यास का एक प्रमुख पात्र है। सामान्यतः उपन्यास में एक–दो मुख्य पात्र होते हैं। अन्य महत्वपूर्ण पात्र, मुख्य पात्र के चरित्र को सशक्त बनाने के लिए रचे जाते हैं। मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में चरित्र के विकास का अवसर अधिक होता है क्योंकि इसमें चरित्र या पात्र ही उपन्यास का विषय होता है।

बंटी प्रस्तुत उपन्यास का मुख्य पात्र एवं प्राण तत्व है। वह प्रमुख पात्र होने के साथ ही साथ उपन्यास की प्रमुख समस्या भी है। जो सामाजिक और मानसिक यंत्रणाओं से भरे आज के इस समाज में अनेक टूटते परिवारों में विद्यमान है। संपूर्ण उपन्यास में मनोवैज्ञानिक चिंतन एवं अंतर्द्वन्द्व के चित्रण को महत्व दिया गया है।

बंटी नौ साल का चौथी कक्षा का छात्र है। बंटी के माता–पिता अर्थात शकुन और अजय का प्रेम–विवाह हुआ था किन्तु जीवन की नीरसता से खिन्न होकर दोनों अलग हो जाते हैं। बंटी अपनी माँ के साथ रहता है और अपनी माँ के प्रेम का एकमात्र अधिकारी है। शकुन घर में माँ है– त्याग, सेवा एवं स्नेह की देवी, किन्तु कॉलेज में प्रिंसिपल है– कर्तव्य एवं नौकरी के प्रति समर्पित निष्ठा की प्रतिमूर्ति। इसी कारण बंटी को अपनी माँ में सदैव दुहरा व्यक्तित्व आभासित होता है। वह सोचता है– "मम्मी के पास जरूर एक और चेहरा है। चेहरा ही नहीं आवाज भी कैसी सख्त होती जा रही है। बोलती है तो लगता है जैसे डाँट रही हो।"

प्रस्तुत उपन्यास में समग्र कथानक का प्रधान कर्ता और भोक्ता बंटी ही है। बाल मनोविज्ञान के आधार पर लेखिका ने बंटी के सारे कार्यकलापों का बखूबी चित्रण किया है। अपनी उम्र के हिसाब से बंटी काफी चिंतनशील है। लेखिका ने बंटी के चरित्र का विकास आत्मचिंतन जनित विचारों के आलोक में ही कराया है। मम्मी–पापा के बीच होने जा रहे तलाक से उत्पन्न तनावों के विषय में वह कुछ नहीं जानता। मम्मी का सहज प्रेम उसे प्राप्त है। उसकी माँ उसे ऐसे राजकुमारों की कहानियां सुनाती है जो अपनी माँ से बहुत प्रेम करते हैं। और वह भी अपनी माँ से कहता है– "धत्! मम्मी को कभी नहीं छोडूँगा।"

बंटी जब पापा से मिलने जाता है तो मन ही मन अपनी पसंद की चीजों की सूची बना लेता है। उसे अपने मित्र टीटू से यह सूचना प्राप्त होती है कि उसके मम्मी और पापा के बीच तलाक होने जा रहा है। तलाक का अर्थ लड़ाई होता है यह बात उसे टीटू से ही पता चलती है। बंटी का बालमन मम्मी और पापा के बीच दोस्ती करा देने की कल्पना करता है। अजय उसे कलकत्ता चलने के लिए कहता है तब वह भी कहता है– "मम्मी चलेगी तो चलूँगा।"

बंटी को माता–पिता दोनों का प्रेम तो मिलता है पर दोनों साथ नहीं रह रहे। इसलिए बंटी का जीवन एकाकी है। बंटी के शौक हैं– ताश खेलना, लूडो और कैरम

टिप्पणी

खेलना, पेन्टिंग करना आदि। उसके पापा इन्हें लड़कियों का खेल कहते हैं और उसे क्रिकेट, हॉकी, कबड्डी आदि खेलने हेतु व पेड़ पर चढ़ने, तैरने एवं साइकिल चलाने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। एकाकी जीवन जीने के कारण बंटी में बालसुलभ भय व असुरक्षा की भावना पनप रही है। अपनी फूफी व मम्मी से स्वप्न लोक की कहानियां सुनने के कारण वह स्वप्नलोक में विचरण करता रहता है।

बंटी अपनी उम्र से कुछ आगे है। मम्मी–पापा के तलाक ने उसे समय से पहले ही समझदार बना दिया है। वह ऐसा कोई काम नहीं करना चाहता, जिससे मम्मी को दुख पहुंचे। इसी कारण वह दीवार पर लगी हुई पापा की एकमात्र तस्वीर को भी उतारकर अलमारी में बंद कर देता है और यह जताता है कि पापा को याद करना भी अब उसे अच्छा नहीं लगता।

बंटी अपनी मम्मी से इतना जुड़ा हुआ है कि वह पापा को भूलने के लिए तो तैयार है किन्तु कोई अन्य व्यक्ति उसके पापा बनकर आए यह उसे स्वीकार नहीं है। इसी कारण मम्मी के जीवन में डॉ. जोशी के प्रवेश को वह स्वीकार नहीं कर पाता। डॉ. जोशी उसे बाधक के रूप में ही नजर आते हैं।

आज के अभिजात्य समाज में अति यथार्थ की विरूपता के कारण तलाक जैसी मजबूरियां सामने आती हैं। ऐसे समय में बच्चों की स्थिति बड़ी दयनीय एवं डांवाडोल हो जाती है। कभी–कभी उनका संपूर्ण भविष्य ही दाँव पर लग जाता है। बंटी ऐसे बच्चों का प्रतिनिधित्व करता है जिनकी स्थिति तलाक के बाद अपना नया विवाहित जीवन प्रारंभ करते हुए माता–पिता के बीच त्रिशंकु जैसी हो जाती है। प्रायः ऐसे बच्चों का जीवन निरर्थक हो जाता है। पूरे उपन्यास में बंटी का अंतर्द्वन्द्व एवं वैचारिक संघर्ष आदि का यथार्थ चित्रण पाठक को सोचने के लिए विवश कर देता है। माता–पिता के अलगाव के कारण मानसिक तनाव से एक स्वस्थ बच्चे की हालत कैसी हो जाती है, इसका यथार्थ चित्रण बंटी के चरित्र में पाया जाता है।

प्रस्तुत उपन्यास में कथा का केंद्र बिंदु बंटी है। अन्य पात्र अजय कुछ प्रत्यक्ष और कुछ परोक्ष इतना भर है कि समस्याओं के लिए दोषी ठहराने के लिए जितनी उसकी आवश्यकता होती है। डॉ. जोशी उससे कुछ अधिक और अत्यंत संतुलित समझदार इंसान के रूप में सामने आते हैं क्योंकि वे शकुन और उसके चारों ओर की असंतुलित जिंदगी को भरसक ठहराव देते हैं।

शकुन का आत्मछल तब भंग होता है जब तलाक की रस्म अदायगी के रूप में वह अन्ततः अजय के हाथ पराजित होती है। यहीं से एक दूसरा दौर शुरू होता है। उसका आहत अहंकार फिर अजय को नीचा दिखाने के लिए सन्नद्ध होता है।

शकुन पर आत्मछल का सिलसिला चलता रहता है। वह अपनी सुख–सुविधा के लिए एक नई जिंदगी की शुरुआत करती है तो फिर एक बार अपने आपको धोखा देती है– "धीरे–धीरे वह आश्वस्त होने लगी थी कि उसने केवल अपने लिए नहीं, बंटी के लिए भी एक सही जिंदगी की शुरुआत कर दी है। अब बंटी को हर जगह और हर बात में पापा की कमी नहीं अखरेगी। व्यक्ति चाहे बदल जाए पर उस स्थान की पूर्ति तो हो ही जाएगी। अब वह उतना अकेला नहीं रहेगा।"

टिप्पणी

व्यक्ति में जब सत्य का सामना करने का साहस नहीं होता तो वह उसकी अपने अनुकूल व्याख्या कर लेता है। परंतु इस प्रक्रिया में कहीं एक गहरा अपराध बोध मन में बैठ जाता है। इसका अहसास रह–रह कर शकुन को होता है।

उपन्यास की जो विशेषता उसे अधिक महत्वपूर्ण और सार्थक बनाती है, वह भावोद्वेलन नहीं अपितु शकुन की जटिल चरित्र–सृष्टि है जिसके कारण इसकी वस्तु के ट्रीटमेंट में व्यंजना की कला का अत्यंत प्रौढ़ रूप मिलता है।

3. **देशकाल–वातावरण**– देशकाल, वातावरण अथवा परिवेश के अंतर्गत समय और स्थान आता है। इसका अभिप्राय है जहां कहानी की घटना घटित हुई है। उपन्यास के लिए यह आवश्यक है कि वह देशकाल या यथार्थ रूप प्रस्तुत करे।

साहित्यिक विधाओं में उपन्यास एक यथार्थ धर्मी विधा है। अतः मानव–जीवन एवं समाज के प्रश्नों से उसका साक्षात्कार होना स्वाभाविक ही कहा जाएगा।

स्वातन्त्र्योतर परिवेश के संदर्भ और संबंध परिवर्तित हो गए। नारी की नैतिकता से संबद्ध अवधारणाओं को तिलांजलि देकर काम को देह धर्म किया, नैसर्गिक प्रक्रिया स्वीकार कर आधुनिक बोध से संपन्न वैचारिकता का समर्थन किया। समाज की थोथी अर्गलाएँ, आरोपित मान्यताएँ हिल उठीं और नारी ने आत्मनिर्भर होकर अपनी जागरूकता का परिचय दिया। मन्नू भंडारी इनमें प्रमुख हैं।

तलाक की समस्या आज के युग की प्रमुख समस्या बन गई है। प्राचीन काल में नारियों को विशेष स्थिति में पुनर्विवाह की अनुमति दी जाती थी। पति के मृत होने या गायब होने पर, प्रवज्या ग्रहण करने पर या व्यभिचार करने पर नारी को अन्य पति करने का हक था। आज नारी शिक्षित हुई है। इससे अनेक समस्याएं पैदा होने की बात नजर आई है। पहले नारी कम शिक्षित होने के कारण किसी भी तरह विवाह की नैया पार करती थी, लेकिन अब शिक्षा के कारण उसके अंदर भी स्वाभिमान और अहं जाग्रत होने लगा। एक समय समझौता करने वाली नारी अब शिक्षित होने के कारण ऐसे समझौते नहीं कर पाती। फलतः तलाक के किस्से आजकल बढ़ने लगे हैं। मन्नू भंडारी का उपन्यास 'आपका बंटी' इसका श्रेष्ठ उदाहरण है।

अजय और शकुन बंटी के तत्काल संदर्भ हैं। यह संदर्भ अजय और शकुन के वैवाहिक संबंधों और उनकी परिणति के रूप में सामने आता है। अजय और शकुन के संबंधों की टकराहट में सबसे अधिक पिसता बंटी ही है। शकुन और अजय तो आपसी तनाव की असहनीयता से मुक्त होने के लिए एक दूसरे से मुक्त हो जाते हैं लेकिन बंटी क्या करे? वह तो समान रूप से दोनों से जुड़ा है। यानी कि खण्डित निष्ठा उसकी नियति है। चूंकि वह शकुन के साथ रहता है, इसलिए बंटी को समूची स्थिति के साथ समझने के लिए माँ–बेटे के आपसी संबंधों के विश्लेषण के साथ कुछ गरिमामयी मिथ्या धारणाएं एवं सदियों पुरानी 'मिथ' टूटने लगी। शकुन चक्की पीस–पीस कर बेटे का जीवन बनाने में अपने आपको स्वाहा कर देने वाली माँ नहीं थी, बल्कि स्वतंत्र व्यक्तित्व, आकांक्षाएँ और आजीविका के साधनों से संपन्न व तृप्त माँ थी। इस नारी और माँ के आपसी द्वन्द्व का अध्ययन ही शकुन को उसका वर्तमान रूप देता है। उपन्यास में शकुन के जीवन की दो नितांत विरोधी स्थितियों, मिथ और वास्तविकता के अंतर्विरोध को उजागर करती है।

बंटी की यह यात्रा चाहे परिवार की संश्लिष्ट इकाई से टूटकर अकेले, जड़हीन, फालतू और अनचाहे होते जाने की रही हो, लेकिन लेखिका के लिए यह यात्रा भावुकता, करुणा से गुजरकर मानसिक यंत्रणा और सामाजिक प्रश्नाकुलता की रही है।

टिप्पणी

4. **संवाद या कथोपकथन**– उपन्यास के पात्र आपस में जो वार्तालाप करते हैं, उन्हें संवाद कहा जाता है। संवादों से उपन्यास की कथा आगे बढ़ती है तथा पात्रों के चरित्र पर प्रकाश पड़ता है। वार्तालाप या कथोपकथन के द्वारा पात्रों के विचार जाने जा सकते हैं। उपन्यास में पात्रों के अनुकूल संवादों का होना आवश्यक है, अन्यथा कथा में अस्वाभाविकता आ जाएगी।

'आपका बंटी' में बंटी नौ साल का बालक है। उसके संवाद उसके बालपन को व्यक्त करते हैं–

"फूफी, वह कहानी सुनाओ तो सोनल रानी की, जो सचमुच में डायन थी और रानी बनकर रहती थी।"

"नहीं, मैं अभी सुनूंगा। कोई काम–धाम नहीं" फिर आंखों में जाने कितना कौतूहल भरकर पूछा, "अच्छा फूफी, वह डायन से रानी से कैसे बन जाती थी? उसके पास जादू था?" "और क्या तो? डायन थी, सारे जादू बस में कर रखे थे। बस जो चाहती बन जाती। मन होता वैसा भेस धर लेती।"

"क्यों फूफी, आदमी भी चाहे तो ऐसा कर सकता है?"

"कइसे कर लेगा आदमी? आदमी के बस में क्या जादू होता है?"

"तुमने डायन देखी है फूफी? कैसी होती होगी? जब आदमी के भेष में होती होगी तब तो कोई पहचान भी नहीं सकता होगा।" बंटी की आंखों में जाने कैसे–कैसे चित्र तैरने लगे। इस प्रकार बाल सुलभ संवाद बंटी के चरित्र को दर्शाते हैं।

बंटी अपने मम्मी–पापा की लड़ाई खत्म कराना चाहता है और उसके लिए वह ध्रुव के द्वारा दी गई तपस्या का सहारा लेना चाहता है। वह कहता है– "मम्मी, तपस्या करके मम्मी–पापा की कुट्टी नहीं खत्म की जा सकती?"

"तू पापा के साथ रहना चाहता है?"

"नहीं मम्मी, मैं पापा के साथ नहीं रहना चाहता। मैं तो..." बंटी ने इस तरह कहा जैसे मम्मी उसे कहीं गलत न समझ ले।

"क्यों बेटा, तुझे पापा चाहिए? मन करता है कि पापा हो।"

उसने धीरे से 'हाँ' कह दिया।

इस प्रकार संपूर्ण उपन्यास में बाल मनोविज्ञान का चित्रण इतना सहज रूप में हुआ है कि कहीं पर भी आरोपित–सा नहीं लगता। अति यथार्थपरक मानवीय रिश्तों और सामाजिक उलझनों के बीच उलझे मानस का चित्रांकन ही लेखिका का अभिप्रेत है। प्रस्तुत उपन्यास में एक जगह शकुन कहती है– "बच्चों का मन, अहं..... कितना छोटा और कितना निरीह होता है, सब कुछ। फिर बंटी जो छाया की तरह चिपक कर रहा है उसके साथ।"

अपनी उम्र से आगे सोचने वाला बंटी, फूफी को विज्ञान की बातें समझाने वाला बंटी स्कूल की प्रवेश परीक्षा में उत्तीर्ण नहीं हो पाता है। माता–पिता के अलगाव के

परिणामस्वरूप मानसिक तनाव से एक स्वस्थ बच्चे की हालत कैसी हो जाती है, इसका यथार्थ चित्रण बंटी के चरित्र में पाया जाता है।

टिप्पणी

5. **भाषा शैली**– उपन्यासकार भाषा के माध्यम से रचना में सजीवता लाता है। सही भाषा के प्रयोग से पात्र सजीव और स्वाभाविक लगते हैं। यदि उपन्यासकार अपना विचार रख रहा हो तो उसकी भाषा अपनी होनी चाहिए; किन्तु पात्रों की संवादों की भाषा पात्रों की मनःस्थिति के अनुरूप होनी चाहिए। सफल उपन्यासकार प्रायः सरल एवं बोलचाल की भाषा का प्रयोग करता है। 'आपका बंटी' के पात्र अकसर अपने चरित्र के अनुकूल भाषा बोलते हैं, फलतः इसमें स्वाभाविकता की रक्षा हुई है। उदाहरणार्थ– फूफी का यह कथन उसके चरित्र को उजागर करता है–

"जवानी यों ही अंधी होती है, बहू जी, फिर बुढ़ापे में उठी हुई जवानी। महासत्यानाशी? साहब ने जो किया तो आपकी मट्टी पलीद हुई और अब आप जो कर रही है, इस बच्चे के साथ, इस बच्चे की मट्टी पलीद होगी। चेहरा देखा है बच्चे का? कैसा निकल आया है, जैसे रात–दिन घुलता रहता हो, भीतर ही भीतर।"

उपन्यासकार चाहे किसी भी विषय पर लिखे/उसके लिखने का ढंग अपना होता है। प्रत्येक उपन्यासकार अपने तरीके से कथा को प्रस्तुत करता है। इस तरीके को शैली कहते हैं। प्रत्येक उपन्यासकार की अपनी शैली होती है। एक ही उपन्यासकार की कई रचनाओं में विषयवस्तु के अनुसार शैली बदल जाती है। उपन्यासकार प्रत्यक्ष, परोक्ष, पूर्व दीप्ति आदि शैलियों का प्रयोग कर सकता है।

लेखक की व्यक्तिगत रुचि और विषयवस्तु के अनुसार शैली में परिवर्तन होता है। जैसे मन्नू भंडारी के कथा साहित्य में पारिवारिक जीवन, पति–पत्नी के संबंधों एवं आधुनिक प्रेम के चित्रण को प्रधानता मिली है। पारिवारिक जीवन में पति–पत्नी के बनते–बिगड़ते संबंधों के चित्रण में मन्नू भंडारी को महारत हासिल है।

6. **प्रतिपाद्य या उद्देश्य**– किसी भी रचना के पीछे कोई–न–कोई उद्देश्य होता है। सफल रचनाकार वही है जो अपना उद्देश्य सहजता से पाठकों तक पहुंचा दे। 'आपका बंटी' उपन्यास लिखने के पीछे मन्नू भंडारी का क्या उद्देश्य था? उन्होंने आधुनिक महानगरीय जीवन में तलाकशुदा पति–पत्नी के प्रश्न को बच्चे की समस्या के बिन्दु से उठाया है।

स्त्री–शिक्षा के बढ़ते प्रचार–प्रसार से आधुनिक स्त्री जहां आत्मनिर्भर हुई है वहीं दूसरी तरफ उसने कतिपय सामाजिक समस्याओं को जन्म दिया है। पुरानी, अनपढ़, अशिक्षित या रूढ़िवादी संस्कारों से ग्रसित नारी पूर्णतया परावलंबी होने से कई बार अपमानजनक समझौते करते हुए दामपत्य की गाड़ी खींच ले जाती थी, परंतु आजकल आधुनिक स्त्री आर्थिक दृष्टि से स्वनिर्भर होने पर इस प्रकार के समझौते के लिए तैयार नहीं होती। लेखिका का कथन है कि– "बंटी की यह यात्रा चाहे परिवार की एक संश्लिष्ट इकाई से टूटकर क्रमशः अकेले, जड़हीन, फालतू और अनचाहे होते जाने की रही हो, लेकिन मेरे लिए यह यात्रा, भावुकता–करुणा से गुजरकर मानसिक यंत्रणा और सामाजिक प्रश्नाकुलता की रही है।"

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

3. महत्वपूर्ण घटनाओं का क्रमबद्ध, कलात्मक व किसी निश्चित उद्देश्य की पूर्ति हेतु किया गया संयोजन.....कहलाता है–

(क) पात्र–चयन (ख) शीर्षक

(ग) कथानक (घ) चरित्र

4. 'आपका बंटी' किस प्रकार का उपन्यास है?

(क) सामाजिक (ख) राजनीतिक

(ग) अस्तित्ववादी (घ) मनोविश्लेषणात्मक

3.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (घ)
2. (ख)
3. (ग)
4. (घ)

3.5 सारांश

घटना–चक्र की एकता वस्तु गठन के रूप में उपन्यास के रस को कलात्मक रूप प्रदान करती है।'' इस दृष्टि से यदि गबन की कथावस्तु को देखा जाये तो ज्ञात होता है कि उसमें कथा तत्व का निर्वाह समग्रता से तथा अत्यन्त सफलतापूर्वक हुआ है। गबन का कथन सुगठित है। इसकी कथावस्तु दो भागों में विभक्त की जा सकती है क्योंकि उपन्यास की कथा दो स्थानों में घटती है–प्रयाग और कलकत्ता में। कथा का प्रथम अंश प्रयाग के आंचल में घटित होता है, और दूसरा अंश कलकत्ता में घटित होता है। इस उपन्यास के मुख्य पात्र हैं रमानाथ और जालपा। ये दोनों पति–पत्नी हैं। रमानाथ पत्नी को बहुत प्रेम करता है और उसके मोह में वह गबन करता है पत्नी की आभूषण–प्रियता की तुष्टि के लिए और फिर पकड़े जाने के भय से पत्नी या किसी अन्य मित्र–रिश्तेदार को बिना बताए ही ट्रेन पर सवार हो जाता है। यह कथानक का पूर्वार्द्ध भाग है। इसके आगे की कथा उत्तरार्द्ध कही जा सकती है क्योंकि यहां से देवीदीन के साथ कथा एक नया मोड़ लेती है और उसके आगे विकसित होती है। अब कथा एक वैयक्तिक जीवन से निकल कर विस्तृत सामाजिक क्षेत्र में चली जाती है। कथानक में तनाव, उलझाव तब और बढ़ जाता है जब रतन, जालपा आदि कलकत्ता पहुंच जाते हैं और वहीं से कथा उपसंहार की ओर उन्मुख हो जाती है।

गबन की कथावस्तु पर विचार करने से स्पष्ट हो जाता है कि उसकी कथावस्तु की धुरी जालपा और रमानाथ सम्बन्धी कथानक है, जिससे रतन, देवीदीन, जोहरा और क्रांतिकारियों सम्बन्धी उपकथाओं का नियोजन मूल कथानक की दृष्टि से अधिक

टिप्पणी

प्रयोजनीय बन पड़ा है जबकि रतन और जोहरा सम्बन्धी प्रसंगों को यदि लेखक छोड़ना चाहता तो भी कथानक की प्रभाविष्णुता को क्षति न पहुंचती। रतन सम्बन्धी उपकथा की उपयोगिता मात्र इतनी है कि रतन द्वारा कंगनों के लिए दिए गये छह सौ रुपयों को रमानाथ गंगू सर्राफ को इस आशा से देता है कि वह उन्हें उसके उधार खाते में जमा करके कंगन बना देगा, किन्तु उसकी योजनानुकूल कार्य न होने पर दफ्तर के 800/– को रतन को दिखाने मात्र के लिए घर ले आता है और रतन द्वारा उन रुपयों को वास्तव में ले जाने पर गृह त्याग को विवश होता है। इस प्रकार 'रतन' गबन का मूल कारण प्रतीत होती है, किन्तु यदि लेखक चाहता तो रमानाथ जैसे प्रदर्शन प्रिय और मुक्त हस्त से व्ययशील युवक को किसी अन्य विधि से भी दफ्तर के रुपये लाने और जमा न कर पाने की स्थिति में डाल कर गृहत्याग के लिए विवश चित्रित कर सकता था।

इस प्रकार गबन की कथावस्तु पर ध्यानपूर्वक विचार करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि वह अधिकारिक एवं प्रासंगिक कथाओं की सम्यक् नियोजना की दृष्टि से अंशतः कमजोर है किन्तु मौलिकता, रोचकता, विश्वसनीयता, कर्म–कारण शृंखला से सुसम्बद्धता एवं अन्तर्द्वन्द्व के निष्कर्षों पर सफल उतरती है।

'आपका बंटी' उपन्यास में छह–सात साल के छोटे बच्चे बंटी को चित्रित किया गया है। वह शकुन और अजय की एक मात्र सन्तान है। विवाह के दस वर्ष बीत जाने के उपरांत भी उनका वैवाहिक जीवन आनन्दमयी नहीं है, वे अलग–अलग रहते हैं। पुत्र बंटी इन दोनों के बीच सेतु का कार्य करता है। बंटी अपनी मम्मी के साथ रहता है, और हमेशा मन ही मन अपने पापा को याद करते रहता है। अन्य बच्चों के समान उसे भी अपने मम्मी–पापा से गहरा लगाव है। वह चाहता है कि दोनों साथ–साथ रहें।

पुत्र बंटी जो अजय और शकुन के बीच सेतु था, तलाक हो जाने के बाद ऐसा भार हो गया है कि जिसे न शकुन उठाने के लिए तैयार है और न अजय। यह बालक बंटी की विकट ट्रेजडी है जो अनजाने ही अपने मम्मी–पापा के लिए ना चाहते हुए भी समस्या बन जाता है।

स्त्री–शिक्षा के बढ़ते प्रचार–प्रसार से आधुनिक स्त्री जहां आत्मनिर्भर हुई है वहीं दूसरी तरफ उसने कतिपय सामाजिक समस्याओं को जन्म दिया है। पुरानी, अनपढ़, अशिक्षित या रूढ़िवादी संस्कारों से ग्रसित नारी पूर्णतया परावलंबी होने से कई बार अपमानजनक समझौते करते हुए दामपत्य की गाड़ी खींच ले जाती थी, परंतु आजकल आधुनिक स्त्री आर्थिक दृष्टि से स्वनिर्भर होने पर इस प्रकार के समझौते के लिए तैयार नहीं होती। लेखिका का कथन है कि– "बंटी की यह यात्रा चाहे परिवार की एक संश्लिष्ट इकाई से टूटकर क्रमशः अकेले, जड़हीन, फालतू और अनचाहे होते जाने की रही हो, लेकिन मेरे लिए यह यात्रा, भावुकता–करुणा से गुजरकर मानसिक यंत्रणा और सामाजिक प्रश्नाकुलता की रही है।"

3.6 मुख्य शब्दावली

- **अन्योन्याश्रितता** – एक–दूसरे पर निर्भरता
- **ट्रेजडी** – त्रासदी, विडम्बना

टिप्पणी

- **मिथ** – कल्पित सत्य, कल्पना
- **स्वप्नलोक** – सपनों की दुनिया
- **वृत्ति** – रुझान, आदत

3.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. 'गबन' पुरुष–प्रधान समाज की ट्रेजडी है। कथन की समीक्षा कीजिए।
2. 'गबन' उपन्यास का प्रतिपाद्य स्पष्ट कीजिए।
3. 'गबन' उपन्यास की पात्र–योजना की समीक्षा कीजिए।
4. 'आपका बंटी' उपन्यास किस संवेदना को केंद्र में रखे है?
5. 'आपका बंटी' उपन्यास के कथोपकथन की समीक्षा कीजिए।

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. 'गबन' उपन्यास के कथानक पर प्रकाश डालिए।
2. 'गबन' उपन्यास की कथावस्तु का विश्लेषण कीजिए।
3. 'गबन' उपन्यास में मुंशी प्रेमचन्द का समाजोन्मुख अथवा आदर्शवादी यथार्थवाद किस प्रकार प्रस्फुटित हुआ है? सोदाहरण समझाइए।
4. 'आपका बंटी' उपन्यास की उपन्यास के तत्वों के आधार पर समीक्षा कीजिए।
5. 'आपका बंटी' की केंद्रीय समस्या क्या है?

3.8 सहायक पाठ्य सामग्री

1. इन्द्रनाथ मदान, 'प्रेमचन्द चिन्तन और कला', सरस्वती प्रेस, वाराणसी।
2. रामविलास शर्मा, 'प्रेमचन्द और उनका युग', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. लालचन्द गुप्त, 'हिन्दी कहानी का इतिहास' संजीव प्रकाशन, कुरुक्षेत्र।
4. नामवर सिंह, 'कहानी नयी कहानी', लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2009।
5. रामदरश मिश्र, 'हिन्दी उपन्यास : एक अन्तर्यात्रा', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016।
6. राजेन्द्र यादव ,'एक दुनिया समानान्तर', राधाकृष्णन प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003।

इकाई 4 निर्धारित कहानियों का समीक्षात्मक अध्ययन

टिप्पणी

संरचना

4.0 परिचय
4.1 उद्देश्य
4.2 'गुण्डा' कहानी की समीक्षा
4.3 'कफन' कहानी की समीक्षा
4.4 'अपना–अपना भाग्य' कहानी की समीक्षा
4.5 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम' कहानी की समीक्षा
4.6 'चीफ की दावत' कहानी की समीक्षा
4.7 'दोपहर का भोजन' कहानी की समीक्षा
4.8 'रीछ' कहानी की समीक्षा
4.9 'ढाई बीघा जमीन' कहानी की समीक्षा
4.10 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
4.11 सारांश
4.12 मुख्य शब्दावली
4.13 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
4.14 सहायक पाठ्य सामग्री

4.0 परिचय

'गुण्डा' जयशंकर प्रसाद की एक प्रतिनिधि कहानी है। भारतीय संस्कृति के परिवेश में आदर्श की भावभूमि पर निर्मित यह एक अनुभूतिपरक वातावरण प्रधान कहानी है। 'गुण्डा' कहानी में प्रेम के उत्सर्ग–उज्ज्वल पवित्र रूप का चित्रण किया गया है। इसमें नारी–गरिमा के प्रति आस्था, करुणा, त्याग, क्षमा, उत्सर्ग आदि भावों की प्रतिष्ठा करना एक मात्र लक्ष्य प्रतीत होता है।

प्रेमचंद ने जहां अपने उपन्यासों में जीवन जगत यथार्थ को संपूर्ण मानवीय संवेदना के साथ प्रस्तुत किया वहीं अपनी कहानियों में भी उन्होंने जीवन का समग्र, सशक्त और समर्थ ग्रहण करते हुए सच्चे अर्थों में कहानी का मार्ग प्रशस्त किया 'कफन' भी इसका एक प्रमाण है।

प्रेमचंद के ठीक बाद, बल्कि उनके उत्तराधिकारी के रूप में जैनेन्द्र कुमार का नाम आता है। जैनेन्द्र की कहानियां मानव समाज के भीतर रह रहे मानव के भावनात्मक समाज की कहानियाँ हैं। उनकी कहानी 'अपना–अपना भाग्य' भी इसी प्रकार का एक उदाहरण है।

फणीश्वर नाथ 'रेणु' ग्राम्यांचल के कथाकार हैं। 'तीसरी कसम' उर्फ मारे गए गुलफाम' कहानी में भी उन्होंने हिरामन के माध्यम से पूरब के गाँव की पूरी सामाजिकता उकेर कर रख दी है।

भीष्म साहनी अत्यंत लब्धप्रतिष्ठ नाटककार, कहानीकार व उपन्यासकार हैं। उनकी कहानियाँ मानव मनोवृत्तियों को उकेरती व एक छींट कसक व कुढ़ की छोड़ती

टिप्पणी

हुई जाती हैं। 'चीफ की दावत' कहानी भी शामनाथ के माध्यम से आधुनिक संतानों की वृत्तियों को बहुत चुटीले अंदाज में उतारा है।

अमरकांत की कहानियां कठोर भौतिक यथार्थ व मध्यम एवं सर्वहारा वर्ग को केंद्र में रखती हैं। 'दोपहर का भोजन' इसी की एक बानगी है।

कहानी लेखन में फैंटेसी का मिश्रण कर प्रतीकात्मक कहानियाँ लिखना दूधनाथ सिंह की विशिष्टता है। 'रीछ' कहानी में यह विशिष्टता सरलतः द्रष्टव्य है।

भारतीय समाज में गाँव में रहने वाले कृषक समुदाय की सोच और चिंताओं की बानगी है मृदुला सिन्हा की कहानी 'ढाई बीघा जमीन'।

इस इकाई में 'गुण्डा', 'कफन', 'अपना–अपना भाग्य', 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम', 'चीफ की दावत', 'दोपहर का भोजन', 'रीछ' व 'ढाई बीघा जमीन' कहानियों की समीक्षा कहानी के तत्वों के आधार पर की गई है।

4.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- 'गुण्डा' कहानी का समीक्षात्मक अध्ययन कर पाएंगे;
- मुंशी प्रेमचंद की कहानी कला से परिचित होते हुए 'कफन' कहानी के तत्वों को जान पाएंगे;
- 'अपना–अपना भाग्य' कहानी की समीक्षा करते हुए जैनेन्द्र कुमार की लेखन शैली से परिचित हो पाएंगे;
- 'चीफ की दावत' कहानी की बिंदुवार समीक्षा कर पाएंगे;
- अमरकांत की कहानी 'दोपहर का भोजन' की समीक्षा कर पाएंगे;
- 'रीछ' कहानी की तत्वों के आधार पर समीक्षा कर पाएंगे;
- 'ढाई बीघा जमीन' कहानी का आलोचनात्मक विश्लेषण कर पाएंगे।

4.2 'गुण्डा' कहानी की समीक्षा

विषय–वस्तु की दृष्टि से यह कहानी ऐतिहासिक वर्ग में आती है। कहानी के तत्वों के आधार पर यह एक सफल कहानी है। इसकी समीक्षा निम्न शीर्षकों में की जा सकती है–

(i) कथावस्तु अथवा कथानक– 'गुण्डा' की कथावस्तु सुगठित एवं कौतूहलपूर्ण है। कहानी का प्रारंभ उसके नायक गुण्डे के व्यक्तित्व का चित्रण करने से होता है। इस प्रकार वर्णनात्मक शैली में कथारंभ अत्यंत सुंदर बन पड़ा है।

जीवन की किसी अलभ्य अभिलाषा से वंचित होकर प्रायः लोग विरक्त हो जाते हैं, ठीक उसी तरह मानसिक चोट से घायल होकर एक प्रतिष्ठित जमींदार का पुत्र होने पर भी नन्हकू सिंह गुण्डा हो गया था। नन्हकू सिंह ने बहुत–सा रुपया खर्च करके जैसा स्वांग खेला था, उसे काशी के लोग बहुत दिनों तक नहीं भूले थे। प्रायः बनारस

टिप्पणी

के बाहर की हरियालियों में, अच्छे पानी वाले कुंओं पर, गंगा की धारा में मचलती हुई डोंगी पर वह दिखाई पड़ता था। कभी–कभी जुआखाने से निकल कर जब वह चौक में आता तो काशी की रंगीली वेश्याएं मुस्कराकर उसका स्वागत करती और उसके दृढ़ शरीर को सस्पृह देखतीं। वह तमोली की ही दुकान पर बैठकर उनके गीत सुनता, ऊपर कभी नहीं जाता था। जुए की जीत का रुपया मुट्ठियों में भरकर खिड़कियों की ओर उछाल देता। जब कभी लोग कोठे के ऊपर चलने के लिए कहते, तो वह उहासी की सांस लेकर चुप हो जाता।

कोठे वाली दुलारी मुजरे के लिए प्रसिद्ध थी। सभी उसका मुजरा सुनने के लिए लालायित रहते थे। कोतवाल, मौलवी और शहर के रईस दुलारी के मुजरे का इंतजार करते रहते थे। राजमाता पन्ना भी दुलारी का मुजरा सुनने का इंतजार करती थीं।

'गुण्डा' की पन्ना के हृदय में रानीपन के गौरव और गृहिणी की मर्यादा के भीतर सुषुप्त प्रणय की कसमसाहट का लेखक ने संकेतात्मक ढंग से अत्यंत मनोहारी और व्यंजक चित्र उकेरा है। पन्ना नन्हकू की न बन सकी और न इस जीवन में उसके मिलने की ही आशा है, फिर भी पन्ना के मन में यह लालसा विद्यमान है कि नन्हकू उन्हीं का होकर रहे, किसी अन्य नारी को उसका प्रणय न मिल सके। निश्चय ही यह पन्ना का लोभ नहीं, अपितु प्रेम की प्रेमी के ऊपर एकाधिपत्य देखने की सहज वृत्ति है। वेश्या दुलारी से नन्हकू सिंह का नाम सुन कर उसे कष्ट होता है और आशंका से पूरित प्रश्न करती है– "दुलारी वे तेरे यहां आते हैं न?"

"नहीं सरकार, शपथ खाकर कहती हूँ कि बाबू नन्हकू सिंह ने आज तक कभी मेरे कोठे पर पैर भी नहीं रखा।"

राजमाता इस अद्‌भुत व्यक्ति को समझने का प्रयास करती हैं। उसे शहर की अव्यवस्थित दशा से भी अवगत कराया जाता है। रेजीडेंट साहब से महाराजा की अनबन चल रही है।

नन्हकू सिंह गंगा के किनारे बैठा गाना सुनता है, किंतु उसका मन गाने में नहीं लगता। वह अपने साथी से कहता है कि मलूकी गाना जमता नहीं, जाओ दुलारी को बुला लाओ। एक घंटे में दुलारी वहां पहुंच गई। तब नन्हकू सिंह कहता है–

"दुलारी आज गाना सुनने का मन कर रहा है।"

इस जंगल में क्यों? वह किसी अनहोनी से शंकित थी। दुलारी नन्हकू सिंह के सामने अपने प्रेम का इजहार करती है किंतु नन्हकू सिंह स्त्रियों से अपने आपको अलग रखने की प्रतिज्ञा किए हुए था। जब उसे दुलारी से शहर में किसी होस्टिंग्ज के आने का पता चलता है तो वह गंगा के रास्ते शहर की ओर जाने की तैयारी करता है।

राजा चेत सिंह कैद में हैं। नन्हकू सिंह उन्हें छुड़ाने का प्रयास करता है। वह शिवालय घाट की ओर जाता है। नन्हकू सिंह अपने थोड़े से साथियों के साथ राजा चेत सिंह को अंग्रेजों की कैद से मुक्त कराने की कोशिश करता है। राज चेत सिंह के पूछने पर वह कहता है कि मैं राजपरिवार का एक बिना दाम का सेवक हूं। पन्ना ने उसे पहचान लिया था।

टिप्पणी

वह पन्ना और राजा चेत सिंह को बचाने का प्रयास करता है। उन्हें डोंगी पर बैठाकर सुरक्षित जगह भेज देता है और स्वयं शत्रुओं से मुकाबला करते हुए मृत्यु की ओर बढ़ रहा है। तिलंगे अपनी संगीनों से उसके शरीर का एक–एक अंग फार कर गिरा रहे हैं। वह काशी का गुण्डा था जो अपने असफल प्रेम में न्यौछावर हो गया था।

(ii) पात्र–योजना एवं चरित्र चित्रण– प्रसाद ने अपनी कहानियों में जीवन के विविध पक्षों से पात्रों का चयन किया है। पर विभिन्न वर्गों से आने पर भी इन पात्रों में अत्यधिक समानता है। प्रसाद के अनुरूप ही स्त्री–पुरुष सभी पात्र भावुक, सौंदर्यनिष्ठ और प्रेमी हैं तथा जीवन के प्रति उनका एक ही दृष्टिकोण है। इन पात्रों का विकास परिस्थिति और देशकाल की विभिन्न स्थिति के अनुरूप होने के कारण वे एक–दूसरे से अलग और अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। उनमें वैयक्तिकता का आग्रह अधिक है। इसीलिए वे किसी वर्ग के प्रतिनिधि न लगकर व्यक्ति विशेष ही जान पड़ते हैं। 'गुण्डा' कहानी का ठाकुर नन्हकू सिंह यद्यपि वर्ग विशेष के चित्रण के उद्देश्य से योजित है, पर उसमें वर्गगत सामान्य विशेषताओं की अपेक्षा उसकी निजी विशेषता ही प्रधान हो उठी है।

प्रसाद के स्त्री पात्रों में करूणा की कोमल छाप और उत्सर्ग भावना भी स्पष्ट दिखाई देती है। यह उन्हें बौद्धदर्शन से विरासत में मिली है। पर प्रेम और मधुर लालसा सबके जीवन की मूल वृत्ति है और प्रसाद की कहानी में इसी के विभिन्न स्वरूपों की भरमार है। कहीं कोई सामाजिक मर्यादा के सम्मुख घुटने टेक कर बलिवेदी पर आत्म बलिदान कर देता है और कहीं वह प्रतिशोध की ज्वाला में अपने विरोधी को जला कर स्वयं नष्ट हो जाने में तृप्ति का अनुभव करती है।

प्रसाद के नारी चरित्र संपूर्ण परिस्थिति की नियामिका और संचालिका रूप में उपस्थित हैं। ये स्त्री शक्तियां कभी पुरुष को पतन की ओर नहीं ले जातीं, वरन् पुरुषों को सर्वथा कर्तव्य का बोध कराती हुई उन्हें प्रेरणा प्रदान करती हैं।

कोमल नारी हृदय की मधुरिमा में अंतर्द्वन्द्व तथा प्रतिहिंसा की उद्भावना कर कठोरता का प्रकटीकरण प्रसाद की कला की विशिष्टता है। प्रसाद के इस गुण ने उनकी कहानियों को मानवीय धरातल से दूर नहीं जाने दिया। यह कठोरता कहीं तो कर्तव्य की प्रेरक बनकर उपस्थित है और कहीं प्रतिशोध की आग के रूप में और कहीं बलिदान की ज्योति बन उभर कर आई है। 'गुण्डा' की पन्ना और दुलारी के व्यक्तित्व में प्रसाद की नारी भवना की विभिन्न परिस्थितियों और भिन्न–भिन्न मुद्राओं में अंकित किए गए चित्र सजीव हो उठे हैं।

नारी–पात्रों के समान ही प्रसाद के पुरुष पात्र भी भावुक, सुंदर, प्रेमनिष्ठ और मनस्वी होने के साथ–साथ किसी–न–किसी अंतर्द्वन्द्व से आक्रांत है। उनका यह दाह उन्हें उत्कट आत्मबल प्रदान करता है तथा उत्सर्ग की भावना से उद्वेलित करता है। 'गुण्डा' के नन्हकू सिंह के व्यक्तित्व की मूल प्रेरक शक्ति यही अंतर्द्वन्द्व है। जीवन की विविध स्थितियों, समस्याओं से संचालित नन्हकू सिंह का चरित्र अपने आप स्वयं विकसित होता है। जीवन की किसी अलभ्य लालसा से वंचित होकर जैसे प्रायः लोग विरक्त हो जाते हैं, ठीक उसी तरह किसी मानसिक चोट से घायल होकर, एक प्रतिष्ठित जमींदार का पुत्र होने पर भी नन्हकू सिंह गुण्डा हो गया था। दोनों हाथों से उसने अपनी संपत्ति लुटाई। नन्हकू सिंह ने बहुत–सा रुपया खर्च करके जैसा स्वांग खेला था, उसे काशी वाले बहुत दिनों तक नहीं भूल सके।

टिप्पणी

प्रसाद के पात्रों का विशिष्ट गुण है उनका विराग मिश्रित अनुराग और विवृत्ति मूलक संन्यास के विरुद्ध प्रवृत्ति की कर्मण्यता के व्यक्तित्व को निखारने वाली तपस्या की अग्नि। सामाजिक मर्यादा के स्तर से विहीन पात्र भी इस तपस्या की अग्नि में तपकर अपने कलुष को जला कर अत्यंत पवित्र बन जाते हैं। इस तप का आलोक नन्हकू सिंह में अधिक दिखाई देता है। नन्हकू सिंह बाहर से अत्यंत दुर्धर्ष गुण्डा है किंतु भीतर से अत्यंत कोमल है।

(iii) संवाद अथवा कथोपकथन– संवादों द्वारा संकेत रूप में चरित्रों को आलोकित करने की कला इतनी बारीक हो गई है कि उससे चरित्र की विभिन्न भंगिमाओं का प्रकाशन तो होता ही है, कहानी की रसात्मकता में भी अभिवृद्धि होती है। उदाहरणार्थ 'गुण्डा' कहानी में एक दासी, राजमाता पन्ना और दुलारी का निम्नलिखित वार्तालाप नन्हकू सिंह के चरित्र पर स्पष्ट तथा पन्ना के चरित्र पर सूक्ष्म प्रकाश डालता है–

"महारानी! नन्हकू सिंह अपनी सब जमींदारी स्वांग, भैसों की लड़ाई, घुड़दौड़ और गाने–बजाने में उड़ाकर अब डाकू हो गया है। जितने खून होते हैं, सब में उसका हाथ रहता है।" उसे रोककर दुलारी ने कहा–

"यह सब झूठ है।

बाबू साहब के ऐसा धर्मात्मा तो कोई है ही नहीं। कितनी विधवाएं उसकी दी हुई धोती से अपना तन ढकती हैं। कितनी लड़कियों का शादी–ब्याह होता है.... ।"

रानी पन्ना के हृदय में तरलता उद्वेलित हुई। उन्होंने हंसकर कहा, "दुलारी वे तेरे यहाँ आते हैं न। इसी से तू उनकी बड़ाई... ।"

"नहीं सरकार, शपथ खाकर कह सकती हूँ कि बाबू नन्हकू सिंह ने आज तक कभी मेरे कोठे पर पैर नहीं रखा।"

राजमाता न जाने क्यों इस अद्‌भुत व्यक्ति को समझने के लिए चंचल हो उठी थी। तब भी उन्होंने दुलारी को आगे कुछ न कहने के लिए तीखी दृष्टि से देखा।

इस संवाद द्वारा प्रसाद एक तरफ नन्हकू सिंह के दो विरोधी पक्षों को स्पष्ट करते हैं दूसरी ओर पन्ना के हृदय में छिपे नन्हकू के संचित प्रेम का भी संकेत कर देते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि नन्हकू सिंह का प्रेम एकांगी न था।

एक अन्य स्थान पर नन्हकू सिंह महारानी के विषय में पूछता है और सबको सचेत करते हुए कहता है–

महारानी कहां हैं?

सबने घूकर देखा– एक अपरिचित वीरमूर्ति! शस्त्रों से लदा हुआ पूरा देव।

चेतसिंह ने पूछा– तुम कौन हो?

"राजपरिवार का एक बिना दाम का सेवक।"

पन्ना के मुंह से हल्की सी एक साँस निकल कर रह गई। उसने पहचान लिया। इतने वर्षों बाद, वही नन्हकू सिंह।

मनिहार सिंह ने पूछा– "तुम क्या कर सकते हो?"

मैं मर सकता हूँ। पहले महारानी को डोंगी पर बिठाइए। नीचे दूसरी डोंगी पर अच्छे मल्लाह हैं। फिर बात कीजिए।

टिप्पणी

इस प्रकार कहानीकार ने संक्षिप्त संवादों के साथ–साथ दीर्घ संवादों की भी योजना की है। परंतु इससे स्वाभाविकता बाधित नहीं हुई है।

(iv) देशकाल–वातावरण– वातावरण के अंतर्गत देशकाल और परिस्थिति आती है। प्रसाद ने अपनी कहानियों में वातावरण के भावपूर्ण चित्रण पर जोर दिया है, जिससे पाठक कथा–सूत्र को पकड़ कर सहज वेग से आगे नहीं बढ़ पाता, बल्कि परिदृश्यों की सौंदर्य छटा में उनका मन उलझता–रमता चलता है।

ऐतिहासिक वृत्त पर आधारित प्रसाद की 'गुण्डा' कहानी में काशी का तत्कालीन परिवेश सर्वथा स्पष्ट है। राजनैतिक दबाव के कारण तत्कालीन बनारस का सामाजिक जीवन भी अस्त–व्यस्त था। 'गुण्डा' कहानी में प्रसाद ने तत्कालीन राजनैतिक स्थितियों को भी स्पष्ट किया है और अंग्रेजों द्वारा की गई लूट तथा अनैतिक दबावों का भी वर्णन किया है। क्रमशः इतिहास और कहानी के उद्धरण अवलोकनीय हैं– एक बार अलाउद्दीन ने राजा से जाकर कहा कि ग्रॉहम बीमार है और डॉक्टरों ने उसके इलाज के लिए चींटी का तीन सेर तेल मांगा है। राजा चेतसिंह की तो अक्ल गुम हो गई और उन्होंने रुपये देकर जान छुड़ाई।

'गुण्डा' कहानी में तत्कालीन काशी का धार्मिक परिवेश भी जीवंत हो उठा है। यद्यपि धार्मिक दृष्टि से काशी अब वही काशी नहीं रह गई थी, जो प्राचीन मध्यकाल में थी। काशी ने अपने जीवन में अनेक धार्मिक ऊहापोह देखे थे। भारत के समस्त प्रसिद्ध तीर्थों से भी अधिक धर्म का उत्थान एवं पतन काशी ने देखा था।

आलोच्य कहानी में घटना और पात्रों से संबंधित परिस्थितियों का चित्रण सजीव रूप में किया गया है। संपूर्ण परिस्थितियों की योजना साभिप्राय और क्रमिक ढंग से की गई है। वातावरण का निर्माण प्रसाद की कहानी कला का निजी और प्रमुख वैशिष्ट्य है।

(v) भाषा–शैली– कहानीकार भाषा के माध्यम से कहानी में सजीवता लाता है। सही भाषा के प्रयोग से पात्र सजीव एवं स्वाभाविक लगते हैं।

आलोच्य कहानी 'गुण्डा' में भाषा सरसता एवं भावुकता से युक्त है। इस कहानी की भाषा में संस्कृतनिष्ठ तत्सम शब्दों का अधिक प्रयोग हुआ है। कई स्थलों पर भाषा क्लिष्ट लगती है। तत्सम एवं तद्भव शब्दों की प्रचुरता कहानी को शिष्ट भाषा का आयाम प्रदान करती चली गई है। कहीं–कहीं इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग अस्वाभाविक–सा लगता है, परंतु भावों की गति ने उसे अनुभव नहीं होने दिया है। उदाहरणार्थ– "हाथ में हरौती की पतली–सी छड़ी, आँखों में सुरमा, मुँह में पान, मेहँदी लगी हुई लाल दाढ़, जिसकी सफेद जड़ दिखलाई पड़ रही थी, कुव्वेदार टोपी, छकलिया अँगरखा और साथ में लैसदार परतवाले दो सिपाही! कोई मौलवी साहब हैं। नन्हकू हँस पड़ा। नन्हकू की ओर बिना देखे ही मौलवी ने एक सिपाही से कहा–'जाओ दुलारी से कह दो कि आज रेजिडेंट साहब की कोठी पर मुजरा करना होगा। अभी चलें, देखो तब तक हम जानअली से कुछ इत्र ले रहे हैं'।"

'गुण्डा' कहानी की शैली परिष्कृत और अलंकृत है। इसमें प्रसाद का कवि हृदय परिलक्षित होता है। प्रसाद ने मूलतः दो शैलियों का– चित्रात्मक और संलाप का सहारा लिया है। पात्रों के बाह्य क्रिया–कलापों के चित्रण, भाव–विकृति आदि के लिए

टिप्पणी

चित्रात्मक शैली का सहारा लिया है। उदाहरणार्थ– "उसका सांवला रंग साँप की तरह चिकना और चमकीला था। उसकी नागपुरी धोती का लाल रेशमी किनारा दूर से ही ध्यान आकर्षित करता। कमर में बनारसी सेल्हे का फेटा, जिसमें सीप की मूँठ का बिछुआ खुँसा रहता था। उसके घुँघराले बालों पर सुनहले पल्ले का छोर उसकी चौड़ी पीठ पर फैला रहता। ऊँचे कँधे पर टिका हुआ चौड़ी धार का गंडासा, यह थी उसकी धज। पंजों के बल जब वह चलता, तो उसकी नसें चटाचट बोलती थीं।"

(vi) उद्देश्य– कहानी का उद्देश्य पुष्प में गंध की भांति छिपा होता है। उद्देश्य को सीधे–सीधे रूप से व्यक्त न कर विशिष्ट अनुभूति के रूप में व्यंजित किया जाता है। भारतीय संस्कृति के परिवेश में एक स्वस्थ आदर्श की स्थापना करना ही प्रस्तुत कहानी का प्रधान उद्देश्य है।

प्रस्तुत कहानी में एक तरफ वेदना और करुणा की कसक है, वहीं दूसरी तरफ जिजीविषा, संकल्पशक्ति और कर्मण्यता का मौन संदेश भी वर्तमान है। 'गुण्डा' कहानी का नायक नन्हकू सिंह चरित्र कहानी के उद्देश्य को परिलक्षित करता है। उदाहरणार्थ– "महारानी! नन्हकू सिंह अपनी सब जमींदारी, स्वांग, भैसों की लड़ाई, घुड़दौड़ और गाने बजाने में उड़ा कर अब डाकू हो गया है। जितने खून होते हैं, सबमें उसी का हाथ रहता है। जितनी....." उसे रोककर दुलारी ने कहा– "यह झूठ है। बाबू साहब के ऐसा धर्मात्मा तो कोई है ही नहीं। कितनी विधवाएं उनकी दी हुई धोती से अपना तन ढँकती हैं। कितनी लड़कियों की ब्याह–शादी होती है। कितने सताए हुए लोगों की उनके द्वारा रक्षा होती है।"

विभिन्न वर्गों से एकत्रित पुरुष पात्र प्रसाद की लेखनी से अंततः भलेमानस बन जाते हैं। और आदर्श पात्र के रूप में उपस्थित होते हैं। प्रसाद नारी–पुरुष के मधुर संबंध को ही सृष्टि की सर्वप्रमुख सार्थकता मानते हैं। यही कारण है उनकी प्रेम व्यंजक कहानियां इसी धुरी पर घूमती नजर आती हैं।

कहानी का नायक नन्हकू सिंह अपने प्रेम के वशीभूत और कर्तव्यपरायणता के लिए महाराजा और महारानी दोनों की रक्षा करता है। वह हँसकर कहता है– "मेरे मालिक, आप नाव पर बैठें। जब तक राजा भी नाव पर न बैठ जाएँगे, तब तक सत्रह गोली खाकर भी नन्हकू सिंह जीवित रहने की प्रतिज्ञा करता है।"

इस प्रकार आदर्श और कर्तव्य का भाव कहानी में उभर कर आता है।

अपनी प्रगति जांचिए

1. 'गुण्डा' कहानी का लेखन प्रसाद ने किस शैली में किया है?

   (क) चित्रात्मक (ख) संलाप

   (ग) चित्रात्मक एवं संलाप दोनों (घ) इनमें से कोई नहीं

2. "कितनी विधवाएँ उनकी दी हुई धोती से अपना तन ढँकती हैं।" दुलारी ने यह कथन किसके लिए कहा है?

   (क) महारानी पन्ना (ख) राजा चेत सिंह

   (ग) मलूकी (घ) नन्हकू सिंह (गुण्डा)

टिप्पणी

4.3 'कफन' कहानी की समीक्षा

आधुनिक युग में काव्य के क्षेत्र में जो महत्व और आदर प्रसाद को मिला वही कथा साहित्य में प्रेमचंद को प्राप्त हुआ। प्रगतिशील जीवन–दृष्टि से प्रभावित होकर उन्हें अपनी रचनाधर्मिता को युग और समाज की विसंगतियों और विषमताओं से संबद्ध करना पड़ा। आधुनिकता की प्रक्रिया और उसके प्रश्न–चिह्नों को समष्टि–चिंतन के धरातल पर उठाकर उन्होंने युग–सत्य के प्रति अपनी सतर्कता को उजागर किया है। परंपरागत कहानी–कला की रचनागत सीमाओं–काल्पनिक चरित्रों का सृजन, इतिवृत्तात्मकता और वर्णनात्मक शैली, नाटकीय अंत, अविश्वसनीय कथानक एवं वायवीय भावुकता का परित्याग करके उन्होंने कहानी–कला को समृद्ध और विकसित किया। 'मानसरोवर' शीर्षक से आठ भागों में उनकी कहानियां संकलित हैं और इधर अमृतराय ने उनकी कुछ आरंभिक अप्रकाशित कहानियों को 'गुप्तधन' शीर्षक से प्रकाशित कराया है।

प्रेमचंद की प्रारंभिक कहानियां सुधारवादी पुट लिए हुए हैं किंतु जीवन के यथार्थ का उन्हें जैसे–जैसे निर्मम साक्षात्कार होता गया वे आदर्शवाद से यथार्थ की ओर बढ़ते रहे। 'पूस की रात' और 'कफन' उनके आदर्श के प्रति मोह–भंग के जीवंत दस्तावेज हैं।

'कफन' कहानी हिंदी की पुरानी और नयी कहानी के बीच एक दरार डालती है। 'कफन' से पहले की कहानी में आदर्शवाद कहानी की मूल संवेदना और रचना–विधान पर थोपा जाता था। पात्र आदर्श को जीते नहीं थे, ढोते थे। 'कफन' से हम प्रेमचंद में एक विशेष प्रकार का मोह भंग देखते हैं। यहां पहली बार पात्र और परिवेश एक–दूसरे पर व्यंग्य करते हुए दीख पड़ते हैं। बदलते अथवा विघटित होते हुए मानव–संबंध, दरकते हुए जीवन–मूल्य और बिखरते हुए आदर्शों की त्रासदी है 'कफन'। इसलिए 'कफन' केवल एक कहानी नहीं बल्कि यह एक एहसास है निर्धनता के बोझ के नीचे पिसती मानव की अस्मिता की तिल–तिल करके होती हुई मौत का। यही कारण है कि 'कफन' यथार्थवादी कहानी–परंपरा की एक सार्थक और पैनी शुरुआत है।

विद्वानों ने कहानी के ये सर्वमान्य तत्व स्वीकार किए हैं– (1) कथावस्तु, (2) पात्र और चरित्र–चित्रण, (3) संवाद, (4) देशकाल और वातावरण, (5) भाषा–शैली, (6) उद्देश्य। यहां हम इन्हीं तत्वों के आधार पर आलोच्य कहानी की समीक्षा करने का प्रयास करेंगे–

(i) कथावस्तु–'कफन' की कथा संक्षिप्त में इस प्रकार है कि घीसू और माधव पिता–पुत्र दोनों निर्धन श्रमिक हैं। दोनों अलाव के पास बैठे आलू भून–भूनकर खा रहे हैं। झोपड़ी के भीतर माधव की पत्नी बुधिया प्रसव पीड़ा से छटपटा रही है। दोनों ही दो दिन से भूखे हैं और इस डर से कि कहीं कोई एक भी रुग्ण स्त्री को देखने जाए तो दूसरा सारे आलू साफ न कर जाये, वहीं पर बैठे–बैठे आलू खाते रहते हैं। दोनों रात भर बातें करते रहते हैं और सुबह जाकर देखते हैं तब तक बुधिया दम तोड़ चुकी होती है। दोनों रोते–पीटते हैं और गांव वालों से चंदा करके 'कफन' के लिए रुपये एकत्रित करते हैं। दोनों कफन लेने की बजाय मधुशाला में जाकर शराब पीते–खाते हैं और नशे में मदमस्त होकर नाचते–कूदते हुए गिर पड़ते हैं।

टिप्पणी

जहां तक कथावस्तु का प्रश्न है उसमें पर्याप्त कसाव है। वस्तुतः घटनाओं की अपेक्षा रचनाकार ने चरित्रों के चित्रण और विश्लेषण पर अधिक बल दिया है। आरंभ में नाटकीयता धीरे–धीरे स्वाभाविकता की ओर उन्मुख होती जाती है। जब वे कफन खरीदने की बजाय मधुशाला में घुस जाते हैं तो कथावस्तु में एक नया मोड़ आ जाता है। यहां कथावस्तु का उत्कर्ष अपनी चरम सीमा पर पहुंच जाता है। कथावस्तु में रोचकता, गतिशीलता देखते ही बनती है इस प्रकार कथावस्तु की दृष्टि से 'कफन' पूरी तरह सफल कहानी है।

(ii) चरित्र–चित्रण–'कफन' कहानी में मुख्य पात्र दो हैं–घीसू और माधव। दोनों पिता–पुत्र हैं। किंतु निर्धनता ने उनके उन भावों को सोख लिया है, जो पिता और पुत्र के संबंधों को गरिमामय बनाते हैं। वे अलाव के पास बैठकर आलू खा रहे हैं और जब घीसू माधव से अंदर जाकर बुधिया को देख आने के लिए कहता है तब माधव यह सोचकर अंदर नहीं जाता कि कहीं उसके जाने के बाद घीसू आलुओं का एक बड़ा भाग चट न कर दे। दरअसल घीसू और माधव ने बदलते और विघटित होते हुए मानव–संबंधों को यथार्थ–मूलक अभिव्यक्ति प्रदान की है।

जहां तक चरित्र का प्रश्न है प्रेमचंद ने दोनों का चरित्र–चित्रण बहुत कुशलता से किया है। दोनों का चरित्र–चित्रण करते हुए प्रेमचंद ने लिखा है–''अगर दोनों साधु होते, तो उन्हें संतोष और धैर्य के लिए संयम और नियम की बिल्कुल आवश्यकता न होती, यह तो उनकी प्रकृति थी। विचित्र जीवन था इनका। घर में मिट्टी के दो–चार बर्तनों के सिवाय कोई संपत्ति नहीं। फटे चीथड़ों से अपनी नग्नता को ढांके हुए जीवन–यापन किए जाते हैं। संसार की चिंताओं से मुक्त। कर्ज से लदे हुए गालियां भी खाते, मार भी खाते, मगर कोई गम नहीं। दीन इतने कि वसूली की बिल्कुल आशा न रहने पर भी लोग इन्हें कुछ–न–कुछ कर्ज दे देते थे। मटर, आलू की फसल में दूसरे के खेतों से मटर या आलू उखाड़ लाते और भून–भानकर खा लेते, या दस–पांच ऊख उखाड़ लाते और रात को चूसते। घीसू ने इसी आकाश दृष्टि से साठ साल की उम्र काट दी और माधव भी सपूत बेटे की भांति बाप के ही पद–चिह्नों पर चल रहा था, बल्कि उसका नाम और उजागर कर रहा था।

इस प्रकार का चरित्र निस्संदेह पाठकों के हृदय में घृणा उत्पन्न करता है किंतु प्रेमचंद ने इस चरित्र को न केवल यथार्थ के अणुओं से गढ़ा है बल्कि करुणा–मूलक व्यंग्यात्मकता से तराशा भी है। एक स्थान पर घीसू कहता है–''हां बेटा, बैकुंठ में जाएगी किसी को सताया नहीं, किसी को दबाया नहीं। मरते–मरते हमारी जिंदगी की सबसे बड़ी लालसा पूरी कर गई। बैकुंठ में नहीं जाएगी तो क्या वे मोटे–मोटे लोग जाएंगे, जो गरीबों को दोनों हाथों से लूटते हैं और अपने पाप धोने के लिए गंगा में नहाते हैं और मंदिरों में जल चढ़ाते हैं।'' प्रेमचंद ने एक स्थान पर उपन्यास को मानव–चरित्र कहा है। उनकी आलोच्य कहानी के चरित्र–चित्रण को देखते हुए उनकी वह उक्ति उनकी कहानियों पर भी लागू की जा सकती है।

(iii) कथोपकथन–कथोपकथन की दृष्टि से 'कफन' कहानी पूरी तरह से सफल है। यहां संवाद चरित्र रेखाओं को और उभारते हैं। संक्षिप्त, गरिमा और प्रभावान्विति सभी दृष्टियों से संवाद कहानी की संवेदना को सघन और मार्मिक बनाते हैं। घीसू और माधव के चरित्र की निर्लज्जता, उनके भीतर निहित अबाध शोषण की पीड़ा प्रस्तुत संवाद में कितने सुंदर रूप में अभिव्यक्त हुई है–

टिप्पणी

''दुनिया का दस्तूर है, नहीं तो लोग बामनों को हजारों रुपये क्यों दे देते हैं? कौन देखता है, परलोक में मिलता है या नहीं।''

''बड़े आदमियों के पास धन है, फूंकें। हमारे पास फूंकने को क्या है?''

''लेकिन लोगों को क्या जवाब दोगे? लोग पूछेंगे नहीं, 'कफन' कहां है?''

घीसू हंसा–अब कह देंगे कि रुपये कमर से खिसक गए। बहुत ढूंढा मिले नहीं। लोगों को विश्वास नहीं आयेगा, लेकिन फिर वही रुपये देंगे।

माधव भी हंसा–इस अपेक्षित सौभाग्य पर। बोला–''बड़ी अच्छी थी बेचारी। मरी तो खूब खिला–पिला कर।''

यहां दोनों की निर्लज्जता और उसमें घुली पीड़ा के एहसास ने इस संवाद को अभूतपूर्व मार्मिकता प्रदान की है। इस प्रकार कथोपकथन की दृष्टि से 'कफन' पूरी तरह सफल है और कहानी के समस्त रचना–विधान को पूर्णता प्रदान करते हैं।

(iv) देशकाल और वातावरण–देशकाल और वातावरण कहानी को एक अनिवार्य विश्वसनीयता प्रदान करता है। दरअसल देशकाल और वातावरण का परिवेश में ही अंतर्भाव हो जाता है। देशकाल और वातावरण की दृष्टि से 'कफन' कहानी पूरी तरह से सार्थक है। लेखक ने वातावरण निर्माण पर विशेष ध्यान दिया है। कहानी में मधुशाला का यह दृश्य देखिए– ''ज्यों–ज्यों अंधेरा बढ़ता था और सितारों की चमक तेज होती थी, मधुशाला की रौनक भी बढ़ती थी कोई डींग मारता था, कोई खाता था, कोई अपने संगी के गले लिपटा जाता था। कोई अपने दोस्त के मुंह में कुल्हड़ लगाये देता था। वहां के वातावरण में सरूर था, हवा में नशा। कितने तो यहां आकर चुल्लू में मस्त हो जाते थे कि वे जीते हैं या मरते हैं या न जीते हैं न मरते हैं।''

कहने का तात्पर्य है कि आलोच्य कहानी में देशकाल और वातावरण का कहानीकार ने अत्यंत मार्मिक अंकन किया है।

(v) भाषा–शैली–प्रत्येक साहित्य–विधा अपनी भाषा का स्वयं निर्धारण करती है। दूसरे शब्दों में कहें तो प्रत्येक साहित्य–विधा की भाषा का एक अपना मिजाज होता है। इसलिए यदि हम तुलना करें तो पाएंगे कि उपन्यास की भाषा में जहां विस्तार और स्फीति होती है वहीं कहानी की भाषा में घनत्व और गरिमा होती है। कहानी में कहानीकार को गागर में सागर भरना होता है। जबकि उपन्यास में रचनाकार को भाषा को सघन अथवा विस्तृत करने का पूरा अवकाश रहता है। इसलिए भाषा के प्रयोग में कहानीकार को विशेष सावधानी बरतनी होती है।

कफन की भाषा ने पुरानी कहानी की भाषा में निहित आदर्शवादिता और रोमानीपन के मुलम्मे को उतार फेंका। 'कफन' की भाषा ने पहली बार यथार्थवाद की पथरीली भूमि पर अपने पैर जमाए। भाषा की पात्रानुकूलता, यथार्थपरता, संप्रेषण क्षमता देखते ही बनती है। भाषा की व्यंग्यात्मकता का एक उदाहरण लीजिए ''दोनों इस वक्त शान से बैठे पूड़ियां खा रहे थे जैसे जंगल में कोई शेर अपना शिकार उड़ा रहा हो। न जवाबदेही का खौफ था, न बदनामी की फिक्र। इन सब भावनाओं को उन्होंने बहुत पहले जीत लिया था।'' यहां एक ओर घीसू और माधव के प्रति हमारा मन वितृष्णा से भर उठता है तो दूसरी ओर उनके अबाध शोषण से हम करुणाभिभूत हो जाते हैं। यह भाषा की शक्ति का ही प्रमाण है।

टिप्पणी

(vi) उद्देश्य–कफन कहानी उस अर्थ में उद्देश्यमूलक नहीं है जिस अर्थ में प्रेमचंद की पूर्व की कहानियां उद्देश्यमूलक हुआ करती थीं। प्रेमचंद ने यहां यथार्थ को सर्जनात्मक रूप से ग्रहण किया है। कफन कथानक से अधिक संवेद्य घटना पर आधारित है, जिसमें विषमतामूलक समाज की विकृति पर प्रकाश डाला गया है। इस कहानी में सामाजिक व्यवस्था पर कहानीकार ने कुछ और तीव्र व्यंग्य करना चाहा है। पूंजीवादी शोषण के नीचे दबा मनुष्य किस प्रकार अमानवीय हो जाता है। यही प्रस्तुत कहानी में प्रेमचंद ने बताना चाहा। डॉ. विजयपाल सिंह के शब्दों में, ''आधुनिक बोध, समष्टि–यथार्थ, अंतर्निहित संकेत और विश्लेषण एवं प्रतिक्रियाओं को अत्यंत गहराई के साथ प्रस्तुत करने में समर्थ है।''

इस प्रकार यह कहानी सभी कथा–तत्वों के आधार पर पूरी तरह से सफल है।

अपनी प्रगति जांचिए

3. 'कफन' कहानी की मूल संवेदना है–

   (क) आदर्श (ख) यथार्थ

   (ग) समाज (घ) धर्म

4. 'कफन' धन के अभाव में सूखती जाती ..... की कहानी है।

   (क) मानवीय संवेदना (ख) नदी

   (ग) गरिमा (घ) लज्जा

4.4 'अपना–अपना भाग्य' कहानी की समीक्षा

प्रस्तुत कहानी जैनेन्द्र की बहुचर्चित कहानियों में से एक है। इस कहानी में एक गरीब और असहाय बालक की विशेष स्थिति का उद्घाटन किया गया है। इसमें उस बालक का यथार्थ चित्र है जो अपने बाप के अत्याचार से दुखी होकर घर से भाग आया है और शहर में जूठन आदि खाकर अपना पेट भरता है तथा किसी भी दुकान के आगे या पेड़ के नीचे सोकर रात गुजार देता है। किसी पर्यटक द्वारा उसकी सहायता का आश्वासन मिलने पर भी वह वंचित रहा और सहायता के अभाव में ठिठुर–ठिठुर कर मर गया। कहानी–कला के प्रमुख तत्वों के आधार पर कहानी की समीक्षा निम्नलिखित है–

(i) कथा–वस्तु अथवा कथानक–प्रस्तुत कहानी की कथावस्तु पहाड़ी समाज में निर्धनता में गुजारा करने वाले बालक की है। कहानी का कथानक बहुत संक्षिप्त किन्तु सुगुम्फित है। मूल कथावस्तु इस प्रकार है–लेखक अपने मित्र के साथ नैनीताल घूमने के लिए गया। वह कुछ देर निरुद्देश्य घूमने के बाद एक बैंच पर बैठ गया। सामने ताल में एक–दो किश्तियाँ अपने सफेद पाल उठाती हुई एक–दो अंग्रेज युवतियों को लेकर इधर से उधर घूम रही थीं। कुछ अंग्रेज एकनिष्ठ हो मछली पकड़ रहे थे। पीछे पोलो के मैदान में कुछ बच्चे हॉकी खेल रहे थे।

कुछ अंग्रेज स्त्रियां भी तेजी से चली जा रही थी। दूसरी ओर भारतीय स्त्रियां भी अपनी धीमी चाल से चल रही थी। सायंकाल हो गया था। चारों ओर सन्नाटा था।

टिप्पणी

बिजली की रोशनी जगमगा रही थी उसकी परछाई माल में पड़ रही थी। घना कुहरा छा गया था। दोनों थोड़ी देर किनारे बेंच पर बैठ गए।

थोड़ी देर बाद जैसे ही उन्होंने दूर से देखा कि कोई लड़का अपनी बदहालत में उनकी ओर चला आ रहा है। मित्र ने आवाज देकर उसे बुलाया और उससे पूछा कि सारी दुनिया सो गई और वह इस तरह घूम रहा है। उस लड़के से कहा, तू कहाँ सोएगा। उसने कहा कि यहीं कहीं सो जाएगा। कल कहाँ सोया था? यह पूछने पर बताया कि दुकान पर। अब उसे नौकरी से हटा दिया। वहाँ उसे झूठा खाना और एक रुपया मिलता था। उस लड़के से बातचीत करते हुए मालूम हुआ कि उसके कई छोटे भाई–बहिन हैं। वहां काम नहीं था, रोटी नहीं थी। बाप भूखा रहता था और मारता था। माँ भी भूखी रहती थी और रोती थी, सो भाग आया अपने एक साथी के साथ। उसका साथी मर गया। उसे उसके साहब ने मार दिया।

उस लड़के को दोनों अपने दोस्त वकील के पास ले गए। वह उन पर नाराज हुए क्योंकि किसी भी अपरिचित पहाड़ी लड़के के लाने पर वे विश्वास नहीं करते थे।

कुछ देर बाद लेखक ने उस लड़के को कहा कि आज तो कुछ नहीं हो सकता और कल हमारे होटल में आ जाना। वहीं कुछ काम दे देंगे। वह अगले दिन आने के लिए कहकर चला गया। मित्र को दया आ रही थी कि भयंकर शीत है उस लड़के के पास कपड़े भी नहीं हैं। 'यह संसार है' मित्र ने स्वार्थ की फिलासफी सुनाई और सोने चले गए।

दूसरे दिन वह बालक उनके होटल नहीं आया। लेखक अपने मित्र के साथ नैनीताल की सैर कर वापिस लौटने को हुए। मोटर में सवार होते ही उन्हें समाचार मिला कि एक पहाड़ी बालक, सड़क के किनारे पेड़ के नीचे सर्दी से ठिठुरकर मर गया।

मरने के लिए उसे वही जगह, वही काले चिथड़ों की कमीज मिली। मनुष्यों की दुनियाँ ने उसके पास बस यही उपहार छोड़ा था।

उसका शरीर सफेद बर्फ की चादर से ढका था। दुनिया की बेहयाई ढकने के लिए प्रकृति ने उसके शव के लिए सफेद और ठण्डे कफन का प्रबंध कर दिया था। सब सुना और सोचा, अपना–अपना भाग्य।

(ii) पात्र एवं चरित्र चित्रण– प्रस्तुत कहानी में मुख्य पात्र एक ही है, जिस पर यह कहानी आधारित है। वह है पहाड़ी लड़का। दो और पात्र है। लेखक और उसका मित्र जो कहानी को आगे बढ़ाते हैं।

कहानी में पहाड़ी बालक की स्थिति का चित्रण है। वह अपने बाप की पिटाई के डर से और भूख सहन नहीं कर सकने के कारण घर से भाग आता है और नैनीताल में किसी दुकान पर नौकरी करता था बदले में उसे झूठा खाना और एक रुपया मिलता था। वह उसमें भी संतुष्ट था। फिर भी उसे नौकरी से निकाल दिया। अब वह क्या करे? लेखक और उसका मित्र उसकी सहायता करना चाहते हैं। वे उसे अपने साथ होटल ले आए जहाँ उनके वकील दोस्त भी ठहरे हुए थे। वकील उस पहाड़ी लड़के को देखकर बोले–"अजी ये पहाड़ी बड़े शैतान होते हैं। बच्चे–बच्चे में गुल छिपे रहते हैं। आप भी क्या अजीब हैं। उठा लाए कहीं से लो जी, यह नौकर लो।" वकील साहब को उस लड़के पर बिल्कुल भी विश्वास नहीं हुआ और वे उनकी बात अनसुनी कर सोने चले गए।

टिप्पणी

वकील साहब के चले जाने पर मित्र ने अपनी जेब में हाथ डालकर कुछ टटोला पर कुछ नहीं मिला, वह उस लड़के की सहायता करना चाहते थे। अपनी जेब में मिले दस–दस रुपये के नोट का लालच कर उन्होंने अपना बजट बिगड़ने के डर से कहा कि 'हृदय में जितनी दया है, पास में उतने पैसे नहीं है।'' फिर कुछ सोचकर लड़के से बोले–''अब कुछ नहीं हो सकता। कल मिलना। वह 'होटल दी पब' जानता है वहीं कल दस बजे मिलेगा।''

मित्र दया भी दिखाना चाहता है और पैसे भी नहीं खर्च करता। मानवता तो जैसे नष्ट हो गई। फिर भी वह ठंडी सांस लेकर लड़के से पूछता है–कहाँ सोएगा? 'यहीं कहीं बेंच पर, पेड़ के नीचे किसी दुकान की भठ्ठी में।'' बालक अपनी नियति से परिचित है। मित्र अपने मन के दया भाव को फिर दर्शाता है कि ''उसके पास कपड़े कम हैं.....'' लेखक अपनी स्वार्थ मनोवृत्ति प्रकट करता है–''यह संसार है यार।'' मैंने स्वार्थ की फिलासफी सुनाई–''चलो पहले बिस्तर में गर्म हो लो, फिर किसी और की चिंता करना।'' उदास होकर मित्र ने कहा–''स्वार्थ! जो कहो, लाचारी कहो, निष्ठुरता कहो, या बेहयाई।''

इससे मित्र और उनके वकील दोस्तों का चरित्र उजागर होता है। मानवता नाम की कोई चीज नहीं बची है। यह संसार है। वह अगले दिन उनके होटल नहीं आया। वे उस लड़के की आस लगाने की अपेक्षा खुशी–खुशी सैर कर घर लौटने लगे। उन्हें मोटर में सवार होते ही समाचार मिला कि पिछली रात, एक पहाड़ी बालक सड़क के किनारे पेड़ के नीचे ठिठुरकर मर गया।

फिर भी मनुष्य की बेहयाई के सामने प्रकृति ने उस पर दया दिखाते हुए उसके शरीर को बर्फ की सफेद चादर से ढक दिया। मनुष्य के निरीह चरित्रांकन में कहानीकार को सफलता मिली है।

(iii) कथोपकथन या संवाद– जैनेन्द्र मनोविश्लेषणात्मक शैली के कहानीकार हैं। 'अपना–अपना भाग्य' कहानी में संवाद कम और छोटे हैं। परन्तु मनोवैज्ञानिक धरातल पर पुष्ट होने के कारण अधिक नुकीले और प्रभावशाली हैं। कहानी में संवाद की कमी अखरती नहीं। कहानी की संवाद योजना का उदाहरण देखें–

मित्र ने आवाज दी–ए!''

उसने जैसे जागकर देखा और पास आ गया।

''तू कहाँ जा रहा है?'

उसने अपनी खूनी आँखें फाड़ दी।

''दुनिया सो गई, तू ही क्यों घूम रहा है।''

बालक मौन–मूक, फिर भी बोलता हुआ चेहरा लिए खड़ा रहा।

कहाँ सोएगा?''

''यहीं कहीं।''

कल कहाँ सोया था?''

टिप्पणी

''दुकान पर।''

''आज वहाँ क्यों नहीं?''

''नौकरी से हटा दिया।''

क्या नौकरी थी?''

''सब काम। एक रुपया और जूठा खाना।''

फिर नौकरी करेगा?''

''हाँ।''

बाहर चलेगा?''

''हाँ।''

आज क्या खाना खाया?''

कुछ नहीं।''

अब खाना मिलेगा?''

''नहीं मिलेगा''

यों ही सो जाएगा?''

''हाँ।''

''कहां।''

यहीं कहीं।''इन्हीं कपड़ों में?''

बालक फिर आंखों से बोलकर मूक खड़ा रहा। आँखें मानो बोलती थीं–यह भी कैसा मूर्ख प्रश्न है।

यहाँ कथोपकथन का विश्लेषणात्मक रूप है। इस रूप में कहानीकार ने अपनी ओर से पात्रों के संबंध में उनकी मुद्राओं और भाव–भंगिमाओं का उद्‌घाटन करने के लिए कथोपकथन की योजना की है। इस प्रकार लड़का बहुत कम बोलता है पर उसकी भाव भंगिमाओं ने बहुत कुछ कह दिया है।

(iv) वातावरण–देशकाल–प्रस्तुत कहानी में वर्णनात्मक ढंग से एक गंभीर वातावरण का निर्माण स्वतः ही हो गया है। कहानी का प्रारम्भ ऐसी परिस्थिति और परिवेश से प्रस्तुत किया गया है कि कहानी की मूल संवेदना में गहराई का समावेश होता चला गया है।

कहानी की वस्तु, कथा और चरित्र में देशकाल और वातावरण का योगदान केवल ऊपरी नहीं है, आंतरिक अधिक है। देशकाल और वातावरण केवल प्राकृतिक ही नहीं होता, वह सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक भी होता है। इनमें सामाजिक और आर्थिक वातावरण का संकेत कहानी में कुशलता से हुआ है। मानव–जीवन की समस्याएँ देश–काल और वातावरण में विकसित होने वाली विभिन्न ऐतिहासिक शक्तियों के कारण पैदा होती हैं। प्रस्तुत कहानी में पहाड़ी बालक के जीवन में उभरने वाली स्थिति आधुनिक युग की ही देन है। जीवन–यापन के लिए संघर्ष की स्थिति का

टिप्पणी

वातावरण चित्र दृष्टव्य है–''मेरे कई छोटे भाई–बहिन है–सो भाग आया, वहाँ काम नहीं, रोटी नहीं। बाप भूखा रहता था और मारता था माँ भूखी रहती थी और रोती थी। सो भाग आया। एक साथी और था। उसी गाँव का। मुझसे बड़ा था। दोनों साथ यहाँ आए। वह अब नहीं है।'' इसी प्रकार एक अन्य उदाहरण देखा जा सकता है–

'अधिकार गर्व में तने अंग्रेज उसमें थे और चिथड़ों से सजे घोड़ों की बाग थामे वे पहाड़ी उसमें थे, जिन्होंने अपनी प्रतिष्ठा और सम्मान को कुचल कर शून्य बना लिया है और जो बड़ी तत्परता से दुम हिलाना सीख गए हैं।''

(v) भाषा–शैली–'अपना अपना भाग्य' कहानी की भाषा में सादगीपूर्ण सौंदर्य है। कहीं कृत्रिम चमत्कार या सजावट का प्रश्न नहीं, बड़े ही सहज शब्दों में गंभीर भावाभिव्यक्ति होती चलती है। शैली में इतना आकर्षण है कि वर्णन प्रधान इति वृत्तात्मकता भी सरस हो उठी है। कहानी में प्रयत्नगत शिल्पविधान कहीं नहीं दिखाई देता, किन्तु शैली का आकर्षण स्वयं ही आकर्षक बन गया है। कहानी मुख्य पात्र पहाड़ी लड़के के मनोगत भावों की अभिव्यक्ति सरल, स्वाभाविक और प्रवाहमयी भाषा में है–

''माँ बाप हैं?''

हाँ''

कहाँ?''

पन्द्रह कोस दूर गाँव में।''

तू भाग आया? हाँ।'' क्यों?''

''मेरे कई छोटे भाई–बहिन हैं–सो भाग आया। वहाँ काम नहीं रोटी नहीं। बाप भूखा रहता था और मारता था माँ भूखी रहती थी और रोती थी। सो भाग आया। एक साथी और था। उसी गाँव का। मुझसे बड़ा था। दोनों साथ यहाँ आए। वह अब नहीं है।''

इस प्रकार ''अपना–अपना भाग्य'' कहानी की भाषा–शैली भावपूर्ण, चित्रात्मक एवं सशक्त है। यथोचित शब्द–रचना तथा भावानुकूल शब्द चयन कहानी की भाषा–शैली की विशेषताएँ हैं।

(vi) उद्देश्य–'अपना–अपना भाग्य' कहानी एक सोद्देश्य रचना है तथा उसमें चिंतन की गहराई के अतिरिक्त अनुभूति की व्यंजना एवं आदर्श की प्रतिष्ठा का प्रयत्न रहा है। कहानी का मुख्य उद्देश्य इसके मुख्य पात्र और सहयोगी पात्रों के चरित्र का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण कर उनकी मनःस्थिति को प्रस्तुत करना रहा है। कहानी में आर्थिक स्थिति से कमजोर घर–परिवार के जीवन–यापन की दुश्चिंताओं का परिचय मिलता है।

जैनेन्द्र कुमार ने इस कहानी में मनुष्य समाज की बेहयाई को उभारा है और स्पष्ट किया है कि मनुष्य भले ही मनुष्य के प्रति बेरुखी दिखाए परन्तु प्रकृति फिर भी उसका साथ देती है।

कुल मिलाकर अपनी विशिष्टता में यह एक सफल कहानी है।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

5. लेखक और उसके मित्र को लड़का किस शहर में मिला था?

(क) दिल्ली (ख) नैनीताल

(ग) मुंबई (घ) मसूरी

6. लड़का अपने घर से क्यों भाग आया था?

(क) ठंड के कारण (ख) दूर होने के कारण

(ग) गरीबी के कारण (घ) वर्षा के कारण

4.5 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम' कहानी की समीक्षा

प्रस्तुत कहानी फणीश्वरनाथ रेणु की बहुचर्चित कहानियों में से एक है। लेखक ने इसमें अभिनव रचना धर्मिता का परिचय दिया है। यह एक विशिष्ट कहानी है जिस पर इसी नाम से अत्यधिक सफल फिल्म भी बन चुकी है। इस कहानी में ग्रामीण क्षेत्र के सीधे–सादे, निश्छल हृदय, ईमानदार व्यक्ति के कटु अनुभव के आधार पर उसके द्वारा खाई गई कसमों को प्रस्तुत किया गया है। कहानी–कला के प्रमुख तत्त्वों के आधार पर कहानी की समीक्षा निम्नलिखित है–

(i) **कथावस्तु अथवा कथानक**–प्रस्तुत कहानी की कथावस्तु ग्रामीण क्षेत्र के निश्छल हृदय युवक हिरामन के कटु अनुभवों को दर्शाती है। हिरामन पिछले बीस साल से गाड़ी हाँकता है। वह सीमा के उस पार मोरंगराज नेपाल से धान और लकड़ी ढो चुका है। कंट्रोल के जमाने में चोरबाजारी का माल इस पार से उस पार पहुँचाया है। जब हिरामन की गाड़ी पकड़ी गई तब महाजन का मुनीम उसी की गाड़ी में गाँठों के बीच मुक्की लगाकर बैठा था। गाड़ी पकड़े जाने पर वह गाड़ीवानी के कटु अनुभवों के आधार पर दो कसमें खा चुका है–एक चोर बाजारी का सामान नहीं लादेगा और दूसरी बाँस लदनी नहीं करेगा। बाँस लदी गाड़ी के चार हाथ आगे बाँस का अगुआ निकला रहता है और पीछे की ओर चार हाथ पिछुआ। गाड़ी काबू के बाहर रहती है। सो बेकाबू वाली लदनी और खरैहिया। हिरामन ने खरैहिया शहर की लदनी भी छोड़ दी। बाँस का अगुआ पकड़कर चलने वाला भाड़ेदार का महाभकुआ नौकर, लड़की स्कूल की ओर देखने लगा। बस मोड़ पर घोड़ा गाड़ी से टक्कर हो गई। जब तक हिरामन बैलों की रस्सी खींचे, तब तक घोड़ा गाड़ी की छतरी बाँस के अगुआ में फँस गई। घोड़ा गाड़ी वाले तड़ातड़ चाबुक मारते हुए गाली दी थी....।

फिर तीसरी कसम से सम्बन्धित मुख्य कथा शुरू होती है। इसमें गाड़ीवान हिरामन और नाटक कम्पनी की हीराबाई के बीच पूरी यात्रा भर मधुर वार्ता होती रहती है। वह नाम साम्य के आधार पर वह उसे 'मीता' संबोधन से पुकारती है। किन्तु यात्रा के अंत में उसे अहसास होता है कि नाटक कम्पनी की औरत को लादना भी एक जोखिम भरा काम है।

टिप्पणी

मथुरामोहन नौटंकी कम्पनी में लैला बनने वाली हीराबाई का बहुत नाम था। परन्तु हिरामन उससे अनजाना था। भले ही उसने सात साल तक लगातार मेलों की लदनी लादी है परन्तु नौटंकी, थियेटर या बायस्कोप सिनेमा नहीं देखा। हिरामन कम्पनी की सवारी लेकर गाड़ी हाँकता है। हीराबाई पूछती है ''भैया, 'तुम्हारा क्या नाम है?'' हिरामन सोचता है कि वह हीराबाई को क्या कहकर संबोधित करें? हिरामन ने आँख की कनखियों से सवारी हीराबाई को देखा। हीराबाई की आँखें गुजुर–गुजुर उसको देख रही है। हिरामन के मन में कोई अनजानी रागिनी बज उठी।

हिरामन की बचपन में शादी हुई थी, बचपन में ही गौने से पहले दुलहिन मर गई थी। फिर उसने शादी नहीं की। सब कुछ छूट जाए परन्तु हिरामन गाड़ीवानी नहीं छोड़ सकता।

हीराबाई हिरामन जैसे निश्छल आदमी से बहुत प्रभावित थी। हिरामन गाता भी अच्छा है। हीराबाई कहती है–''वाह कितना बढ़िया गाते हो तुम।'' हिरामन मुँह नीचाकर हँसने लगा।

हिरामन अब बेखटक के हीराबाई की आँखों में आंख डालकर बात करता है। कम्पनी की औरत को जानकर वह हैरान था कि वह गाँव का गीत सुनती है। महुआ घटवारिन का गीत हिरामन को बहुत प्रिय है। हिरामन को एक गीत की आधी कड़ी हाथ लगी है–'मारे गए गुलफाम' कौन था यह गुलफाम? हीराबाई रोती हुई गा रही थी–अजी हाँ मारे गए गुलफाम।''

हिरामन सुबह से ही तीन बार लदनी लादकर स्टेशन आ चुका है। आज उसे अपनी भौजाई की याद आ रही है।

कहानी के अंत में हिरामन बैलों को हाँकते हुए गुनगुनाता है–''अजी हाँ मारे गए गुलफाम.....।'' गुलफाम एक पौराणिक पात्र है जो इंद्र की सभा की कहानी में सब्ज परी का प्रेम पात्र है। इस कहानी में यह अंश संकेत करता है कि इस कहानी में हीराबाई का प्रेमी जैसा 'मीता' हिरामन भी उसे गाड़ी पर लादने के कारण एकाधिक बार संकटग्रस्त हो जाता है। यह संकट मन के आकर्षण के कारण भी है और बाह्य साधनों के कारण भी। भविष्य में इस प्रकार के संकटों से बचने के लिए ही संभवतः हिरामन तीसरी और अंतिम कसम खाता है। इस प्रकार कहानी का शीर्षक अत्यधिक सार्थक एवं उपयुक्त है।

(ii) **चरित्र–चित्रण**– कहानी में पात्रों की संख्या कम होती है। सामान्यतः कहानी में किसी एक पात्र के इर्द–गिर्द सारी घटना घूमती है। 'तीसरी कसम' कहानी में मुख्य पात्र केवल दो हैं– हिरामन और हीराबाई। इसके अतिरिक्त भी पात्र हैं– दारोगा, मुनीम जी, धुन्नी राम, लालमोहर, पलट दास। कहानी में इनमें से कोई भी पात्र अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व लेकर नहीं उभरता। ये सभी पात्र केवल घटना–विकास में सहायता करने के लिए गौण भूमिका निभाते हैं। इस प्रकार कहानी में मुख्य पात्र दो ही हैं– हिरामन और हीराबाई।

हिरामन आलोच्य कहानी में गाड़ीवान है। वह कंट्रोल के जमाने में चोर बाजारी का माल इस पार से उस पार पहुंचाता था। इस क्रम में उसकी गाड़ी पकड़ी गई। उसने

टिप्पणी

जैसे–तैसे करके अपने बैलों को गाड़ी से मुक्त कर दिया और स्वयं दो कसमें खाई थीं– एक चोर बाजारी का माल नहीं लादेंगे। और दूसरी बांस। अपने हर भाड़ेदार से वह पहले ही पूछ लेता था 'चोरी चकारी वाली चीज तो नहीं? और बांस? बांस लादने के लिए पचास रुपये भी दे कोई, हिरामन की गाड़ी नहीं मिलेगी दूसरे की गाड़ी देखे।

महान पात्रों की सृष्टि करके कलाकार अपनी महत्ता को प्रतिपादित करता है। 'तीसरी कसम' का हिरामन ऐसा ही पात्र है जो सदियों तक अपने निर्माताओं की स्मृति को अक्षुण्ण बनाए रखेगा। हिरामन मजदूर वर्ग का प्रतिनिधि है।

हिरामन सहृदय व्यक्ति है। उसे अपने से अधिक अपने बैलों की चिंता है। बेजुबान पशु से प्रेम करने वाला हिरामन किसी भी प्रकार के बनावटीपन से बहुत दूर है। सिपाही द्वारा हिरामन की गाड़ी पकड़े जाने पर वह धीरे से बैलों के गले की रस्सियां खोल देता है ओर उन्हें आजाद कर देता है। उसे डर है कि पकड़े जाने पर उसके बैल फाटक में भूखे प्यासे रहेंगे। नीलाम हो जाएंगे। हिरामन अपनी भौजाई को क्या मुँह दिखाएगा।

हिरामन निम्न मध्य वर्ग का पात्र है। वह सजीव रूप में असाधारण न लगकर हमारे ही बीच का व्यक्ति लगता है। वह सामान्य व्यक्ति का आचरण करते दिखाया गया है– "हिरामन की सवारी ने करवट ली। चांदनी पूरे मुखड़े पड़ी तो हिरामन चीखते–चीखते रुक गया... अरे बाप... ई तो परी है।"

रेणु के चरित्र चित्रण की यह विशेषता है कि वे संकेतों द्वारा अपने पात्रों का चरित्र उद्घाटन करते हैं। घटनाओं और दृश्यों की संयोजना द्वारा पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डालते हैं। जैसे– "हिरामन ने आँख की कनखियों से देखा... उसकी सवारी... मीता... हीराबाई की आँखें गुजुर–गुजुर उसको हेर रही हैं। हिरामन के मन में कोई अजानी रागिनी बन उठी। नारी देह सिरसिरा रही है। बोला– "बैल को मारते हैं तो आपको बहुत बुरा लगता है?" हीराबाई ने परख लिया हिरामन सचमुच हीरा है।"

"चालीस साल का हट्टा–कट्टा, काला–कलूटा देहाती नौजवान अपनी गाड़ी और बैलों के सिवाय दुनिया की किसी और बात में दिलचस्पी नहीं लेता।"... 'हिरामन ने तय कर लिया है शादी नहीं करेगा। कौन बलाय मोल लेने जाए... व्याह करके फिर गाड़ीवानी का क्या करेगा। कोई और सब कुछ छूट जाए, गाड़ीवानी नहीं छोड़ सकता हिरामन।"

हिरामन बहुत अच्छा गायक भी है। जब वह अपनी मस्ती में गाता है तो सुनने वाला भी आनंदति हो जाता है– "सजनवा बैरी हो गए हमार, सजनवा....।" हीराबाई उससे कहती है कि "वाह, कितना बढ़िया गाते हो तुम।"

हिरामन ने कभी नौटंकी नहीं देखी थी। हीराबाई ने हिरामन और उसके दोस्तों के लिए पास दिलवा दिए। नौटंकी में जब हीराबाई नाचती है तो कुछ दर्शक उस पर अश्लील फब्तियां कसते हैं। हिरामन उनसे झगड़ा करता है। हीराबाई हिरामन को डांटती है। हिरामन उस पर विश्वास करके अपनी सारी जमा पूंजी उसे सौंप देता है। प्रेम विश्वास का दूसरा नाम है। बाद में हीराबाई अपनी मूल नौटंकी में चली जाती है तब हिरामन को उसकी पूंजी उसे लौटा देती है। हीराबाई हिरामन को एक शाल देती

टिप्पणी

है। तब हिरामन अपनी तीसरी कसम खाता है कि नौटंकी वाली बाई को कभी अपनी गाड़ी में नहीं बिठाएगा। यहां उसका मन टूट जाता है।

कहानी का दूसरा प्रमुख पात्र है हीराबाई। वह मथुरा प्रसाद की नौटंकी में लैला का किरदार निभाती है। हिरामन अपनी गाड़ी में हीराबाई को बैठाकर ले जाता है। उसे अपनी पीठ में गुदगुदी लग रही है। उसे गाड़ी में से चंपा के फूल की खुशबू आती है। आंख खुलने पर हीराबाई पूछती है– "भैया तुम्हारा नाम क्या है?" "मेरा नाम! नाम मेरा है– हिरामन।" हीराबाई मुस्कारकर कहती है– "तब तो मीता कहूंगी भैया नहीं– मेरा नाम भी हीरा है।"

सुनकर हिरामन ने बैलों की झिड़की दी।... हीराबाई कहती है– "मारो मत, धीरे–धीरे चलने दो, जल्दी क्या है।"

हीराबाई को इंसान की परख है। जब हिरामन बैलों को झिड़कता है तो वह उसे मारने से रोकती है। हिरामन कहता है कि "बैल को मारते हैं तो आपको बहुत बुरा लगता है?" इसी बात से हीराबाई उसकी परख कर लेती है। वह समझ गई कि हिरामन सचमुच हीरा है।

नौटंकी में जब हीराबाई नाचती है और कुछ दर्शक जब अश्लील पब्तियां कसते हैं तब हिरामन उनसे झगड़ा करता है। वह हीराबाई पर ऐसी फब्तियां बर्दाश्त नहीं करता। हीराबाई तब हिरामन को डांटती है– "तुम इन लोगों से क्यों झगड़े? यह तो रोज का काम है।"

हीराबाई के मन में हिरामन के प्रति प्रेम है। वह हिरामन पर विश्वास करती है हीराबाई अपनी पुरानी नौटंकी में लौटने के लिए रेलगाड़ी से रवाना हो जाती है। हिरामन उन्हें विदा कर अपनी गाड़ी के पास लौट आता है। हीराबाई चली गई, मेला अब टूटेगा।

पात्रों के द्वारा कहानी का विकास होता है। पात्र ही कहानी के ढांचे का निर्माण करते हैं तथा पात्रों के द्वारा ही कहानी के कथा का उद्घाटन होता है। आलोच्य कहानी 'तीसरी कसम' में पात्र निम्न मध्य वर्ग से लिए गए हैं। पहले कहानी की रचना वर्णनात्मक रूप से हुआ करती थी। घटना का आरंभ, विकास और फिर अंत। कहानी का विकास अब किसी भी रूप में हो सकता है। यथा– दो पात्रों के पारस्परिक संवाद द्वारा, किसी चरित्र के अंतर्द्वंद्व द्वारा, डायरी या पत्र शैली में।

प्रायः कहानियों में एक ही चरित्र केंद्र में होता है। विशेषतः चरित्र प्रधान कहानियां एक ही चरित्र को केंद्र में रख कर लिखी जाती हैं। 'तीसरी कसम' भावात्मक कहानी है। इसमें मुख्य रूप से एक ही पात्र पूरे कथानक को आच्छादित किए हुए है। हिरामन मुख्य पात्र है वही कथा के केंद्र में है। यहां पात्र हिरामन के चरित्र का एक ही पहलू उजागर होता है, वही कहानी के केंद्रीय भाव को व्यक्त करता है।

आलोच्य कहानी के प्रारंभ में हिरामन गाड़ीवान है जो बीस साल से गाड़ी हांकता है। चोर व्यापारी भी उसे पक्का गाड़ीवान मानते हैं। गाड़ी में चोरी चकारी का माल भी ढोता है। पकड़े जाने पर वह दो कसम खाता है कि चोरी का माल और बांस की लादी गाड़ी द्वारा नहीं ले जाएगा। फिर भी वह गाड़ी चलाने से नहीं रुकता है।

टिप्पणी

हिरामन दो वर्ष से चंपानगर के मेले में गाड़ी चलाता है। भगवती मैया उस पर प्रसन्न है। गाड़ी टूटने पर उसने नई गाड़ी बनवाई थी।

इस बार जनानी सवारी मिलने पर वह अचंभित है। उसकी गाड़ी में औरत है या चंपा का फूल महक रहा है। यहीं से हिरामन के मन में अनुराग पैदा हो गया है। उसकी पीठ में गुदगुदी हो रही है। हिरामन की सवारी ने करवट ली तो हिरामन अचंभित हो गया– "अरे बाप रे, ई तो परी है।" उसने बैलों को टिकारी दी। हीराबाई द्वारा पूछने पर वह अपना नाम हिरामन बताता है। उनमें संवाद होता है। हिरामन और हीराबाई का आपस का वार्तालाप ही कहानी के कथा–प्रवाह को आगे बढ़ाता है।

हिरामन हट्टा–कट्टा नौजवान है। अपनी गाड़ी और अपने बैलों के सिवाय उसे किसी और बात में दिलचस्पी नहीं है।

हिरामन नौटंकी की औरत को बाईजी समझता है। कंपनी में काम करने वाली औरतों को वह देख चुका है। फिर भी वह हीराबाई को अपनी गाड़ी में बैठाता है। दोनों के संवाद से कहानी आगे बढ़ती है।

हिरामन के साथ अन्य लालमोहर, धुन्नीराम, पलट दास, लहसनवां का आगमन कथा–प्रवाह में सहायक होता है। किंतु कहानी का मुख्य पात्र तो हिरामन ही है। कहानी का संपूर्ण कथानक उसी के इर्द–गिर्द चक्कर काटता है। उसी के माध्यम से कहानी की समस्या का उद्घाटन होता है और पात्र के भावात्मक रूप को अभिव्यक्ति मिलती है। हीराबाई के अपनी पुरानी कंपनी में लौट जाने पर हिरामन का मन निराश हो जाता है और वह तीसरी कसम उठाता है कि अब कभी भी कंपनी की औरत को अपनी गाड़ी में नहीं बिठाएगा। उसने उलट कर देखा– "बोरे भी नहीं, बाघ भी नहीं, परी... देवी... मीता... हीरा देवी.... महुआ घटवारिन... कोई नहीं। मरे हुए मुहूर्तों की गूंगी आवाजें मुखर होना चाहती है। हिरामन के होठ हिल रहे हैं। शायद वह तीसरी कसम खा रहा है... कंपनी की औरत की लदनी....।"

हिरामन हठात् अपने दोनों बैलों को झिड़की दी, दुआली से मारते हुए बोला, रेलवे लाइन की ओर उलट–उलट कर क्या देखते हो? दोनों बैलों ने कदम खोलकर चाल पकड़ी। हिरामन गुनगुनाने लगा– "अजी हाँ मारे गए गुलफाम।"

पात्र कहानीकार की मानस संतान होते हैं जिनके माध्यम से वह अपनी आवाज और प्रतिपाद्य सहृदय तक प्रेषित करता है। इस दृष्टि से महान पात्रों की सृष्टि करके अपनी महत्ता स्थापित करता है। आलोच्य कहानी तीसरी कसम का हिरामन महान तो नहीं है परंतु निम्न मध्य वर्ग से आया है।

आलोच्य कहानी 'तीसरी कसम' का कथानक आंचलिकता पर आधारित है। कथानक का आधार आंचलिक होते हुए भी पात्रों का व्यक्तित्व विनष्ट नहीं होने पाया है और न घटनाओं के वर्णन में व्यवधान आया है। आलोच्य कहानी में आंचलिकता की प्रधानता होने पर भी अलग प्रेम कथा के रूप में इसका प्रभाव दृष्टव्य है। आचंलिकता के आग्रह में इनका प्रेम संबंध ढकता नहीं है, अपितु आंचलिकता इसे निखारती ही है। भोले और भले ग्रामीण प्रेम की अक्षुण्ण स्मृति मानस में छोड़ने में यह कहानी सक्षम है।

प्रेम के रागात्मक पक्ष को स्पष्ट करने वाली कहानियों में आलोच्य कहानी महत्वपूर्ण है।

टिप्पणी

आलोच्य कहानी के कथानक में कल्पना के स्थान पर यथार्थ का प्रभाव परिलक्षित होता है। इसमें लेखक छायावादी दृष्टिकोण से भी प्रभावित दिखाई देता है। और रीतिकालीन शृंगार वर्णन विधि का अवलंबन ग्रहण करता हुआ भी दिखाई देता है।

आलोच्य कहानी के पात्र 'टाइप' नहीं है। उनका हर पात्र अपनी निजता में जीता है। हिरामन गाड़ीवान है पर धुनीराम, पलटदास, लालमोहर आदि गाड़ीवानों से उसके चरित्र का साम्य नहीं है।

इस प्रकार आलोच्य कहानी के पात्र सीधे–सादे हैं। सभ्यता की चमक दमक और शहरी जीवन की छलकपट से दूर है। वे कथानक से पूर्णरूपेण साम्य रखते हैं।

(iii) **कथोपकथन/संवाद**– कहानी के पात्र आपस में जो बातचीत करते हैं उन्हें संवाद कहते हैं। संवादों से कहानी आगे बढ़ती है। सफल कहानीकार पात्रों के अनुकूल संवादों का आयोजन करता है। यदि एक अनपढ़ पात्र शिक्षित की तरह बोलने लगे तो उसमें अस्वाभाविकता आ जाएगी। काल एवं स्थान के अनुसार पात्रों के संवादों में भी परिवर्तन होता है।

कहानी चाहे घटना प्रधान हो, या चरित्र प्रधान, उसकी विषयवस्तु ऐतिहासिक हो या समकालीन, चाहे वह जिस उद्देश्य से लिखी गई हो, कहानीकार का कहानी लिखने का अपना ढंग या शैली होती है। कहानीकार कहानी में शैली का निर्धारण कैसे करता है? कहानी की शैली को दो चीजें प्रभावित करती है– एक तो लेखक की वैयक्तिक रुचि और दूसरे कहानी की विषयवस्तु की मांग। अलग–अलग विषयवस्तु कहानी की भिन्न–भिन्न शैली की मांग करते हैं।

कहानी लिखने की प्रायः कई शैलियां प्रचलित हैं। घटना प्रधान कहानियां प्रायः वर्णनात्मक शैली में लिखी जाती हैं, जिसमें लेखक घटनाओं का वर्णन मात्र करता है। चरित्र प्रधान कहानियों में कहानीकार मनोविश्लेषणात्मक शैली का प्रयोग करता है और पात्रों के अंतर्द्वंद्व को प्रस्तुत करता है।

आंचलिक कहानियों में संवादों का स्वरूप एवं स्तर अन्य कहानियों के संवादों से भिन्न होता है। उनका विशेष महत्व होता है। उनका उद्देश्य अपने अंचल विशेष की विशेषता को उजागर करना होता है। इन कहानियों के संवाद भी विविध, वैयक्तिक विशेषताओं के साथ होते हैं क्योंकि शैली का संबंध गहरे स्तर पर व्यक्ति से जुड़ा होता है।

'तीसरी कसम' का परिवेश आंचलिक है। इसी के कारण संवादों में स्वाभाविकता आ गई है। इसमें लोक भाषा का अधिक प्रयोग है। अपनी बोली में पात्र भिन्न या विशिष्ट होने का प्रतिभास सहज ही देते हैं– "ऐ गाड़ी रोको! साले, गोली मार देंगे?"

हिरामन की गाड़ी के पास तैनात सिपाही ने अपनी भाषा में दूसरे सिपाही से धीमी आवाज में पूछा, "का हो? मामला गोल होखी का?" हिरामन गाड़ी हांकता है। चोरी चकारी का माल लाद कर पैसे कमाता है। कंट्रोल का जमाना है। पकड़े जाने पर उसे अपनी चिंता नहीं अपितु बैलों की चिंता है। उसने बैलों के कानों के पास गुदगुदी लगा दी और मन–ही–मन बोला, "चलो भैयन, जान बचेगी तो ऐसी–ऐसी मग्गड़ गाड़ी बहुत मिलेगी.... एक–दो–तीन, नौ दो ग्यारह।"

टिप्पणी

हिरामन कोई पढ़ा–लिखा नहीं है। लेकिन इतना समझता है कि अपना अच्छा–बुरा क्या है? माल लादने से पहले ही भाड़ेदार से वह पूछ लेता है– "चोरी–चकारी वाली चीज तो नहीं? और बांस? बांस लादने के लिए पचास रुपये भी दे कोई, हिरामन की गाड़ी नहीं मिलेगी। देसरे की गाड़ी देखे।"

आलोच्य कहानी के संवाद पात्रों की स्थिति के अनुरूप और यथार्थ के अनुसार हैं। उनके संवादों में स्पष्टता, सत्यता और निःस्वार्थ भाव की झलक मिलती है।

आलोच्य कहानी में कथा कथोपकथन से आगे बढ़ती है। संवाद की अपेक्षा कथोपकथन अधिक प्रभावी है, जैसे–

लालमोहर दौड़ता हाँफता बासा पर आया– "ऐ ऐ हिरामन, यहाँ बैठे हो, चल कर देखो, जै जैकार हो रहा है। मय बाजा गाजा, छापी फाहरम के साथ हीराबाई की जै जै कर रहा हूँ।"

हिरामन बड़बड़कार उठा। लहसनवां ने कहा, धुन्नी काका, तुम बासा पर रहो, मैं भी देख जाऊँ।

कहानीकार की रचना की सारी विशेषताएं भाषा के माध्यम से सामने आती हैं। इसीलिए कहानी की भाषा को कहानी संरचना का प्राण कहा जा सकता है। शब्दों के द्वारा ही कहानी में रोचकता, पात्रों में सजीवता और परिवेश में स्वाभाविकता आती है।

आलोच्य कहानी 'तीसरी कसम' प्रेम संबंध पर आधारित है। इसकी भाषा में ग्रामीण अंचल का पुट है। भाषा में अंचल विशेष के हंसने, रोने तक की क्रियाओं के भाषा–संकेतों का रूप मिलता है, जैसे– "कदम खोलकर और कलेजा बांधकर चलो.. . ए.... छि... छि...! बढ़ के भैयन! ले–ले–ले–ए–हे–य।"

'तीसरी कसम' की भाषा पात्रानुकूल है। उसमें स्वाभाविकता की वृद्धि हुई है। हिरामन ने अपने बैलों की पीठ सहलाते हुए कहा, "देखो भैयन, ऐसा मौका फिर हाथ न आएगा। यही है मौका अपनी गाड़ी बनवाने का। नहीं तो फिर आधेदारी। अरे पिंजड़े में बंद बाघ का क्या डर? मारंग की तराई में दहाड़ते हुए बाघों को देख चुके हो। फिर पीठ पर मैं तो हूँ।...."

'तीसरी कसम' की भाषा काव्यात्मकता से पूरित है। जहां कहानीकार के पात्र बोलते हैं तो स्थानीय भाषा का प्रयोग होता है–

"सजनवा बैरी हो ग... य.. हमारो। सजनवा....
अरे चिठिया हो तो सब कोई बाँचे.. चिठिया हो तो....
हाय! करमवा, होय करमवा..... ।"

इस प्रकार भाषा में सर्वत्र सौष्ठव है। वह अपनी परिनिष्ठा से स्खलित नहीं हुई है।

पात्रों की बोलचाल में अंचल विशेष में प्रचलित मुहावरों और कहावतों तथा सूक्तियों का प्रयोग भी देखने को मिलता है। भाषा के स्तर को जनभाषा अथवा ग्रामीण भाषा के स्तर पर लाने के लिए आंचलिक कहानियों में मुहावरों तथा कहावतों का प्रयोग आवश्यक है, यथा– 'पीठ में गुदगुदी लगती है', 'नौ दो ग्यारह....', 'पहाड़ी तोते को दूध–भात खाते देखा है', 'मारे गए गुलफाम'।

टिप्पणी

कहानी में आंचलिक शब्दों से व्यंजना और व्यक्तित्व की आवाज निकालने की भी कोशिश की गई है। यथा–

तेरी बाँकी अदा पर मैं खुद हूँ फिदा
तेरी चाहत को दिलबर बयाँ क्या करूँ।
यही ख्वाहिश है कि इ–इ–इ–तू तू मुझको देखा करे
और दिलोजान मैं तुमको देखा करूँ।
किर्र र्–र्–र्... क... ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ घन–घन धड़ाम।
हर आदमी का दिल नगाड़ा हो गया।

इस प्रकार कहानी की भाषा अपनी प्रकृति के अनुरूप परिमार्जित है।

संवाद कहानी में कई ढंग से काम करते हैं। संवादों से कहानी आगे बढ़ती है। विभिन्न पात्रों के चरित्र पर प्रकाश पड़ता है। संवाद के द्वारा कहानी में नाटकीयता लाई जा सकती है और लंबे–चौड़े वर्णन से भी बचा जा सकता है। उदाहरणार्थ–

हीराबाई हिरामन से पूछती है–

"भैया तुम्हारा नाम क्या है?

हू–ब–हू फेनूगिलास.... हिरामन के रोम–रोम बज उठे। मुँह से बोली नहीं निकली। उसके दोनों बैल भी कान खड़े करके इस बोली को परखते हैं। मेरा नाम... . मेरा नाम है हिरामन।"

उसकी सवारी मुस्कराती है।... मुस्कराहट में खुशबू है। तब तो मीता कहूँगी, भैया नहीं, मेरा नाम भी हीरा है।

इस्स।" हिरामन को परतीत नहीं, "मर्द और औरत के नाम में फर्क होता है।"

"हाँ जी, मेरा नाम भी हीराबाई है।"

कहाँ हिरामन और कहाँ हीराबाई, बहुत फर्क है।

इस प्रकार कहानी में संवादों की महत्वपूर्ण भूमिका है। संवाद में यह ध्यान रखने की बात होती है कि वह पात्रों और परिस्थितियों के अनुकूल हो। संवादों की भाषा में उस युग की भाषगत विशिष्टता का ध्यान रखना आवश्यक है। 'तीसरी कसम' के पात्र शिक्षित नहीं हैं, अतः वे अशिक्षितों की भाषा ही बोलते हैं। उदाहरणार्थ–

"इस्स... कथा सुनने का शौक है आपको?.... लेकिन काला आदमी, राजा क्या महाराजा भी हो जाए, रहेगा काला आदमी ही। साहब के जैसे अक्किल कहाँ से पाएगा। हँस कर बात उड़ा दी सभी ने। तब रानी को बार–बार सपना देने लगा देवता। सेवा नहीं कर सकते तो जाने दो, नहीं रहेंगे तुम्हारे यहाँ। इसके बाद देवता का खेल शुरू हुआ। सबसे पहले दोनों दंतार हाथी मरे, फिर घोड़ा, फिर पटपटांग...।"

पटपटांग क्या है?

स्पष्टतः कथा प्रवाह में संवादों की अहं भूमिका होती है।

(iv) वातावरण–देशकाल– कहानी किसी स्थान और समय से संबंधित होती है। इन्हें परिवेश कहते हैं। कहानी में उचित स्थान तथा काल का वर्णन सजीवता लाता है।

यदि कहानी की घटनाएँ गांव में घटित हुई हैं तो गाँव से संबंधित सारी बातें उसमें आनी चाहिए। घर–आँगन, खेत–खलिहान, पशु, रीति–रिवाज, रहन–सहन सभी परिवेश के अंतर्गत आते हैं।

टिप्पणी

देश–काल अर्थात कहानी में वर्णित घटनाओं का संबंध किस समय से है और कहां घटित हो रही है और वहां उस समय हालात कैसे हैं। कहानी में सजीवता व स्वाभाविकता लाने के लिए यह आवश्यक है कि कहानीकार कहानी में वर्णित घटनाओं को उसके वास्तविक परिवेश में प्रस्तुत करे। कहानी का परिवेश जितना स्वाभाविक और वास्तविकता के नजदीक होगा, कहानी उतनी ही विश्वसनीय और यथार्थ नजर आएगी। इससे पात्रों के प्रति अनुकूलता भी बढ़ेगी।

'तीसरी कसम' का परिवेश (देश–काल) आंचलिक सर्जना का मूल तत्व है। आंचलिक भाषा का प्रयोग व्यवहार तथा सांस्कृतिक एवं लोक मान्यताओं का उद्‌घाटन पात्रों द्वारा होने के कारण पात्रों की आंचलिकता सहज और अनिवार्य है। उदाहरणार्थ– 'तीसरी कसम' का हिरामन गाड़ीवान ऐसे ही निम्नवर्गीय परिवेश से है– "चालीस साल का हट्‌टा कट्‌टा, काला–कलूटा देहाती नौजवान अपनी गाड़ी और अपने बैलों के सिवाय दुनिया की किसी और बात में विशेष दिलचस्पी नहीं लेता। घर में बड़ा भाई है, खेती करता है। बाल–बच्चे वाला आदमी है। हिरामन भाई से बढ़कर भाभी की इज्जत करता है। भाभी से डरता भी है। हिरामन की भी शादी हुई थी, बचपन में ही गौने के पहले ही दुलहिन मर गई। हिरामन को अपनी दुलहिन का चेहरा याद नहीं।... दूसरी शादी? दूसरी शादी न करने के अनेक कारण हैं। भाभी की जिद, कुंआरी लड़की से ही हिरामन की शादी करवाएगी। कुमारी का मतलब हुआ, पांच सात साल की। कौन मानता है सरधा कानून? कोई लड़की वाला दो ब्याहू को अपनी लड़की गरज में पड़ने पर ही दे सकता है।

तत्कालीन परिवेश में ग्रामीण क्षेत्र में इसी प्रकार की मान्यता व्यक्ति को बाध्य न कर देती थी।

इस प्रकार आंचलिक कथा रचना के लिए आंचलिक देश–काल तथा पात्रों, का अनुकूल होना आवश्यक है। आंचलिक पात्र, युगीन चेतना का प्रभाव, क्षेत्र की स्थिति और उसके जीवन का यथार्थवादी चित्रण आदि सभी तत्वों की अनिवार्यता आंचलिक कहानी के लिए अपरिहार्य है। 'तीसरी कसम' में इन तत्वों की संयोजना सहज ही हुई है।

प्रस्तुत कहानी में घटना और पात्रों की संबंधित परिस्थितियों का चित्रण सजीव रूप में किया गया है। सारी योजना साभिप्राय और क्रमिक ढंग से है। प्रकृति के दृश्यों का चित्रण करके घटनाओं को सजीव और यथार्थ बना दिया है। वातावरण के दृश्य विधान से न केवल चरित्र की मनःस्थिति पर प्रकाश डाला गया है। अपितु उसके कार्य–व्यापार सजीव बन गए हैं।

तीसरी कसम कहानी में नदी का किनारा, खेतों में फूले हुए धान के पौधों से आती पवनिया गंध मन को प्रसन्न कर देती है। उदाहरणार्थ ''आसिन–कातिक के भोर में छा जाने वाले कुहासे से हिरामन को पुरानी चिढ़ है। बहुत बार वह सड़क भूल कर

टिप्पणी

भटक चुका है। किन्तु आज के भोर के इस घने कुहासे में भी वह मगन है। नदी के किनारे धन–खेतों से फूले हुए धान के पौधों की पवनिया गंध आती है। पर्व–पावन के दिन गाँव में ऐसी ही सुगंध फैली रहती है। उसकी गाड़ी में फिर चंपा का फूल खिला। उस फूल में एक परी बैठी है।.... जै भगवती।''

फणीश्वर नाथ रेणु की कहानियों में ग्राम्यांचल का चित्रण अधिक है। उन्होंने भारतीय ग्रामीण जीवन का उसके संपूर्ण आंतरिक यथार्थ के साथ चित्रण किया है।

वस्तुतः ग्रामीण जन–जीवन के संदर्भ में रेणु की कहानियाँ अकुंठ मानवीयता, गहन रागात्मकता और अनोखी रसमयता से परिपूर्ण हैं।

(v) भाषा–शैली–भाषा के द्वारा कहानीकार कहानी में सजीवता, स्वाभाविकता एवं रोचकता लाता है। इसके लिए भाषा पर पूर्ण अधिकार होना आवश्यक है। कहानी में जब कोई बात पात्रों के द्वारा कहलवाई जाती है वहाँ पात्रों के अनुकूल भाषा का होना आवश्यक है। कहानी की भाषा सरल, सुबोध और बातचीत के रूप में होनी चाहिए। प्रस्तुत कहानी में लेखक ने ऐसा ही प्रयास किया है, उदाहरणार्थ–''हिरामन के सामने सवाल उपस्थित हुआ, वह क्या कहकर 'गप' करे हीराबाई से? 'तोहे' कहे या 'अहाँ'? उसकी भाषा में बड़ों को 'अहाँ' अर्थात् 'आप' कहकर संबोधित किया जाता है, कचराही बोली में दो–चार सवाल–जवाब चल सकता है, दिल–खोल गप तो गाँव की बोली में ही की जा सकती है किसी से।''

रेणु की अदम्य मानवीय संवेदना उन्हें अपने लोगों के इतने करीब, बल्कि उनके इतने भीतर ले जाती है कि द्वैत कतई कहीं रहता और तब उनकी पीड़ा, उनकी हताशा, उनकी आशा और उनके सपने उनकी निजी की घाटी में घुलमिल जाते हैं। उनके थके–हारे पात्र भी 'फेनुगिलासी' बोली बोलते हैं।

विषय वस्तु एवं लेखक की अभिरुचि के अनुसार कहानी की शैली भिन्न हो सकती है। व्यक्तिगत रुचि के अनुसार रेणु ने प्रायः बाह्य घटनाओं पर आधारित वर्णनात्मक कहानियों की रचना की है। उनके पात्रों के वार्तालाप में ग्राम्य बोली के शब्दों का प्रयोग स्वभावतः मिलता है। ''हीराबाई छत्तरपुर–पचीरा का नाम भूल गई। गाड़ी जब कुछ दूर आगे बढ़ आई तो उसने हँस कर पूछा, ''पत्तापुर छपीरा?''

इस प्रकार 'तीसरी कसम' कहानी की भाषा–शैली भावपूर्ण और सशक्त है। यथोचित शब्द–रचना तथा भावानुकूल शब्द–चयन कहानी की भाषा–शैली की विशेषता है।

(vi) उद्देश्य–सफल कहानी, कथावस्तु, पात्र, परिवेश, शिल्प आदि तत्त्वों से निर्धारित नहीं होती अपितु उसकी सफलता गंभीर उद्देश्य पर निर्भर होती है।

प्रस्तुत कहानी एक सोद्देश्य रचना है। इसमें अनुभूति की व्यंजना एवं आदर्श की प्रतिष्ठा का प्रयत्न रहा है। कहानी का उद्देश्य इसके मुख्य पात्र और सहयोगी पात्रों की मनःस्थिति को व्यंजित करता है। इसमें मानवतावाद तथा मानवीयतावाद का परिज्ञान भी होता है।

कुल मिलाकर अपनी विशेषताओं में यह एक सफल कहानी है।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

7. 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम' किस अंचल से जुड़ी कहानी है?

(क) पर्वतांचल (ख) शहरी अंचल

(ग) ग्राम्यांचल (घ) पूर्वांचल

8. हिरामन ने दूसरी कसम कौन सी खाई थी?

(क) बांस की लदनी नहीं करने की (ख) चोरी का सामान नहीं लादने की

(ग) सर्कस के जानवर नहीं ढोने की (घ) कम्पनी की लदनी नहीं करने की

4.6 'चीफ की दावत' कहानी की समीक्षा

'चीफ की दावत' भीष्म साहनी द्वारा रचित हिंदी की सर्वाधिक चर्चित कहानियों में से एक है। इस कहानी में उन्होंने मध्यवर्ग की विसंगतियों का चित्रण किया है। भीष्म साहनी की कहानियों में सामाजिक यथार्थ देखने को मिलता है। प्राचीन रूढ़ियों, मान्यताओं इत्यादि का आज के समाज में शीघ्रता से परिवर्तन हो रहा है। यही परिवर्तन संबंधों में भी स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। प्रस्तुत कहानी मां–बेटे के बीच के संबंधों के टूटने की एक सशक्त कहानी है।

(i) कथानक (कथावस्तु)– 'चीफ की दावत' एक सफल कहानी है। कहानी के आरंभ में ही संकट बिंदु उपस्थित कर दिया गया है। और अंत तक यह संकट कभी वरदान, तो कभी अभिशाप की भूमिका निभाता रहता है। शामनाथ किसी दफ्तर में अफसर है। उन्होंने अपने चीफ को घर दावत पर बुलाया है। शामनाथ और उनकी पत्नी का तैयारी में हाल–बेहाल है। घर को सजाया जा रहा है। घर का फालतू सामान आलमारियों के पीछे छिपाया जा रहा है। अचानक शामनाथ की नज़र माँ पर पड़ती है। इस माँ का क्या करें? इसे कहां रखें और कहां छिपाएं। वे माँ को घर में रखना नहीं चाहते, क्योंकि यदि चीफ ने देख लिया तो क्या सोचेगा? माँ वृद्धा है और सोते समय खर्राटे लेती है। उसकी कोठरी उस बरामदे में है जिसमें डाइनिंग टेबल पर डिनर का इंतजाम शामनाथ ने किया है। बीवी ने सलाह दी कि माँ को उनकी सहेली के घर भेज दिया जाए। शामनाथ इसके लिए तैयार नहीं हुए, क्योंकि उनकी सहेली बुढ़िया का बड़ी मुश्किल से आना बंद किया था। अब वह इस बहाने फिर आने लगेगी।

फिर पति–पत्नी में सलाह होती है कि माँ खाना–पीना खाकर जल्द ही अपने कमरे में चली जाए। माँ को एक साफ धोती पहनाकर कोठरी के सामने कुर्सी पर बैठा दिया जाए। साहब जब डिनर करने आए तब तक माँ सो चुकी थी और कुर्सी पर उनके खर्राटे सुनाई दे रहे थे।

जब सिर कुछ देर के लिए टेढ़ा होकर एक तरफ को थम जाता, तो खर्राटे और भी गहरे हो जाते और फिर झटके से नींद टूट जाती और सिर फिर दाएँ से बाएं झूलने लगता। पल्ला सिर पर से खिसक आया था और माँ के झड़े हुए बाल आधे सिर पर अस्त–व्यस्त बिखर रहे थे।

टिप्पणी

दावत के दौरान माँ की जो गत की गई, उसका उनपर असर हुआ– मगर कोठरी में बैठने की देर थी कि आंखों से छल–छल आंसू बहने लगे। वह दुपट्टे से बार–बार उन्हें पोंछती पर वह बार–बार उमड़ आते। अपनी लाज जाने पर भी वह बेटे का बुरा नहीं चाहती। वह बेटे के भविष्य को अच्छा नहीं पा रही है। उसका बेबस मन हाहाकार कर रहा है। कथाकार की हाल भी वही है।

साहब जब डिनर करने आए तब तक माँ सो चुकी थी और कुर्सी पर उनके खर्राटे सुनाई दे रहे थे। अब तो शामनाथ को माँ से साहब का परिचय कराना पड़ा। साहब ने माँ से हाथ मिलाया और कहा बेचारी पूअर लेडी।'

साहब माँ से मिलकर प्रसन्न था। चीफ ने उनसे हाथ मिलाया और गाने की फरमाइश की और बेटे के आदेशानुसार उन्हें एक पुराना–सा गीत भी सुनाना पड़ा।

चीफ ने माँ की खूब प्रशंसा की। अब तो शामनाथ भी माँ की तारीफों के पुल बांधने लगे। शामनाथ ने मां की कढ़ाई की हुई फुलकारी चीफ को दिखाई और चीफ से वादा किया कि वे उनके लिए बढ़िया सी फुलकारी माँ से बनवाएंगे। मां ने उससे फुलकारी काढ़ने का वादा भी कर दिया। पार्टी खत्म हो गई, मेहमान चले गए। शामनाथ ने मां को गले लगा कर कहा– मां मैं तुमसे इतना खुश हूं कि क्या कहूं?

माँ को चीफ पर विश्वास नहीं है– क्या तेरी तरक्की होगी? क्या साहब तेरी तरक्की कर देगा? क्या उसने कुछ कहा है? उसे खुशी भी है और आशंका भी?

यद्यपि मां को आंखों से कम दिखाई देता था। मां नहीं चाहती थी कि उसकी वजह से बेटे की तरक्की रुक जाए। बेटे की तरक्की के लिए वह फुलकारी काढ़ने का कष्ट भी उठा लेगी। संतान भले ही मां–बाप का ध्यान न रखे पर मां–बाप सदैव संतान के हित की कामना करते है। यही इस कहानी में बताया गया है। शामनाथ तो मां को एक फालतू सामान मात्र समझते थे, पर माँ उनकी उन्नति के लिए कम दिखाई देने पर भी साहब के लिए फुलकारी काढ़ने को तैयार हो जाती है।

इस प्रकार कहानी की कथावस्तु मनोवैज्ञानिक अनुभूति के धरातल पर आधारित है। कथावस्तु संक्षिप्त और सुगठित है। कहानी का अंत भी व्यंजनापूर्ण, कुतूहलपूर्ण तथा पाठक पर स्थायी प्रभाव डालने में समर्थ है।

(ii) पात्र एवं चरित्र–चित्रण– कहानी में पात्रों की संख्या अत्यल्प है। इस कहानी में मां केवल मां के रूप में ही संबोधित है। मगर शामनाथ कहीं मिस्टर शामनाथ हैं और कहीं शामनाथ। जहां शामनाथ है, वहां कथाकार की उससे नजदीकी है और जहां मिस्टर शामनाथ है, वहां दूरी होने के साथ व्यंग्य भी है। कथाकार के मन में शामनाथ के प्रति टीस है।

'चीफ की दावत' कहानी में निरक्षर बूढ़ी मां ही एक समस्या बन गई है, जैसे फालतू सामान, बल्कि सामान से भी अधिक समस्या। सामान को तो छिपाया जा सकता है पर इस जीवित का क्या करे? इस तरह शामनाथ अपनी बूढ़ी मां को इस घर में उस घर में छिपाता फिरता है। उधर मां है कि लड़के के व्यवहार का बुरा नहीं मानती, बल्कि स्वयं ही अपने अस्तित्व में संकुचित हुई जा रही है। वह अपने लड़के के भले के लिए अपने को यहां से वहां छिपाती फिरती है।

टिप्पणी

एक विडंबना यह भी है कि शामनाथ ने जिस चीज को इतना छिपाया आखिर खुल ही गई। चीफ ने मां को देखा ही नहीं, बल्कि बुरी हालत में देखा। चीफ मां से स्वयं मिला। अंत में शामनाथ ने देखा कि जिस चीज को छिपाने के लिए उन्होंने इतनी परेशानियां उठाईं वह खुल ही नहीं गई, बल्कि हितकर साबित हुई; यहां तक कि दावत से भी बढ़कर– "ओ अम्मी! तुमने तो आज रंग ला दिया। साहब तुमसे आज इतना खुश हुआ कि क्या कहूं? ओ अम्मी! अम्मी!

मां की छोटी–सी काया सिमट कर बेटे के आलिंगन में छिप गई। मां की आंखों में फिर आंसू आ गए। उन्हें पोंछती हुई धीरे से बोली– बेटा, तुम मुझे हरिद्वार भेज दो। मैं कब से कह रही हूं। "नहीं बेटा, अब तुम अपनी बहू के साथ जैसा मन चाहे रहो। मैंने अपना खा–पहन लिया।

अब यहां क्या करूंगी। जो थोड़े दिन जिंदगानी के बचे हैं, भगवान का नाम लूंगी। तुम मुझे हरिद्वार भेज दो।"

शामनाथ जब मां से अपनी तरक्की की बात करता है और फुलकारी बनाने के लिए कहता है तो मां के चेहरे पर हल्की–हल्की चमक आने लगी। वह कहती है– 'तो तेरी तरक्की होगी बेटा? "तो मैं बना दूंगी, बेटा जैसे बन पड़ेगा, बना दूंगी।" और मां दिल ही दिल में फिर बेटे के उज्ज्वल भविष्य की कामनाएं करने लगी।"

इस कहानी की यह सबसे बड़ी विडंबना है और गहरे जाकर देखें तो 'मां' केवल एक चरित्र ही नहीं, बल्कि एक प्रतीक भी है, संपूर्ण कहानी का।

डॉ. नामवर सिंह के शब्दों में, एक समर्थ कहानीकार जीवन की छोटी–से–छोटी घटना में अर्थ के स्तर–स्तर को उद्‌घाटित करता हुआ उसकी व्यप्ति को मानवीय सत्य की सीमा तक पहुंचा देता है। यही कहानी की सार्थकता है।"

कहानी का चरित्र कहानीकार के अनुभव का प्रतिबिंब है। कहानीकार पात्रों द्वारा अनुभवों का ही उद्‌घाटन करता है।

(iii) कथोपकथन (संवाद)– कहानी के विभिन्न पात्र आपस में बातचीत करते है उन्हें ही हम संवाद कहते है। संवाद कहानी में कई ढंग से काम करते हैं। संवादों से कहानी आगे बढ़ती है। विभिन्न पात्रों के चरित्र पर प्रकाश पड़ता है।

'चीफ की दावत' कहानी के कथोपकथन सजीव, स्वाभाविक, संक्षिप्त, भावानुकूल और पात्रानुकूल है। संपूर्ण कहानी के अधिकांश में कथोपकथन है। लेखक अपनी ओर से कुछ नहीं कहता। मां और शामनाथ के संवाद कहानी को विकसित करते जाते हैं। भीष्म साहनी के इन कथोपकथनों के माध्यम से पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को उभारने का प्रयत्न किया है। उदाहरणार्थ– "मां, तुम मुझे धोखा दे के यूं ही चली जाओगी? मेरा बनता काम बिगाड़ोगी? जानती नहीं, साहब खुश होगा, तो तुझे तरक्की मिलेगी।"

उपर्युक्त उदाहरण शामनाथ की मनोवृत्ति पर प्रकाश डालता है।

इसी प्रकार भावानुकूल कथोपकथन का उदाहरण देखा जा सकता है– "और मां दिल ही दिल में फिर बेटे के उज्ज्वल भविष्य की कामनाएं करने लगी और मिस्टर शामनाथ, अब सो जाओ, मां, कहते हुए, तनिक लड़खड़ाते हुए अपने कमरे की ओर घूम गए।"

इस प्रकार कहानी में कथोपकथन की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

टिप्पणी

भीष्म साहनी का कथा विन्यास सहज रूप में होता है। वे वर्णन विवरण देते हैं। दृश्यता को अंकित करने के लिए अलंकार वगैरह यूं ही आ जाएं तो आ जाएं। पात्रों की अपनी संवाद शैली है। 'चीफ की दावत' में वर्णन विवरण का प्रसंगानुसार ढंग है।

कहानी का पहला वाक्य अपने आप में पैराग्राफ भी है। "आज मिस्टर शामनाथ के घर चीफ की दावत थी।" यही पहला वाक्य पूर्ण वर्तमान का द्योतक है। कहानी भोक्ता प्रधान नहीं, द्रष्टा प्रधान विधा है। इस दावत में कथाकार ने खुद जो अनुभव किया, उस दावत को पुनः सृजित करके प्रस्तुत कर दिया।

आलोच्य कहानी में लेखक ने व्यक्तित्व के अनुकूल मनोवैज्ञानिक, व्यंग्यात्मक और वर्णनात्मक आदि विविध शैलियों का प्रयोग किया है। व्यंग्यात्मक शैली का उदाहरण देखा जा सकता है– "क्या कहा मां? यह कौन–सा राग तुमने फिर छेड़ दिया?"

"तुम मुझे बदनाम करना चाहती हो, ताकि दुनिया कहे कि बेटा मां को अपने पास नहीं रख सकता।"

(iv) वातावरण–देशकाल– भीष्म साहनी अतिरंजन के विरोधी हैं। दबी जबान से सिर्फ श्रम की बात करते हैं।

भीष्म साहनी मूलतः मध्यवर्ग की विसंगतियों का चित्रण करते है। मध्यवर्ग में जो कुंठा, घुटन, पीड़ा, विखराब, रूढ़ियां तथा झूठी मान्यताएं विद्यमान हैं, मूलतः उन्होंने उन्हीं पर लिखा है। उनकी कहानियों में सामाजिक यथार्थ देखने को मिलता है। प्राचीन रूढ़ियों, मान्यताओं इत्यादि का आज के समाज में शीघ्रता से परिवर्तन हो रहा है। यही परिवर्तन संबंधों में भी स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है।

'चीफ की दावत' में आज के समाज में संबंधों में आए परिवर्तन का यथार्थ चित्रण हुआ है।

आज के अर्थ प्रधान युग में धन का बड़ा महत्व है। धन ही संबंधों में श्रेष्ठ है। उसके आगे सभी संबंध गौण है।

'चीफ की दावत' मां–बेटे के बीच के संबंधों के टूटने की एक सशक्त कहानी है।

अंतर्विरोध, द्वन्द्व और विडंबना भीष्म साहनी की कहानियों के प्रमुख आधार है। कहानी की सार्थकता जीवन की छोटी–से–छोटी घटना में जीवन के व्यापक यथार्थ की खोज और अभिव्यक्ति में निहित है। उदाहरणार्थ– "मिस्टर शामनाथ ने इंतजाम तो कर दिया, फिर भी उनकी उधेड़–बुन खत्म नहीं हुई। जो चीफ अचानक उधर आ निकला, तो? आज दस मेहमान होंगे, देसी अफसर, उनकी स्त्रियां होंगी, कोई भी गुसलखाने की तरफ जा सकता है। क्षोभ और क्रोध में वह झुंझलाने लगे। एक कुर्सी को उठाकर बरामदे में कोठरी के बाहर रखते हुए बोले, 'आओ मां, इस पर जरा बैठो तो।" इस प्रकार कहानी का वातावरण सहज और स्वाभाविक है। उसमें किसी प्रकार का बनावटीपन दृष्टिगोचर नहीं होता।

(v) भाषा–शैली– चीफ की दावत कहानी की भाषा सरल, सजीव और व्यावहारिक है। वह मध्यमवर्ग की भाषा है। उसमें कृत्रिमता और काव्यात्मकता के कहीं दर्शन नहीं होते। उदाहरणार्थ– "मिस्टर शामनाथ सिगरेट मुंह में रखे, फिर अधखुली आंखों से मां

टिप्पणी

की ओर देखने लगे, और मां के कपड़ों की सोचने लगे। शामनाथ हरबात में तरतीब चाहते थे। घर का सब संचालन उनके हाथ में था। खूंटिया कमरों में कहां लगाई जाए, बिस्तर कहां पर बिछे, किस रंग के पर्दे लगाए जाएं, श्रीमती कौन–सी साड़ी पहने, मेंज किस साइज की हो... शामनाथ को चिंता थी कि अगर चीफ का साक्षात्कार मां से हो गया, तो कहीं लज्जित नहीं होना पड़े। मां को सिर से पांव तक देखते हुए बोले– तुम सफेद कमीज और सफेद सलवार पहन लो मां। पहन के आओ तो, जरा देखूं।"

संवाद में यह बात ध्यान में रखनी होती है कि वे पात्रों और परिस्थितियों के अनुकूल हों। अगर पात्र अशिक्षित हैं तो उसकी भाषा वैसी ही होगी। अगर वह शिक्षितों की भाषा बोलेगा तो वह स्वाभाविक लगेगा। संवादों की भाषा में उस युग की भाषागत विशिष्टता का ध्यान रखना होगा। आलोच्य कहानी में पात्र मिश्रित भाषा बोलते हैं। उदाहरणार्थ– "मिस्टर शामनाथ ने इंतजाम तो कर दिया, फिर भी उनकी उधेड़बुन खत्म नहीं हुई। जो चीफ अचानक उधर आ निकला, तो? आठ–दस मेहमान होंगे, देसी अफसर, उनकी स्त्रियां होंगी; कोई भी गुसलखाने की तरफ जा सकता है। क्षोभ और क्रोध में वह झुझलाने लगे। एक कुर्सी को उठाकर बरामदे में कोठरी के बाहर रखते हुए बोले– आओ मां, इस पर जरा बैठो तो।" इसी तरह भिन्न–भिन्न मनःस्थितियों में पात्रों के संवादों की भाषा में अंतर आ जाता है।

(vi) उद्देश्य– भीष्म साहनी की कहानियां सोद्देश्य है। उसके पीछे एक निश्चित मंतव्य होता है। वे कला को कला के लिए न मानकर जीवन के लिए, उसके कल्याण के लिए मानते है। मात्र मनोरंजन को वे साहित्य का उद्देश्य मानने के विरोधी हैं।

आलोच्य कहानी के उद्देश्य में भीष्म साहनी पूरी तरह सफल रहे है। यह कहानी मानव की कुंठा, पिपासा, बंधन तोड़कर प्रकट हुई है।

अंतर्विरोध, द्वन्द्व और विडंबना भीष्म साहनी की कहानी के प्रमुख आधार है। कहानी की सार्थकता जीवन की छोटी–से–छोटी घटना में जीवन के व्यापक यथार्थ की खोज और अभिव्यक्ति में निहित है। आलोच्य कहानी में व्यक्त आधे–अधूरे अंतर्विरोध की व्यंजन किस बड़े अंतर्विरोध की ओर होती है, इसी से कहानी में नाटकीय मोड़ भी पैदा होता है और यथार्थ को नया स्वर और रूप मिलता है।

आलोच्य कहानी के चरित्र कहानीकार के अनुभव का प्रतिबिंब है। लेखक ने कहानी के पात्रों द्वारा अपने अनुभवों का ही उद्‌घाटन किया है। लेखक ने आलोच्य कहानी में एक प्रसंग निर्मित कर ह्रास होते सामाजिक मूल्यों पर तीखा प्रहार किया है। आलोच्य कहानी मानवीय संबंधों में आई दरार को भी उद्‌घाटित करती है। साथ ही उसकी आलोचना करती है, उस पर व्यंग्य करती है और उस पर प्रहार भी करती है।

आलोच्य कहानी में मां को समस्या के रूप में पेश कर कहानीकार ने आधुनिक जीवन की विषमता, विसंगति और विफलता का जीवंत रूप प्रस्तुत किया है। क्या विडंबना है कि शामनाथ जिस चीज को जितना छिपाना चाहता है वह अपने वीभत्स रूप में सबके सामने आ जाती है और जिसे वह वीभत्स समझ रहा था, वह उसके काम आ जाती है। प्रसंग निर्माण की यही क्षमता, द्वंद्व, अंतर्विरोध और विडंबना ने ही इस कहानी और कहानीकार को महान बना दिया है। आलोच्य कहानी इन्हीं 'गुणों' के कारण हिंदी की श्रेष्ठ कहानियों में गिनी जाती है।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

9. घर की सम्यक व्यवस्था में सबसे बड़ी अड़चन शामनाथ की दृष्टि में क्या थी?

(क) गुलदस्ता (ख) मेजें

(ग) माँ (घ) पड़ोसी

10. शामनाथ चीफ के लिए माँ से क्या बनवाने का वादा करता है?

(क) फुलकारी (ख) भोजन

(ग) स्वेटर (घ) इनमें से कोई नहीं

4.7 'दोपहर का भोजन' कहानी की समीक्षा

स्वातंत्र्योत्तर भारत में अमरकांत हिंदी के ऐसे कथाकार हैं, जिन्होंने धारा के विपरीत चलकर अपने लेखन की नई जमीन तैयार की। उन वर्षों में जब हिंदी में 'नई कहानी' का आंदोलन अपने चरम पर था और सभी नए कथाकार उसी दिशा में बहे जा रहे थे, यह अमरकांत ही थे जो अपनी कहानियों की संभावना उन गलियों में तलाश रहे थे, जो सूनी और उपेक्षित पड़ी थीं। 'डिप्टी कलक्टरी' और 'दोपहर का भोजन' जैसी प्रारंभिक सशक्त कहानियों से उन्होंने अपने लेखन की शुरुआत की थी।

अमरकांत की दिलचस्पी कठोर भौतिक यथार्थ में थी, जो उन्हें निम्न मध्यम वर्ग और सर्वहारा वर्ग के जीवन में दिखाई पड़ रहा था। इस वर्ग से उनका बड़ा गहरा जुड़ाव था, जिसका पता उनके साहित्य से चलता है। लोगों के दैनिक जीवन संघर्ष, जीवन में पैर जमाकर खड़े रहने की जिजीविषा और बहुत मामूली मूलभूत आवश्यताओं को न पूरा कर पाने की कुंठा व हताशा उनकी कहानियों में गहराई से चित्रित हुई है। इस वर्ग के घर, परिवार, जीवन के मूलभूत साधन, दैनिक गतिविधियां, जीविकोपार्जन के मार्ग, बेरोजगारी का दंश आदि के जैसे प्रामाणिक व यथार्थपरक चित्र अमरकांत ने खींचे हैं, वे अद्वितीय हैं। यूं इन चित्रों से अधिकतर पाठक परिचित ही होते हैं या पहली बार उन्हें नहीं देख रहे होते, लेकिन रचनाकार के कोण से देखने पर जैसे पाठक को उसमें निहित गंभीर त्रासदी का अनुभव होने लगता है। 'जिंदगी और जोंक', 'दोपहर का भोजन' आदि कहानियों में हमें उनका यह रूप देखने को मिलता है। अमरकांत अपने इर्द–गिर्द के समाज से चरित्रों को बड़ी संजीदगी के साथ उठाते हैं तथा उनमें 'यथार्थ' को बनाए रखने का हरसंभव प्रयास करते हैं। 'दोपहर का भोजन' में सिद्धेश्वरी या मुंशी चंद्रिका प्रसाद जैसे पात्र बड़े यथार्थवादी प्रतीत होते हैं, जिससे कहानी अपने 'सत्य' को निरपेक्ष रूप से उद्घाटित कर पाती है।

भाषा के मामले में अमरकांत बड़ी सजगता व संयम से काम कर लेते हैं। वे अपनी कहानियों में ऐसी भाषा का प्रयोग करते हैं, जो उनकी कहानियों के यथार्थ को किसी भी प्रकार से विरूपित न करे। एक तरह से कहा जाए तो जिस प्रकार उनके कथानक यथार्थवादी हैं, उसी के अनुरूप उनकी भाषा भी अपने रूप व तेवर में यथार्थवादी है। उनकी भाषाई संतुलन की इस प्रतिभा ने कहानियों में 'यथार्थ' को एक ऊंची गरिमा के साथ प्रस्तुत किया।

टिप्पणी

'दोपहर का भोजन' अमरकांत की एक यथार्थवादी कहानी है, जो हमारा परिचय एक निम्न मध्यमवर्गीय परिवार के जीवन की अस्थिरता तथा चुनौतीपूर्ण स्थितियों से सफलतापूर्वक कराती है। इस कहानी को पढ़ना एक त्रासदी से गुजरने जैसा लगता है। देश के आर्थिक ढांचे में आ रहा निरंतर बदलाव निम्नवर्ग तथा निम्नमध्यमवर्ग के जीवन में जिस तरह की भीषण अनिश्चितताएं लेकर आया है, वह निस्संदेह चिंताजनक है। कहानी इस पहलू पर बड़ी गहराई से प्रकाश डालती है। निम्नलिखित बिंदुओं के आधार पर कहानी की समीक्षा संभव है–

(i) कथ्य (कथानक)– 'दोपहर का भोजन' कहानी का कथानक एक छोटी–सी अवधि में सीमित है। दूसरे शब्दों में इस कहानी में पारंपरिक शैली का कथासूत्र मौजूद नहीं है। दोपहर का आधे या अधिकतम एक घंटे का समय, जिसमें परिवार के सभी सदस्य दोपहर का भोजन करते हैं, बस इतना ही समय कहानी की धुरी है। इस अल्प समय में एक परिवार के सदस्य क्या खाते हैं और किस तरह खाते हैं, इसे अमरकांत ने बड़े ही जीवंत चित्रों में प्रस्तुत किया है। इतनी सी बात को एक व्यापक कथानक में परिवर्तित कर देना अमरकांत की विलक्षण प्रतिभा को दर्शाता है। यह ऐसी ही है, जैसे हम लेंस के सहारे सूक्ष्म जीवों या वस्तुओं का बड़ा ही सटीक अवलोकन कर सकते हैं। सिद्धेश्वरी जो अपने पति और तीन पुत्रों के साथ रहती है, सबके लिए दोपहर का भोजन पकाती है। उसके पति (मुंशी जी) की नौकरी छूट जाने के कारण घर की आर्थिक रीढ़ ही टूट गई है। घर में अन्न जुटना मुश्किल होता जा रहा है। बड़ा लड़का रामचंद्र नौकरी पाने के लिए छटपटा रहा है, लेकिन उसे इसमें सफलता नहीं मिल पा रही है। अनाज कम होने से सिद्धेश्वरी बहुत कम रोटियां ही बना पाती है। परिवार में दरअसल सभी सदस्य इस बात से परिचित हैं कि रोटियां बहुत कम हैं, लेकिन न तो सिद्धेश्वरी इसे जाहिर करती है और न ही अन्य सदस्य। वे कोई न कोई बहाना बनाकर दो रोटी से अधिक लेते ही नहीं। मुंशी जी तो यहां तक कह जाते हैं कि वे रोटियां खा–खाकर ऊब गए हैं।

(ii) पात्र व चरित्र–चित्रण– 'दोपहर का भोजन' कहानी के सभी पात्र हमारे समाज व परिवेश के पात्र हैं, जिनकी पहचान बड़े ही सहज रूप में की जा सकती है। सिद्धेश्वरी आम भारतीय जनसमाज की एक साधारण–सी स्त्री है, जो पति व बच्चों को अपने हिस्से का भोजन भी करा देना चाहती है। दूसरे मायने में वह पूरी परिवार की धुरी है। एक ओर वह परिवार के पेट भरने की चिंता से पीड़ित है तो वहीं दूसरी ओर उसे यह चिंता भी खाए चली जाती है कि आर्थिक संघर्षों से जूझ रहे उसके पति व पुत्र कहीं क्रोध, झुंझलाहट व चिड़चिड़ाहट में भरकर किसी भी तरह टकरा न जाएं। वह चाहती है कि विषम परिस्थितियों में भी उसके परिवार में शांति व एक–दूसरे के लिए स्नेह भी बना रहे। उसके भीतर इस चीज को लेकर इतना भय व्याप्त है कि वह इससे बचने के लिए झूठ बोलने से भी गुरेज नहीं करती। मुंशी जी व बड़ा लड़का रामचंद्र नौकरी की खोज में दिन–प्रतिदिन हताश हुए जाते दिखाई देते हैं। भोजन के लिए घर आया रामचंद्र जब फर्श पर लेट जाता है तो सिद्धेश्वरी भय के मारे सूख जाती है तो वहीं दूसरी ओर मंझला लड़का मोहन भी घर के हालात से भली–भांति परिचित है और अपने–आप को बड़ा असहाय पाता है।

टिप्पणी

(iii) संवाद (कथोपकथन)– कहानी के संवाद बड़े ही सटीक और प्रभावकारी हैं। पहली बात तो कहानी में संवाद अनर्गल होने से बच गए हैं तथा दूसरे जब वे आते हैं तो पाठक के मन पर बड़ा गहरा प्रभाव छोड़ते हैं। गौर करने पर पता चलता है कि अमरकांत संवाद के प्रयोग में इतने मितव्ययी हैं कि जहां सिर्फ 'पानी लाओ' या 'नहीं' से काम चल रहा है वहां उन्होंने सिर्फ इतना ही प्रयोग किया है। इसके स्थान पर उन्होंने कायिक चेष्टाओं (बॉडी लैंग्वेज) व वातावरण के वर्णन पर जोर दिया है। इससे कहानी का प्रभाव और अधिक बढ़ गया है।

(iv) देशकाल और वातावरण– 'दोपहर का भोजन' कहानी आजादी के बाद के उस दौर में लिखी गई कहानी है, जब देश की अर्थव्यवस्था करवट लेने लगी थी। उन दिनों कृषि पर निर्भरता कम होने लगी और लोग दूसरे व्यवसायों की ओर अधिक तेजी से बढ़ने लगे। इससे शहरों व महानगरों में जनसंख्या बढ़ने लगी, लेकिन इससे नई चुनौतियां खड़ी होनी आरंभ हो गईं। नौकरी पर निर्भरता ने नए खतरे पैदा किए और बेरोजगारी पहली बार एक असाध्य रोग की भांति डराने लगी। प्रस्तुत कहानी में मुंशी जी की नौकरी से असमय छंटनी ने पूरे परिवार को ही हिलाकर रख दिया और स्थिति भयावह होने लगी। अमरकांत ने इस आर्थिक असुरक्षा से पैदा हो रहे भय, आशंका व कड़े संघर्ष को अपनी कहानी में बड़ी कुशलता से लक्षित किया है।

(v) भाषा–शैली– 'दोपहर का भोजन' कहानी की भाषा 'नई कहानी' की विशेषताओं को ही अपने भीतर समेटे हुए दिखलाई पड़ती है। इस कहानी में क्रिया व्यापार अपने सुंदरतम रूप में प्रकट हुआ है, जिसके कारण कहानी पढ़ते समय मस्तिष्क में बिंब बड़ी तेजी से बनते चले जाते हैं। उदाहरण के लिए कहानी की आरंभिक दो पंक्तियां देखिए–

'सिद्धेश्वरी ने खाना बनाने के बाद चूल्हे को बुझा दिया और दोनों घुटनों के बीच सिर रख कर शायद पैर की उंगलियां या जमीन पर चलते चींटे–चींटियों को देखने लगी।'

जिन शब्दों में लेखक ने सिद्धेश्वरी के सबसे छोटे बेटे प्रमोद का चित्रण किया है, उसे पढ़ते हुए पाठक के मस्तिष्क में जो बिंब बनता है, वह किसी के भी रोंगटे खड़े कर देने के लिए काफी है–

'लड़का नंग–धड़ंग पड़ा था। उसके गले तथा छाती की हड्डियां साफ दिखाई देती थीं। उसके हाथ–पैर बासी ककड़ियों की तरह सूखे तथा बेजान पड़े थे और उसका पेट हंडिया की तरह फूला हुआ था। उसका मुख खुला हुआ था और उस पर अनगिनत मक्खियां उड़ रही थीं।'

(vi) उद्देश्य– 'दोपहर का भोजन' कहानी भारतीय निम्न मध्यमवर्ग की आर्थिक असुरक्षा जनित जीवन की त्रासदी का आख्यान है, जिसने उसके भय, आशंका, दुविधा व हताशा को बड़ी ही सफलता से पिरोया है। इसे पढ़ने के उपरांत पाठक निश्चय ही भीतर तक एक सिहरन से भर जाता है, जो उसे अपने आसपास की स्थितियों के प्रति जागरूक व संवेदनशील बनाता है। इस मानुषिक संवेदनशीलता को बचाए रखना ही साहित्य का प्राथमिक उद्देश्य है।

अमरकांत की कहानी 'दोपहर का भोजन' एक यथार्थवादी कहानी है, जो अपने समय व परिवेश में व्याप्त परिस्थितियों का बहुत ही सूक्ष्म अन्वेषण करती है।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

11. 'दोपहर का भोजन' हिन्दी साहित्य के किस युग की कथा है?
    (क) प्रेमचंद–प्रसाद युग (ख) उत्तर प्रेमचंद युग
    (ग) स्वातंत्र्योत्तर युग (घ) नयी कहानी युग
12. 'दोपहर का भोजन' कहानी की मूल संवेदना क्या है?
    (क) समाजवाद (ख) यथार्थवाद
    (ग) प्रगतिवाद (घ) आदर्शवाद

4.8 'रीछ' कहानी की समीक्षा

प्रस्तुत कहानी दूधनाथ सिंह की एक प्रतीकात्मक कहानी है। इस कहानी में बढ़ती व्यक्तिवादिता को उजागर किया गया है। इस लम्बी कहानी में फैंटेसी के माध्यम से समकालीन बौद्धिक संसार को उभारने का प्रयत्न किया गया है। आज मनुष्य अपने परिवेश की दीवारों में कैद है, कथानायक इन्हीं दीवारों को तोड़ने का प्रयास करता है। समाज को जोड़ने और परिवेश की घुटन को तोड़ने का प्रयत्न कर कहानीकार ने सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाया है। कहानी कला के मान्यतापूर्ण तत्त्वों के आधार पर कहानी की समीक्षा निम्नलिखित है–

(i) कथावस्तु अथवा कथानक–प्रस्तुत कहानी की कथावस्तु मध्यवर्गीय समाज से ली गई है। कहानी का कथानक बहुत संक्षिप्त किन्तु सुगुम्फित है। प्रस्तुत कहानी का केन्द्रीय गुण घटनाहीनता है। दूधनाथ सिंह की कहानियों में वैचारिक रचनाशीलता की एक प्रत्यक्ष जांच है और वह अपनी दृष्टि को कहानी के बाहर भी वक्तव्य रूप में ज्ञापित या प्रमाणित करते आए हैं। प्रस्तुत कहानी में रोमांचक विविधता के बावजूद भारतीय संदर्भ में कहानीकार को स्थितियों के नाम पर तीन स्रोत प्राप्त है–परिवार, दफ्तर और लड़की। इन तीनों को अलग–अलग या साथ लेकर 'मैं' वह और कभी–कभी 'तुम' का आश्रय लेकर स्थितियों को इस तरह उजागर करने का यत्न किया है कि वे सारगर्भित मानव–व्यापारों पर कुछ कहें।

इसमें पहले लेखक एक खास तरह के कलाकार की मुद्रा में अकेलेपन को आविष्कृत करता है। आज का लेखक अकेला होने के लिए अभिशप्त है। इसके बावजूद अदृश्य अकेलेपन और दृश्य स्थानान्तरण के संबंध में सर्जनात्मकता को खोजने के लिए बाध्य है।

प्रस्तुत कहानी में आज के परिवेश की तीव्रतम इकाइयों का साक्षात्कार कहानीकार ने किया है। वह सबसे पहले स्वयं को एक कठघरे में खड़ा कर देता है। जहाँ वह 'बदला लेने की ताक में' बैठे उस रक्तपिपासु के ठीक सामने होता है। जिसका दूसरा नाम 'भय' है। प्रस्तुत कहानी 'रीछ' में वह 'दरवाजे की चौखट पर' दोनों पाँव फैलाये, अधलेटा पड़ा है और उसके बड़े–बड़े काले नाखून बघनख की तरह चमक रहे हैं। इस भय को खत्म करने की कोशिश में उसे जीवित रखने की कोशिश भी मिली है। यहाँ भयानक दुर्घटनाओं के प्रति स्वार्थ का भाव आदमी में बना रहता है। उसके इर्द–गिर्द

ताँत की जालियाँ बिछा दी जाती हैं जिनमें से निकलना संभव नहीं होता। कोमल नाथ, तब वह बहुत छोटा–सा था। कोमल और बिल्कुल भोला, धीरे–धीरे विरुप और व्यापक होता जाता है। यहाँ तक कि 'पत्नी के सहवास' में भी सिर्फ उसे पुनरुज्जीवित करने की इच्छा शेष रह जाती है। वह यंत्रवत् कामचलाऊ दुनिया के विपर्ययों में लगा रहता है और उनका अतिक्रमण करने के लिए 'नये सिरे से आहत होने की प्रतीक्षा' करता है। उसे हर क्षण चौकन्ना रहना पड़ता है। ''धूप में तपते चौराहे पर, दफ्तर के लम्बे अंधेरे ठण्डे गलियारों में, मसाले की दुकानों पर, सिनेमा हालों में, नदियों के किनारे, पिकनिक में, या चायखानों, शराबखानों या विवाह–शादी के अवसरों पर मेलों, बाजारों या सुनसान सड़कों या ठण्डी दीवारों के आसपास – वह 'रक्तपिपासु' कहीं भी मौजूद हो सकता है। वह एक नहीं है–वस्तुतः वे कई हो सकते हैं।

बोरियत के विरुद्ध दूधनाथ अपनी रचनात्मक कोशिशों में अतिनाटकीय स्थितियों को तरजीह देते हैं। 'रीछ' कहानी फन्तासी की शैली में अतिनाटकीयता का उदाहरण प्रस्तुत करने वाली कहानी है। इस कहानी के अर्थ और संगठन को लेकर पाठ उलझन में पड़े रहते हैं।

(ii) पात्र एवं चरित्र चित्रण–कहानी में पात्रों की संख्या कम होती है। सामान्यतः किसी एक पात्र के इर्द–गिर्द सारी घटना घूमती है। कहानी के मूल तत्व को लेकर ही चरित्र–चित्रण किया जाता है।

प्रस्तुत कहानी में पात्र के नाम पर 'मैं (लेखक)' 'पत्नी' 'बच्चा' और 'वह' (भय) है। इसमें कथावस्तु की सत्ता को नकारा है। कहानी में कथानक का कोई अस्तित्व नहीं होना चाहिए। वस्तुतः कहानी एक मनःस्थिति है, एक मूड है। एक तरंग है। उसमें मन की तरंगों का ही चित्रण होता है। अतः पात्र की स्थिति नगण्य है। लेखक स्वयं अपने मन के भावों और तरंगों को रूपायित करता है। कहानीकार मनःस्थिति का अर्थ भी मन में कहीं विच्छृंखल तरंगों को मानता है। उसमें कहीं कोई तारतम्य नहीं है। कहानीकार के अनुसार उसमें पात्र या घटनाएँ महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। महत्वपूर्ण केवल क्षण या क्षण विशेष में मन की प्रतिक्रियाएँ हैं।

'रीछ' कहानी जटिल बनावट, संश्लिष्ट एवं प्रतीकात्मक कहानी है। इसमें 'पात्र' के स्थान पर केवल व्यक्तिवादिता को उजागर किया गया है–''आधी रात से ज्यादा बीत गई है, जब झड़ककर पत्नी ने मुझे जगाकर बैठा दिया। वह लगातार खिड़की की ओर देखे जा रही थी। वह बेहद भयभीत थी.... वह देखो, वह वहाँ। वह क्या था? खिड़की की सलाखें पकड़े बैठा था। झूम रहा था अपना लंबूतरा–सा थूथन पर्दे के अंदर ढकेल रहा था। मुझे बदबू–सी लगी थी। पहले मैंने बिस्तर पर देखा। तुम्हें .... बच्चे को। फिर मेरी नज़र खिड़की पर चली गई। मुझे देखते ही वह कूद गया। वह एक साँस में कह गई। वह समझ गया और चुपचाप बैठा रहा।''

इस प्रकार किसी मूर्त पात्र के अभाव में लेखक स्वयं विशिष्ट व्यक्तित्व को लेकर अपने मन की बात कहता है। कहानी में लेखक और पत्नी के मध्य संवाद और अनुभव के आधार पर कहानी आगे बढ़ती रहती है।

(iii) कथोपकथन (संवाद)– कहानी के पात्र आपस में जो बातचीत करते हैं उन्हें संवाद कहते हैं। संवादों में कहानी आगे बढ़ती है। प्रस्तुत कहानी 'रीछ' में पारस्परिक वार्तालाप के माध्यम से कहानी आगे बढ़ती है उदाहरणार्थ–'तुम तो उन इतिहास–पुरुषों में से नहीं हो? पत्नी बीच में ही तोड़ देते ''मैं तो ऐसे ही कह रहा था।''

टिप्पणी

ऐसे ही कह रहे थे। हम से ऐसी बातें मत किया करो। हमें नहीं सुननी है ऐसी बातें। हम वैसे नहीं हैं। क्या हैं? अंतिम वाक्य पर वह घूरने लगती है।

वह कोई और बात छेड़ देता।

मैं यह नहीं सह सकती।''

'छोड़ो भी।'

घंटेभर बाद वह फिर उठ बैठती और पूछने लगती, मैं यह सोच भी नहीं सकती।''

उसने महसूस किया कि अब उन हल्के–हल्के तारों की एक जाली–सी बुन गई है और उसे धीरे–धीरे कस रही है।''

यहाँ कहानीकार ने अपनी ओर से पात्रों के संबंध में उनकी मुद्राओं और भाव–भंगिमाओं का उद्घाटन करने के लिए कथोपकथन की योजना की है। इस पर पत्नी बहुत कम बोलती है उसकी भाव–भंगिमाओं ने बहुत कुछ कह दिया है।

(iv) वातावरण–देशकाल– कहानी किसी स्थान और किसी समय से संबंधित होती है। इन्हें परिवेश कहते हैं। कहानी में उचित स्थान तथा काल का वर्णन सजीवता लाता है। कहानी में लम्बे चौड़े विवरण का स्थान नहीं रहता। इसलिए कहानीकार थोड़े में कहानी के अनुकूल परिवेश का चित्रण करता है।

प्रस्तुत कहानी में वर्णनात्मक ढंग से एक गंभीर वातावरण का निर्माण स्वतः ही हो गया है। पत्नी बच्चे को सुलाकर इंतजार करती–करती सो गई थी। वह उसकी बगल में बिस्तर पर लगभग ढह सा गया।..... लेकिन तभी उसे अहसास हुआ कि उसने गलती की है। क्षणभर को वह पत्नी के सोते हुए चेहरे की ओर देखता रहा। वह भाँपने की कोशिश करता रहा कि अगर वह सो गई है और उसके इधर आने की खबर उसे नहीं लग सकी है तो वह उठकर चला जाएगा और उधर जाकर सुस्ता लेगा। स्वाभाविक हो लेगा, तब इधर जाएगा।''

स्पष्टतः कहानी का वातावरण दाम्पत्य के व्यवहार को व्यक्त करता है। पति–पत्नी के बीच होने वाले संबंधों को स्पष्ट करता है।

इसी प्रकार का परिवेश दृष्टव्य है–''अपने निजी कमरे में आकर उसने दरवाजा बंद कर लिया और तख्त पर बैठ गया। टाँगे फैला दीं और खिड़की की टेक लगाकर उठ गया। शायद वह अभिनय में चूक गया था, उसने सोचा। पत्नी को विश्वास नहीं आया था। उसने मुस्कराहट के बीच की दरारों से अंदर झांक लिया था। वह वैसे ही शक्की निगाहों से देखती हुई खड़ी की खड़ी रह गई थी।''

इस कहानी की वस्तु, कथा और चरित्र में देशकाल और वातावरण का योगदान केवल ऊपरी नहीं है आन्तरिक अधिक है। देशकाल और वातावरण केवल प्राकृतिक ही नहीं होता, वह सामाजिक भी होता है, साथ ही उसमें मनोवैज्ञानिक तथ्यों को भी प्रस्तुत किया जाता है। इसका संकेत इस कहानी में बड़ी कुशलता से हुआ है। मानव जीवन की समस्याएँ, देश–काल और परिवेश में विकसित होने वाली विभिन्न शक्तियों के कारण होती है। प्रस्तुत कहानी में लेखक और पत्नी के जीवन में उभरने वाले तनाव का आधुनिक युग की देन है।

टिप्पणी

आज के परिवेश की तीव्रतम इकाइयों का साक्षात्कार लेखक इस प्रकार करता है–आज का संपूर्ण अमानवीय ढाँचा जिसे अस्वीकार करने के लिए हम बाध्य हैं और स्वीकार करने के लिए अभिशाप्त जिसमें पत्नी के प्यार से 'सिर्फ चिढ़ होती है।'' यहाँ तक की 'पत्नी के सहवास' में भी सिर्फ उसे पुनरुज्जीवित करने की इच्छा शेष रह जाती है। वह यंत्रवत् कामचलाऊ दनिया के विपर्ययों में लगा रहता है और उनका अतिक्रमण करने के लिए 'नये सिरे से आहत होने की प्रतीक्षा' करता है।

(v) भाषा–शैली–भाषा के द्वारा कहानीकार कहानी में सजीवता, स्वाभाविकता और रोचकता ला सकता है। कहानी लेखक जहाँ अपने विचार रखता है वहाँ उसकी अपनी भाषा होती है। कहानी भाषा सरल, सुबोध और पात्रों के अनुकूल होनी चाहिए। विषयवस्तु और लेखक की अभिरुचि के अनुसार कहानी की शैली होती है।

'रीछ' कहानी की भाषा में सादगीपूर्ण सौंदर्य है। इस कहानी में अनगढ़ता को भी एक तरह के परिष्कार में बदलने की कोशिश ही कई कई प्रश्नों तक वस्तुस्थिति के फन्तासीमूलक बयान हैं जिनमें ठेठ मूर्तता लाने की कोशिश की गई है। भाषा की बनावट के पीछे यह सतर्कता भी दिखाई देती है कि कोई फालतू शब्द–रचना व्यवस्था को विचलित न करे। भाषा–संरचना एक ही स्तर पर सक्रिय हो जैसे–''तभी उसने देखा कि वह दरवाजे की चौखट पर दोनों पैर फैलाए अधलेटा पड़ा था। उसके बड़े–बड़े काले नाखून बघनख की तरह चमक रहे थे। उन्हीं पर उसका थूथन टिका था और अजीब–सी अधमुंदी पलकों से वह उसे घूर रहा था। उसके थोबड़े जैसे जबड़े से झाग निकलकर उसके काले–काले पंजों पर चिपट गई थी और खून रचनी आंखों के इर्द–गिर्द पसीना पिघल रहा था।''

प्रस्तुत कहानी फन्तासी शैली में अतिनाटकीयता का उदाहरण प्रस्तुत करने वाली है। भयानक दुर्घटनाओं के प्रति भी स्वार्थ का भाव आदमी में बना रहता है। उसके इर्द–गिर्द ताँत की जालियाँ बिछा दी जाती हैं जिनमें से निकलना संभव नहीं होता। वह यंत्रवत कामचलाऊ दुनिया के विपर्ययों में लगा रहता है। इस प्रकार प्रस्तुत कहानी की भाषा–शैली भावपूर्ण, चित्रात्मक और सशक्त है। यथोचित शब्द–रचना तथा भावानुकूल शब्द चयन कहानी की भाषा–शैली की उल्लेखनीय विशेषताएँ हैं।

(vi) उद्देश्य–कहानी के द्वारा लेखक पाठकों को जो संदेश देना चाहता है उसे प्रतिपाद्य या उद्देश्य कहते हैं। सफल कहानी की सफलता गंभीर उद्देश्य पर निर्भर करती है।

'रीछ' कहानी एक सोद्देश्य रचना है। इसमें अनुभूति की व्यंजना है। इस कहानी में वैचारिक रचनाशीलता की एक प्रत्यक्ष जाँच है। आज का लेखक अकेला होने के लिए अभिशप्त है। और इसके बावजूद अदम्य अकेलापन और दृश्य स्थानान्तरण जिसमें जीवन की संपूर्णता के भीतर चलने वाली गहरी यथार्थता का व्यंग्य भी शामिल है, उसके संबंध को सर्जनात्मक यात्रा के अंत तक खोजने का प्रयास है।

लेखक के अनुसार आज का संपूर्ण अमानवीय ढांचा, जिसे अस्वीकार करने के लिए हम बाध्य हैं और स्वीकार करने के लिए अभिशप्त है, उसमें पत्नी के प्यार से ''सिर्फ चिढ़ होती है।'' इस कहानी में देह–धर्म के ईमानदार स्वीकार की कुछ अत्यंत व्यंजनाएं हैं। साथ ही स्त्री–पुरुष के काम–संबंधों के वर्णनों में स्थापित नैतिक मूल्यों को अर्जित कर, समस्त समस्त यौन–वर्जनाओं और निषेधों को समाप्त कर यौन वर्णन के प्रति एक सहज–दृष्टि का विकास किया है। वस्तुतः यह एक प्रतीकात्मक कहानी है, जिसमें बढ़ती व्यक्तिवादिता को उजागर किया गया है।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

13. 'रीछ' किस प्रकार की कहानी है?

(क) बिंबात्मक (ख) प्रतीकात्मक

(ग) वर्णनात्मक (घ) चित्रात्मक

14. 'रीछ' कहानी में लेखक ने क्या उजागर करने का प्रयास किया है?

(क) व्यक्तिवादिता (ख) भय

(ग) कुंठा (घ) द्वंद्व

4.9 'ढाई बीघा जमीन' कहानी की समीक्षा

'ढाई बीघा जमीन' मृदुला सिन्हा की ख्याति प्राप्त भाव प्रवण कहानी है। यह कहानी भारतीय परिवेश में गांव में रहने वाले कृषक परिवारों की वास्तविक स्थिति और उनकी सोच को व्यक्त करती है। इसमें माता–पिता की चिंता और बच्चों के भविष्य को सुखद बनाने की भावनाओं को व्यक्त किया गया है। प्रस्तुत कहानी का तात्विक विवेचन इस प्रकार है–

(i) कथावस्तु (कथानक)– 'ढाई बीघा जमीन' कहानी का प्रारंभ अत्यधिक नियोजित है। कहानी लेखिका ने रामबाबू के परिवार का सटीक चित्र उपस्थित किया है। कहानी के प्रारंभ में राम बाबू जमीन का हिसाब लगाते हैं कि कुल जमीन तो साढ़े सात बीघे ही है। वह रामचरण सिंह के तीनों पुत्रों में बंट जाएगी तो हरएक के हिस्से ढाई बीघे ही आएगी। वास्तव में रामबाबू अपनी बेटी के विवाह के लिए रामचरण के बेटे से रिश्ता बनाने पर विचार कर रहे थे। ग्रामीण परिवेश में जमीन को अधिक महत्व दिया जाता है। रामबाबू के साथ चल रहे चूड़ामणि सिंह अपने स्वभाव के अनुसार किसी भी कार्य में टांग अड़ाने का स्वभाव रखते हैं। उन्होंने तुरंत रामबाबू को चेताया कि मास्टर साहब अपनी बेटी को गड्ढे में मत डालो। लड़के के सिर केवल ढाई बीघे जमीन है, लड़की को क्या खिलाएगा क्या खुद खाएगा? कैसे परिवार पालेगा।

रामबाबू इसी बात से असमंजस में पड़ गए। उन्हें लड़का पसंद था। रेलवे में नौकरी भी करता था। देखने में सुंदर भी था। उन्हें केवल चूड़ामणि सिंह के प्रचार का डर था जो पूरे गांव में गलत बात फैला देते हैं। उन्होंने चूड़ामणि को बहुत समझाया कि जीमन की औकात तब देखी जाती थी जब उसकी जीविका का साधन केवल जमीन होती थी। अब तो लड़का नौकरी करता है। जमीन चाहे कितनी भी हो, इससे क्या फर्क पड़ता है? चूड़ामणि कहां मानने वाले थे वे भावी अनहोनी की चिंता में डूबे रहते थे। रामबाबू को यही डर था कि वह पूरे गांव में ऐसी बात फैला देगा।

फिर भी रामबाबू ने हिम्मत जुटा कर अपनी बेटी के लिए वही घर चुना तथा धूमधाम से विवाह कर दिया। विवाह के बाद बेटी–दामाद बाहर ही रहने लगे। दामाद किशोर का तबादला भी होता रहता। कभी–कभी रामबाबू भी उनके पास चले जाते। अपने नातियों के जन्म होने पर उनके साथ उनका समय भी अच्छा व्यतीत होता था।

टिप्पणी

रामबाबू की पत्नी सुभद्रा भी अपने मन पर किसी तरह का बोझ नहीं रखती थी। फिर भी गांव की पड़ोसन औरतें उन्हें जमीन के कम होने का ताना करती ही रहती थीं। जमीन का महत्व अधिक है क्योंकि नौकरी तो ताड़ का पेड़ है जिसकी छाया भी कम होती है।

कहानी के प्रारंभ में रामबाबू और चूड़ामणि का वार्तालाप कहानी को आगे बढ़ाने में सहयोग करता है और पाठकों को जिज्ञासु बना देता है।

सुभद्रा अपने पति को समझाती है कि गांव में दोनों भाइयों के परिवार का गुजारा अच्छी तरह हो रहा है। उन्हें चिंता है कि अभी तो बच्चे छोटे हैं, जैसे–तैसे पल जाएंगे परंतु बड़े होने पर उनकी पढ़ाई–लिखाई और विवाह के लिए बार–बार किससे सहायता लेंगे।

किशोर अपनी पत्नी से अधिक बात नहीं करता था। उसकी पत्नी कभी मन में ऐसा नहीं सोचती थी कि उसके पिता ने केवल ढाई बीघे जमीन रखने वाले लड़के से उसका विवाह किया है।

सुभद्रा की पड़ोसन अपने स्वभाव के अनुसार आकर उसके मन में शंकाएं पैदा कर जाती थी।

रामबाबू यह सोचकर अस्वस्थ हो गए कि मेरी बेटी क्या सोचेगी? वे मरणशय्या पर थे। बेटी शिकायत करने की स्थिति में नहीं थी। फिर भी पिता ने एकांत देखकर स्वयं ही कहा कि सुशी, मेरे मन पर एक बोझ है कि तुम्हारा विवाह तय करते समय मैंने बहुत सोचा। मैं भी ऐसी लड़के से तुम्हारा विवाह नहीं करना चाहता था जिसके सिर पर ढाई बीघे जमीन का साया हो। उनकी बेटी ने आवश्वासन दिया कि गांव की हम उम्र बेटियों से ज्यादा सुखी आपकी बेटी है। आप मेरी चिंता न करें। यह सुनकर रामबाबू ने शांतिपूर्ण मृत्यु का वरण करते हुए आंखें बंद कर ली।

पति की मृत्यु के बाद पत्नी के शहर में रहने की समस्या भी हल हो गई। साल भर बाद वह अपने दोनों बेटों का विवाह करने की तैयारी करने लगी।

सुभद्रा ने दोनों बेटों के दो घर, एक अलीगढ़ और एक गुड़गांव में ले दिया। मनीष ने एक करोड़ का फ्लैट लिया था छः लाख की गाड़ी थी। सब कर्जे पर। उसके पास सब कुछ था। जिस लड़की से उसका विवाह होने वाला था उसे भी पैकेज मिलता था। कुछ समय बाद मंदी का दौर आया। पैकेजवालों पर संकट के बादल घिर आए। मंदी का पहला असर यह हुआ कि गुड़गांव का फ्लैट बदरंग हो गया। सुभद्रा चिंतित होकर मनीष से कहती है कि वह अब विवाह की तैयारी करे। तभी शाम को मनीष की नौकरी की बर्खास्तगी की चिट्टी आ गई। उसी समय लड़की वालों ने भी रिश्ता तोड़ने की सूचना दे दी।

मनीष की मां ने उसे गांव आने के लिए कह दिया। मनीष मां के पास जाकर उनकी गोद में सिर रख कर भावुक हो गया। सुभद्रा ने मनीष को समझाया कि पुश्तैनी जमीन ही विपत्ति का आहार बन रही है। ढाई बीघा ही है तो क्या हुआ, यही तिनके का सहारा है। मनीष को उसकी मां की बात सांत्वना दे रही थी। मनीष भी मां के प्रति आभार प्रकट करने की सोच रहा था। इस प्रकार कहानी का अंत अत्यंत प्रभावकारी है।

(ii) पात्र योजना एवं चरित्र–चित्रण– 'ढाई बीघा जमीन' एक सामाजिक कहानी है। इसमें भारतीय परिवेश में कृषक और महिलाओं के समक्ष उपस्थित समस्याओं को

टिप्पणी

उजागर किया गया है। कहानी के पात्र यथार्थ जीवन के परिवेश से सम्बद्ध हैं। ये वर्ग प्रतिनिधि भी है और स्वच्छन्द व्यक्ति भी। कहानी में पात्र संख्या सीमित है। कुल मिला कर रामबाबू, रामचरण सिंह, चूड़ामणि सिंह, किशोर, मनीष, सुभद्रा आदि छः पात्र हैं। इन्हीं के द्वारा कहानी अग्रसर होती है।

प्रमुख पात्र रामबाबू सोच–विचार कर चलने वाले और परिवार के बच्चों का भविष्य देखकर कार्य करने वाले हैं। वे दूसरों से सलाह भी लेते हैं परंतु अफवाहों से डरते भी हैं। अपनी बेटी के विवाह के लिए गांव के लड़के की पूरी छानबीन करते हैं, अन्यों से सलाह लेते हैं, परंतु अपने एक साथी चूड़ामणि सिंह के नकारात्मक सोच से डरते भी हैं। चूड़ामणि सिंह का प्रचारक स्वभाव उन्हें व्यथित कर देता है। रामबाबू कहते हैं– "चूड़ामणि तुम समझने की कोशिश करो। लड़के के सिर पर जमीन की औकात तब देखी जाती थी जब उसकी जीविका का साधन मात्र जमीन होती थी। अब तो लड़का नौकरी करता है। जमीन दो बीघा हो या सौ बीघा क्या फर्क पड़ता है?"

वास्तव में रामबाबू व्यवहार बुद्धि से काम लेने वाला व्यक्ति है। वह पुरानी, सुनी हुई, बीते समय की बातों पर विश्वास नहीं करता। रामबाबू अपने निर्णय पर कायम रहते हुए अपने विचार को परिपक्व रूप देता है और जहां सोचा–विचारा था वहीं अपनी लड़की की शादी कर देते हैं। अपनी लड़की की खुशी के लिए बहुत कुछ करने के लिए तैयार है। अपने मन की भावना को अपनी बेटी और पत्नी पर भी प्रकट नहीं करते। अंत में जब वे अपनी बेटी के वचनों से आश्वस्त होते हैं कि वह पूर्णतः सुखी है, जमीन की उसे कोई चिंता नहीं है तो वह इस संसार के विदा लेते हैं।

रामबाबू अपनी बेटी–दामाद के पास गांव से बाहर रहने लगे थे। अब उन्हें किसी प्रकार की चिंता नहीं थी। कभी–कभी गांव भी चले जाते थे।

मनीष अन्य पात्र है जो अपनी मां के प्रति बहुत स्नेह रखता है। उनके प्रति उसमें आज्ञाकारिता का भाव है। वह उस समय बड़े धैर्य का परिचय देता है जब उसे पता चलता है कि जिस लड़की से उसकी शादी होने वाली थी मंदी के दौर में उसके घरवालों ने मनीष से रिश्ता तोड़ दिया था। तब वह अपनी मां की बात मानकर गांव जाने के लिए तैयार हो जाता है और थोड़ी–सी जमीन के द्वारा उसे जोत बोकर जीवनयापन करने को तैयार हो जाता है। अब उसे अपने गांव की ढाई बीघा जमीन की याद आती है ओर अपनी मां के साथ गांव चलने के लिए तैयार हो जाता है। इस प्रकार एक अज्ञाकारी पुत्र का भाव लेकर चलने वाला मनीष भी कहानी को आगे बढ़ाने में सहायक होता है। वह कहता है– "मां चलो, अभी गांव चलते हैं।"

मनीष का व्यक्तित्व सहज है। वह अपनी नौकरी की बर्खास्तगी की चिट्ठी पाकर भी अपना मानसिक संतुलन नहीं खोता और एक समझदार व्यक्ति का परिचय देता है तथा मां से ही सलाह मांगता है। फिर मां के समझाने पर जैसा वह कहती है वैसा मान लेता है।

अन्य पात्र चूड़ामणि सिंह अपनी प्रवृत्ति के अनुसार केवल अपनी सलाह देने के लिए चिंतित रहता है। वह पुरातनवादी है और रूढ़िवादिता का परिचय देते हुए पुश्तैनी जमीन से ही जीवन–निर्वाह का पक्ष लेता है। उसे शहरी जीवन से कोई सरोकार नहीं है। वह अपने मकसद में कामयाब हो जाता है।

सुभद्रा भी इस कहानी की प्रमुख पात्र है। वह ममतामयी मां की भूमिका में सफल है। उसे अपने बेटे के विचार की और उसके भविष्य की चिंता है। वह कहती है– "कभी सुना था जेवर संपत्ति का शृंगार होता और विपत्ति का आहार होता है। पर तुम्हारे लिए तो पुश्तैनी जमीन ही विपत्ति का आहार बन रही है। ढाई बीघा ही है तो क्या, तिनके का सहारा।"

सामाजिक सुरक्षा इस कहानी के चरित्र–चित्रण का केंद्रबिंदु है। रामबाबू, चूड़ामणि, सुभद्रा के मन में अपने बच्चों के भविष्य को लेकर चिंता है।

(iii) कथोपकथन (संवाद)– कहानी के पात्र आपस में जो बातचीत करते हैं, उन्हें संवाद कहते हैं। संवादों से कहानी आगे बढ़ती है। 'ढाई बीघा जमीन' में कहीं–कहीं वार्तालाप ही कहानी को आगे बढ़ाते हैं। सफल कहानीकार पात्रों के अनुकूल संवादों का आयोजन करता है। काल एवं स्थान के अनुसार संवादों में भी परिवर्तन होता है। यदि कहानी समस्या प्रदान है तो उसके पात्र भी समस्याओं को लेकर बातचीत करते हैं।

'ढाई बीघा जमीन' के संवाद भी समस्याओं को उजागर करते नजर आते हैं। इन संवादों के कारण कहानी में जिज्ञासा जागृत करने की क्षमता अधिक है। इसमें कहानीकार पात्रों से कम और अपनी ओर से अधिक कहता है। इसमें संवाद की अपेक्षा कथोपकथन अधिक प्रभावी है; जैसे–

चूड़ामणि सिंह कहते हैं– "मास्टर साहब, आप अपनी बेटी को क्यों गड्ढे में धकेल रहे हैं? लड़के के सिर पर मात्र ढाई बीघा जमीन रहेगी। क्या खाएगा–खिलाएगा? कैसे परिवार पालेगा?"

चूड़ामणि के कथन के प्रत्युत्तर में रामबाबू कहता है– "चूड़ामणि, तुम समझने की कोशिश करो। लड़के के सिर पर जमीन की औकात तब देखी जाती थी, जब उसकी जीविका का साधन मात्र जमीन होती थी। अब तो लड़का नौकरी करता है। जमीन दो बीघा हो या सौ बीघा, क्या फर्क पड़ता है?"

चूड़ामणि भी कहां मानने वाले थे। बोले, "मास्टर साहब, भगवान न करे, बिटिया के लिए कोई बुरा दिन आए। पर लड़के के साथ कुछ अनहोनी हो जाने पर जमीन ही रखवाला बन जाती है। यह भी तो लड़की के पिता को देखना पड़ता है।"

"हां–हां! नौकरी देने वाले भी ये सारी सावधानियां बरतते हैं। तुम चिंता मत करो।"

इस प्रकार कहानीकार ने दीर्घ संवादों की योजना की है, परंतु स्वाभाविकता में कोई बाधा नहीं आई। जैसे– "मनीष मां के सुझाव पर आश्चर्य प्रकट कर गया।

"हां, मैं ठीक कहती हूं।"

"क्या?" वह अनमना सा बोला।

"यही कि गांव चलो। कम–से–कम जब तक मंदी रहे। देखना, फिर दिन बहुरेंगे तुम्हारे भी, पैकेज के भी। जिंदगी तो बितानी होती है, बेटा। पैकेज के सहारे या पुश्तैनी जमीन के सहारे, क्या फर्क पड़ता है।"

इस प्रकार कहानी के संवाद पात्रों की मनोदशा और उनकी चिंता को प्रकट करते हैं तथा जिज्ञासा उत्पन्न कर कथानक के विकास में योग देते हैं।

टिप्पणी

(iv) वातावरण–देशकाल– वातावरण के अंतर्गत देशकाल और परिस्थिति आती है। यह किसी स्थान और समय से संबंधित होती है। इन्हीं को परिवेश कहते हैं। कहानी में उचित स्थान तथा काल का वर्णन सजीवता लाता है। यदि कहानी की घटनाएं गांव में घटित हुई हैं तो उसके स्थान पर शहर का चित्रण उचित नहीं होगा। गांव से संबंधित सारी बातें उसमें आनी चाहिए। घर–आंगन, चौपाल, रीति–रिवाज, रहन–सहन सभी परिवेश के अंतर्गत आते हैं। कहानी में लंबे–चौड़े विवरण का स्थान नहीं रहता, इसलिए कहानीकार थोड़े में कहानी के अनुकूल परिवेश का चित्रण करता है।

इस कहानी में घटनाओं और पात्रों से संबंधित परिस्थितियों का चित्रण सजीव रूप में किया गया है। संपूर्ण परिस्थितियों की योजना साभिप्राय और क्रमिक ढंग से की गई है। कहानी के शीर्षक से ही पता चलता है कि कहानी गांव के वातावरण से संबंधित है। कहानी का आरंभ इसी तथ्य को स्पष्ट करता है– "जमीन, जहां खेती होती है, वह तो साढ़े–सात बीघा ही थी। एक–एक कोला की मेंड़ पर खड़े होकर देख आए थे रामबाबू। और हिसाब के शिक्षक को यह हिसाब लगाते देर नहीं लगी थी कि रामचरण सिंह के तीनों पुत्रों के बीच बंटवारे में ढाई–ढाई बीघा जमीन ही आएगी। मन–ही–मन हो रही उनकी गणना को उनके साथ चल रहे चूड़ामणि सिंह ने भी सुन लिया था। बोले– "मास्टर साहब, आप अपनी बेटी को क्यों गड्ढे में धेकल रहे हैं? लड़के के सिर पर मात्र ढाई बीघा जमीन रहेगी। क्या खाएगा–खिलाएगा? कैसे परिवार पालेगा?"

कहानी में शहरी वातावरण, नौकरी और कंपनी के पैकेज का प्रभाव दिखाया गया है जिसे कहानीकार ने ताड़ के पेड़ की छाया के रूप में स्पष्ट किया है। मंदी के दौर में जहां पैकेज भी निरस्त हो रहे हैं जीवनयापन की चिंताएं प्रबल हो रही हैं। मनीष अंत में अपनी मां की सलाह मान कर पुश्तैनी जमीन से ही अपना जीवनयापन करने हेतु गांव चलने के लिए तैयार हो जाता है। इस प्रकार कहानी के वातावरण में कहानी का प्रतिघात भी संपूर्णतः ध्वनित हो जाता है। वस्तुतः यह एक वातावरण प्रधान कहानी बन गई है।

(v) भाषा–शैली– भाषा के द्वारा कहानीकार कहानी में सजीवता, स्वाभाविकता एवं रोचकता लाता है। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि कहानीकार का भाषा पर पूर्ण अधिकार हो। कहानी में जहां लेखक अपने विचार रखता है– वहां उसकी अपनी भाषा होगी। लेकिन जब कोई बात पात्रों के द्वारा कहलवाई जाए, तब पात्रों के अनुकूल भाषा का प्रयोग आवश्यक है। कहानी की भाषा सरल, सुबोध और पात्रों के अनुकूल होनी चाहिए। वह बातचीत के रूप में ज्यादा स्वाभाविक होती है। कहानीकार अपने ढंग से कहानी लिखता है तो वह उसकी शैली कहलाती है। इसी से कहानी की शैली में विभिन्नता रहती है।

प्रस्तुत कहानी की भाषा–शैली उसके परिवेश के अनुरूप है। इसमें सरलता और भावुकता है। इसकी भाषा में तद्भव और देशज शब्दों का अधिक प्रयोग है। इसी से स्थान–स्थान पर भाषा सहज स्वाभाविक लगती है। किरानी, बिआने, हादसा, पुआल, टाल, बरात, बंटवारा, घरार, फुलवारी, ताड़, पुश्तैनी जैसे अनेक तद्भव और देशज शब्द कहानी में प्रयुक्त हुए हैं। ऐसे शब्दों के प्रयोग से कहानी को स्वाभाविक गति मिलती चली गई।

'ढाई बीघा जमीन' की शैली सरल, सहज और आम बोलचाल की शैली है। इसमें आम बोलचाल के ग्रामीण क्षेत्र के शब्दों का प्रयोग हुआ है। इसकी भाषा

पात्रानुकूल है। शैली में भावुकता अब लोकनीय है। इसमें जटिल, क्लिष्ट या दुरुह शब्दों के लिए कोई अवकाश नहीं है। शैली की दृष्टि से इसमें लेखिका ने विश्लेषणात्मक शैली प्रयोग की है।

टिप्पणी

(vi) उद्देश्य– कहानी के द्वारा लेखक जो संदेश देना चाहता है उसे प्रतिपाद्य कहते हैं। सफल कहानी गंभीर उद्देश्य पर निर्भर होती है। मृदुला सिन्हा की कहानी सोद्देश्य है। उसके पीछे एक निश्चित मंतव्य है। वे कला को कला के लिए न मानकर इसे जीवन के लिए, उसके कल्याण के लिए मानती हैं।

आलोच्य कहानी समाज की दुर्बलताओं का सजीव चित्रण करती है। यह कहानी अपनी जमीन से जुड़े मेहनतकश लोगों की निष्ठा को व्यक्त करती है। परंपराओं से चली आ रही अपनी मातृभूमि की देखभाल और उसी से जीवनयापन करने की सुदृढ़ इच्छा को कहानी में चित्रित किया गया है। शहर की नौकरी, लाखों के पैकेज कितने भी मिले किंतु मंदी की बयार में वे भी हवा की तरह उड़ जाते हैं। ऐसी स्थिति में अपनी पुश्तैनी जमीन ही जीवनयापन का सहारा बनती है। मनीष का अपनी मां का कहना मान कर गांव लौट चलने की इच्छा कहानी के उद्देश्य को सार्थक करती है। इस प्रकार 'ढाई बीघा जमीन' एक सोद्देश्य कहानी है : इसमें कोई संदेह नहीं।

अपनी प्रगति जांचिए

15. 'ढाई बीघा जमीन' किस क्षेत्र से संबंधित कहानी है?

    (क) राजनीतिक (ख) आर्थिक

    (ग) सामाजिक (घ) नैतिक

16. 'ढाई बीघा जमीन' कहानी में लेखिका ने 'ताड़ की छाया' की तुलना किससे की है?

    (क) खेती से (ख) नौकरी से

    (ग) समाज से (घ) जमीन से

4.10 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (ग)
2. (घ)
3. (ख)
4. (क)
5. (ख)
6. (ग)
7. (ग)
8. (क)
9. (ग)

10. (क)
11. (घ)
12. (ख)
13. (ख)
14. (क)
15. (ग)
16. (ख)

4.11 सारांश

'गुण्डा' कहानी में राजा चेत सिंह कैद में हैं। नन्हकू सिंह उन्हें छुड़ाने का प्रयास करता है। वह शिवालय घाट की ओर जाता है। नन्हकू सिंह अपने थोड़े से साथियों के साथ राजा चेत सिंह को अंग्रेजों की कैद से मुक्त कराने की कोशिश करता है। राज चेत सिंह के पूछने पर वह कहता है कि मैं राजपरिवार का एक बिना दाम का सेवक हूं। पन्ना ने उसे पहचान लिया था। वह पन्ना और राजा चेत सिंह को बचाने का प्रयास करता है। उन्हें डोंगी पर बैठाकर सुरक्षित जगह भेज देता है और स्वयं शत्रुओं से मुकाबला करते हुए मृत्यु की ओर बढ़ रहा है। तिलंगे अपनी संगीनों से उसके शरीर का एक–एक अंग फार कर गिरा रहे हैं। वह काशी का गुण्डा था जो अपने असफल प्रेम में न्यौछावर हो गया था। ऐतिहासिक श्रेणी में रखी जाने वाली इस कहानी में गुण्डा कहा जाने वाला नन्हकू लोकसेवी किरदार में नजर आता है और कर्तव्यपरायणता के लिए महारानी व महाराजा दोनों की रक्षा करता है।

प्रेमचंद की 'कफन' कहानी हिंदी की पुरानी और नयी कहानी के बीच एक दरार डालती है। 'कफन' से पहले की कहानी में आदर्शवाद कहानी की मूल संवेदना और रचना–विधान पर थोपा जाता था। पात्र आदर्श को जीते नहीं थे, ढोते थे। 'कफन' से हम प्रेमचंद में एक विशेष प्रकार का मोह भंग देखते हैं। यहां पहली बार पात्र और परिवेश एक–दूसरे पर व्यंग्य करते हुए दीख पड़ते हैं। बदलते अथवा विघटित होते हुए मानव–संबंध, दरकते हुए जीवन–मूल्य और बिखरते हुए आदर्शों की त्रासदी है 'कफन'। इसलिए 'कफन' केवल एक कहानी नहीं बल्कि यह एक एहसास है निर्धनता के बोझ के नीचे पिसती मानव की अस्मिता की तिल–तिल करके होती हुई मौत का। यही कारण है कि 'कफन' यथार्थवादी कहानी–परंपरा की एक सार्थक और पैनी शुरुआत है।

'अपना–अपना भाग्य' (जैनेन्द्र) कहानी एक सोद्देश्य रचना है तथा उसमें चिंतन की गहराई के अतिरिक्त अनुभूति की व्यंजना एवं आदर्श की प्रतिष्ठा का प्रयत्न रहा है। कहानी का मुख्य उद्देश्य इसके मुख्य पात्र और सहयोगी पात्रों के चरित्र का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण कर उनकी मनःस्थिति को प्रस्तुत करना रहा है।

फणीश्वरनाथ रेणु की कहानी 'तीसरी कसम' में ग्रामीण क्षेत्र के सीधे–सरल, ईमानदार व्यक्ति के किरदार को आकार देने के लिए उसके द्वारा की गई तीन कसमों को माध्यम बनाया गया है।

टिप्पणी

'चीफ की दावत' को लेकर इस कहानी के मुख्य पात्र मिस्टर शामनाथ अपने चीफ के घर आने पर क्या कुछ नहीं करना चाहते। उनके स्वागत में जमीन–आसमान एक किए हुए हैं। घर सजावट से लेकर अपने कपड़े, अपनी पत्नी के लिबास से लेकर अंदर–बाहर तक की सब चीजों को, बातों को वे आसमान पर बैठाने को आतुर हैं। यह कहानी आधुनिक जीवन की विषमता, विसंगति और अंतर्विरोध का जीवंत रूप साकार करती है।

'दोपहर का भोजन' अमरकांत की एक यथार्थवादी कहानी है, जो हमारा परिचय एक निम्न मध्यमवर्गीय परिवार के जीवन की अस्थिरता तथा चुनौतीपूर्ण स्थितियों से सफलतापूर्वक कराती है। इस कहानी को पढ़ना एक त्रासदी से गुजरने जैसा लगता है। देश के आर्थिक ढांचे में आ रहा निरंतर बदलाव निम्नवर्ग तथा निम्नमध्यमवर्ग के जीवन में जिस तरह की भीषण अनिश्चितताएं लेकर आया है, वह निस्संदेह चिंताजनक है। कहानी इस पहलू पर बड़ी गहराई से प्रकाश डालती है।

समाज में बढ़ती व्यक्तिवादिता/निजता को उजागर करती दूधनाथ सिंह की कहानी 'रीछ' में मनःस्थिति का बिंबात्मक पात्र रीछ 'दरवाजे की चौखट पर' दोनों पाँव फैलाये, अधलेटा पड़ा है और उसके बड़े–बड़े काले नाखून बघनख की तरह चमक रहे हैं। इस भय को खत्म करने की कोशिश में उसे जीवित रखने की कोशिश भी मिली है। यहाँ भयानक दुर्घटनाओं के प्रति स्वार्थ का भाव आदमी में बना रहता है। उसके इर्द–गिर्द ताँत की जालियाँ बिछा दी जाती हैं जिनमें से निकलना संभव नहीं होता।

'ढाई बीघा जमीन' मृदुला सिन्हा की ख्याति प्राप्त भाव प्रवण कहानी है। यह कहानी भारतीय परिवेश में गांव में रहने वाले कृषक परिवारों की वास्तविक स्थिति और उनकी सोच को व्यक्त करती है। इसमें माता–पिता की चिंता और बच्चों के भविष्य को सुखद बनाने की भावनाओं को व्यक्त किया गया है।

4.12 मुख्य शब्दावली

- **स्वांग** : नाटक, प्रहसन, तमाशा
- **अबाध** : बिना बाधा के।
- **अभिनव** : नवीन, नए ढंग का।
- **सशक्त** : शक्तिशाली।
- **अनर्गल** : बेतुके, बिलावजह, अकारण।
- **प्रतिपाद्य** : स्थापना, संदेश, उद्देश्य।

4.13 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. 'गुण्डा' कहानी में निहित मूल मानवीय तत्व क्या है?
2. 'कफन' किस प्रकार एक यथार्थवादी कहानी है?

टिप्पणी

3. 'अपना–अपना भाग्य' कहानी का प्रतिपाद्य क्या है?
4. 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम' ग्राम्यांचल की कहानी है। स्पष्ट कीजिए।
5. शामनाथ 'चीफ की दावत' के लिए किस प्रकार तैयारियां कर रहे थे?
6. 'दोपहर का भोजन' कहानी का कथानक क्या है?
7. 'रीछ' कहानी की मूल संवेदना क्या है?
8. 'ढाई बीघा जमीन' में लेखिका ने किस विषय को केंद्र में रखा है?

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. कहानी कला के तत्वों के आधार पर 'गुण्डा' कहानी की समीक्षा कीजिए।
2. 'कफन' कहानी में घीसू और माधव के माध्यम से भारतीय ग्रामीण समाज की विद्रूपताओं को मुंशी प्रेमचंद ने किस प्रकार चित्रित किया है? विवेचन कीजिए।
3. 'अपना–अपना भाग्य' कहानी का देशकाल व वातावरण किस प्रकार लेखक के प्रतिपाद्य से साम्य स्थापित करता है? स्पष्ट कीजिए।
4. हिरामन और हीराबाई के बीच उपजे भावनात्मक आलोड़ के कारणों का अन्वेषण कीजिए।
5. 'चीफ की दावत' कहानी के आधार पर मिस्टर शामनाथ व उनकी मां की चरित्रगत विशेषताओं का विश्लेषण कीजिए।
6. 'दोपहर का भोजन' कहानी में आर्थिक विपन्नता के दारुण कष्टों से जूझ रहे परिवार को सिद्धेश्वरी किस प्रकार एकजुट रखने का प्रयास करती है? उदाहरणों के साथ स्पष्ट कीजिए।
7. " 'रीछ' कहानी फंतासी के माध्यम से बढ़ती व्यक्तिवादिता को ध्येय करती है।" अपने शब्दों में उक्त कथन का विश्लेषण कीजिए।
8. 'ढाई बीघा जमीन' एक सामाजिक कहानी है : प्रकाश डालिए।

4.14 सहायक पाठ्य सामग्री

1. इन्द्रनाथ मदान, 'प्रेमचन्द चिन्तन और कला', सरस्वती प्रेस, वाराणसी।
2. रामविलास शर्मा, 'प्रेमचन्द और उनका युग', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. लालचन्द गुप्त, 'हिन्दी कहानी का इतिहास' संजीव प्रकाशन, कुरुक्षेत्र।
4. नामवर सिंह, 'कहानी नयी कहानी', लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2009।
5. रामदरश मिश्र, 'हिन्दी उपन्यास : एक अन्तर्यात्रा', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016।
6. राजेन्द्र यादव ,'एक दुनिया समानान्तर', राधाकृष्णन प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003।

इकाई 5 द्रुत पाठ

टिप्पणी

संरचना

5.0 परिचय
5.1 उद्देश्य
5.2 अमृत लाल नागर
5.3 यशपाल
5.4 धर्मवीर भारती
5.5 कृष्णा सोबती
5.6 मालती जोशी
5.7 मीनाक्षी स्वामी
5.8 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
5.9 सारांश
5.10 मुख्य शब्दावली
5.11 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
5.12 सहायक पाठ्य सामग्री

5.0 परिचय

उपन्यास और कहानी दोनों साहित्य की एक गद्य विधा हैं। उपन्यास लिखने वाले को उपन्यासकार कहते हैं। कहानी या कथा की रचना करने वाले को कहानीकार कहा जाता है। उपन्यासकार अपने सभी पात्रों के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष विधि द्वारा चित्रित करता है किन्तु कहानीकार कतिपय पात्रों की कतिपय विशिष्टताओं को ही दर्शाता है।

कहानीकार अपनी आंतरिक भावनाओं को गीतिकाव्य की तरह नितांत व्यक्तिगत ढंग से ही व्यक्त कर सकता है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि कहानी में स्वानुभूति चित्रण का उपन्यास से अधिक अवसर है। उपन्यास और कहानी दोनों स्वतंत्र, भिन्न और मौलिक विधाएं हैं। इन दोनों की शिल्प विधि एवं रूप विधान में पर्याप्त अन्तर मिलता है।

इस इकाई में कहानी एवं उपन्यास साहित्य के आधुनिक हस्ताक्षर अमृतलाल नागर, यशपाल, धर्मवीर भारती, कृष्णा सोबती, मालती जोशी व मीनाक्षी स्वामी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के विषय में बताया गया है।

5.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- अमृतलाल नागर के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से परिचित हो पाएंगे;
- यशपाल के जीवन–परिचय व उनकी रचनाओं जान पाएंगे;
- धर्मवीर भारती, कृष्णा सोबती, मालती जोशी व मीनाक्षी स्वामी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से अवगत हो पाएंगे।

5.2 अमृत लाल नागर

टिप्पणी

प्रख्यात उपन्यासकार अमृतलाल नागर का जन्म, गोकुल पुरा, आगरा (उत्तर प्रदेश) में 17 अगस्त, सन् 1916 को ब्राह्मण परिवार में हुआ था। इनकी शिक्षा हाई स्कूल तक ही रही। फिर भी साहित्य, इतिहास, पुराण, पुरातत्व एवं समाजशास्त्र का इन्होंने गूढ़ अध्ययन किया। इनका विभिन्न भाषाओं पर अधिकार भी था। शुरू–शुरू में इन्होंने नौकरी की थी। फिर शनैः शनैः लेखन की ओर झुकाव स्वतः ही होता चला गया। फिल्म–लेखन भी किया। प्रारम्भ में इन्होंने मेघराज इन्द्र के नाम से भी कविताएं लिखीं। आकाशवाणी लखनऊ में भी नाटक प्रोड्यूसर के पद पर कार्यरत रहे। अमृतलाल नागर की गणना आधुनिक भारतीय साहित्य के विशिष्ट रचनाकारों में होती रही है। ये बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। इन्होंने कहानियों के साथ–साथ उपन्यासों की भी रचनाएं कीं।

अमृतलाल नागर जी का रचना–संसार अत्यन्त विस्तार लिये हुए है। जहां वे एकदा नैमिषारण्ये जैसे उपन्यास की प्रेरणा लेते हैं या महाकवि तुलसी और सूरदास के औपन्यासिक चित्रण के सहारे हमें मध्यकाल के जीवंत परिवेश में ले जाते हैं, वहीं दूसरी ओर उन्नीसवीं और बीसवीं सदी के लखनऊ की पृष्ठभूमि में चार–चार बड़े उपन्यासों की रचना करके वृहत्तर भारतीय समाज की गहन समस्याओं, उसकी आकांक्षाओं और विवशताओं से हमारा साक्षात्कार भी कराते हैं। समाज के वंचित और शोषित वर्गों से लेकर मध्य वर्ग तक की मानसिकता को साहित्य के माध्यम से अर्थान्वित करने में वे सिद्धहस्त रहे हैं। उन्होंने कथा–शिल्प के नये–नये आयामों की अवधारणा भी की है। नागर जी बीसवीं सदी के बहुत विराट लेखक हैं।

• कृतित्व

इनके सुप्रसिद्ध उपन्यास हैं– 'महाकाल', 'बूंद और समुद्र', 'शतरंज के मोहरे', 'सुहाग के नुपूर', 'अमृत और विष', 'सात घूंघट वाला मुखड़ा' आदि। नागर जी ने कहानी एवं रेखाचित्र भी लिखे, यथा– 'वाटिका अवशेष', 'नवाबी मसनद', 'तुलाराम शास्त्री' और 'आदमी' आदि। इन्होंने संस्मरण भी लिखे, यथा– 'ये कोठे वालियाँ', 'गदर के फूल' और 'जिनके साथ जिया' आदि। इन्होंने हास्य व्यंग्य, नाटक, रेडियो नाटक, रिपोर्ताज, निबंध, संस्मरण, अनुवाद के साथ–साथ बाल साहित्य भी रचा।

अमृतलाल नागर ने अपनी रचनाओं में सामाजिकता का सजीव चित्रण किया है। इनके कथानकों में कम चरित्र होते हैं। ये विनोदी प्रवृत्ति वाले साहित्यकार थे। इन्होंने लेखन के विविध प्रयोग भी किए। इनकी रचनाओं में हास्य व्यंग्य का पुट भी देखने को मिलता है। इसी प्रकार इनके उपन्यासों के पात्र भी अत्यन्त सजीव एवं गतिशील रहते हैं।

सन् 1947 में उनका पहला उपन्यास महाकाल प्रकाशित हुआ। फिर यही उपन्यास 'भूख' शीर्षक से सन् 1970 में पुनः प्रकाशित हुआ। उसके बाद 'बूंद और समुद्र', 'शतरंज के मोहरे', 'सुहाग के नूपुर', 'अमृत और विष', 'सात घूंघट वाला मुखड़ा', 'एकदा नैमिषारण्ये' सन् 1972 में प्रकाश में आए। 'मानस का हंस', 'नाच्यौ बहुत गोपाल', 'खंजन नयन', 'बिखरे तिनके', 'अग्निगर्भा', 'करवट' और 'पीढ़िया' सन् 1990 में प्रकाशित हुए।

सन् 1935 में उनका पहला कहानी संग्रह 'वाटिका' प्रकाशित हुआ। इसके अतिरिक्त नागर जी के 14 कहानी संग्रह और भी प्रकाश में आए।

अमृतलाल जी को विभिन्न साहित्यिक पुरस्कारों के साथ–साथ साहित्य अकादमी पुरस्कार और पद्मभूषण सम्मान से भी सम्मानित किया गया।

टिप्पणी

नागर जी का देहान्त 23 फरवरी, सन् 1990 को हुआ।

5.3 यशपाल

यशपाल जी का जन्म 3 दिसम्बर, 1903 में फिरोजपुर छावनी में हुआ था। इनकी माता आर्य समाजी विचारधारा से प्रभावित थीं। वे चाहती थीं, पुत्र भी इसी विचारधारा का पोषक बने इसलिए उन्होंने बालक यशपाल को शिक्षा के लिए गुरुकुल कांगड़ी भेज दिया। उनके अन्तर्मन में वैचारिक संघर्ष की शुरुआत आर्य समाज में हुई। गुरुकुल कांगड़ी में रहते हुए विदेशी दासता के विरुद्ध तीव्र आक्रोश और उसे उखाड़ फेंकने की चिनगारी यहीं उपजी। स्वाधीनता आन्दोलन के तत्कालीन आंदोलन के प्रभाव ने उनके मन में उपजी क्रान्ति की चिनगारी को हवा देकर प्रज्वलित करने का कार्य किया।

अंग्रेजी साम्राज्यवाद के विरुद्ध गांधी जी के असहयोग आन्दोलन से वे कुछ दिन जुड़े रहे लेकिन आर्य समाजी वातावरण और गांधीजी की अहिंसावादी विचारधारा उन्हें अधिक न बांध सके। लाहौर के नेशनल कॉलेज में प्रवेश करने के पश्चात् भगतसिंह और सुखदेव आदि क्रान्तिकारियों के सान्निध्य में आने पर मन में उपजी क्रान्ति की चिनगारी ज्वाला का रूप ग्रहण करती चली गई। सन् 1921 के बाद वे सशस्त्र क्रान्तिकारी आन्दोलन में भागीदारी निभाने लगे थे।

जेल से मुक्त होने के बाद उन्होंने 'विप्लव' नामक मासिक पत्र निकालना शुरू कर दिया। इसके अतिरिक्त उन्होंने 'खताश' और 'नया पथ' का भी सम्पादन किया।

यशपाल जी आधुनिक हिन्दी कहानी साहित्य में प्रगतिवादी खेमे के प्रतिनिधि कहानीकार माने जाते हैं। वे मार्क्स के विचारों से सर्वाधिक प्रभावित रहे हैं इसीलिए वे समाजवादी दृष्टिकोण के पोषक हैं। उन्होंने कहानी को केवल अपने विचारों का संवाहक माना है। अतः उनकी कहानियां लक्ष्यात्मक एवं सोद्देश्य लिखी गई हैं। उन्होंने वर्षों तक अनवरत साहित्य साधना एवं सेवा की है और बहुत कुछ लिखा है। वे 'समष्टि हित' में 'व्यक्तिहित' के सिद्धांत को नीति सम्मत मानते हैं इसी कारण उनकी कहानियों में सामाजिक प्रतिबद्धता अधिक दिखाई देती है। यशपाल जी प्रेमचन्दोत्तर युगीन प्रमुख कहानीकार हैं जिन्होंने हिन्दी कहानी को राजनैतिक चिन्तन का धरातल और अर्थ तान्त्रिक व्यवस्था के प्रति एक जागृत दृष्टिकोण प्रदान किया है और पूंजीवाद व हर प्रकार के शोषण के विरोध में प्रेमचन्द से भी आगे बढ़कर खुला विद्रोह किया है। उनका उपन्यास 'झूठा सच' विश्व के उत्कृष्टतम उपन्यासों में से एक माना जाता है।

अपनी रचनाओं के मूलभूत सूत्र के विषय में कहते हैं–''व्यक्ति और समाज का जीवन परम्परागत नैतिक धारणाओं और मान्यताओं का अनुसरण करने के लिए नहीं है, समाज की नैतिक मान्यताओं का प्रयोजन सामाजिक व्यवस्था में और समाज के उत्तरोत्तर विकास में सहायक होना है। समाज की परिस्थितियों और जीवन–निर्वाह के

तरीकों में परिवर्तन स्वीकार करके अतीत में स्वीकृत मान्यताओं को अपरिवर्तनीय मानने का आग्रह संभव नहीं हो सकता।''

टिप्पणी

• कृतित्व

यशपाल ने सन् 1938 से मृत्युपर्यंत लगभग 40 वर्षों तक साहित्य–सेवा की और लगभग 200 से भी अधिक कहानियां लिखीं। इनकी सभी कहानियां सामाजिक समस्याओं पर ही आधारित हैं, अतः इनकी कहानियों में सामाजिक चेतना जागरुक है। इनकी कहानियां चार श्रेणी में रखी जा सकती हैं–1. सामाजिक, 2. आर्थिक, 3. वैयक्तिक और 4. राजनीतिक। सामाजिक कहानियों के अन्तर्गत व्यक्ति–स्वातन्त्र्य, विधवा–विवाह समस्या, प्रेम और विवाह, मुक्त यौन सम्पर्क, परिवार नियोजन आदि विषय आते हैं। अर्थ वैषम्य के अन्तर्गत मुनाफा खोरी, चोरबाजारी, बेरोजगारी, आदि का चित्रण करते हुए समाजवादी व्यवस्था में ही इनका समाधान बताते हैं।

डा. लक्ष्मण दत्त गौतम के अनुसार–''यशपाल यह मानकर चलते हैं कि नारी दरअसल समाज की संयोजक और व्यवस्थापक है। पुरुष समाज–निर्माण और सुव्यवस्था के लिए आभारी है।'' उन्होंने नारी स्वातन्त्र्य को आवश्यक माना है। उनकी दृष्टि में विवाह पवित्र बन्धन नहीं, बल्कि एक आदर्श मित्र व प्रेमी का सम्बन्ध है। यशपाल ने अपनी रचनाओं में बहुविवाह, वृद्ध विवाह और अनमेल विवाह की घोर निन्दा की है।

आर्थिक विषमता को उद्घाटित करने वाली इनकी कहानियां हैं–'फूल की चोरी', 'चार आने', 'कर्म–फल', अभिशप्त आदि। 'खच्चर और आदमी' इनकी अनूठी और अनोखी कहानी है जिसमें धार्मिक पाखंडीपन और अंधविश्वास पर कटु व्यंग्य है।

यशपाल की कहानियों में राष्ट्र के राजनीतिक, सामाजिक व वैयक्तिक जीवन का सुस्पष्ट अंकन हुआ है और इस प्रकार यथार्थता के धरातल पर सामाजिक चेतना का सशक्त व सजीव चित्रण सम्भव हो सका है।

यशपाल जी ने साहित्य सृजन की शुरुआत कहानी के रूप में की थी। अपनी रचनाओं में इन्होंने जीवन की ठोस वास्तविकताओं, जटिलताओं, काल्पनिकता तथा विचारधारा का समन्वय प्रस्तुत करते हुए कहानियों का निर्माण किया। सामन्ती और पूंजीवादी मूल्यों से टकराते हुए समाजवाद की आधारशिला रखी। आगे चलकर यशपाल जी उपन्यासकार के रूप में बहुचर्चित हुए। ''झूठा सच'' उपन्यास उनकी कृति का आधारस्तम्भ बना और हिन्दी साहित्य ही नहीं, पाश्चात्य जगत के उपन्यासों में ख्याति अर्जित किया। औपन्यासिक विधान में यशपाल जी का चिन्तन क्रान्तिकारी विचार तीव्र प्रखरता के साथ उभरकर सामने आया। अपने चिन्तन की विचारधारा को प्रकट करने के लिए ही उन्होंने निबन्ध लेखन की विधा को स्वीकार कर लिया। इनकी कहानियों की सूची लम्बी है, जैसा कि यह पहले ही बुताया जा चुका है कि इनकी कहानियों को चार श्रेणी में रखा गया है।

यशपाल जी का समूचा कहानी लेखन समकालीन विसंगतियों, विकृतियों और दुरभिसधियों के विरुद्ध लड़ाई के हथियार की तरह सामने आया है। उनके कथा साहित्य की घटनाएं जड़, सांस्कृतिक–सामाजिक परम्पराओं और भ्रष्ट व्यवस्था की पोल खोलती हैं। समूची घटनाएं सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक अन्तर्विरोधों के परिपार्श्व में उभरती हैं। व्यवस्था–विरोधी शक्तियों से उनका साहित्य लड़ता–सा प्रतीत होता है।

26 दिसम्बर, 1976 को लखनऊ में उनका निधन हो गया।

5.4 धर्मवीर भारती

टिप्पणी

धर्मवीर भारती का जन्म 25 दिसंबर 1926 को इलाहाबाद के अतर सुइया मुहल्ले में हुआ। उनके पिता का नाम श्री चिरंजीव लाल वर्मा और मां का श्रीमती चंदादेवी था। स्कूली शिक्षा डी. ए वी हाई स्कूल में हुई और उच्च शिक्षा प्रयाग विश्वविद्यालय में। प्रथम श्रेणी में एम ए करने के बाद डॉ. धीरेन्द्र वर्मा के निर्देशन में सिद्ध साहित्य पर शोध–प्रबंध लिखकर उन्होंने पी–एच.डी. प्राप्त की।

धर्मवीर भारती आधुनिक हिन्दी साहित्य के प्रमुख लेखक, कवि, नाटककार और सामाजिक विचारक थे। वे एक समय की प्रख्यात साप्ताहिक पत्रिका धर्मयुग के प्रधान संपादक भी थे।

डॉ धर्मवीर भारती को 1972 में पद्मश्री से सम्मानित किया गया। उनका उपन्यास 'गुनाहों का देवता' सदाबहार रचना मानी जाती है। 'सूरज का सातवां घोड़ा' को कहानी कहने का अनुपम प्रयोग माना जाता है, जिस पर श्याम बेनेगल ने इसी नाम की फिल्म बनायी। 'अंधा युग' उनका प्रसिद्ध नाटक है। इब्राहीम अलकाजी, राम गोपाल बजाज, अरविन्द गौड़, रतन थियम, एम के रैना, मोहन महर्षि और कई अन्य भारतीय रंगमंच निर्देशकों ने इसका मंचन किया है।

घर और स्कूल से प्राप्त आर्यसमाजी संस्कार, इलाहाबाद और विश्वविद्यालय का साहित्यिक वातावरण, देश भर में होने वाली राजनैतिक हलचलें, बाल्यावस्था में ही पिता की मृत्यु और उससे उत्पन्न आर्थिक संकट इन सबने उन्हें अतिसंवेदनशील, तर्कशील बना दिया। उन्हें जीवन में दो ही शौक थे : अध्ययन और यात्रा। भारती के साहित्य में उनके विषद अध्ययन और यात्रा–अनुभवों का प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है–

> जानने की प्रक्रिया में होने और जीने की प्रक्रिया में जानने वाला मिजाज
> जिन लोगों का है उनमें मैं अपने को पाता हूँ। (ठेले पर हिमालय)

उन्हें आर्यसमाज की चिंतन और तर्कशैली भी प्रभावित करती है और रामायण, महाभारत और श्रीमद्भागवत, प्रसाद और शरतचन्द्र का साहित्य उन्हें विशेष प्रिय था। आर्थिक विकास के लिए मार्क्स के सिद्धांत उनके आदर्श थे परंतु मार्क्सवादियों की अधीरता और मताग्रहता उन्हें अप्रिय थे। 'सिद्ध साहित्य' उनके शोध का विषय था, उनके सटजिया सिद्धांत से वे विशेष रूप से प्रभावित थे। पश्चिमी साहित्यकारों में शीले और आस्कर वाइल्ड उन्हें विशेष प्रिय थे। भारती को फूलों का बेहद शौक था। उनके साहित्य में भी फूलों से संबंधित बिंब प्रचुरमात्रा में मिलते हैं।

अध्यापन– 1948 में 'संगम' (सम्पादक श्री इलाचंद्र जोशी) में सहकारी संपादक नियुक्त हुए। दो वर्ष वहां काम करने के बाद हिन्दुस्तानी अकादमी में अध्यापक नियुक्त हुए। सन् 1960 तक कार्य किया। प्रयाग विश्वविद्यालय में अध्यापन के दौरान 'हिंदी साहित्य कोश' के सम्पादन में सहयोग दिया। 'निकष' पत्रिका निकाली तथा 'आलोचना' का सम्पादन भी किया। उसके बाद 'धर्मयुग' में प्रधान सम्पादक पद पर बम्बई आ गये।

1987 में डॉ. भारती ने अवकाश ग्रहण किया। 1999 में युवा कहानीकार उदय प्रकाश के निर्देशन में साहित्य अकादमी दिल्ली के लिए डॉ. भारती पर एक वृत्त चित्र का निर्माण भी हुआ है।

टिप्पणी

शोध कार्य

डॉ. धीरेन्द्र वर्मा के निर्देशन में 'सिद्ध साहित्य' पर शोध कार्य चल रहा था। साथ ही साथ उस समय कई कवितायें लिखी गई जो बाद में 'ठंडा लोहा' नामक पुस्तक के रूप में छपी। और उन्हीं दिनों 'गुनाहों का देवता' उपन्यास लिखा। साम्यवाद से मोहभंग के बाद 'प्रगतिवादः एक समीक्षा' नामक पुस्तक लिखी। कुछ अंतराल बाद ही 'सूरज का सातवाँ घोड़ा' जैसा अनोखा उपन्यास भी लिखा।

काव्य नाटक– अंधा युग

धर्मवीर भारती का गीति–नाट्य अंधा युग भारतीय रंगमंच का एक महत्वपूर्ण नाटक है। महाभारत युद्ध के अंतिम दिन पर आधारित यह नाटक चार दशक से भारत की प्रत्येक भाषा में मन्चित हो रहा है। इसमें युद्ध और उसके बाद की समस्याओं और मानवीय महात्वाकांक्षा को प्रस्तुत किया गया है। यह काव्य रंगमंच को दृष्टि में रखकर लिखा गया है।

कृतित्व

- **कहानी संग्रह** : मुर्दों का गांव, स्वर्ग और पृथ्वी, चांद और टूटे हुए लोग, बंद गली का आखिरी मकान, सांस की कलम से, समस्त कहानियाँ एक साथ।
- **काव्य रचनाएं** : ठंडा लोहा, अंधा युग, सात गीत वर्ष, कनुप्रिया, सपना अभी भी, आद्यन्त।
- **उपन्यास** : गुनाहों का देवता, सूरज का सातवां घोड़ा, ग्यारह सपनों का देश, प्रारंभ व समापन।
- **निबंध** : ठेले पर हिमालय, पश्यंती।
- **एकांकी व नाटक** : नदी प्यासी थी, नीली झील, आवाज का नीलम आदि।
- **गीति–नाट्य** : अंधा युग।
- **आलोचना** : प्रगतिवाद : एक समीक्षा, मानव मूल्य और साहित्य।

अलंकरण तथा पुरस्कार

1972 में पद्मश्री से अलंकृत डॉ. धर्मवीर भारती को अपने जीवन काल में अनेक पुरस्कार प्राप्त हुए जिसमें से प्रमुख हैं–

- 1984 हल्दी घाटी श्रेष्ठ पत्रकारिता पुरस्कार
- महाराणा मेवाड़ फाउंडेशन 1988
- सर्वश्रेष्ठ नाटककार पुरस्कार संगीत नाटक अकादमी दिल्ली 1989
- भारत भारती पुरस्कार उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान 1990
- महाराष्ट्र गौरव, महाराष्ट्र सरकार 1994
- बिड़ला फाउंडेशन का व्यास सम्मान।

'अंधा युग' में स्वातंत्र्योत्तर भारत में आई मूल्यहीनता के प्रति चिंता है। उनका बल पूर्व और पश्चिम के मूल्यों, जीवन–शैली और मानसिकता के संतुलन पर है, वे न तो किसी एक का अंधा विरोध करते हैं न अंधा समर्थन, परंतु क्या स्वीकार करना और क्या त्यागना है इसके लिए व्यक्ति और समाज की प्रगति को ही आधार बनाना होगा–

पश्चिम का अंधानुकरण करने की कोई जरूरत नहीं है, पर पश्चिम के विरोध के नाम पर मध्यकाल में तिरस्कृत मूल्यों को भी अपनाने की जरूरत नहीं है।

टिप्पणी

उनकी दृष्टि में वर्तमान को सुधारने और भविष्य को सुखमय बनाने के लिए आम जनता के दुःख दर्द को समझने और उसे दूर करने की आवश्यकता है। दुःख तो उन्हें इस बात का है कि आज 'जनतंत्र' में 'तंत्र' शक्तिशाली लोगों के हाथों में चला गया है और 'जन' की ओर किसी का ध्यान ही नहीं है। अपनी रचनाओं के माध्यम से इसी 'जन' की आशाओं, आकांक्षाओं, विवशताओं, कष्टों को अभिव्यक्ति देने का प्रयास उन्होंने किया है।

अपनी प्रगति जांचिए

1. प्रारंभिक दिनों में अमृतलाल नागर किस उपनाम से कविताएं लिखा करते थे?
   (क) इन्द्र (ख) मेघराज
   (ग) मेघराज इन्द्र (घ) मेघदूत
2. निम्न में से किस पत्रिका का संपादन यशपाल ने नहीं किया?
   (क) विप्लव (ख) खताश
   (ग) नया पथ (घ) धर्मयुग
3. 'अन्धा युग' किस विधा की रचना है?
   (क) नाटक (ख) गीति–नाट्य
   (ग) खण्डकाव्य (घ) महाकाव्य

5.5 कृष्णा सोबती

कृष्णा सोबती (18 फरवरी 1925, गुजरात (अब पाकिस्तान में)) हिन्दी की कल्पितार्थ (फिक्शन) एवं निबन्ध लेखिका हैं। उन्हें 1980 में साहित्य अकादमी पुरस्कार तथा 1996 में साहित्य अकादमी अध्येतावृत्ति से सम्मानित किया गया था। अपनी संयमित अभिव्यक्ति और सुथरी रचनात्मकता के लिए जानी जाती हैं। उन्होंने हिंदी की कथा भाषा को विलक्षण ताजगी दी है। उनके भाषा संस्कार के घनत्व, जीवन्त प्रांजलता और संप्रेषण ने हमारे समय के कई पेचीदा सत्य उजागर किए हैं। उन्होंने नारी जाति के विभिन्न पहलुओं को बारीकी से चित्रित किया है। उनकी रचनाओं ने जिन्दगी के अनसुलझे रहस्य को उजागर किया गया है। वे हिन्दी जगत के महान लेखिकाओं में से एक हैं।

उन्हें 1980 में 'जिन्दगी नामा' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला। 1996 में उन्हें साहित्य अकादमी का फेलो बनाया गया जो अकादमी का सर्वोच्च सम्मान है। 2017 में इन्हें भारतीय साहित्य के सर्वोच्च सम्मान 'ज्ञानपीठ पुरस्कार' से सम्मानित किया गया।

उनकी लंबी कहानी 'मित्रो मरजानी' के प्रकाशन के साथ कृष्णा सोबती पर हिंदी कथा–साहित्य के पाठक फिदा हो उठे थे। ऐसा इसलिए नहीं हुआ था कि वे साहित्य और देह के वर्जित प्रदेश की यात्रा की ओर निकल पड़ी थीं बल्कि उनकी महिलाएं ऐसी थीं जो कस्बों और शहरों में दिख तो रही थीं, लेकिन जिनका नाम लेने से लोग डरते थे। यह मजबूत और प्यार करने वाली महिलाएं थीं जिनसे आजादी के बाद के भारत

में एक खास किस्म की नेहरूवियन नैतिकता से घिरे पढ़े–लिखे लोगों को डर लगता था। कृष्णा सोबती का कथा साहित्य उन्हें इस भय से मुक्त कर रहा था। आज से चार–पांच दशक पहले इस तरह का लेखन बहुत ही साहसिक कदम था।

टिप्पणी

समाज द्वारा बनाए गए रुढ़िवादी ढर्रे को अपनाने के बदले वो अपने दम पर बनाए गए समयानुकूल रास्ते को अपनाने में वो विश्वास रखती हैं। कृष्णा सोबती निरर्थक अधिक लिखने के अपेक्षा कम किन्तु सार्थक लिखने में विश्वास रखती हैं।

कृष्णा सोबती को हिन्दी भाषा के अलावा पंजाबी, उर्दू, संस्कृत तथा अंग्रेजी भाषा पर अच्छी पकड़ थी। वे अपनी रचनाओं में इन भाषाओं पर आधारित मुहावरों का भरपूर उपयोग करती थीं। उनका ये मानना था कि – किसी भाषा को जानना ही काफी नहीं है, बल्कि उनको जोड़–तोड़कर जो नये शब्दों को निर्माण करता है, वही उत्तम है।

कहानी संग्रह– 'बादलों के घेरे'– 1980

लम्बी कहानी (आख्यायिका / उपन्यासिका)– 'डार से बिछुड़ी'–1958, 'मित्रो मरजानी'–1967, 'यारों के यार'–1968, 'तीन पहाड़'–1968, 'ऐ लड़की'–1991, 'जैनी मेहरबान सिंह'–2007 (चल–चित्रीय पटकथा 'मित्रो मरजानी' की रचना के बाद ही रचित, परन्तु चार दशक बाद 2007 में प्रकाशित)

उपन्यास– 'सूरजमुखी अँधेरे के'–1972, 'जिन्दगीनामा'–1979, 'दिलोदानिश'–1993, 'समय सरगम'–2000, 'गुजरात पाकिस्तान से गुजरात हिंदुस्तान'–2017 (निजी जीवन को स्पर्श करती औपन्यासिक रचना)

विचार–संवाद–संस्मरण– 'हम हशमत' (तीन भागों में), 'सोबती एक सोहबत', 'शब्दों के आलोक में', 'सोबती वैद संवाद', 'मुक्तिबोध : एक व्यक्तित्व सही की तलाश में'–2017, 'लेखक का जनतंत्र'–2018, 'मार्फत दिल्ली'–2018

यात्रा–आख्यान– 'बुद्ध का कमण्डल : लद्दाख'।

सम्मान एवं पुरस्कार– साहित्य अकादमी की महत्तर सदस्यता समेत कई राष्ट्रीय पुरस्कारों और अलंकरणों से शोभित कृष्णा सोबती ने पाठक को निज के प्रति सचेत और समाज के प्रति चैतन्य किया है। आपको हिंदी अकादमी, दिल्ली की ओर से वर्ष 2000–2001 के शलाका सम्मान से सम्मानित किया गया था। उन्हें वर्ष 2017 का 53वाँ ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

5.6 मालती जोशी

मालती जोशी देश की स्वतंत्रता के बाद की अग्रणी कहानीकार है। इन्होंने अपनी सूक्ष्म दृष्टि से जीवन और जगत की अनुभूतियों को प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है। इनका जन्म औरंगाबाद में 4 जून, सन् 1934 ई. को महाराष्ट्रीय ब्राह्मण परिवार में हुआ था। इनको पिता श्रीकृष्ण राव और माता श्रीमती सरला से अच्छे संस्कार मिले हैं। इन्होंने आगरा से हिंदी में एम.ए. की परीक्षा पास की है, इनके पति श्री सोमनाथ जोशी भोपाल में इंजीनियर थे। इनके दो पुत्र हैं। साहित्यकार माँ के दोनों पुत्र कलाकार हैं।

मालती जी सुप्रसिद्ध लेखिका होने के साथ–साथ एक सफल गृहिणी भी हैं। इनके साहित्य में जवान होती बेटी के पिता की, महंगाई, दहेज समस्या आदि का प्रायः उल्लेख दिखाई देता है। वे स्वभाव से विनोद प्रिय हैं। बहुमुखी प्रतिभा की स्वामिनी मालती जी

कवयित्री होने के साथ–साथ बाल कहानीकार, व्यंग्यकार, रेडियो–नाटककार और कुशल अनुवादिका भी हैं। उन्होंने साहित्य क्षेत्र में प्रवेश गीतों के माध्यम से किया था। वे विद्यार्थी काल से ही कविताएं लिखा करती थीं। मराठी भाषी परिवार की हिंदी कवयित्री आगे चलकर हिंदी कथाकार के रूप में प्रतिष्ठित हुईं। उन्होंने स्वयं लिखा है, ''मैं किशोर वयस् से गीत लिखा करती थी पर बाद में लगा अपनी भावनाओं को सही अभिव्यक्ति देने के लिए कविता का कैनवास बहुत छोटा है। कविता की धारा सूख गई और कहानी का जन्म हुआ है।'' इनकी पहली कहानी सन् 1971 ई. में 'धर्म युग' में प्रकाशित हुई। यह अत्यंत संवेदनशील और सहज है। इन्हें गीत–संगीत से बेहद लगाव है।

टिप्पणी

- **कृतित्व**

(क) **उपन्यास**– राग–विराग, सहचारिणी, ज्वालामुखी के गर्भ में, पाषण युग, निष्कासन, पटाक्षेप, गोपनीय, ऋणानुबंध, चांद अमावास का, समर्पण का सुख, शोभा यात्रा आदि।

(ख) **कहानी संग्रह**– मध्यांतर, मन न भये दस–बीस, एक घर सपनों का, मोरी रंग दी चुनरिया, बोल री कठपुतली, अन्तिम आक्षेप, एक सार्थक दिन, महकते रिश्ते, शापित, शैशव, हालें स्ट्रीट, बाबुल का घर आदि।

बाल साहित्य– दादी की घड़ी, रिश्वत, एक प्यासी सी दिल्ली, रंग बदलते खरबूजे, बेचैन, एक कर्ज : एक अदायगी, बड़े आदमी, और वह खुश था, जीने की राह आदि।

मराठी कथा–संग्रह– पाषण युग (लघु उपन्यास) एक और देवदास, टूटने से जुड़ने तक, कुहासे (कहानियाँ) आदि।

5.7 मीनाक्षी स्वामी

जीवन वृत्त

हिंदी कथा साहित्य की सशक्त हस्ताक्षर मीनाक्षी स्वामी का जन्म 27 जुलाई, सन् 1959 ई. को राजस्थान प्रांत के जयपुर नगर में हुआ है। उन्होंने समाज शास्त्र से एम.ए. और पी.एच.डी. की डिग्री प्राप्त की है। आजीविका के लिए उन्होंने अध्यापन वृत्ति को अपनाया। अभी भी वे मध्य प्रदेश शासन के उच्च शिक्षा विभाग में अध्यापिका के रूप में सेवारत है। किन्तु अभिरूचि के रूप में उन्होंने हिंदी साहित्य की विभिन्न विधाओं को समृद्ध किया है। और हिंदी साहित्य के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। उनकी अनेक रचनाओं का अन्य भाषाओं में अनुवाद भी हो चुका है। उनकी रचनाएं पुरस्कृत भी हो चुकी हैं। अनेक संस्थाओं ने उन्हें सम्मानित भी किया है।

- **कृतित्व**

हिन्दी कथा साहित्य की लब्धप्रतिष्ठ रचनाकार मीनाक्षी स्वामी का कृतित्व उच्च कोटि का है। यथा–

उपन्यास – भूभल (पुरस्कृत), नतोहम (पुरस्कृत)

कहानी संग्रह – अच्छा हुआ मुझे शकील से प्यार नहीं हुआ, धरती की डिबिया।

उनकी प्रत्येक कहानी एक नई भाव भूमि पर स्थित है। उनकी कहानियां शोषण पर समाप्त नहीं होतीं अपितु शोषित के हौंसले को बढ़ाते हुए दिखाई देती हैं। उनकी कहानियों में परिवेश को बदलने की कोशिश करते हुए दिखाया जाता है।

टिप्पणी

स्त्री–विमर्श– कटघरे में पीड़ित (पुरस्कृत), अस्मिता की अग्नि परीक्षा (पुरस्कृत)

सामाजिक विमर्श– भारत में संवैधानिक समन्वय और व्यावहारिक विघटन (पुरस्कृत)

- सामाजिक योजना और विकास के परिप्रेक्ष्य में पुलिस की भूमिका (पुरस्कृत)
- पुलिस और समाज (पुरस्कृत)
- मानवाधिकार संरक्षण एवं पुलिस

किशोर साहित्य– लालाजी ने पकड़े कान (किशोर उपन्यास), व्यक्तित्व विकास और योग (पुरस्कृत)।

बाल साहित्य – बीज का सफर (पुरस्कृत) मराठी भाषा में अनूदित, चौरंगी पतंग, बूंद–बूंद से सागर, पाली का घोड़ा, पीतल का पतीला।

नवसाक्षर साहित्य– किसी से न कहना, काम का बंटवारा, मुसकान, घर लौट चलो (कई भारतीय भाषाओं में अनूहित), मूमल महेन्द्र की प्रेम कथा, निश्चय, सुबह का भूला (पुरस्कृत), गोपीनाथ की भूल (पुरस्कृत), साहब नहीं आए, हरियाली के सपने (पुरस्कृत), छोटी–छोटी बातें, नादानी (पुरस्कृत), शिकायत की चिट्ठी, बहूरानी (पुरस्कृत), बापू की यात्रा (पुरस्कृत), हमारा राज है, टेढ़ी उंगली का घी, जरा सम्हल के, हम किसी से कम नहीं, नीलोफर का दुख, यह है बुरी बीमारी, गुलाब का फूल, राखी का हक।

नाटक– सच्चा उपहार।

इसके अतिरिक्त मीनाक्षी स्वामी की कई पुस्तकों का विभिन्न भारतीय भाषाओं व अंग्रेजी में अनुवाद हुआ है। अद्यतन मीनाक्षी स्वामी साहित्य साधना में रत है। विविध विधाओं में छियालीस पुस्तकें लिखकर हिन्दी साहित्य को समृद्ध किया है। मीनाक्षी स्वामी की कहानियां परिवेश का सही चित्र प्रस्तुत करती हैं। सफल साहित्यकार अपने परिवेश का प्रभावशाली चित्र प्रस्तुत करता है। मीनाक्षी स्वामी ने अपनी कहानियों में परिवेश को पूर्ण रूप से चित्रित किया है। उनकी कहानियां युगीन परिस्थितियों को प्रकट करने वाली हैं। इसी से उनमें युग का सही चित्रण हो पाया है।

मीनाक्षी स्वामी हिन्दी कथा साहित्य की सशक्त हस्ताक्षर है। उनकी प्रत्येक कहानी नई भाव भूमि पर स्थित है। उनकी कहानियां शोषण पर समाप्त नहीं होती अपितु उनकी कहानियों में चित्रित शोषित दोगुने हौंसले से परिवेश को बदलने की कोशिश करता दिखाई देता है।

मीनाक्षी स्वामी का कहानियों में कल्पना अनुभूति और यथार्थ का सहज संयोजन दिखाई देता है। उनकी कहानियों में समाज के लगभग सभी रिश्ते नाते सहज रूप में परिलक्षित होते हैं। उनके संबंधित पुरुष, स्त्रियां, बच्चे आदि सभी हैं। परिवार को समाज की आधारभूत इकाई माना जाता है। जिनमें विभिन्न आयु वर्ग के अनेक पात्रों, लोगों का होना अनिवार्य है। समाज के सभी संवेदनशील लोगों का हृदयग्राही चित्रण उनके भावुक, संवेदनशील व्यक्तित्व की ओर संकेत करता है।

मीनाक्षी स्वामी की कहानियों में अविकल प्रवाहमान भाषा और कलात्मक शब्द चित्र पाठक को बांधे रखते हैं। वर्णन की सूक्ष्मता चौंकाने वाली है। अतः उनकी कहानियों के अनुभूतियों की सच्चाई है। इसीलिए वे पाठक की अपनी सी लगती हैं और कथा रस के आस्वाद से सराबोर करती हैं।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

4. निम्न में से कौन–सा उपन्यास कृष्णा सोबती द्वारा लिखा हुआ नहीं है?
   (क) आपका बंटी (ख) मित्रो मरजानी
   (ग) डार से बिछुड़ी (घ) जिंदगीनामा
5. मालती जोशी कृत 'राग–विराग' किस विधा की रचना है?
   (क) कविता (ख) कहानी
   (ग) उपन्यास (घ) नाटक
6. निम्न में से कौन–सी मीनाक्षी स्वामी की कृति नहीं है?
   (क) भूभल (ख) नतोहम
   (ग) धरती की डिबिया (घ) ऐ लड़की

5.8 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (ग)
2. (घ)
3. (ख)
4. (क)
5. (ग)
6. (घ)

5.9 सारांश

अमृतलाल नागर ने अपनी रचनाओं में सामाजिकता का सजीव चित्रण किया है। इनके कथानकों में कम चरित्र होते हैं। ये विनोदी प्रवृत्ति वाले साहित्यकार थे। इन्होंने लेखन के विविध प्रयोग भी किए। इनकी रचनाओं में हास्य व्यंग्य का पुट भी देखने को मिलता है। इसी प्रकार इनके उपन्यासों के पात्र भी अत्यन्त सजीव एवं गतिशील रहते हैं।

यशपाल ने सन् 1938 से मृत्युपर्यंत लगभग 40 वर्षों तक साहित्य–सेवा की और लगभग 200 से भी अधिक कहानियां लिखीं। इनकी सभी कहानियां सामाजिक समस्याओं पर ही आधारित हैं, अतः इनकी कहानियों में सामाजिक चेतना जागरुक है। इनकी कहानियां चार श्रेणी में रखी जा सकती हैं–1. सामाजिक, 2. आर्थिक, 3. वैयक्तिक और 4. राजनीतिक।

धर्मवीर भारती हिन्दी साहित्य के प्रमुख लेखक, नाटककार, कवि, उपन्यासकार, कहानीकार और संपादक हैं। उन्होंने कविता, उपन्यास, नाटक, पत्रकारिता सभी विधाओं में रचना कर हिन्दी साहित्य को समृद्ध किया है। बंबई से निकलने वाली 'धर्मयुग' पत्रिका के बीस वर्षों तक संपादक रहने का गौरव वह प्राप्त कर चुके हैं। वह संगीत नाटक अकादमी के मनोनीत सदस्य भी रहे।

टिप्पणी

कृष्णा सोबती का जन्म सन् 1925 में पंजाब के एक शहर गुजरात (अब पाकिस्तान में) में हुआ था। विभाजन के विध्वंसकारी दिनों के ठीक बाद ही उन्होंने अपने लेखन की शुरुआत की। उनकी पहली कहानी 'लामा' सन् 1950 में प्रकाशित हुई थी। इसके आसपास ही उनकी 'सिक्का बदल गया' व 'मेरी मां कहां' जैसी चर्चित कहानियां भी प्रकाशित हुईं।

मालती जोशी देश की स्वतंत्रता के बाद की अग्रणी कहानीकार है। इन्होंने अपनी सूक्ष्म दृष्टि से जीवन और जगत की अनुभूतियों को प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है। इनका जन्म औरंगाबाद में 4 जून, सन् 1934 ई. को महाराष्ट्रीय ब्राह्मण परिवार में हुआ था। इनको पिता श्रीकृष्ण राव और माता श्रीमती सरला से अच्छे संस्कार मिले हैं।

मीनाक्षी स्वामी हिन्दी कथा साहित्य की सशक्त हस्ताक्षर हैं। उनकी प्रत्येक कहानी नई भाव भूमि पर स्थित है। उनकी कहानियां शोषण पर समाप्त नहीं होती अपितु उनमें चित्रित शोषित दोगुने हौंसले से परिवेश को बदलने की कोशिश करता दिखाई देता है।

5.10 मुख्य शब्दावली

- **शनैः–शनैः** : धीरे–धीरे।
- **प्रोड्यूसर** : निर्माता।
- **विराट** : विस्तृत।
- **खताश** : पक्षी।
- **दुरूह** : मुश्किल।

5.11 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

1. अमृतलाल नागर द्वारा रचित उपन्यास कौन–कौन से हैं?
2. यशपाल किस खेमे के प्रतिनिधि रचनाकार हैं व उनकी विचारधारा किसके विचारों से प्रभावित कही जाती है?
3. धर्मवीर भारती द्वारा रचित काव्य–संग्रह व एकांकियों के नाम लिखिए।
4. कृष्णा सोबती की कहानियों की मुख्य विशेषता क्या है?
5. मालती जोशी के कहानी संग्रहों का नामोल्लेख कीजिए।
6. मीनाक्षी स्वामी की स्त्री–विमर्श की कृतियाँ कौन–कौन सी हैं?

5.12 सहायक पाठ्य सामग्री

1. इन्द्रनाथ मदान, 'प्रेमचन्द चिन्तन और कला', सरस्वती प्रेस, वाराणसी।
2. रामविलास शर्मा, 'प्रेमचन्द और उनका युग', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. लालचन्द गुप्त, 'हिन्दी कहानी का इतिहास' संजीव प्रकाशन, कुरुक्षेत्र।
4. नामवर सिंह, 'कहानी नयी कहानी', लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2009।
5. रामदरश मिश्र, 'हिन्दी उपन्यास : एक अन्तर्यात्रा', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016।
6. राजेन्द्र यादव ,'एक दुनिया समानान्तर', राधाकृष्णन प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003।